महाकवि पंडित दौलतराम कासलीवाल कृत

अध्यात्म-बारहखड़ी

(बृहद् संस्करण)

महाकवि पंडित दौलतराम कासलीवाल कृत

अध्यात्म बारहखड़ी

(बृहद् संस्करण)

सम्पादन

प्रो. वीरसागर जैन

श्रीसाहित्य प्रकाशन, दिल्ली

ISBN : 978-93-93279-05-7

प्रकाशक :
श्रीसाहित्य प्रकाशन
डी-580, अशोक नगर, गली नं० 4
निकट वजीराबाद रोड, शाहदरा, दिल्ली-110093
मो० : (0) 9873390338
website : Shrisahityaprakashan.com
email : Shrisahityaprakashan@gmail.com
© प्रो. वीरसागर जैन
प्रथम संस्करण : 2022
मूल्य : रु. 550
आवरण सज्जा : अमित भारद्वाज
शब्द-संयोजन : अंकुश शर्मा
मुद्रक : पूजा आफसेट प्रिंटर्स

ADHYATM BARAHKHARI : *Edit by*
Pro. Veersagar Jain

समर्पण



हमारे आधार-स्तम्भ
पूज्य पिताजी स्व. श्री रामकिशन जी जैन को
जो बहुत ही अधिक स्वाध्यायप्रेमी और सदाचारी थे
और जिन्होंने हमारे पूरे परिवार को धर्म के गहरे संस्कार दिये।

— डॉ. वीरसागर जैन और डॉ. श्रीमती नीतू जैन
— मेघा जैन 'सन्मति' और आर्यवर्धन जैन

अनुक्रम

प्रस्तावना *(ix)*

प्रथम परिच्छेद **27**

मंगलाचरण, प्रणवस्तुति, श्रीकारवर्णन

द्वितीय परिच्छेद **49**

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए,
ऐ, ओ, औ, अं, अः

तृतीय परिच्छेद **193**

क, ख, ग, घ, ङ

चतुर्थ परिच्छेद **239**

च, छ, ज, झ, ञ

पंचम परिच्छेद **297**

ट, ठ, ड, ढ, ण

षष्ठ परिच्छेद **336**

त, थ, द, ध, न

सप्तम परिच्छेद **410**

प, फ, ब, भ, म

अष्टम परिच्छेद **511**

य, र, ल, व, श, ष, स, ह, क्ष

प्रस्तावना

यह 'अध्यात्म बारहखड़ी' नाम का अद्‌भुत काव्य है। इसका दूसरा नाम 'भक्त्यक्षर-मालिकाबावनीस्तवन' भी है। इसमें वर्णमाला के सभी अक्षरों के आधार पर भक्ति एवं अध्यात्म की पावन गंगा प्रवाहित की गयी है।

बारहखड़ी-काव्य की परम्परा साहित्य में बहुत पहले से चली आ रही है। उसके अनेक सुन्दर-सुन्दर ग्रन्थ आज भी उपलब्ध होते हैं; परन्तु इस 'अध्यात्म बारहखड़ी' जैसा अद्‌भुत ग्रन्थ मैंने आज तक नहीं देखा। क्या परिमाण और क्या गुणवत्ता—दोनों ही दृष्टियों से यह ग्रन्थ बहुत महत्त्वपूर्ण है। एक तो अन्य बारहखड़ी-ग्रन्थों में लगभग सब छोटे-छोटे ग्रन्थ ही हैं, इतना विशालकाय कोई नहीं है; दूसरे- अन्य बारहखड़ी-ग्रन्थों में प्रायः व्यावहारिक या नैतिक विषय ही आये हैं, परन्तु इसमें भक्ति एवं अध्यात्म का एकदम सरस एवं दिव्य वर्णन प्रस्तुत किया गया है। अध्यात्म विद्या सबसे ऊँची विद्या मानी गई है, जैसा कि 'गीता' में भी कहा है— 'अध्यात्मविद्या विद्यानाम्' (सभी विद्याओं में अध्यात्म श्रेष्ठ है)—गीता 10/32।

तीसरे, इस रचना में वर्णमाला के हर अक्षर पर छंद लिखे गये हैं, एक भी अक्षर छोड़ा या बदला नहीं गया है। जैसे कि अ आ इ ई उ ऊ तो हैं ही, ऋ ॠ ऌ ॡ भी हैं, अं और अः भी हैं। इसी प्रकार व्यंजनों में भी ङ; ञ, ण, न, म जैसे अनुनासिक वर्णों पर भी कवि ने विपुल छंद लिखे हैं। इतना ही नहीं, हर अक्षर पर उसकी सभी 12 मात्राओं का प्रयोग करके दिखाया है। प्रत्येक वर्ण-वर्णन के अंत में तो कवि ने एक ही छंद में 12 मात्राओं का प्रयोग किया

है, जो उसके अद्‌भुत काव्य-कौशल का निदर्शन है। यहाँ हम उसका उदाहरण नहीं प्रस्तुत कर रहे हैं, पाठक इस कृति के अंदर प्रत्येक वर्ण के अन्त में आसानी से देख सकते हैं।

चौथे, प्रत्येक वर्ण के वर्णन के प्रारम्भ में कवि ने संस्कृत के कुछ श्लोक भी लिखे हैं, जो मंगलाचरण की परम्परा का तो निर्वाह करते ही हैं, पर साहित्यिक एवं दार्शनिक दृष्टियों से भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

पाँचवें, स्थान-स्थान पर कवि ने स्वयं ही अपने छन्दों की गद्य में व्याख्या भी प्रस्तुत की है, जिससे ज्ञात होता है कि उनके छन्दों का एक-एक शब्द कितना अर्थगर्भित है। उदाहरणार्थ आ-वर्ण-वर्णन के 8वें छंद 'आदिधुर आदिगुर...' की व्याख्या पठनीय है।

छठे, छन्दोविधान की दृष्टि से भी यह रचना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें केवल दोहा, सोरठा, चौपई, चौपाई, रोला, छप्पय, कवित्त, सवैया, गीता, पद्धडी, अडिल्ल, बरवै, त्रोटक, त्रिभंगी, मोतीदाम, कुंडलिया, नाराच,सारंगी वासुदेव आदि अनेक हिन्दी-छन्दों का तो सुंदर प्रयोग हुआ ही है; मालिनी, भुजंगप्रयात, अनुष्टुप, आर्या, मंदाक्रांता, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, वसंततिलका, शिखरिणी आदि संस्कृत-छन्दों का भी मनोहर प्रयोग हुआ है। पूरी रचना में कुल करीब 32 प्रकार के छंदों का प्रयोग हुआ है।

इसी प्रकार इस रचना की अन्य भी अनेकानेक विशेषताएँ हैं, परन्तु अभी समयाभाव से नहीं लिखा जा सकता है। आशा है कोई शोधार्थी इस पर व्यवस्थित शोधकार्य करेगा और उससे साहित्यजगत में इस रचना का महत्त्व स्थापित होगा। मैं तो व्यक्तिगत रूप में इस कृति से अत्यधिक प्रभावित हूँ और इसे आद्योपान्त दस-पन्द्रह बार पढ़ चुका हूँ एवं इस पर दो-तीन व्याख्यान भी कर चुका हूँ। इस रचना पर मेरा ध्यान सन् 1988 से ही लगा हुआ है, जब मैंने 'पंडित दौलतराम कासलीवाल और उनका साहित्य' विषय पर पी-एच. डी. करना प्रारम्भ किया था।

यह रचना दो रूपों में उपलब्ध होती है। एक को हम इसका संक्षिप्त संस्करण कह सकते हैं और दूसरे को इसका बृहद् संस्करण, किन्तु ऐसा

कैसे हुआ—इस सम्बन्ध में अनेक विचार उत्पन्न होते हैं और कुछ भी निर्णय नहीं हो पाता है। पहले तो मुझे लगा कि कवि ने इसे पहले संक्षेप में लिखा होगा और बाद में उसमें ही परिवर्धन कर दिया होगा, किन्तु ऐसा नहीं हुआ है। बाद में लगा कि पहले इसका बृहद् संस्करण लिखा होगा और बाद में उसे ही संक्षेपरुचि पाठकों के लिए संक्षिप्त कर दिया होगा, किन्तु ऐसा भी सिद्ध नहीं होता। दरअसल,दोनों संस्करणों में नाम, विषयवस्तु एवं वर्णनशैली की तो समानता है, परन्तु इनके छन्द परस्पर नहीं मिलते। बहुत कम छन्द ही एक दूसरे से मिलते हैं, शेष हजारों छन्द अलग-अलग ही हैं। अत: मैंने तो अभी इन्हें कवि की दो स्वतन्त्र रचनाएँ ही मान लिया है और इसके संक्षिप्त संस्करण का प्रकाशन पंडित ज्ञानचन्दजी बिल्टिवाला के सहयोग से जैन विद्या संस्थान श्रीमहावीरजी से सन् 2002 में करा दिया था और इसके बृहद् संस्करण का प्रकाशन अब हो रहा है।

पाण्डुलिपि-परिचय

प्रस्तुत कृति की एकमात्र पाण्डुलिपि मुझे श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर तेरहपंथियान, घी वालों का रास्ता, जयपुर से प्राप्त हुई है। बहुत प्रयास करने पर भी इसकी अन्य कोई दूसरी पाण्डुलिपि नहीं मिली। इस पाण्डुलिपि में 13 × 22 सेमी. साईज के 428 पत्र (पृष्ठ 856) हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर प्राय: 11 पंक्तियाँ हैं। प्रति का लेख सुन्दर है। परन्तु तीन-चार समस्याएँ हैं। एक तो इसके चार-पाँच पृष्ठों पर इतनी ज्यादा काटा-पीटी हो रही है कि पढ़ने में स्पष्ट नहीं आ रहा है। दूसरा—इसमें अनेक स्थानों पर छन्द-क्रमांक ठीक से नहीं लगे हैं, कहीं छूट गये हैं तो कहीं दोहरा दिए गये हैं। तीसरी सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसमें बीच के तीन-चार पृष्ठ ही उपलब्ध नहीं हैं, कहीं गायब हो गये लगते हैं, जो कैसे भी नहीं मिल रहे हैं। मैंने इस कृति के सम्पादन-कार्य को अनेक वर्षों तक इसीलिए रोके रखा कि वे मिल जाएँ अथवा इसकी कोई अन्य पाण्डुलिपि कहीं मिल जाए, परन्तु अब उस सबसे निराश होकर इसके प्रकाशन का निर्णय ले लिया है। यह हिन्दी-जैन-साहित्य की एक बहुत ही मूल्यवान कृति है, इसका सौन्दर्य भाव एवं शिल्प दोनों ही

दृष्टियों से बेजोड़ है; अत: इसे उपेक्षित पड़े रह देना उचित नहीं समझा। इतनी अधिक महत्त्वपूर्ण कृति को नष्ट होने देने के लिए नहीं छोड़ा गया।

बारहखड़ी परम्परा और उसका सन्देश

बारहखड़ी परम्परा अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित रही है। प्राय: सभी क्षेत्रों, कालों एवं भाषाओं में इसकी रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। अत्यधिक रोचक होने के कारण यह लोक-जीवन में भी व्याप्त रही है। लोक-जीवन में इसके अगणित प्रयोग देखने को मिलते हैं। मनोरंजन करते हुए ज्ञानाराधना करना इसका सबसे बड़ा गुण है, जिसके कारण इसे सर्वत्र विशेष समादर मिला।

बारहखड़ी को वर्णमातृका, अक्षरमातृका, अक्षरबावनी, अक्षरबत्तीसी, अक्षरमालिका, अखरावट,ककहरा आदि अनेक नामों से जाना जाता है।

बारहखड़ी-काव्य का मूल सन्देश यह है कि एक-एक अक्षर का सदुपयोग करो, अक्षर ब्रह्म है, कभी भी एक भी अक्षर का दुरुपयोग मत करो। ज्ञान-अज्ञान, पुण्य-पाप, सुख-दु:ख आदि सबका सम्बन्ध इसके सदुपयोग-दुरुपयोग पर निर्भर है। जो इसका सदुपयोग करता है, वह ज्ञानी है और जो इसका दुरुपयोग करता है, वह अज्ञानी है।

बारहखड़ी विषय विशेष पर भी आधारित होती है। जैसे जब यह भक्ति पर आधारित होगी तब इसके प्रत्येक अक्षर का प्रतिपाद्य भक्ति होगा, जब नीति पर आधारित होगी तब इसके प्रत्येक अक्षर का प्रतिपाद्य नीति होगा, जब अध्यात्म पर आधारित होगी तब इसके प्रत्येक अक्षर का प्रतिपाद्य अध्यात्म होगा, जब आयुर्वेद पर आधारित होगी तब इसके प्रत्येक अक्षर का प्रतिपाद्य आयुर्वेद होगा, इत्यादि।

बारहखड़ी परम्परा जैन साहित्य में भी अत्यंत समृद्ध रही है। प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, ब्रज, हिन्दी आदि सभी भाषाओं में जैन कवियों ने बारहखड़ी-काव्यों की रचना की है, जिसे भलीभाँति समझने के लिए स्वतंत्र शोधकार्य अपेक्षित है। हम यहाँ जैन बारहखड़ी-काव्य-परम्परा की कतिपय प्रमुख कृतियों का अति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते हैं। यथा—

1. बारहक्खरकक्क : इसकी रचना मुनि महयंद ने...शती में अपभ्रंश

भाषा में की है। इसका अपर नाम 'दोहा-वेल्ली' भी है। इसका सम्पादन हरिवल्लभ भायाणी और प्रकाशन जैन विद्या संस्थान श्रीमहावीरजी ने किया है।

2. आत्मबोधमातृका : इसके रचयिता अज्ञात हैं, परन्तु इसका रचनाकाल 16-17वीं शताब्दी के मध्य है। इसमें 64 गाथाएँ हैं। इसका अपर नाम 'मातृका बावनी' भी है।

3. उपदेशकारक कक्को : इसकी रचना मुनि जिनवर्धन ने वि.सं. 1585 में की है।

4. ज्ञान बावनी : इसकी रचना कविवर पंडित बनारसीदास ने 16वीं शताब्दी में की है। इसमें 52 सवैये हैं। यह बनारसी-विलास के अंतर्गत मिलती है।

5. अक्षर बत्तीसिका : इसकी रचना कविवर पंडित भगवतीदास ने 16वीं शताब्दी में की है। इसमें 35 दोहे-चौपाई हैं। यह ब्रह्मविलास के अंतर्गत मिलती है।

6. छहढाला : इसका नाम यद्यपि 'छहढाला' है, परन्तु वास्तव में यह भी बारहखड़ी परम्परा की ही एक श्रेष्ठ कृति है। इसकी रचना कविवर द्यानतराय ने 16वीं शताब्दी में की है। इसमें 94 छन्द हैं।

7. जसराज बावनी : इसकी रचना जसराज कवि ने वि.सं. 1682 में की है। इसमें 57 सवैये हैं।

8. धर्म बावनी : इसकी रचना धर्मवर्धन कवि ने वि.सं. 1666 में की है। इसमें 56 सवैये हैं।

महाकवि पंडित दौलतराम कासलीवाल द्वारा रचित प्रस्तुत 'अध्यात्म बारहखड़ी' इसी बारहखड़ी परम्परा की एक उत्कृष्ट रचना है।

अध्यात्म बारहखड़ी की प्रमुख विशेषताएँ

'अध्यात्म बारहखड़ी' की साहित्यिक, दार्शनिक आदि विभिन्न दृष्टियों से अनेकानेक महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं, परन्तु अभी समयाभाव से उन सबकी सोद्धरण चर्चा करना सम्भव नहीं हो रहा है, अत: उनमें से कतिपय प्रमुख

विशेषताओं की ओर संक्षेप में बिन्दुवार ढंग से आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। यथा—

1. सर्वप्रथम तो यह परिमाण की दृष्टि से ही बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि बारहखड़ी-परम्परा में ही क्या, समूची मुक्तक-काव्य-परम्परा में इतनी विशाल रचना दूसरी मिलना दुर्लभ है। इसमें कुल मिलाकर लगभग दस हजार छंद हैं।
2. छंद भी मात्र दोहा, सोरठा, चौपाई आदि ही नहीं हैं, अपितु बड़े-बड़े मत्तगयन्द, मनहरण आदि एवं हिन्दी में दुर्लभ ऐसे छन्द भी अनेक प्रयुक्त हैं, जिनमें निम्नलिखित के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं— मालिनी, भुजंगप्रयात, अनुष्टुप, आर्या, मंदाक्रांता, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, वसंततिलका, शिखरिणी आदि। तथा ये छंद भी नमूने के दो-चार नहीं हैं, अपितु सैकड़ों की संख्या में हैं। इन छन्दों का सौन्दर्य देखते ही बनता है। इस प्रकार यह रचना छन्दों की दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।
3. इस रचना में वर्णमाला के हर अक्षर पर छंद लिखे गये हैं, एक भी अक्षर छोड़ा या बदला नहीं गया है। जैसे कि अ आ इ ई उ ऊ तो हैं ही, ऋ ॠ ऌ ॡ भी हैं, अं और अः भी हैं। इसी प्रकार व्यंजनों में भी ङ ञ ण न म जैसे अनुनासिक वर्णों पर भी कवि ने विपुल छंद लिखे हैं। इतना ही नहीं, हर अक्षर पर उसकी सभी 12 मात्राओं का प्रयोग करके दिखाया है। प्रत्येक वर्ण-वर्णन के अंत में तो कवि ने एक ही छंद में 12 मात्राओं का प्रयोग किया है, जो उसके अद्‌भुत काव्य-कौशल का निदर्शन है।
4. प्रत्येक वर्ण के प्रारम्भ में दो-चार छंद संस्कृत भाषा में भी लिखे गये हैं, जो मंगलाचरण के समान भी प्रतीत होते हैं। ये भी साहित्यिक, दार्शनिक आदि अनेक दृष्टियों से बड़े महत्त्वपूर्ण हैं।
5. पूरी रचना में भक्ति, नीति, सिद्धान्त एवं अध्यात्म की ऐसी पावन गंगा प्रवाहित हो रही है कि पाठक का जीवन पवित्र हो जाता है।

रीतिकाल में लिखी हुई होने के बाद भी इस रचना में कहीं कोई शृंगार आदि के नाम पर वासना का चित्रण नहीं हुआ है।

6. कवि के व्यक्तित्व एवं तत्कालीन इतिहास को समझने की दृष्टि से भी यह रचना बहुत महत्त्वपूर्ण है। स्थान-स्थान पर इसके अच्छे सन्दर्भ इसमें उपलब्ध होते हैं।
7. शब्दकोश की दृष्टि से भी यह रचना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसमें नाममाला, एकाक्षरी कोष आदि अनेक कोश-ग्रन्थों की सहायता से एक-एक शब्द के सैकड़ों पर्यायवाची शब्दों का सुंदर प्रयोग हुआ है।
8. जैन कथा-साहित्य की दृष्टि से भी यह रचना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसमें कदम-कदम पर जैन पुराणों की हजारों अंतर्कथाएँ भरी हुई हैं।
9. रचना में कहीं-कहीं कवि ने स्वयं ही अपने छन्दों की गद्य में टीका/व्याख्या भी की है, जिससे ज्ञात होता है कि उनके छन्दों का एक-एक शब्द कितना अर्थगर्भित है। ऐसे स्थल भी हिन्दी-गद्य के विकास आदि अनेक दृष्टियों से बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। उदाहरणार्थ आ-वर्ण-वर्णन के 8वें छंद 'आदिधुर आदिगुर...' की टीका/व्याख्या पठनीय है, जो लगभग तीन पृष्ठों में लिखी गयी है।
10. पूरी रचना कवि के प्रकांड पाँडित्य का भी निदर्शन प्रस्तुत करती है। इसमें कदम-कदम पर जैन शास्त्रों की अगाध गहराइयाँ अभिव्यक्त हुई हैं। भेद-प्रभेद तो हजारों की संख्या में मानों कवि को कंठस्थ ही हैं और वह उन्हें बताने में अत्यन्त कुशल भी है। 64 ऋद्धि, 148 कर्म, 336 मतिज्ञान ही नहीं, 84 हजार शील एवं 84 लाख योनियों के भेद भी वह बड़ी सुगमता से पाठक को समझा देता है।

रचयिता

'अध्यात्मबारहखड़ी' के रचयिता महाकवि पण्डित दौलतराम कासलीवाल हैं, जो हिन्दी-साहित्य के इतिहास में मुख्यत: से खड़ी बोली हिन्दी गद्य के पुरोधा के रूप में ही विशेष जाने जाते हैं, किन्तु वे एक उच्च कोटि के कवि भी थे—इस बात से हिन्दी-जगत प्राय: अनजान है। दरअसल, पण्डित दौलतराम कासलीवाल हिन्दी-साहित्य के रीतिकाल में हुए थे और राजदरबार में भी कार्यरत थे, परन्तु उन्होंने रीतिकाल-जैसा काव्य नहीं लिखा था, काव्य-साधना तो उन्होंने एकदम विशुद्ध जनकल्याण की भावना से ही की थी।

पंडित दौलतराम कासलीवाल का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

पं. दौलतराम कासलीवाल का जीवन-परिचय

पं. दौलतराम कासलीवाल हिन्दी-जैन-साहित्य के एक सुप्रसिद्ध लेखक एवं कवि हैं। मुझे उन पर पीएच.डी. करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यहाँ मैं अपने उसी शोधपूर्ण अध्ययन के आधार पर उनका प्रामाणिक जीवनवृत्त संक्षेप में लिखने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में 'दौलतराम' नाम के अनेक विद्वान प्रसिद्ध हो चुके हैं और संयोग से सबके समय में भी बहुत अधिक अन्तर नहीं है, अत: उनमें परस्पर भ्रम की अत्यधिक सम्भावना है। अनेक शोधार्थियों एवं साहित्येतिहासकारों को ऐसा भ्रम हुआ भी है, तभी तो उन्होंने किसी एक दौलतराम की रचना को अन्य दौलतराम की बता दिया है।[1] अत: यहाँ सर्वप्रथम 'दौलतराम' नाम के अन्य साहित्यकारों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है।

---

1. (क) देखिए अनेकान्त (मासिक) जून 1972 पृष्ठ 131 पर डॉ. गजानन मिश्र का लेख।
   (ख) देखिए अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज, एटा से प्रकाशित दौलत-विलास जिसमें 'चौबीस दंडक' नामक कृति को जो वस्तुत: पं. दौलतराम कासलीवाल की है, दूसरे दौलतराम की मानकर संगृहीत कर लिया गया है।

1. दौलतराम—ये दौलतराम नाम के अन्य विद्वानों में सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। इनका समय वि. सं. 1855 से 1923 तक है। ये मूलत: सासनी (उत्तरप्रदेश में हाथरस के समीप स्थित ग्राम) के रहने वाले थे, परन्तु आजीविकादि प्रयोजनों से अलीगढ़, मथुरा, लश्कर, ग्वालियर आदि स्थानों पर भी रहे थे और अन्त में दिल्ली में आकर बस गये थे। ये पल्लीवाल जाति के इतने धार्मिक एवं प्रतिभाशाली पुरुष थे कि आजीविका हेतु कपड़े छापते समय भी अपने पास चौकी पर गोम्मटसार आदि कोई प्राकृत या संस्कृत भाषा का ग्रन्थ विराजमान कर लेते थे और प्राय: प्रतिदिन साठ-सत्तर गाथाएँ या श्लोक कंठस्थ कर लेते थे। आपकी दो कृतियाँ विख्यात हैं—छहढाला और दौलत-विलास (पद-संग्रह)[2]

2. दौलतराम—इनका दूसरा नाम दिलाराम भी है। ये राजस्थान के टोडारायसिंह या बूँदी नामक नगर के रहने वाले थे और वहाँ बूँदी-नरेश राव रतनसिंह हाडा (वि. सं. 1662 से 1745 तक) के प्रिय कवि थे। आपका जन्म खंडेलवाल वंश के पाटनी गोत्र में हुआ था और आपके पिता का नाम चतुर्भुज था। आपकी तीन कृतियाँ उपलब्ध होती हैं—दिलाराम-विलास, व्रतविधान-रासो और आत्मद्वादशी।

3. दौलतराम आँसेरी—आपका जीवनवृत्त अद्यावधि अज्ञात है, पर आपकी अभी तक दो रचनाएँ प्राप्त हो चुकी हैं—श्रेणिक-चरित एवं ऋषिमंडल पूजा। इनमें से 'श्रेणिक-चरित' की रचना वि. सं. 1834 में हुई है।

4. दौलतराम वर्णी—इनका भी जीवनवृत्त अज्ञात है, पर अभी तक इनकी चार रचनाएं प्राप्त हो चुकी हैं—चम्पापुर पूजा, पावापुर पूजा, नयनागिरि पूजा एवं गोम्मटसार छन्दोदय। इनमें से तीन रचनाएँ तीर्थक्षेत्रों की पूजा से सम्बन्धित हैं, अत: पूजा या भक्तिकाव्य की कोटि में आती हैं और चौथी रचना एक उत्कृष्ट दार्शनिक कृति का पद्यानुवाद है। इनका रचना-काल वि. सं. 1894-95 है।

5. दौलतराम ओसवाल—इनका भी जीवनवृत्त अज्ञात है, पर 'वीर-

---

2. इनका विस्तृत परिचय मैं 'दौलत-विलास' (प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली) की प्रस्तावना में लिख चुका हूँ।

वाणी' के 18 जनवरी 1960 के अंक में श्री अगरचन्द नाहटा ने इनको 'मुलतानी ओसवाल दौलतराम' लिखा है। इनकी अभी एक ही रचना प्राप्त होती है—मल्लिनाथ-चरित्र-वचनिका, जो वि. सं. 1818 में लिखी गयी थी। इसकी एक हस्तलिखित प्रति वर्तमान में श्री दि. जैन मन्दिर दिल्ली के ग्रन्थभंडार में उपलब्ध है।

6. दौलतराम उजियारे—ये रीतिकाव्य के निर्माता कवि हैं और सम्भवतया जैन नहीं हैं। इन्होंने वि. सं. 1837 में 'रसचन्द्रिका' एवं 'जुगल-प्रकाश' नामक ग्रन्थों की रचना की है।

7. दौलतराम—ये मारवाड़-नरेश महाराजा मानसिंह के आश्रित थे, अत: इनका समय वि. सं. 1863 के आसपास माना जाता है। इनकी अभी तक दो रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं—1. जालन्धरनाथजी रो गुण, जिसे उन्होंने वि. सं. 1867 में पूर्ण किया था और 2. परिचय प्रकाश।

8. दौलतराम—ये भी जैनेतर साहित्यकार हैं जो फलेहर के निवासी थे। इनके पिता का नाम शिवनाथ था। इन्होंने वि. सं. 1897 के आसपास 'अलंकार-संग्रह' एवं 'कविप्रिया' की टीका लिखी थी।

9. दौलतराम—ये मैनपुरी (उ. प्र.) के रहने वाले थे और जाति से कायस्थ थे। इनकी एक ही कृति उपलब्ध होती है—'ज्यौनार'।

ध्यातव्य है कि महाकवि पं. दौलतराम कासलीवाल उपर्युक्त सभी दौलतरामों से भिन्न हैं। उनका परिचय अब प्रारम्भ होता है—

(क) जन्म—महाकवि पं. दौलतराम कासलीवाल का जन्म राजस्थान राज्य के बसवा नामक ग्राम में आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी वि. सं. 1749 को हुआ था। यह बसवा नामक ग्राम वर्तमान में दौसा जिले के अन्तर्गत आता है और दिल्ली-अहमदाबाद वाली पश्चिम रेलवे लाइन पर स्थित एक छोटा-सा स्टेशन है, जो दिल्ली से 205 किलोमीटर एवं जयपुर से 103 किलोमीटर दूर है।

पंडित दौलतराम कासलीवाल ने स्वयं अपनी रचनाओं की अन्तिम प्रशस्ति में अपनी जन्मभूमि के रूप में बसवा का नामोल्लेख किया है। यथा—

(क) 'बसुवा को वासी अहै'[3]

(ख) 'बसवे वास विशाल'[4]

(ग) 'वासी बसवा को जु'[5]

(घ) 'बसवै वास हमारौ जांनि। घरि आगै जिनमन्दिर मांनि।
जैनी लोक वसै चहुं पास। अर्चा चर्चा को परगास।'[6]

उक्त में से 'घ' उद्धरण से यह भी स्पष्ट है कि बसवा में पं. दौलतराम कासलीवाल के घर के सामने ही जैन मन्दिर था और उसके चारों ओर अनेक परिवार रहते थे, जिससे वहाँ का वातावरण सदैव धर्म की 'अर्चा-चर्चा' से प्रकाशित रहता था। बार-बार 'बसवा' का उल्लेख पं. दौलतराम के जन्मभूमि-प्रेम को भी सूचित करता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल[7] ने और उनके अनुसरण पर उनके परवर्ती इतिहास-लेखकों[8] ने इस बसवा को मध्यप्रदेश में बताया है, जो सत्य नहीं है, क्योंकि पंडितजी ने स्वयं अपनी जन्मभूमि बसवा को राजस्थान में बताया है।

(ख) नाम—यद्यपि पं. दौलतराम ने स्वयं अपना नाम अनेक स्थलों पर संक्षेप में अथवा काव्यानुरोधवश मात्र 'दौलति' आदि बताया है, किन्तु उनका वास्तविक नाम निश्चित रूप से 'दौलतराम' ही है; जैसा कि 'पुण्यास्रवकथाकोश' की अन्तिम प्रशस्ति की निम्न पंक्ति से भलीभाँति स्पष्ट होता है—

'जो कोउ पूछे कवि को नाम। दौलत आगे मांड्यो राम।'[9]

अन्य अनेक दौलतरामों से पृथकता दिखाने के लिए इनके नाम के साथ इनका गोत्र 'कासलीवाल' भी जोड़ा जाता है। पं. दौलतराम ने अनेक स्थलों पर अपने नाम को एक विशेष आध्यात्मिक अर्थ के साथ श्लेषालंकार बनाकर प्रस्तुत किया है, जिससे प्रतीत होता है कि उन्हें अपना नाम इतना प्रिय था कि वे उससे भी एक आध्यात्मिक प्रेरणा अवश्य पाते थे। उदाहरणार्थ निम्न छन्द द्रष्टव्य है—

'जिन-दिनकर की किरण जो, सोई पद्मा जानि।
'दौलति' भाषा मैं कहैं, और न दौलति मांनि।।[10]

---

3. अध्यात्मबारहखड़ी, अन्तिम ग्रन्थ-प्रशस्ति, छन्द 12
4. हरिवंशपुराण-वचनिका, अन्तिम ग्रन्थ-प्रशस्ति, छन्द 2
5. जीवन्धरस्वामिचरित, अन्तिम ग्रन्थ-प्रशस्ति, छन्द 3
6. पुण्यास्रवकथाकोश-भाषा, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 14
7. हिन्दी-साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 377
8. हिन्दी-साहित्य कोश, भाग-2, पृष्ठ 268
9. पुण्यास्रवकथाकोश-भाषा, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 11

(ग) माता-पिता—पं. दौलतराम कासलीवाल की माता के सम्बन्ध में तो कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती, पर उनके पिता के सम्बन्ध में कुछ जानकारियाँ अवश्य उपलब्ध होती हैं।

पं. कासलीवाल ने अपने सभी ग्रन्थों में स्वयं को 'पुत्र आनन्द को'[11] आनन्दसुत[12] 'आनन्दराम सुत'[13] इत्यादि शब्दों से व्यक्त किया है, जिससे ज्ञात होता है कि उनके पिता का नाम आनन्दराम था। वे जयपुर-राज्य के किसी अच्छे पद पर सेवाकार्य करते थे और जयपुर राज्य की ओर से ही जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के पास दिल्ली में रहते थे।[14] वे राज्यकार्य में अत्यन्त कुशल थे और इसी कारण उन्हें अनेक बार राजकीय सम्मान भी प्राप्त हुआ था।[15] उनका निधन आषाढ़ सुदी 14 वि. सं. 1792 को हुआ।[16]

राजस्थान अभिलेखाकार के एक कौमवार रजिस्टर से यह भी ज्ञात होता है कि पं. दौलतराम कासलीवाल के पितामह का नाम घासीराम था।[17]

(घ) जाति, गोत्र एवं धर्म—पंडित दौलतराम कासलीवाल का जन्म वैश्य जाति के खंडेलवाल वंश में हुआ था, उनका गोत्र कासलीवाल था और वे दिगम्बर जैनधर्म के अनन्य उपासक या श्रावक थे, जैसा कि उन्होंने स्वयं अपनी रचनाओं में अनेक स्थलों पर स्पष्ट उल्लेख किया है। प्रमाणस्वरूप 'पुण्यास्रवकथाकोश' की प्रशस्ति की निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

''जात बानियां श्रावक सोय, खंडेलवाल जानहुं सब कोय।
अलि कहिए कासलीवाल, आनन्दराम सुत वचन रसाल।।92।।''

(ङ) शिक्षा एवं ज्ञानप्राप्ति—पंडितजी का बाल्यकाल कैसे बीता, उनकी शिक्षा कहाँ और कैसे हुई, उनके शिक्षागुरु कौन थे अथवा उन्होंने कहाँ तक अध्ययन किया था—इन सबके बारे में कोई प्रामाणिक जानकारी

---

10. अध्यात्मबारहखड़ी, छन्द उ/160
11. जीवन्धरस्वामिचरित, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 3
12. पद्मपुराण-वचनिका, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 8
13. पुण्यास्रवकथाकोश, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 12
14. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना, पृष्ठ 4
15. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना, पृष्ठ 4
16. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना, पृष्ठ 4
17. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना, पृष्ठ 4

नहीं प्राप्त होती। स्वयं कवि ने भी इनका कहीं कोई स्पष्ट संकेत नहीं किया है। परन्तु इनकी रचनाओं से यह एकदम स्पष्ट है कि ये संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी—इन तीनों भाषाओं के बहुत अच्छे ज्ञाता थे, उन भाषाओं में लिखित ग्रन्थों की अत्यधिक सरल, सुबोध परन्तु तलस्पर्शी टीका या व्याख्या करने की उनमें आश्चर्यजनक क्षमता थी। प्रमाणस्वरूप उनकी तत्त्वार्थसूत्रादि की टव्वा-टीकाएँ एवं हरिवंशपुराणादि की भाषावचनिकाएँ देखी जा सकती हैं।

डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन ने इनको 'उच्चशिक्षित' लिखा है[18], परन्तु यह नहीं बताया है कि वह उच्च शिक्षा कहाँ और कैसे हुई। इनके पिता उच्च पद पर कार्यरत थे, इससे भी यह सहज सम्भव लगता है कि उनकी शिक्षा किसी विद्वान गुरु के पास व्यवस्थित रूप से हुई हो, लेकिन इस विषय में प्रमाण-सहित कुछ नहीं कहा जा सकता।

किन्तु तत्कालीन शिक्षा-पद्धति को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि पं. दौलतराम की शिक्षा आगरा की 'अध्यातम सैली' में ही हुई होगी, क्योंकि ''तत्कालीन समाज में धार्मिक अध्ययन के लिए आज के समान सुव्यवस्थित विद्यालय, महाविद्यालय नहीं चलते थे। लोग स्वयं ही सैलियों के माध्यम से तत्त्वज्ञान प्राप्त किया करते थे। तत्कालीन समाज में जो आध्यात्मिक चर्चा करने वाली दैनिक गोष्ठियाँ होती थीं, उन्हें 'सैली' कहा जाता था। ये सैलियाँ सम्पूर्ण भारतवर्ष में यत्र-तत्र थीं। महाकवि बनारसीदास भी आगरा की एक सैली में ही शिक्षित हुए थे।''[19]

पंडित दौलतराम की ऐसी शिक्षा का संकेत हमें उनकी प्रथम कृति 'पुण्यास्रवकथाकोश-भाषा' की निम्नलिखित पंक्तियों से भी प्राप्त होता है—

कारण पाय आगरे गये। पुण्यास्रव सुनि अति सुख भये।।
रिषभदास उपदेस सौं, हमें भई परतीत।
कुबुद्धि घट सौं त्यागिकें, लगी धर्म सों प्रीति।।

---

18. प्रधान ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलाएँ, पृष्ठ 2
19. पं. टोडरमल : व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व, पृष्ठ 58

रिषभदेव जयवन्त जग, सुखी होहु तस दास।
जिन हमको जिनमत विषैं, कीयो महा गढ़ास।।[20]

(च) परिवार—पं. दौलतराम कासलीवाल का विवाह कब हुआ और इनकी पत्नी का नाम क्या था—इसकी कोई जानकारी नहीं मिलती, परन्तु इतना अवश्य ज्ञात होता है कि उनके 6 पुत्र थे और उनके नाम निम्नलिखित थे—अजितदास, जादूराम, शीतलदास, जोधराज और गुलाबदास। इनमें से प्रथम चार पुत्रों का उल्लेख पं. दौलतराम कासलीवाल ने स्वयं अपने महाकाव्य अध्यात्मबारहखड़ी में निम्न स्थल पर किया है—

''मोहि देहु अनंददेवा दौलति करण जु धीर त्वं।
बखतावर अति है जु तु ही सुगतिदाता वीर त्वं।।
तू जु आनन्दी स्वच्छन्दो जगत वीर अरोधत्वं।
निर्भयराम करे जु मोहैं जिनदासैः देवो धत्वं।।
अजित करौ जु अजीत स्वांमी शुंभुनाथ आधार त्वं।
जादूराय सुधारि मोकों सीतल करि जिनसार त्वं।।

ई में श्री जी की भक्ति प्रार्थना आई अर कवि का कबीला को नांव आयो। आनन्द पिता, दौलत इत्यादि पुत्र, अजितदास आदि च्यारि दौलति का पुत्र।''[21]

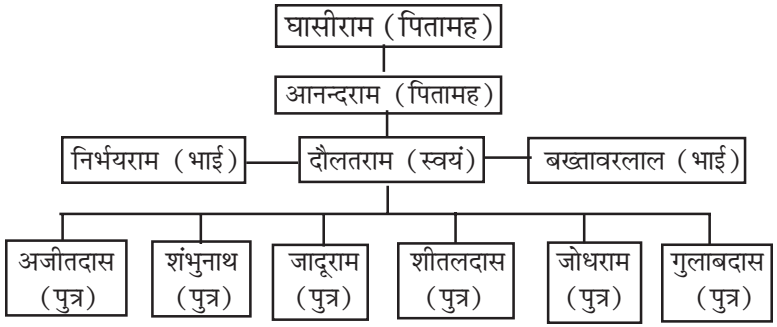
इस उद्धरण से प्रतीत होता है कि अन्तिम दो पुत्र जोधराज और गुलाबदास सबसे छोटे थे और उनका जन्म 'अध्यात्मबारहखड़ी' की रचना (वि. सं. 1798) के बाद हुआ था।

पं. दौलतराम कासलीवाल के ये छहों पुत्र क्या-क्या कार्य करते थे—यह सब तो ज्ञात नहीं होता, परन्तु उनके दो पुत्रों अजितदास और जोधराम के बारे में कुछ जानकारी अवश्य उपलब्ध होती है जो इस प्रकार है—

पं. दौलतराम कासलीवाल के प्रथम पुत्र अजितदास अपने पिता एवं पितामह के समान जयपुर महाराजाओं की सेवा में नियुक्त थे और अपनी कार्यकुशलता के कारण उनके अत्यधिक कृपापात्र भी थे। इसी कारण

---

20. पुण्यास्रवकथाकोश, अन्तिम प्रशस्ति।
21. अध्यात्मबारहखड़ी, छन्द इ/94-95-96



अनेक बार उन्हें राज्य की ओर से सम्मानित भी किया गया था। उदाहरणार्थ वि.सं. 1801 में उन्हें बाहत्रपरगना की वसूली का कार्य कुशलतापूर्वक सम्पन्न करने के कारण सिरोपाव दिया गया और संवत 1804 में उन्हें पुन: राज्यसेवा में सिरोपाव से सम्मानित करके उदयपुर भेज दिया गया। इस समय महाकवि दौलतराम स्वयं भी वहीं थे। ऐसा मालूम पड़ता है कि इसके दो वर्ष बाद ही दौलतराम जयपुर आ गये और उनके स्थान पर अजितदास कार्य करने लगे।

पं. दौलतराम के छोटे पुत्र जोधराज अपने पिता के समान एक अच्छे साहित्यकार थे और राजस्थान के काँमा नामक कस्बे में रहते थे। इन्होंने वि. सं. 1884 में 'सुख-विलास' नामक ग्रन्थ की रचना की थी, जिनमें अपना परिचय निम्न प्रकार दिया गया है—

''दौलत सुत कामां बसै, जोध कासलीवाल।
निज सुख कारन यह कियो, सुखविलास गुणमाल।।''

पं. दौलतराम कासलीवाल के परिवार के महिला सदस्यों के सम्बन्ध में किसी प्रकार की कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती।

अन्त में हम पं. दौलतराम कासलीवाल के उपलब्ध पारिवारिक विवरण या वंशावली को संक्षेप में निम्नलिखित तालिका के द्वारा इस प्रकार देख सकते हैं—

(छ) कर्म एवं कर्मस्थली—पं. दौलतराम कासलीवाल ने अपने ग्रन्थों में स्वयं 'दौलतराम वकील'[22], 'सेवक नरपति को'[23] 'आनन्दसुत जयसुत

22. जीवन्धरस्वामिचरित, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 3
23. हरिवंशपुराणवचनिका, अन्तिम प्रशस्ति, छन्द 25

कौ मन्त्री'[24] इत्यादि लिखा है, जिससे स्पष्ट होता है कि वे अपने पिता के समान ही जयपुर राजदरबार के वकील या मन्त्री पद पर कार्य करते हैं।

राजसेवा में उनकी नियुक्ति आषाढ़ बुदी 8 वि.सं. 1787 को हुई थी, जब उन्हें महाराजा अभयसिंह की सेवा में मथुरा भेजा गया था।[25] वहाँ वे पूरी निष्ठा के साथ राजकर्तव्यों का निर्वाह करते हुए लगभग 6 वर्ष तक रहे। उसके बाद पौष बदी 10 वि. सं. 1793 को वे महाराजा साहब जयसिंह जी के पुत्र कुँवर माधोसिंह जी की सेवा में उनके मन्त्री के रूप में नियुक्त हो उदयपुर चले गये, जहाँ लगभग वि.स. 1808 तक रहे। इसके बाद कुँवर माधोसिंह जी के जयपुराधीश बनने के कारण ये जयपुर आ गये और अब इसके बाद उन्हें फिर कहीं नहीं जाना पड़ा।

इस प्रकार पं. दौलतराम कासलीवाल जीवनभर जयपुर राजदरबार में वकील, मन्त्री आदि उच्च पदों पर सेवाकार्य करते रहे और यही उनका प्रमुख कार्य था। यद्यपि लेखन एवं प्रचलन के द्वारा निरन्तर साहित्यसाधना भी पं. दौलतराम का एक अत्यन्त प्रमुख कार्य था, परन्तु वह तो उनकी नि:स्वार्थ परोपकार वृत्ति का सहज परिणाम था। वे बिहारी आदि रीतिकालीन कवियों की भाँति राज्याश्रित कवि सर्वथा नहीं थे और धनादि की अभिलाषा से प्रेरित होकर नहीं, अपितु जनकल्याण की प्रबल भावना से ही उस कार्य को करते थे।

(ज) निधन—पं. दौलतराम कासलीवाल का निधन जयपुर में ही 80 वर्ष, 2 माह और 3 दिन की उम्र में भाद्रपद शुक्ला द्वितीया वि.सं. 1829 को हुआ; जैसा कि राजस्थान राज्य के अभिलेखागार में संगृहीत रिकॉर्ड के निम्नलिखित कथन से ज्ञात हुआ है—

''संवत 1829 मिती भादवा सुदी 2 वाके मिती फागुण सुदी 11 ने बाबति मुसारल अलह का बाप की मातमी को सिरोपाव बखस्यों कीमती साबिक थान।''[26]

---

24. हरिवंशपुराणवचनिका, अन्तिम प्रशस्ति
25. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना
26. महाकवि दौलतराम कासलीवाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रस्तावना, पृष्ठ 8

पं. दौलतराम कासलीवाल की रचनाएँ

पं. दौलतराम कासलीवाल की अद्यावधि 20 रचनाएँ उपलब्ध हो चुकी हैं, जिनमें से 10 पद्यात्मक हैं और 10 गद्यात्मक।

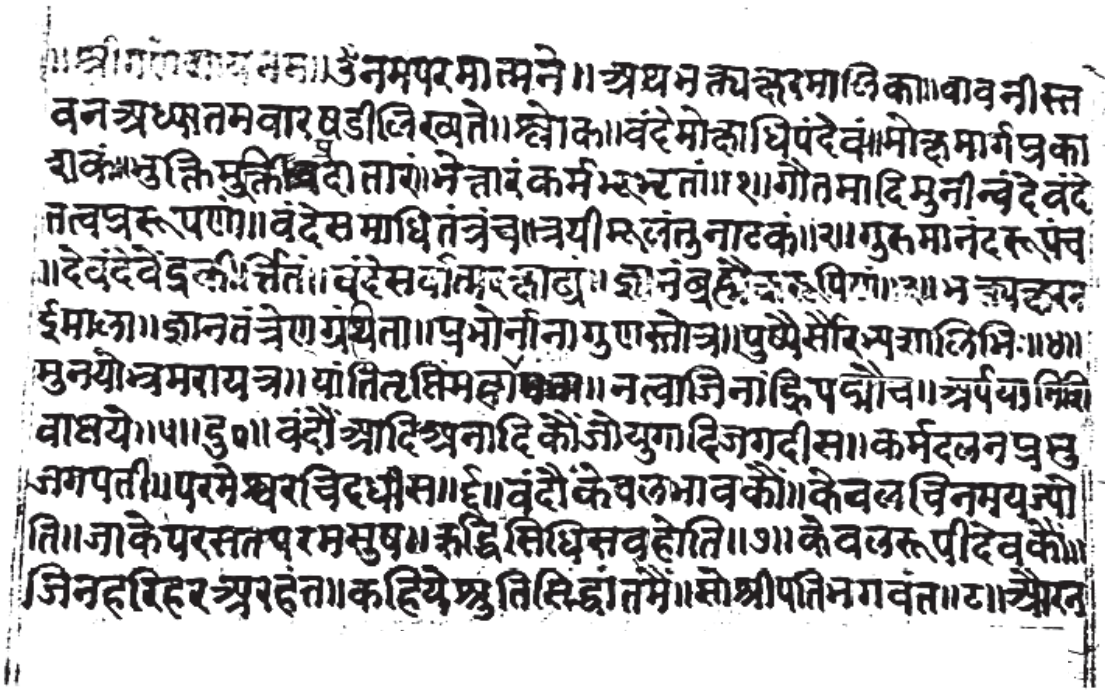
पद्यात्मक रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—1. क्रियाकोश, 2. जीवंधर-स्वामिचरित, 3. अध्यात्मबारहखड़ी, 4. विवेक-विलास, 5. श्रेणिक-चरित, 6. श्रीपाल-चरित, 7. चौबीस दंडक, 8. सिद्धपूजाष्टक, 9. चतुर-चितारणी, 10. सार-समुच्चय।

गद्यात्मक रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—1. पुण्यास्रवकथाकोश-भाषा, 2. आदिपुराण-वचनिका, 3. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय-भाषाटीका, 4. हरिवंशपुराण-वचनिका, 5. परमात्मप्रकाश-भाषा, 6. तत्त्वार्थसूत्र-टब्बाटीका, 7. वसुनन्दि-श्रावकाचार-टब्बाटीका, 8. पद्मपुराण-वचनिका, 9. कार्तिकेयानुप्रेक्षा-टब्बाटीका, 10. समयसार-कलश-टब्बाटीका।

इनमें से 10 रचनाएँ कवि की मौलिक रचनाएँ हैं और 10 अनुवाद या टीकापरक। तथा यदि दूसरी दृष्टि से देखा जाए तो 7 रचनाएँ प्रथमानुयोग से सम्बन्धित हैं, 1 करणानुयोग से सम्बन्धित है, 4 चरणानुयोग से सम्बन्धित हैं और 8 द्रव्यानुयोग से सम्बन्धित हैं, जिससे प्रकट होता है कि पंडित दौलतराम कासलीवाल चारों अनुयोगों के अच्छे ज्ञाता थे।

खेद है कि इनमें से अधिकांश रचनाएँ अद्यावधि अप्रकाशित हैं।

—वीरसागर जैन



श्री दि० जैन मन्दिर बड़ा तेरापंथियान, घीवालों का रास्ता, जयपुर के शास्त्र-भण्डार में उपलब्ध 'अध्यात्मबारहखड़ी' (ख प्रति) का प्रथम पृष्ठ

अध्यात्म बारहखड़ी

प्रथम परिच्छेद

ॐ नमः परमात्मने। अथ भक्त्यक्षरमालिका-बावनी-स्तवन अध्यात्म-बारहखड़ी लिख्यते—

(श्लोक)

वंदे मोक्षाधिपं देवं, मोक्षमार्गप्रकाशकं।
भुक्तिमुक्तिप्रदातारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।।1।।
गौतमादिमुनीन् वंदे, वंदे तत्त्वप्ररूपणम्।
वंदे समाधितंत्रं च, त्रयीमूलं तु नाटकम्।।2।।
गुरुमानंदरूपं च, देवं देवेंद्रकीर्तिम्।
वंदे सर्वात्मरक्षाढ्यं, ज्ञानं ब्रह्मैकरूपिणम्।।3।।
भक्त्यक्षरमईमाला, ज्ञानतंत्रेण ग्रंथिता।
प्रभोर्नानागुणस्तोत्रं, पुष्पै सौरभ्यशालिभिः।।4।।
मुनयो भ्रमरा यत्र, यांति तृप्तिं महाशयाः।
नत्वा जिनांघ्रिपद्मौ च, अर्चयामि शिवाप्तये।।5।।

(दोहा)

वंदौं आदि अनादि कौ, जो युगादि जगदीस।
कर्मदलन प्रभु जगपती, परमेश्वर चिद्धीस।।6।।
वंदौ केवल भाव कौ, केवल चिनमय ज्योति।
जाके परसत परमसुख, ऋद्धि सिद्धि सब होति।।7।।

केवलरूपी देव कौं, जिन हरि हर अरहंत।
कहिये श्रुति सिद्धांत मैं, सो श्रीपति भगवंत।।8।।
और न दूजो देवता, और न दूजो पंथ।
शिव विरंचि जगनाथ है, जो जिनवर निरग्रन्थ।।9।।
वंदौ केवल राम कौं, रमि जु रहो सब मांहि।
ऐसी और न देखिये, जहां देव वह नांहि।।10।।
व्यापि रह्यो सब लोक मैं, अर अलोक हू मांहि।
लोक शिखरि राजै प्रभु, साधू लखैं निज पाँहि।।11।।
सब वामैं वह सबनि मैं, वह है सबतैं भिन्न।
वातैं सब ही भिन्न है, वह भिन्नो च अभिन्न।।12।।
बंधनहर हर नांमधर, यम करि त्रासक सिंह।
वह जु हरी नरहरि धुरी, भवनाशक नरसिंह।।13।।
कल्याणातम शिव जिको, विधिकारी विधि नाम।
द्वादशांग सूत्र जु रचै, सही विरंचि सु राम।।14।।
रचै तत्त्वस्रिष्टी सबै, विरचै अततनि तैं जु।
वहै विरंचि न दूसरौ, सही बसै शिव मैं जु।।15।।
शिव जु मुक्ति कौ नाम है, शिव कल्याण जु होय।
शिव शंकर जिनदेव है, और न दूजो कोय।।16।।
कर्ता आतम भाव कौ, कर्ता शिव कौ सोय।
हर्ता सर्व विभाव कौ, निवसै जो शिव लोय।।17।।
रतनत्रय कौ जोग है, तातैं जोगी जोय।
अतुल अनंत गुणानि कौ, भोगनहारौ होय।।18।।
जोगी भोगी हरि सही, और न जोगी जोग।
और न भोगी भोग है, करि जन जिन संजोग।।19।।
सर्वधाम मैं रमि रह्यो, रहै जु एकै ठाम।
रम्य सकल मैं रमण जो, रमै अखिल मैं राम।।20।।
सर्वग व्यापक विष्णु जो, सर्वज्ञो जिन ईश।
जयकारी जिन नाम है, जो महेश जगदीश।।21।।

गणनायक गणिनाथ जो, शक्ति अनंत मुनिंद।
शक्तिमूल शक्तीश जो, शक्तिरूप जिन चंद।।22।।
ज्ञानशक्ति दृगशक्ति जो, वीरजशक्ति अनंत।
सुखशक्ति युत जिन प्रभु, अमित शक्ति भगवंत।।23।।
अंतर बाहिज तमहरन, भानुपती जिनदेव।
बुद्धि प्रदायक बुद्ध जो, नंत नाम अतिभेव।।24।।
सुगत सुगति दे दातार जो, जिनगुर देव दयाल।
नागर नित्य विशाल जो, थिर-चर कौ प्रतिपाल।।25।।
गणपति पति जु समूह कौ, गणधर पूज्य जिनिंद।
नायक सबकौ है प्रभू, रहित जु नायक इंद।।26।।
नाम विनायक और नंहि, वहै विनायक देव।
सरसुति जाके मुख विषै, करिहौं ताकी सेव।।27।।
क्षेत्र जु कहिये द्वैविधी, स्वपर क्षेत्र बिनु भर्म।
असंख्यात परदेस जो, सो निज क्षेत्र सु मर्म।।28।।
परक्षेत्र जु परद्रव्य है, लोकालोक अकास।
लोक जु कहिये पुंजधर, सकल द्रव्य परकास।।29।।
है जु अलोक सु एकलौ, जामैं अवर जु नांहि।
स्व पर क्षेत्र पालक प्रभू, क्षेत्रपाल सक कांहि।।30।।
क्षेत्र जु कहिये देह कौं, ताकौ पालक जीव।
जीवतणौं पति जिनवरा, क्षेत्रपाल पति पीव।।31।।
क्षेत्रज्ञो क्षेत्राधिप, क्षेत्रपाल जिनदेव।
और न दूजो देव को, एक देव अति भेव।।32।।
वंदौ वा गुणधाम कौं, जो ज्ञानामृत पूर।
प्रणति करौं सिर नायकैं, करि मेरे अघ चूर।।33।।
सेऊं देव दयाल कौं, कर्म हनन अतिशूर।
द्रव्यकर्म नोकर्म अर, भावकर्म तें दूर।।34।।
पूजौं आतम देव कौं, करै जु आतम सेव।
श्रेयातम जग देव जो, देवदेव जिनदेव।।35।।

अतुल गुणातम गुणमई, परगुण रहित जु टेव।
निरगुण कहिये जो प्रभू, गुण अनंत निज वेव।।36।।
करौं अराधन नाथ की, जो अनंत द्युत रूप।
अगणित शशि सूरिज विभा, नख सम नांहि अनूप।।37।।
गुणपर्यय स्वभाव जो, सर्वविभाव वितीत।
अनंत कला असम जु प्रभा, जगनाथो जगजीत।।38।।
आप एकलौ सर्वधर, एकानेक स्वरूप।
अनेकांत आगम प्रगट, अनुभव रस कौ कूप।।39।।
बहिरंगा कमला तजें, अमला कमला पासि।
सो कमलापति देव है, काटै जग की पासि।।40।।
कमला नाम न और है, कमला जिन अनुभूति।
ह्रदै कमल राजै सदा, आतम शक्ति प्रभूति।।41।।
कमला निज अनुभूति है, वसै जु जिन कै मांहि।
चरण-कमल तजि जाय नहिं, रहै सदा प्रभु पाँहि।।42।।
नांहि प्रदेस जु भिन्न हैं, कमला प्रभु के जु।
द्रव्य परिणति भेद नंहि, एक रूप अधिके जु।।43।।
जल-तरंग दुविधा नहीं, भानु रश्मि नहिं भेद।
तैसें कमला हरि विषै, श्रुति गावै जु अभेद।।44।।
वह कमलाधर जिन प्रभू, वसै सदा मम मांहि।
मैं मूरख अलगो रहूं, मो सम मूरिख नांहि।।45।।
वाही के परसाद तैं, खोलूं मिथ्याग्रंथि।
तब वास्यौं बिछरूं नहिं, ध्याऊं ह्वै निरग्रंथि।।46।।
रहूं सदा मैं हरि कनैं, तजौ न हरि को संग।
निज रंगै रत्ता रहूं, तजि कै द्विविधा संग।।47।।
नमो नमो वा देव कौं, द्रव्य भाव मन लाय।
सब ही तैं न्यारौ रही, सेऊं वाके पाय।।48।।

(नाराच)

कर्म नाग केहरी तु ही जु है नृकेहरी।
प्रकृत्य भाव दूरगो तुही जु देव है हरी।
प्रभू जु केवलात्मको सही जिनो हरो हरी।
गुणी अनंत नायको तु ही गणेश है धुरी।।49।।
तुही जिनेश संकरो सुखंकरो प्रजापती।
तुही हिरण्यगर्भको अगर्भको धरापती।
महा स्वशक्ति पूरको तुही जिनो रमापती।
रमा जु भांम नाम नांहि शक्तिरूप है छती।।50।।
तुही विशेषाविशेष शक्ति तैं अनंत है।
सु चिद्विलास ज्ञान शक्ति दृश्य शक्ति कंत है।।
अवांतरो महा जु सत्त्व तू जु है तमंहरो।
विधिकरो दिनंकरो शिवंकरो रमावरो।।51।।
सु योगिनाथ नायको भवंहरो मुधाहरो।
सुधातरो उमावरो जपै जु ताहि माधरो।
सु नायको विनायको सही स्वयोगदायकौ।
अकायको अमायको सदा स्वबुद्ध ज्ञायको।।52।।
निजंधरो परंकरो परंहरो यतीश्वरो।
शिवो भवोधवो सदा शिवो सही रमाधरो।
तुही जिनिंद देव और दूसरौ न भेद ना।
सही जु शक्ति व्यक्ति रूप पाप-पुण्य छेदना।।53।।
तुही मुनीश वृद्धिदो स्वऋद्धिदो निरंतरो।
अनंतभाव व्यक्तिदो प्रबुद्ध है क्षमंकरो।
अनादि ब्रह्मरूपको अरूपको विशुद्ध जो।
महाधिलच्छि मूल जो निकूपको प्रसिद्ध जो।।54।।
क्षमापरो परापरो परंपरो वरंकरो।
हितंकरो मितंकरो दयाकरो कृपाकरो।

महा सु देव तू ही न और कोय दीसही।
विभू प्रभू महाप्रभु स्वभू अभू जगीस ही।।55।।
तुही तुही तुही सही न तो समोऽन्य दूज ही।
जिहां तिहां लखैं जु साधु एक तोहि पूज ही।
तुही यती अनर्भको अगर्वको पवर्ग को।
अवर्गको सु सर्वको मुनीशध्येय सर्ग को।।56।।
नराधिपो सुराधिपो फणाधिपो तुझै भजैं।
अनादि काल के जु कर्म दास तैं परे भजैं।।
तुही जु नांहि बाल है न वृद्ध है युवान है।
अनेक एक ज्ञान रूप ईश तू निधान है।।57।।
जिनोत्तमो जितोत्तमो जनोत्तमो जगोत्तमो।
वरोत्तमो बुधोत्तमो नरोत्तमो निजोत्तमो।।
परोत्तमो पुरोत्तमो धुरोत्तमो गुरोत्तमो।
सुरोत्तमो सतोत्तमो सितोत्तमो हितोत्तमो।।58।।
सजोगको अजोगको सुबोधको स्वबोधको।
अरोगको असोगको स्वशोधको निरोधको।
अलोकको सलोकको अबोधको सबोधको।
अनोघको अमोघको विवोधको अरोधको।।59।।
नहीं जु शून्यवादिको जिनो अनादि आदि को।
सही जु स्यादवादिको अनंत भेद है इको।
सदा जु सप्त भंग भासको अनंत भासको।
आभास है प्रकास है अनास है विभास को।।60।।
अणाथि को जु आथि को जिनिंद लंब हाथ को।
सदा जु सर्व साथ को त्रिलोकनाथ नाथ को।
सही जु तीरथंकरो तिथंकरो विवंधरो।
तुही सुबुद्धिदायको अपायको अकिंकरो।।61।।
प्रभू जु केवलीश जो अनादि काल ज्ञायको।
सुरेश यस्य पाय को तुही जिनो अमाय को।।

सही निजैक्य दायको तुही अनंत ज्ञायको।
जु सादि औ अनादि रूप तु जु तत्त्वनायको।।62।।
पुराण है पुनीत है सही सु योगिगम्य है।
वितीत है अतीत है सही सु लोकरम्य है।
चिदात्म है सुखात्म है अनंत भाव स्वात्म है।
भवांत है अघांत है तमांत है निजात्म है।।63।।
महा जु विष्णु व्यापको अव्यापको अलिप्त जो।
तु ही स्वयोग है समाधि रूप देव त्रिप्त जो।
निरीहको अनीहको अतीहको अबीहको।
निरीश्वरो अनीश्वरो अतीश्वरो नृसीहको।।64।।
तु ही जु राम नाम है सदा विराम कामु को।
तुही जु सर्वधाम है सही सु एक नाम को।
तुही अनंत ग्रांम है सही सु एक ग्राम को।
नंही जु कांम क्रोध रूप राम है अकामु को।।65।।
सुसिद्ध तू प्रसिद्ध तू विरुद्ध कौ नाश तू।
सही जु अर्ह देव है सदा स्वचक्षु भास तू।
सु सूरि तू प्रभूरि तू सदा जु तू अध्यापको।
सु साधु तू बाध तू अलोकऽलोक मापको।।66।।
असाधको असाध्य तू सही जु योगसाध्य है।
अराधि तू उपाधि नां तू ही मुनी अवाध्य है।
तुही जु नां अराधको सबै तुझैं अराधहीं।
कभी जु नां विघातको महा जु साधु साधहीं।।67।।
प्रजापति सु गोपती सदा च गोरखो जती।
तुही अनंत ज्ञान दो स्वदत्त है धरापती।
तु पौरषौ अपार तू महा स्वपौरुषेश तू।
महाप्रकृत्य चूरको अरूपको जिनेश तू।।68।।
अमूरतो अधूरतो असूरतो निरंतको।
महा अनंत मूरतो सवै विभाव अंतको।

स्वरूपदो अरूपदो स्वभावदो विभाश्वरो।
अरंजको निरंशको अनंतमा प्रभाश्वरो।।69।।
सदा स्वभाव कारको विभावता विदूरगो।
महा अभाव भावको अभाव भाव चूरगो।
महा सभाग भाग्य हो सु शांतभाव पोषको।
स्वभाव भुक्ति भोगको सदा विमुक्त मोखको।।70।।
अद्वैतभाव मुक्त जो सद्वैत भाव मुक्त जो।
अनेक एक दोय रूप हैं अरूप युक्त जो।
निराकृतो च साकृतो विशष भाव देव जो।
रमापती जिनाधिपो शिवाधिपो अभेव जो।।71।।
रमाधवो उमाधवो भजैं जु जाहि साधवो।
शचीधवो धराधवो जपैं जु जाहि राघवो।
सदा सुबुद्धि राधिका पती मुनीश ईश जो।
सवै कुबुद्धि खंडको महाव्रती अतीश जो।।72।।
इक्ष्वाकवंश तारको सु सोमवंश तारको।
महाकुरू जु वंश तार नाथ उग्र पारको।
सु विप्रवर्ण तारणो जु क्षात्रवंश धारणो।
सु वैसि वर्ण तारणो त्रयी उधार कारणो।।73।।
तू ही जू शूद्र तारणो नपुंस ढोर तारणो।
सुरासुरा च नारकी जु नारि भी उधारणो।
सही जु जन्म आंतिरै उधारि है विना त्रयी।
जिके जु सम्यका प्रभू तुझैं जु ध्याय ह्वैं जयी।।74।।
सु नाभिराय पारको सु चक्रनाथ तारको।
अनादियोग धारको सु कर्मभूमि कारको।
अनंत सौखि सारको युगादिनाथ साथ को।
सही जु आदिनाथ है तुही अनादि नाथ को।।75।।
महायती अजीत जो असंभवो च शंभवो।
सदाभिनंदनो जिनो मतीशनाथ साधवो।

सु पद्मनाभ पद्मजोनि पद्मनाथ नाथ सो।
सही सुपास है प्रभू रहै जु पासि साथ सो।।76।।
सु चंद्रनाथ चंद्रधार चंद्रकोटि ज्योतिसो।
अनंत ज्योतिधार जो अनंत सूर द्योति सो।
सु पुष्प तुल्य दंत यस्य पुष्पदंत कंत सो।
सु सीतलो श्रियंकरो श्रियांसनाथ संत सो।।77।।
सदा जु वासवैः सु पूजि वासुपूज्यदेव जो।
सु निर्मलो अनंत जो सु धर्मनाथ सेव जो।
सही सु शांतिनाथ है प्रशांति सर्वकारको।
वही जु कुंथवादि जीव रक्षको उधारको।।78।।
जु कुंथवादि जीव नाथ कुंथनाथ देव सो।
अरो अजो रजोहरो हमैं जु देहु सेव सो।
सु मल्लिनाथ मल्लिनाथ मोहमल्लमार जो।
अनंत जीव देव जो सुव्रत्तनाथ सार जो।।79।।
मुनीश व्रत्तदायको जिनो मुनीसुव्रत को।
नमै सुरासुरा नरा नमीश नां अव्रत्त को।।
नहीं च कृष्ण भाव सो सदा जु कृष्ण न रूप सो।
सही जु कृश्न ध्येय हे सु नेमनाथ भूप सो।।80।।
यदुकुलेस नाथ जो सु यादवो उधारको।
शिव नु देवि तारको समुद्रजी तारको।।
प्रभो गिरीश नायको सुराज संविडारको।
तु बात ब्रह्मचार को सुराजंल उधारको।।81।।
सदा जु पासनाथ जो रहै नजीक नाथ जो।
सही जु वीरनाथ जो महासुबीर नाथ जो।।
सदा जु वर्द्धमान जो सही जु वर्द्धमान सो।
मति करो गति करों जु सन्मती अमान सो।।82।।
अतीव वीरधीर वीर है भू सु नीन जो।
वसै सदा जु आप मैं हरै जु सर्व पीरजो।।

जु पासि है अपासि है प्रभु जु सर्वनाथ सो।
अनंत है जु एक रूप तीर्थनाथ नाथ सो।।83।।
इत्यादि है अनंत नाम एक वीतराग जो।
अनादि हैं अनंत धान वाहि क्यौं जु लाग जो।।
महा विदेह क्षेत्र आदि एक सौ जु सत्तरी।
त्रि पंचकर्म भूमि मांहि जे विभू महत्तरी।।84।।
जिके जु अर्ह सिद्ध साधु केवली निरंजना।
गणाधिपा श्रुताधिपा जिनाधिपा अरंजना।
मुझे जु देहु शुद्ध तत्त्व ईश्वरी मुर्षाडूवा।।85।।

(दोहा)

धुणी सरवगि मुख तैं भई, सदा सारदा देवी।
वहै ईश्वरी भारती, सुर नर मुनि जन सेवि।।86।।
अक्षर जो क्षरि है नहीं, अनिधन अवितथ देव।
सोई अक्षर बांवनी, प्रकट करै अति भेव।।87।।
तैतीसौं विंजन जिके, सुर चोदा सब होय।
जिह्वामूली पुलत जो, गज कुंभाकृति जोय।।88।।
अनुस्वरो जु विसर्ग है, ए सब बांवन अंक।
अ आ इ ई औ लगै, चौदा सुर जु निशंक।।89।।
क का आदि हकार लौं, विंजन हैं तैतीस।
अं अनुस्वारो जांनियै, अः विसर्ग धर ईस।।90।।
पुलत जु कहिये उच्च सुर, वह जु त्रिमात्रा जांनि।
गज कुंभाकृति गुरनि तैं, जिह्वामूलि प्रवांनि।।91।।
द्वापंचाशत अक्षरा, बहुरि जिके बीजांक।
संयोगी द्वि अक्षरा, सबको प्रगट शिवांक।।92।।
सब अक्षर के आदि ही, राजै प्रणव स्वरूप।।
ऊंकार अपार प्रभु, आपै आप अनूप।।93।।
सो अक्षर नहि ओर है, अक्षर रूप सु आप।
तातैं ॐ आप है, हरै सकल संताप।।94।।

देव शास्त्र गुरु की कृपा, गावैं आनंद पूत।
भाषै अक्षर बांवनी, नमि जिन मुनि जिन सूत।।95।।

अथ प्रथम ही प्रणवस्वरूप भगवान नै नमस्कार करि भक्त्यक्षरमालिकाबावनी-स्तवन अध्यात्मबारहखड़ी आरंभिजे छै—

(श्लोक)

प्रणवं अनवं वंदे, यज्जिनेन्द्रैकशासनं।
सर्वाक्षरप्रजा यस्य, राजते श्रुतिवर्द्धिनी।।1।।
वंदौ श्री भगवान को, श्री वस्त्र भाजि देव।
श्रीधर श्रीपरणति धरें, प्रणव रूप अतिभेव।।2।।
प्रणवो प्राणद है प्रभू, राजै श्रुति की आदि।
प्रणव समान न और है, भगवत रूप अनादि।।3।।

(चौपई)

ॐकार परम रस रूप। ॐकार सकल जग भूप।।
ॐकार अखिल मत सार। ॐकार निखिल वत धार।।4।।
ॐकार सबै जप मूल। ॐकार भबोदधि कूल।।
ॐकारमयी जगदीस। ॐकार सु अक्षर सीस।।5।।
ॐ दरसी श्री भगवंत। ॐ परसी श्री अरहंत।।
ॐ ध्यातक श्रीपति स्वामि। ॐ ज्ञायक अंतर जांमि।।6।।
ॐ मासक श्री निज देव। ॐ विथरित गणधर देव।
ॐकार जिनागम सार। ॐ धारण मुनिवर धार।।7।।
ॐकार महा अघ नास। ॐकार सकल श्रुति भास।
ॐभेद न जानैं मूढ़। ॐकार परम पद गूढ़।।8।।
ॐ सम को मंत्र जू नांही। पंच परम पद याकै मांही।।
ॐ मंत्र जु भगवत रुपा। ॐ श्रुति संमृति कौ भूपा।।9।।

ॐ मृत्यु कालि जे ध्यावै। ते ऊरध गति निश्चै पावैं।
ॐ ध्यावत प्राण जु तजही। ते सद्गति कौ साज जु सजही।।10।।
ॐ अक्षर सीस विराजै। ॐमया जिनवर धुनि गाजै।।
ई कहिए क्षर मंत्र जु भाई। मेटि जु भवथिति शिवह मिलाई।।11।।
सकल त्यागि जे आशा पाशा। मोह त्यागि जे हौंहि निरासा।
ते साधू याकौ तत पाँवै। या बिनु अगजन जन्म गुमांवैं।।12।।
सर्व ग्रन्थ के प्रथम जु प्रणवा। ईट प्रणवा हे तंत्र जु अनवा।।
महा मुनीश्वर यामैं लागै। याकौं पाय परम रस पागै।।13।।
तीन वरण करि प्रणव जु उपज्या। अवरण उवरण मुनि मिलि निपज्या।
पंच इष्ट हैं याके मांही। इष्ट मंत्र या सम को नांही।।14।।
करि कुंभक जिनि प्रणव जु ध्यायो। तिन निर्वाणपुरी पथ पायो।।
प्राणायामं जु तीन स्वरूपा। पूरक कुंभक रेचक रूपा।।15।।
ॐ स्वेत वर्ण जे नितिहि। ध्यावैं लवधरि चित नहि किति ही।
ते पाँवै निज शुद्ध स्वरूपा। ब्रह्मबीज है प्रणव अनूपा।।16।।
सुवरण वर्ण प्रणव जे ध्यावैं। स्तंभन हेतु सवै श्रुति गावैं।।
पवन चित्त एक श्रोऊ थंमै। कोऊ थंमि जु शिव उपलंमै।।17।।
रंग सुरंग सु ॐ मंत्रा। ध्याये होय वशी कृततंत्रा।।
और न काहूं कौं वसि करिवो। मनहि वसी करि निज मैं धरिवो।।18।।
स्याम रंग इह प्रणव जु ध्यायो। शत्रु नाश कर जिन हि बतायो।
नीद तणौं अरि कोइ न जीवा। रागांदिक अरि होंहि सन्दीदा।।19।।
रागादिक नाशन कै कारण। प्रणव स्याम कौ धारहि धारण।
स्वेत ध्याय है शुक्ल जु भावी। शुक्ल जु ॐ शुक्ल उपावा।।20।।
ॐकार स्वरूप निरंजन। ॐकार सकल श्रुति रंजन।
ॐकार निधान अनूपम। ॐकार प्रधान जगूपम।।21।।
ॐ वर्णित तंत्र न सोहि। ॐ वर्णित मंत्र न मोहि।
ॐ वर्णित यंत्र न फरांही। ॐ विगरि न पातिग दुरंही।।22।।
ॐ विनु विद्या नहि आवै। ॐ विन्नु गुर नांहि पढ़ावै।
ॐ बिनु व्याखान न करहि। ॐ बिनु कछु धरम न धरही।।23।।

ॐ विनु वर्णाश्रम नांही। ॐ ध्यान निराश्रम माँही।
ॐ युक्त ॐकारो जिया। ध्यावैं मुनिवर निज तत लषिया।।24।।
ॐकार जु आगम सरवस। ॐकार करण शिव जग बस।
ॐ अमृत और सुधा नहि। इह जु सुधा तर होय मुधा नहि।।25।।
महाभाग इह अमृत चाखै। महाभाग इह निधि दृढ़ राखै।।
ॐकार सकल ऋषि साखै। ॐ नमि आनंद ज भाखै।।26।।

इति प्रणवस्तुतिः।

आगै तालवी शकार मैं रकार मिलि नीपरानौ जो श्रकार मिश्राक्षर सो श्रीकार छै तीस्यौं प्रणव कै पाँछै सर्व अक्षरां कै प्रथम ही श्रकार अक्षर की बारा मात्रां कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

श्रमणं श्राद्धनिस्तारं, श्रियसोपंतं च श्रीधरं।
श्रुतीशं श्रूयमाणं च, श्रेयपुंज जिनेश्वरं।।1।।
श्रैमतागमपारीणं, श्रोत्रीन्पारकरं विभुं।
श्रौतधर्मप्रणेतारं, श्रयंकं श्रस्कारकं भजे।।2।।

(दोहा)

श्रमणाधिकतर श्रमण गुर, श्रमण उधारक देव।
श्रमण धुरंधर श्रमण पति, श्रमण करैं जसु सेव।।3।।
श्रमणपूज्य श्रमणेश विभु, श्रमणनाथ जगनेश।
श्रमण परंपर श्रमण सुर, श्रमण तार जति भेस।।4।।
श्रमण मूल श्रयणीय प्रभु, श्रमण शिवंकर ईश।
श्रमणगम्य श्रमहर जिको, श्रमण तात जगदीस।।5।।
श्रम वर्जित श्रम कौ अरी, श्रमातीत श्रम शून्य।
श्रवण सु जाको श्रम विघट, श्रम नाशक बहु पुन्य।।6।।

श्रमणनि कौ पारंकरा, निरदुंदी निर बंध।
स्रग वनिता वस्त्राभरण, जाकै नांहि प्रबंध।।7।।
श्रमण गणा पूजैं चरण, रहित विभान जु देव।
ताकी श्रद्धा धरि दृढ़ा, करि मन अह निसि सेव।।8।।
श्रद्धा पर इंद्रारिधे अर चक्री धरणेस।
तिन करि पूजित है प्रभु, तू जोगीस जिनेश।।9।।
श्रगधरादि जे छंद हैं, तिन करि तू ही ध्येय।
छंदादिक तैं ही कहें, तू जोगी सजिनें ज्ञानातम ज्ञेय।।10।।
श्रद्धा तेरी मोहि दै, श्रद्धा सम नहि और।
रेवति रांणी कौं दई, तैसी दै जग मौर।।11।।
श्रय रे मन जिनदेव कौं, श्रय श्रय वारंवार।
अवर सकल भ्रम जार तजि, धरि भगवंत आधार।।12।।
श्रद्धा करि जिनदेव की, श्रद्धा करि जिनवैंन।
श्रद्धधेहि निरग्रन्थ गुर, श्रद्धा करित तजैं न।।13।।
श्रद्धा भगवत देव की, तोकौं करिहै पार।
श्रद्धा कुगर कुदेव की, वौरैगी संसार।।14।।
श्रद्धा करि जिन नांव जपि, श्रद्धा करि कछु देऊ।
श्रद्धा करि व्रत शील धरि, नर भव लाहौ लेऊ।।15।।
श्रय कैं जिन आज्ञा सुधी, स्रष्टा कौ धरि ध्यान।
स्रज वनिता सब त्यागि कैं, है निरग्रन्थ संज्ञान।।16।।
श्रायसोक्ति जिनदेव जो, श्लाध्य योज्ञ जसु वैंन।
ताकौ चितवन करि भय, पावै सम्यक नैंन।।17।।
श्रायसोक्ति जिनदेव स्यौं, इह विनती करि मित्त।
मेरौ सर्व मिथ्यात हरि, देहु सुसम्यक वित्त।।18।।
श्रावक के बारह वरत, मौकौ दे जगनाथ।
श्रावक तैं फुनि साधकरि, देहु महामुनि साथ।।19।।
श्राद्ध नांव श्रद्धापरा, जे हैं श्राध महंत।
तोहि जपैं श्रद्धा करी, ते लै मुकति सुकंत।।20।।

श्राद्ध होय करि तुव भजैं, श्राप न काहूं देहि।
उणमणि मुद्रा गहि रहैं, ते जन तौकौं लेंहि।।21।।
श्राप देंहि ते पापिया, जे नहि जिन भगता जु।
हरि भगता श्रापैं नहीं, जिन पद आसकता जु।।22।।
श्रित वत्सल लू श्रित शरणं, श्रित उद्धारक देव।
मोहु करि श्रित आपनी, देहु निरंतर सेव।।23।।
श्रियातीत स्वामी परम, तू जु श्रियंकर नाथ।
नाम श्रियांस जु रावरौ, दै जन कौ जिन साथ।।24।।
तू ही देव श्रियां निधी, तो तैं सब श्रिय होय।
स्रिस्टि तजैं स्रष्टा भजैं, तब पाँवै तुव कोय।।25।।
श्रित जु अनेक उधारिया, तू जु उधारक सोय।
तेरौ शरणौं जे गहै, ते पावैं शिव लोय।।26।।
श्रीनिवास श्रीकार प्रभु, श्रीधर श्रीवर देव।
श्री विलास श्रीपात जिन, श्री श्रित श्रीकर सेव।।27।।
श्रीपति श्रीजित श्रीविरत, श्री निधान श्रीकांत।
श्रीदाता श्रीभोगता, श्रीजिन परम प्रशांत।।28।।
श्रीप्रधान श्रीमान जी, श्रीहरि श्रीहर देव।
श्रीभर श्रीपर श्री सुथिर, श्रीपारग जसु देव।।29।।
श्रीक्रीड़ावन श्रीतरु, श्रीगिर श्रीचिर भूप।
श्रीसमुद्र गुण अंवुधी, श्रीनामक श्रीरूप।।30।।
श्रीत्याग श्रीनाथ प्रभु, श्री शिव मंदिर ईश।
श्री सनाथ है जा कनैं, सो जिनराय अधीस।।31।।
श्री जु तिरै जा नावतैं, सो श्रीराम प्रभु जु।
श्री परमातम श्री परम, परमेश्वर सु विभु जु।।32।।
श्री पइए पा नाव तैं, सो श्रीराव जिनेश।
श्रीधामु जु श्रीग्राम है, पूजैं पाहि सुरेश।।33।।
श्री जी श्री रैवत प्रभु, श्री सागर शिव मेर।
श्री जिहाज भवतोर जो, श्री वधम श्री प्रेर।।34।।

श्रीधन श्रीतन श्री स्वधन, श्रीवर्जित श्रीदेव।
श्री स्वामी श्री सृष्टि, जो श्रीरहितो अति भेद।।35।।
श्रीरूपा निज भूति जो, अनुभूति जसु नाम।
ता संयुक्त जु देव है, अमित गुणातम धाम।।36।।
अर नश्वर जगभूति जो, तासौं रहित जु दैव।
निज सत्तास्यौं रमि रहयो, श्री संयुक्त सदैव।।37।।
श्रीश्रित पादांबुज प्रभु, श्रीश्वर श्रीदत्र श्रीश।
श्रीगत श्रीरत श्रीमदन श्रीपादन श्रीधीश।।38।।
श्रीभावन श्रीमय विभू, श्रीजाकी अनुभूति।
वह श्री मुनिगण पाल जिन, मोहि देहि निज भूति।।39।।
वह श्रीवृक्ष जु सुधार को, वह श्लक्षण लक्षाढ़ा।
वह श्रीवत्स अनूप धर, वह श्री विश्नुगुणाढ़।।40।।
श्री वास्यौं न्यारी नहीं, वाकी परणति सोय।
श्री रूपा जो जग कहै, सो नहि ताकैं जोय।।41।।
श्रीशैल श्रुति नांम जसु, जो हणवंत महंत।
हनुमान जाकौ कहै, सीतास्यों भगवंत।।42।।

(चौपई)

तू श्री गर्भरूप भगवाना। अतुल विभूति प्रसंग अमाना।।
श्री हे तेरी पर्जय स्वामी। शुद्ध स्वभाव कलोल अमामी।।43।।
श्री हीं धृति कीरति बुधि कमला। ते सब तेरी दासी अमला।
तू सब ऋद्धि वृद्धि कौ नायक। सिद्धि स्मृद्धि सु तेरी पायक।।44।।
श्रीपाल जु कोड़ीभड रायो। मैना सुंदरि पति जु कहायो।।
चंपापुर धर तुव पद ध्याया। ह्वै निजरूप सु तो महि आया।।45।।
तू श्री पालक जगत प्रपाला। श्रणि विश्रांम सकल भ्रमटाला।।
फुनि श्रीपाल जु चक्री तार्‌यो। वाकौ सब दुख हरि शिव धार्‌यो।।46।।
इह चक्रीअु विदेहां कीजो। फर पर अंकुज चरनां कौ जी।।
फारि पुरां न मांहि है याकी। कथा रसीली जिनभगतांकी।।47।।

तै श्रीपाल उधारे केई। ते उधरै जे तौकौं लेई।।
तू श्रीषेण राव सुखकारा। तू शिवभाव परमरस धारा।।48।।
तू श्रीबीजभूति जिन सामी। भक्त सुधारक आनी विश्रामी।।
श्री गुरु कृपा होय जब देवा। तव पावै जन तुम्हरी सेवा।।49।।
श्रणु देवसधिदेव मम विनती। तेरे गुन की नाहीं जु गिनती।।
तुव जस श्रवण मोहि है साधू। तेरी भव भव करौ अरांधू।।50।।
तेरे श्रुत कर प्रोहित उधरयो। सूरिजमित्र नांद भव उतर्‌यो।।
श्री सुधर्म नैं मुनिपद हीनौं। विद्या हेतु जु बानै लीनौ।।51।।
जब लग तुव मत सार न पायो। तब लग आसा दास कहायो।।
तेरी तत पायो जब देवा। भयो ब्रह्ममय सकल अलेवा।।52।।
वह प्रोहित तेरो निज दासा। बुहतनि की काटी जस पासा।।
जन अनेक जिन तो मैं लीनैं। वाकौ पायं बहुत निज भीनें।।53।।
श्रुत परसाद सु केवल लैकें। आयो तब पुरि जग जल दै कैं।।
तेरे श्रुत करि अगणिता सुरझे। भव भ्रम छाडि सु तोमैं उरझे।।54।।

(दोहा)

श्रुतिधारक श्रुतिकार जो, श्रुतिमूल जु श्रुतिरूप।।
श्रुति उधारक भाव श्रुत, श्रुतिसागर श्रुतिभूप।।55।।
श्रुतपारग श्रुतिसार प्रभु, श्रुति मारग श्रुति ईस।।
श्रुतप्रकास श्रुत भाव सब, श्रुतिनायक श्रुति सीस।।56।।
श्रुति सुनि जिनि तू नहि भज्यो, ते श्रुत वर्जित मूढ़।।
श्रुति भनि जिनि तू आदरयौ, तिनि पायो पद गूढ़।।57।।
श्रुति हू भनि तू नां लख्यो, ते जु अचक्षु निरंध।।
श्रुति प्रतीति करि तू लख्यौ, तिन काटे भवबंध।।58।।
श्रुत तेई जे तुब सुनैं, तेहि लखैं ते चक्षु।।
तुव पूजारत कर तिके, जे दासा ते दक्ष।।59।।
श्रुति सुनि जिनमंदिर अहैं, जांहि जु तीरथ जेह।।
मुनि वंदन जिन वंदनां, तातैं क्रम धनि तेह।।60।।

श्रुति मैं तेरौ सुजस सुनि, रटै नाम धनि जीभ।।
जो जिह्वा तोहि न रटै, वातैं भले अजीभ।।61।।।।
श्रुति समृति कौ आदि जे, बहु पुराण बहु ग्रन्थ।।
तिन मैं तू ही गाइए, तू जु अध्यातम पंथ।।62।।
श्रुति सुश्रुषा जो करैं, तजि माया जंजाल।।।
ते तोकौं पावैं सही, सरवातम रछिपाल।।63।।

(चौपई)

तू जु श्रुतातम श्रुतपति सांई। तेरौ श्रुत अमृत की नांई।।
हरै व्याधि सब जेती जग मैं। जे पीवै ते धन्य जगत मैं।।64।।
श्रूयमांण जस तेरौ स्वामी। भवजल पार करै शिवधामी।।
श्रूय जु माणा तुव गुण जीवा। शुद्ध स्वरूप हौंहि सुख दीवा।।65।।
श्रेयां नूनां वति हारौ जिनपति। श्रेय करै अरकाटै भवतति।।
हमरी कालिम मेटि गुसांई। करि अमरण अज अजर असांई।।166।।
श्रेय रूप जिनधर्म प्रकासा। श्रेयमूल प्रभु सुविधि विभासा।।
अश्रेयातम अविधि जिको है। ताकौ मेटक नाथ तिको है।।67।।
श्रेय पुंज तू श्रेय अधारा। श्रेयातम श्रेयांस उधारा।।
राव जु श्रेयांसो कुरुवंसी। सो मानुज जगजाल विधुंसी।।68।।
श्रेय करण श्रेयांस विधारी। तू सोमप्रभ तारक भारी।।
श्रेय तणौं घर पावन कीयों। अविनासीपुर वाहि जु दीयो।।69।।
श्रेष्ठ सकल मैं सृष्टा सबका। श्रेय तत्त्व अज अजरण कव का।।
श्रेणिक के सुत जानैं तारैं। श्रेणिक पतनी के भ्रम टारे।।70।।
श्रेणिक राजा कौ तारैगो। तीर्थंकर करि प्रभु धारेगो।।
धरि श्रेयांस ईख रस लैं कैं। दीयो सिवपुर सरवसु दै कै।।71।।
श्रेष्टी जानैं बहुत उधारे। ब्रह्मण क्षत्री प्रचुर उवारे।।
श्रेष्टी वृषभदास जिनि तार्‌यो। श्रेष्टी अरहदास फुनि धार्‌यो।।72।।
तार्‌यो जिनदत्त न भल श्रेष्टी। तारयो मदन सुदर्शन श्रेष्टी।।
मित्र कुवेरो कांत कुबेरा। पूत पिता भव तैं जु निवेरा।।73।।

श्रेष्टी वारदत्त निज कार्‌यौ। गुनह माफकरि जन्म सुधार्‌यो।।
प्रथम अवस्था गनिका धारी। पाछै समऊिर भगति उजारी।।74।।
श्रेष्टी उपगृहन गुन पाला। नांव जिनेन्द्रभक्त अघ टाला।।।
ताकौ पार उतारयो स्वामी। कियो अपभ्रम अंतरजांमी।।75।।
श्रेष्टी भवसदंन सुख देवा। श्रेष्ठो बहुरि सुकांत धरेवा।।
धवल सेठ पापी नहि लेवा। कोड़ी भट दुख दूरि करेवा।।76।।
श्रेष्ठी श्री सुकुमार जु स्वामी। ताकौं दीनें अतिधन धांमी।।
फुनि वाकौं जु महाव्रत दीयो। अतिउपसर्ग जितीश्वर कीयो।।77।।
सरवारथसिधि वाकौं दीनी। इह तुम्हरी महिमा जगचींनी।।
श्रेष्टी सालिभद्र धन देवा। श्रेष्ठी धन्य कुमार धरेवा।।78।।
तू श्रेयांस नाथ अति श्रेयो। श्रेष्टी अनत उधारिक जेयो।।
श्रेय तत्त्व दायक अभिरामी। तू ब्रह्मन्य ब्रह्म पथ गांमी।।79।।
श्रेणि जु पंकति कौं है नामा। श्रेणि पूज्य तू श्रेय जु रामा।।
श्रेणि लंघ तू केवल रूपा। उभै श्रेणि प्रगटक जग भूपा।।80।।
उपशम श्रेणी क्षपक जु श्रेणी। तू जु प्रकासै नायक श्रेणी।।
उपशम वारे फिरि करि आवैं। क्षपंक जु सूधे तुब पुरि धावैं।।81।।
श्रेणी धर जे श्री मुनिराया। श्रेणि नाथ तू निज में ध्याया।।
श्रेणी सेव्य तू श्रेणि वितीता। केवल रूपी देव अजीता।।82।।
तुव मत श्रेष्ठ श्रेष्ठ गुण पुरा। श्रेष्ठ सदा का भ्रांति बिदूरा।।
मोहू कर शिव श्रेष्ठ स्वरूप। तू शुनधातम अचल अनूप।।83।।
श्रैमत आगम तुम्हरौ स्वामी। तुम श्रीमत श्रेयति अभिरामी।।
श्रैमत आगम अध्यातम जो। इह परमारथ ज्ञानातम जो।।84।।
श्रैमत सूत्र जु जे नर सुनि हैं। परम तत्त्व परमारथ मुनि हैं।।
श्रैमत आगम मुनिनि जु चार्यो। तिनि तेरौ पद लखि निज तार्‌यो।।85।।
तू जु अमूरत चेतन रामां। तेरै देह न गेह न भामां।।
श्रोणित रुधिर तणौ है नाम। तेरै रुधिर न सहनन काम।।86।।
वज्रवृषभनारांच जु सहनन। दूध समान जु श्रोणित धर तन।।
तेरी महिमा तो ही मांही। और ठोर इह दीषै नांही।।87।।

श्रोणित आंमिष अस्ति जु च चर्मा। मल मूत्रादिक मद मधु कर्मा।।
तेरे श्रुति मैं इनि मलिनानि कौ। छींवो नांहि जु क्रापि अघनि को।।88।।
इस वसतनि कौ नांव सुने जी। भोजन तजिवौ तू जु भनैं जी।।
जिनके मत मैं अस्ति सुचर्मा। पावन भाषै ते अति भर्मा।।89।।
जंगम कौ जु कलेवर अभषा। याते उपजी वस्तु जु न भषा।।
अन्न जला काष्टादिक तेरै। मत मैं ग्राह्य सु तू शिव प्रेरे।।90।।
श्रोत्रिय ब्राह्मण गौतम स्वामी। पार उतारि कियो शिवधामी।।
तू श्रोत्रिय गणधर गण तारा। श्रोत्रिय पार उतारण हारा।।91।।
गौतम के भ्राता हू तारे। दै निज रस मुनिवर वकारे।।
श्रोता तेरे पावैं मुक्ती। श्रोत्रिय नाथ देहु तुव भक्ती।।92।।
तू वक्ता वदतांवर स्वामी। अंबर रहित अरूप अनामी।।
श्रौत समार्तक धर्म प्रकासा। अर पौरांणिक धौत मलासा।।93।।
श्रौत विमुष जे श्रौताभासा। तेसठ मति नहि वाके दासा।।
ते बूडैंगे भवजल मांही। मिथ्या मांहि धर्म कछु नांही।।94।।
सप्त भंग मय वाणी जाकी। सर्वात्तम मय भाषा बाका।।
सर्वातम की रछा जाकै। जी दया कौ मारग ताकैं।।95।।
श्रौत जु मारग सरवगि भासा। यातें विमुख जु श्रौता भासा।।
श्रौताभास लहैं नहि तत्त्वा। भव तजि श्रौत जु तत्त्व हि पत्ता।।96।।
श्र्यंक देव तू ही श्री अंका। तो बिन्नु और सवै जग रंका।।
एक श्र्यंक तू ही जग मांही। तो बिन्नु और मयंक को नांही।।97।।
शृंग जु गिर कै ध्यान धरैं जे ते मुनि तरि हैं तोहि हिये ले।।
तू शृंगार विवर्जित स्वामी। निज शृंगार मई अभिरामी।।98।।
सब शृंगार तजैं जे साधू। तेरे काजि धरैं जु अराधू।।
ते जग शृंग तत्त्व तुव पावैं। लोक शृंग चढ़ि तुव पुरि आंवै।।99।।
शृंषल मानतुंग की काटी। शृंखल रहित कियो अद्यदाटी।
तेरौ भक्तामर घुति देवा। वन कीनौं भव पार करैवा।।100।।
तू भव शृंखल छेदक देवा। लोक शिखरि राजै बिनु छेदा।
शृंगवेर इत्यादि कंदा। तू सब कंदमूल कौ निन्दा।।101।।

शृंगवेर कहिये अदरख कौं। तजैं दास बाईस अभख कौं।।
स्रंसध्वंस अघपतन न तिनकौ। हौवे क्रापि न तू पति जिनकौं।।102।।

(दोहा)

श्र: कहिये मात्रां तिकी, श्र आगै द्वै शून्य।
तू सब मात्रा मैं प्रभू, राजै पूरण पुण्य।।103।।
सुनिकैं द्वादश मात्रिका, धरिकैं द्वादश व्रत।
तपिकै द्वादश तप विधी, तजिकै द्विदश अव्रत।।104।।
तोहि जपैं जगनाथ जी, तू तारै वनकौं जु।
भुक्ति मुक्ति माता तु ही, तेरै सर्व जु सौं जु।।105।।
तेरे नर नीच श्रगाल सम, जे नहिं ध्यावैं तोहि।
तोहि छांडि और हि भजैं, इह अचिरज अति मोहि।।106।।
जे श्रगाल हू तुव भजैं, ते श्रगाल नहि सिंह।
तोहि ध्याय जंबू तिरयौ, जगतनाथ नरसिंह।।107।।

(चौपई)

सुनि मुनि वैन जु एक श्रगाला। भयो धर्मरुचि आनं विशाला।।
श्रावक के व्रत जानें धारैं। अभख अहार जु सदही टारे।।108।।
त्यागो निसि भोजन जु श्रगाला। जिन मत पाय भयो सु निहाला।।
एक दिवस वह वापी मांही। पैठो जल पीवन सक नाहीं।।109।।
देखि जु वापी मांहि अंधेरा। पियो न जल दृढ़ व्रत धणेरा।।
तब ऊपरि आयौ वह ज्ञानी। देख्यो सूरिज ज्योति प्रधानी।।110।।
फुनि पैगे जल जीवन जम्बू। तिमर डोरी पीयो नहि अंबू।।
बिनु जल पान रह्यो जु श्रगाला। अनशन रूप कियो निजि काला।।111।।
देह श्रगाल त्यागि वह जैनी। भयो जु प्रीत्यंकर अघ छैनी।।
अति रूपी अति सुन्दर देहा। परम धनाढ़ा सु धर्म सनेहा।।112।।
सर तजि कैं वन मुनिव्रत धार्यो। तोहि हिये ले आतम तार्यो।।
तु परसाद भयो भवजारा। तू अति खेवट पार उतारा।।113।।

इति श्री मिश्राक्षर की द्वादश मात्रा पूर्ण हुई।

अथ एक कवित्त में ॐकार व श्र की बारा मात्रा कहैं छै—

(सवैया इकतीसा)

प्रणव स्वरूप तू ही, श्रमण उधारक है,
श्राद्ध श्रेय तोहि भजै धन्यधन्य ते नरा।
तू तो श्रितवत्सल जु श्रीनिवास लायक है,
श्रुण एक वीनती, सुकाटि भव वागुरा।
श्रूयमांण तेरौ जस श्रेय कौ जु पुंज द्वेय,
श्रैमत जो आगम है भासै अष्टमी धरा।
श्रोतांनिकौ तारक तू श्रौतपंथ भाषक है,
श्रंयक देवजी जु श्रः प्रकाश है धुरा।।114।।

(दोहा)

श्री जु कहौ संपति कहौ, कमला कहौ निशंक।
मा लक्ष्मी जु रमा कहौ, जिन सत्ता जु अपंक।।115।।
लोक जु भाषा मांहि है, दौलति वाकौ नाम।
सो पईए जिन नाम तैं, लछि महा सुखधाम।।116।।

इति श्रीभक्त्यक्षरमलिका बावनीस्तवन अध्यातमबारखड़ी नामधेये उपासनातंत्रे जिनसहस्रनाम एकाक्षरी नाममालादि अनेकग्रन्थानुसारेण, भगदभजनानंदाधिकारे आनंदराम सुत दौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनी कृते प्रथम स्तुतिप्रारम्भकारेण प्रणवमहिमापूर्वक श्रकारमिश्राक्षर प्ररूपको नाम ग्रन्थ प्रथमः परिच्छेदः।

द्वितीय परिच्छेद



आगै चउदह स्वर अर अनुस्वार विसर्ग ए षोडसाक्षर त्यामें मुख्य अकार, अकार बिना ककारादि सर्व अक्षरकों उच्चार न होय। क असौ शब्द उच्चार कीजे तब अ इसौ सुर ककार में उच्चरै। सर्व अक्षरां कौ जीवयोग अकार छै। तातैं प्रथम ही अकार को व्याख्यान करैं छैं। सौ एकाक्षरी नाममाला मैं क नाम हरिहर कौ कह्यो सो हरिहर जिन भगवान ही कौं नांव छैं। पापा नैं हरै तीस्यौं हर, सारां का इन्द्र तीस्यौं हरि, यम कुंजर नै भयकारी सिंह समान तीस्यौं हरि, सर्व कर्म नैं जीतैं तीस्यौं जिन, सो ए नाम एक श्रीजी का छै।

(श्लोक)

अनादिनिधनं वन्दे, जिनं हरिहराभिधम्।
अलक्षलक्षणोपेतं, अमरामरमीश्वरं।।1।।

(सोरठा)

अ कहिये श्रुति मांहि, हरिहर कौ इह नाम है।
तो विनु अवर सु नांहि, हर हरि जिनवर देव तू।।1।।

(चौपई)

अणोरणीया अंबरमहिता। तू अद्‌भुत आतम गुण सहिता।।
तू अनंत जितदेव अमीता। भद संतान अनंत विनीता।।2।।
अर्द्ध भाग तेरे नांहि शत्रु। अर्द्ध जु नारीश्वर जगमिजत्रु।।
तेरै कांइक अर्द्ध न पईए। तू अर्द्ध जु नारीश्वर कहिये।।3।।
अमल चक्षु तू क्षायक दृष्टी। अनत चक्षु तू ईश्वरसृष्टी।।
अमित पराक्रम धारी राया। अतुल सुखातम रूप सिकाया।।4।।
अचल प्रकास अनंत सु लोकी। लोकालोक विलोक अथोकी।।
अतुल लब्धि को तू ही ईशा। तू जु अयोनी संभव धीशा।।5।।
अनंत दान अर अनंत जु लाभा। अनंत जु भोगुपभोग महाभा।।
तेरो समता तू ही स्वामी। तो सौ और न अंतरजामी।।6।।
अजड़ अतिंद्रिय ज्ञान अनंता। तू जु विकल्प प्रवाह हनंता।।
संकल्पा अर सकल विकलपा। मेरे मेटि जू देव अकलपा।।7।।
अकषाई तू परम पुनीता। तू जु अलेसी देव प्रतीता।।
सुख जु अतिंद्रिय देहु य मोंकौ। धोकौं द्रव्य भाव करि तोको।।8।।
अमलातम तू विमल अरूपी। अनहारी तू त्रिप्त स्वरूपी।।
तू जु अनिंद्रिय देव अजोगी। तू जु अवेदी वेदक लोगी।।9।।
अजरातम तू अजरण सांई। तू जु अमृत्यु अकाल गुसांई।।
तु जु अशेष वितीत अशेषा। तू अचलातम जन्मन भेषा।।10।।
तू जु अचिंत्यातम अतिधामी। चितऊँ, कैसे तोकौं स्वामी।।
अलमलमीश तुम्हारी प्रभुता। तुम अधिजोगी भरित स्व विभुता।।11।।
तु जु अनश्वर रूप जिनिन्दा। तू धु अधर्य अजीरण इंद्रा।।
तु जु अनंत दीप्ति भगवंता। तू धु अग्रणी श्री अरहंता।।12।।
अर्हन तू अरूप अचल स्थिति। तू अक्षोभ विदारक भवथिति।।
अच्युत भूपा मोहि उघारौ। दीनानाथ अु विरद उजारौ।।13।।
असंभूश्नू हि नाम सु तेरा। मेरा हू करि देव निवेरा।।
तू अणिष्ट अति सूक्षम विमला। तू अति निर्मल चिदघन अमला।।14।।

अनुभव नाथ अधिक तू प्यारा। तू अशेष कलमष तैं न्यारा।।
मोकौ दे निज अनुभव स्वामी। निज अनुभूति निवास स्वधामी।।15।।
अति संगी तू है जु असंगा। यति संगी तू है जु अरंगा।।
रंगनाथ तू है अतिरंगी। लोकनाथ तू कथक त्रिभंगी।।16।।
तू अधर्मधक अगनि स्वरूपा। तू अतिधर्मी त्रिभुवन भूपा।।
तू अमूरतातम अतिज्ञानी। तू जु अनंग अति गति मानी।।17।।
अमृतोद्भव अमृत आतम। तू अशोक ध्वज अति जगदातम।।
तू अशोक घनशोक वितीता। शोक संताप हरौ मम जीता।।
तू अगण्य गणती तुझ नांही। तू अचिंत्य वैभव सब माही।।18।।
अभिनंदन अभिनंदक देवा। लघु अपरमेयातम भेदा।।
तू सु अरिजंय फुनि जु अभीष्टा। तू जु असंस्कृत सब जग इष्टा।।19।।
तू अप्राकृत अवधि जु वासी। मेरी काटि देव जम पासी।।
तू जु अनाश्व, अशन वितीता। तू जु अनत्यय अत्ययजीता।।20।।
तु जु अत्ययो नाशन तेरा। व्यय अत्यय नाम जु मरणेरा।।
तू अधिकोधि गुरु जु मुनीशा। तू न अधातम देव अधीशा।।21।।
अक्षय तू व अनणु अग्राहक। अज्ञेय अवितर्क अवाहक।।
तु जु अगम्य अध्यातमगम्या। अक्ष प्रोतू परम जु रम्या।।22।।
तू अमोघ शुभ वाक जु स्वामी। मोघन तू जु अदापि अकामी।।
मोघ जु नाम कहैं सुवृथा कौ। तू कबहू न वृथा कितथाकौं।।23।।
तू अमोघ शासन जगनाथा। तू अमोघ भाषक जिननाथा।।
तू अमोघ आज्ञादायक है। तू जु जेनिंदा सब लायक है।।24।।
तु जु अतीन्द्रिक उपमाराया। तू अधिपति अर अधिप अछाया।।
तू अचिंत्य चिंतक जगदीसा। तेरी आज्ञा सब के सीसा।।25।।
अधिदैवत तू अप्रतिघाता। अप्रतिघो अतिजगत विख्याता।।
तू अमुग्ध अतिमुग्ध जु लोका। तेरी सेवन जानहि है वोका।।26।।
अमित सु ज्योति श्री भगवंता। तू जु अमोमुह ओज अनंता।।
तू जु अधिष्ठानं अप्रतिष्ठा। तेरी सर्वग ख्यात प्रतिष्ठा।।27।।

अभयंकर तू उद्यत द्योती। अखिलातम तू अखिल प्रज्योति।।
तू अपार धी अनंत सुशील। कैसे करिहौं तेरी भक्ति।।28।।
तु जु अनिद्रालू जोगेसा। तू जु अंतरालू अति भेसा।।
तू जु अनामय आमय त्यक्ता। व्यक्त अव्यक्त सुव्यक्ता व्यक्ता।।29।।
अनुभवगम्य सुनम्य अनूपा। अलभ अकथ्य अवाच्य अरूपा।।
अघर ओद्य अमेद्य अतीक्षा। अमर अलब्ध सुलब्ध यतीशा।।30।।
अचर अचिंतित तू जु अशब्दा। अति भव दाह बुझांवन अब्दा।।
तू जु अनिंदित नंदित देवा। परम आनंदी अकल अभेवा।।31।।
अतिदुल्लभ अतिवल्लभ स्वामी, अति पावन अति भावन नामी।।
अति सु दयाल अनुत्तर सांई। अति जु कृपाल अपात गुसांई।।32।।
अतिधर्मी अभिबंद्या जिनिन्दा। अतिमर्मी अघकंद निकंदा।।
अतिज्ञानी अजरामर इंदा। अति ध्यानी अघचूर मुनिन्दा।।33।।
अतिरानी अतिसुन्दर नाथा। अत्युतर पर अति गुण साथा।।
तू जु अलक्ष अवक्ष अवर्णा। तू जु अनक्ष अप अक्षकर्णा।।34।।
अतिगति अपरस अतिपति तू ही। तू अति चक्ष अवाल प्रभू ही।।
तू अत्यक्ष अवाहिर स्वामी। अक्षजीत तू अति अभिरामी।।35।।
तु जु अजीत अभीत अकल्ला। तू जु अतीत प्रतीत अटल्ला।
तू जु अमूरत मूरति जैंना। तू अति सूरति अद्‌भुत बैना।।36।।
अति धीरज तू अतुल अचल्ला। अमरण अमृत अबश अखिल्ला।।
अरज अजो अजरो च अमाल्ला। तू जु अवणा देय असल्ला।।37।।
अरस अगंध जु रूप न तेरे। अफरस तू हि जु शब्द प प्रेरै।।
अग अभयो जु अविक्त गुसांई। अक्रिय रूपी अमन असांई।।38।।
अभिप्राय सु जाकै नहि कोऊ। अभिप्राय जु ज्ञायक इक होऊ।।
अपर अपार अजड़ नरनाथा। अकर अवक्त विअति वड़ हाथा।।39।।
तू अविकार अंनजन स्वामी। तू अनगार अरंजन नामी।।
अति अधिकार जु एक तुही है। गति गति ज्ञायक तू जु सही है।।40।।
अवधि न गम्य वसे जु हमारा। सर्वाधिक्य जु रूप तुम्हारा।।
अक्षातीतं अक्ष वितीतं। अक्षरवीतं परम प्रतीतं।।41।।

अक्षर तू अक्षर तैं न्यारा। अक्षर भासक जगत उधारा।।
अति दुखकर अघहर अभिनंदी। अति भरि पूरण पाप निकंदी।।42।।
तू जु अकर्तृम देव अनादी। अतिभवकंदन एक अबादी।।
अकलित अखलित तू जु अनूतम। तू अतिभार अभार जगुत्तम।।43।।
अत्युत्तर तू नाथ अत्युत्तम। नुत्तर उत्तर तू जु जिनुत्तम।।
अभयकरण अतिधरण अनंता। अजित जितेश्वर श्री भगवंता।।44।।
अतनुविदार अनंग स्वरूपा। अतनुज कहिये काम अरूपा।।
अनघ प्रचार अहित हत तू है। अचर अचार अनंग प्रभू है।।45।।
अनृतवर्जी अदतवितर्जी। तू जु अहिंसा रूप अगरजी।।
अदत न लेवा तू जु अकिंचन। तू जु अलीक निवार निरंजन।।46।।
तू जु अहिंसा राय अमाया। हिंसा वर्जित धर्म बताया।।
अतन अमत तैं रहित जु नाथा। अदत निंकदा तू बड़ हाथा।।47।।
अमरेश्वर पूजित जिनदेवा। अहि पति गोपति धारहि सेवा।।
चतुर निकाय कपायक तेरे। अर्क पती हरि तिमर जु मेरे।।48।।
अहमिन्द्रनि करि तू पुजानां। तू अमरिन्द्रा इंद्र भगवाना।।
अतिपति आटे पति अधिपति जेते। तव दानि के दास जु तेते।।49।।
अहि कौं अहिपति तैं ही कीयो। अर इक अज कौं सुरपुर दीयो।।
अतिहित अघहत अहपति पति तू। अभगत अतिगति अति छति जति तू।।50।।
अधिपति तू हि जु और न कोई। अवितथ अविगत अविहित होई।।
अखलित अचलित भाव जु तेरा। तू जिनवर जतिवर सब केरा।।51।।
तू अरिहंता अर्ह जु चिंता। तू जु अनंता श्री अरहंता।।
अर्हन तू जु अविद्या हारी। अर्क अनंत समो द्युतिधारी।।52।।
तू जु अनंत सुदर्शी ईशा। तू असपरसी एक अधीसा।।
अर्द्ध सु चक्री वंद्य तू ही है। तू जु त्रिषंजी नाथ सही है।।53।।
अखिल जु चक्री वंदहि तौकौं। चक्रपती पति दै शिव मोकौं।।
अखिल सु मंडलिका नृप सेवैं। अनगारा मुनि तोहि जु लेवैं।।54।।
अनुव्रत धर श्रावक जे स्वामी। तोहं जु पूजहि तू गुणग्रामी।।
अबरत समकितधर श्रुत तू ही। अमरासुर पूजित जग दूही।।55।।

असुरसुरा सब तोहि जु ध्यावैं। अपछरगण सुर धरि गुण गावें।।
तू अभिध्येय विकासक देवा। तू अभिधान प्रकास अछेवा।।56।।
तू अभिधाता अतिगणपाता। तू जु प्रमाता नाथ अधाता।।
अतिगुण पूरा अतिशय धारी। अति भवदूरा निकट विहारी।।57।।*
.....दहंता। तू जू अचेला एक अनंता।।
तू जु अकिंचन मूल गुसांई। तू जु अलंघ्य असंधि असांई।।66।।

इति पंच महाव्रत निरूपण स्तुति।

तू जु अजंघा वज्र सु जंघा। तू जु अलंघ्य किनहि न लंघा।।
तू अभिलाष विवर्जित ज्ञानी। अंतरहित अंतर गति जानी।।67।।
अतुलबी अतिभार धरइया। अनत सुखी अतिभोग करैया।।
अनतुपभोग पूरण स्वामी। तू जु अजोगो जोग अकामी।।68।।
अतितिक्षाहर क्षमइक तू ही। तू जु अमांनां अजित प्रभू ही।।
तू जु अदंभी दंभन जाकै। तू जु अचंभी कपट न ताकै।।69।।
तू जु अमार्दव मर्दक एका। तू जु अनार्जव छंड अनेका।।
तू जु अदूज सुदूजि न तेरै। अकपट अकपाटसु प्रभु नेरै।।70।।
तू जु अकूट अकंट गुसांई। अन्त वर्जित धर्म कराई।।
नांहि अलीक जु शासन तेरौ। अतितिक्षाजित हित जु छणेरौ।।71।।
तू जु अनार्जवनास प्रवीनां। तोहि न पाँवहि मार्दवहीनां।।
अनिधन भाव जु तो तै लहिये। अमत अतत सवितथतैं रहिये।।72।।
तू जु अशौच प्रहार सु सूचा। पूजा अधातु अगातसु ऊँचा।।
तू जु अजात जातक का कौं। तू जु अरूप प्रभू सुरमा कौ।।73।।
तु जु अनूप अनंद स्वरूपा। दूरि नहीं तू हरि अरूपा।।
तु जु असंयम हर यम धारी। यमहारी तू संयम भारी।।74।।
संयम कारण तू अविकारी। अति संयम धर नाथ अपारी।।
तू विभु यम भर नियम स्वरूपा। अनिय महारीतप जु प्ररूपा।।75।।

---

* यहाँ 58 से 65 तक के छन्द पढ़ने में नहीं आ रहे हैं।

अतितप कर अति तप धर स्वामी। अति तभर अतितयहर नामी।।
अतितप अनशन आट्रिक प्रगटा। अति तपज्वर रोगादिक विघटा।।76।।
अतप विनिंदक अति तप माया। अनशन रूप अभूंष प्रकाया।।
अदन नहीं तेरै अवहू भी। अनशन भासक है जु विभू भी।।77।।
अवमोदर्य प्रसंसक तू है। तप तेजस्वी तू जु प्रभू है।।
अतिवृतिपरिसंख्या दायक तू। अति रसनायक सब लायक तू।।78।।
तू अतिरस अर रस परित्यागी। अतिरितश्यनाभ न तप भागी।।
तू विकार विविक्त सु वा। तु जु अकायक लेस अभेवा।।79।।
अतिहिकाय कौं क्लेश ज देनां। संकलेस भाव जु नविले नां।।
छह विधि बाहिर तप तू भाषै। छहविधि अंतर तप हू राखै।।80।।
तू अपवित्र जु भाव न राखै। तू जु पवित्रातम रस चाखै।।
तेरे प्रायश्चित नहि होई। पाप लगै नहि तोहि जु कोई।।81।।
तू प्रायश्चित तप दायक है। तू जु जिनिंदामुनि लायक है।।
अविनय रूप जु धर्म न तेरा। विनय प्रकासक तू जु घणेरा।।82।।
तू अविनय जु निकंदक ईशा। विनय मूल सुधर्म अधीशा।।
तेरौ विनय जु सब को करई। वेनय भासक तू भव हरई।।83।।
अतिथिनि कौं आदेसक तू ही। अतिथिनि कौं पति एक प्रभु ही।।
तू जु अ वइया वृत्य करेवा। अवरनि कौं इह तप जु कहेवा।।84।।
अतुलित संयम भर अति संगी। अनघ अचंभी अकलि तरंगी।।
अतिघुति योज्ञ जुजे मुनि राया। वह जु अपूजक तिन करि ध्याया।।85।।
अरति विहंडी रति पति दंडी। अवगुण छंडी अविनय षंडी।।
अति स्वाध्यायी जे मुनि राजा। तिन करि ध्येय सदा जिन राजा।।86।।
अतिपूरण वह आप जिनिंदा। अति श्रुत धारक अति श्रुत इंदा।।
अतिश्रुत पूरण श्रुति जु उलंघा। केवल रूपी देव अलंघा।।87।।
अतिव्युतसर्ग उदेसक रांई। अतिव्युतसर्ग जु मूल गुसांई।।
अतिशय ध्यानी अतिशय ज्ञानी। अनुपम शुकल प्रपूर अमांनी।।88।।
अध्ययनों ध्यानों इक तेरौ। ध्यान रूप तू पति सब केरो।
अति त्यागी अति भागी देवा। अति त्यागोत्तम आ करेवा।।89।

अत्याकिंचन मूल जु तू है। धर्मराज तू एक प्रभू है।।
आप अकिंचन सर्व सु जापैं। इह अदभुत गति देखहु तापैं।।90।।
अपवर्गा कहिये जो मुक्ती। तू मुक्तीश देहु मुझ भक्ति।।
सर्व समूहा सर्वमयी तू। सर्व रिद्धि धर कर्मजयी तू।।91।।
अनिजु सथूला है जु निरंजन। सिद्धि वृद्धि भर वह जु अकिंचन।।
ब्रह्मचर्य तैं लभ्य जु सोई। ब्रह्ममई मूरति जसु होई।।92।।
अतनु विदार जु आप अकारा। काम जु दायक काम प्रहारा।।
तू जु अध्यातम सार अनादी। अध्यातम मय देव अबादी।।93।।

इति दशलक्षणधर्मात्मक भगवत्-स्तुति।

अतिभव चरण अति जसुनाथा। मयण जिती अजितं जित गाथा।।
तू जु अध्यातम मूल प्रसिद्धा। अवरुिध अविरुध अनुभव सिद्धा।।94।।
अखिल सु नायक देव अनाथा। अखिल सु दायक आप असाथा।।
अखिल सुज्ञायक आप अलेषा। अखिल सुव्यापक आप अभेषा।।95।।
अखिल सुकारक कारक नांही। अखिल सुधारक अखिल जु पाँही।।
अखिल सुतारक अखिल चारा। अशुचि विडारा अति गतिभारा।।96।।
अनघ अधारा अतनु प्रहारा। अतिजगसारा भुवन उजारा।।
अकलक लोइक नाव जु तू है। अवधि जु कंद अनंद प्रभू है।।97।।
अनत अपार कर महरिया। अखिल प्रकास अतुल गुण भरिया।।
तू जु अशक्य जु वर्नन सांई। शक नांहि को वरण करांई।।98।।
अजष निरूपक एक तू ही जो। तू जु अबाच्य अनिर्णय ही जो।।
तू जु अकथ्य परूवण सांई। अलभ सु महिमा जगत गुसांई।।99।।
अखिलाकारा अखिलाधारा। अखिल स्वरूपा, अखिल सु सारा।।
अगम प्रतिष्ठा नाथ अपारा। अखिल जु भूपा अखिल जु पारा।।100।।
अति सुखकारा अमर करारा। अखिल सु सेवित स्वामि अधारा।।
अनत सु ज्योतिश्वर मुनि प्यारा। अनत सु रश्मी तिमर प्रहारा।।101।।

अनुभव मूरति तू जु क्रपाला। निज अनुभूति स्वरूप दयाला।।
तेरी परणति गुण अनुभूति। तेरी शक्ति जु व्यक्ति प्रसूती।।102।।
अनवरतं जु निरंतर तू ही। व्यापि रह्यौ सरवत्र समूही।।
अनिशं नाम तिहारौ स्वामी। जपिहैं ते नर हौंहि अकामी।।103।।
अविरति नाशक व्रत स्वरूपा। अविरत अव्रत रहित अनूपा।।
अव्रत त्यागि तोहि जे ध्यावैं। ते जगजीवन तो महि आवैं।।104।।
असिआऊसा मंत्र जु तेरा। कर्म कलंक हरौ सब मेरा।।
असिआऊसा जिन जिनि पिया। माया मोह महा तिनि क्षपिया।।105।।
अतिगति देव अगति गति देवा। अतिपति नाथ न जाने भेवा।।
अति जुग ईस अतुल जुग गषेवा। अतिजित जीत न सकि दूं सेवा।।106।।
अति जति स्वामि अलंकृत रामा। अक्षर रूप अनक्षर नामा।
अति मुनि पाल अतुल सुखधामा। अति अघटाल अनिंदित कामा।।107।।
अतिरति त्यागक अति गुण नाथा। अतिहित स्वामि अखिल सुख साथा।।
अतिमति धीस अनत बहु हाथा। अकरम अकरण रूप असाथा।।108।।
अनुभव रूप अधिक सुखकारी। अभय जु मूल परम रस धारी।।
अति दुख हरण सु नाम तिहारा। अतिभव हरि करौ जू हमारा।।109।।
अति सुखिया अति श्रीयुत राया। अनुभव मात्र जु आगम गाया।।
अचल असंषि प्रदेसजु ईसा। बोध प्रमाण सदा जु अधीसा।।110।।
अदभुत गति तेरी जु गुसांई। तू जु अजश्र अकारक सांई।।
तू जु अकर्त्ता कर्त्ता कर्मी। तू जु अमुक्ता भोगक धर्मी।।111।।
अधिक सुखी सुख रूप विराजा। अति आनंद मई भव पाजा।।
अति शीली अति भाव जगीसा। अभिशर्म शिवमूल अनीशा।।112।।
अनिधन नाथ अनादि अनंता। अच्युत अगणित श्री भगवंता।।
अमित जगत दु:ख हरण दयाला। अखिल दया पर देव कृपाला।।113।।
अतिशय सागर अखिल जु पीवा। अनुपद्रित अति शिव सुखी दीवा।।
अति पापिष्ट जु जे नर स्वामी। तेहि न पूजहि तू जु विरामी।।114।।
अवनी पति पूजित बड़ भागा। अजस निवारक देव विरागा।।
अनतमती दुख हरण जिनिंदा। नि:कांषित गुण प्रकट करंदा।।115।।

अष्ट अंग समकित कै तू ही। भाषै जिनवर गुण जु समूही।।
अष्ट अंग के धारक जे हैं। ते सब तैं ही ख्यात किये हैं।।116।।
अंजन और अनंतमती जो। राय उदायन कर्म हती जो।।
रेवति राणी जिनवर भक्ता। फुनि जु जिनेन्द्रभक्त जिन रक्ता।।117।।
वारिषेण औ विश्नु कुमारा। वज्र कुमार महा मुनि प्यारा।।
अष्टातम अंग स्वरूपा। तू सबकौ शिव दायक भूपा।।118।।
इनमैं कैयक तदभव तारे। कैयक जन्मांतर जु उधारे।।
जब तारै जब तू ही तारै। तो विनु और न कर्म निवारै।।119।।
अष्टम दीप जु नाम नंदीश्वर। ता महि तोहि जु पूजहि सब सुर।।
वरष एक मैं तीन जु वारा। कार्तिक फाल्गुन शुचि वसु वारा।।120।।
अमल पक्ष मैं तीन अठाई। अतिसु वसु दिन पूज कराई।।
अष्टम सौं ते पूनिम तांई। निति निति पूज करैं अधिकाई।।121।।
शुक्ल पक्ष में वसु दिन करही। ते सदगति कौ निश्चय वरही।।122।।
अष्टान्हिक तुव गुण व्रत स्वामी। तू अष्टातम उरध धांमी।।
अष्टान्हिक व्रत करि जब ध्याये। कोड़ीभड़ के कोढ़ गमाये।।123।।
अति ताकी पतिवरता बाला। कोडीभड़ नरपति श्रीपाला।।
जलनिधि मैं कौड़ीभड तारे। फेरि भवोदधि तें जु उधारे।।124।।
अखिल ऋद्धि भड कौ तुम दीनी। इह तुम्हरी महिमा जगचीनी।।
अष्ट चक्रवर्ति तैं ही तारे। अष्ट हली तैं ही जु उधारे।।125।।
चौ वक्री इक दल तारैगौ। आप समान करी धारैगौ।।
अष्ट भेद लौकांतिक देवा। तुव जपि पावैंगे भव छेवा।।126।।
अठ विधि ध्यान विकासक स्वामी। अष्ट कुध्यान निकंदक नामी।।
अठ विधि जोग प्रकाशक ईशा। अठ विधि पूजा जोगि सुधीशा।।127।।
वसु विधि लौकांतिक गन अर्चित। अठ विधि कर्म महामल वर्जित।।
अष्ट प्रकारी पूज करैं जे। तेरी जिनवर अष्ट हरैं ते।।128।।
अठ गुन भूषित देव अकाया। अष्ट धरा कौं तू इक राया।।
अष्ट सुसम्यक भेद अधीसा। अष्ट जु सम्यक ज्ञान गरीसा।।129।।

अष्ट अष्ट मिलि षोडस होई। तेरह विधि चारित्र जु सोई।।
सबकौ भासक तू जु अभेदा। एक रूप तू सर्व सुवेदा।।130।।
अष्ट सिद्धि अर नव निधि द्वारै। तेरै ऊभी अरज गुदारै।।
तू वसुक्त द्विमूल जग स्वामी। तू वसुधा महि अद्भूत धामी।।131।।
अठ विधि प्रवचन माता जे हैं। पंच समिति त्रय गुप्ति गने है।।
तिनके पालक तेरे भक्ता। तू जु अष्ट विधि कर्म विमुक्ता।।132।।
अष्टम गुण थानक तैं श्रेणी। उपशम क्षपक रूप सुख देनी।।
उपशम वारे कछु इक भव लें। क्षपक विहारे तद्भव शिव लें।।133।।
अष्टम गुण नीचैं नाहि शुक्ला। इह तेरौ उपदेश जु अकला।।
चौथे गुण सौं सप्तम ताईं। धर्म ध्यान ही होय जु सांई।।134।।
अष्टम सौं लै चउदम लौं फुनि। शुक्ल ध्यान ही धारही वर मुनि।।
पहलौ शुक्ल जु ग्यारम लौं है। दूजो शुक्ल सु वारम कौ है।।135।।
तेरम चौदम भगवत रूपा। परम शुक्ल मय त्रिभुवन भूपा।।
तीजौ शुक्ल सजोग अवस्था। चौथौ शुक्ल अजोग व्यवस्था।।136।।
सिद्धि दसा मैं ध्यान न कोई। धारण ध्येय ध्यान निज होई।।
धर्म शुक्ल है शिव के दायक। आरति रुद्र जु जन्म भ्रमायक।।137।।
इह तुम नैं उपदेश जु कीनौं। सो सम्यक्ती जीवनि चीनौं।
मोकौ देहु धर्म फिर शुक्ला। आरति रुद्र कु निवारौ विकला।।138।।
अष्टम धरपति अंतरगामी। अष्टम धर दायक अभिरामी।।
अष्टांपद है तेरौ थाना। अष्टक पति शिव तति रानां।।139।।
अष्टापद तै भूपित कीयो। अष्टापद तजि शिवपुर लीयो।।
अष्टापद कैलास जु नामा। तू अष्टापद नायक रामा।।140।।
अष्टापद व्याघ्रादिक दुष्टा। तुऊ दासनि परि ते नहि रुष्टा।।
अष्टापद कंचन छूं कहियै। कंचन त्यागि सु तोहि जु गहियै।।141।।
अष्टमि चउदसि कौ व्रत देवा। तू ही जग मैं प्रगट करेवा।।
तू अष्टांग दंडवत योज्ञा। त्रिभुवन स्वामि अद्वंद अरोज्ञा।।142।।
अठ मद सम्यक के तू नासै। तू अध्यातम रूप विकासै।।
नैकत सर्व स्वरूप तुम्हारा। अनिमित दोष हरौ जु हमारा।।143।।

अष्ट भेद हैं विंतर देवा। तिन मैं इंद्रादिक वसु भेदा।।
योतिष सुर पंचैव प्रकारा। एऊ शक्रादिक अठ धारा।।144।।
भवनपती दस भेद कुमारा। सुर्ग निवासी दोय प्रकारा।।
सुर्ग पती अर भवनपती जे। तिनमैं इन्द्रादिक दस लीजै।।145।।
त्रायसत्रिंसत लोक जु पाला। जोतिष विंतर तैं ए टाला।।
चतुर निकाय मांहि इह भेदा। तेइसौं अहमिन्द्र अभेदा।।146।।
सव देवनि कौ तू ही देवा। सब करि पूजित एक अभेवा।।
अठ विधि तेरै एक न दीसै। तू अठविधि अठविधि विधि पीसै।।147।।
यम नियमाशन प्राणायामा। प्रत्याहार सु धारण नामा।।
ध्यान समाधि जु अष्ट प्रकारा। तू जु प्रकासै रहित विकारा।।148।।
सहस अठारह शील अधीशा। मोकौं शील रूप करि ईशा।।
तू जु अनंत गुणातम ज्ञानी। शैलेसी किरिया परवानी।।149।।
अष्टादश जे कोटा कोटी। सागर भोग धरा जब लोटी।।
तब प्रगटे श्री वृषभ जु देवा। कर्म भूमि विधि प्रगट करेवा।।150।।
दश क्षेत्रनि मैं कलप जु हौं ही। ठारा दोय बीस इतनौं ही।।
ठारा भोग दोय है कर्मा। बीस जु कोड़ा कोड़ि स्वधर्मा।।151।।
अवसर्पिण उतसर्पिणि दस दस। सागर बीस जु कोड़ा कोड़िस।।
कल्प अनंत भये अर ह्वैगे। लोक लोकपति यों जु रहैंगे।।152।।
पंच भरथ अैरावत पंचा। इनमैं द्वै भू सुख दुःख संचा।।
इन क्षेत्रनि मैं रीति न एका। ओर ठोर है एक विवेका।।153।।
सर्व जु भेद कहै जिन तू ही। तू अमितातम कलप समूही।।
अष्टादस नहि दोष जु तेरै। ए बड़ दोष लगे सब केरै।।154।।
गुण रूपो तू परम प्रधानां। सर्व दोष हर मोष विधानां।।
अष्टादश कोटि जु तुरंगा। त्यागहि चक्री होयइ कंगा।।155।।
तेरहि रंग लागि निज रंगा। भंग भूति तजि हौंहि अभंगा।।
सहस अठारह रानी जाकै। देव विद्याधर अनुचर ताकै।।156।।
सो रावन विषयनि मैं पागौ। जगत भूति तजि तोहि न लागौ।।
तद्भव मुक्त भयो नहि तातैं। अधमपुरी लहि पाई घातैं।।157।।

तो महि पागि होयगौ मुक्ता। जब ध्यावैगो ह्वै जु विरक्ता।।
अष्टाविंसति मूल जु सुगुणा। तिनके धारक मुनिवर निपुणा।।158।।
सर्व मुनीश्वर तेरे दासा। दास उधारक तू जु उदासा।।
अठवीसा है मोह प्रकारा। ते सब चूर किये तैं भारा।।159।।
गुणयंत्र जु मैं ते सब पीसे। अैसो तू जु अधीस जगीसे।।
लष अठवीसा देवल तेरे। दूजे सुर्गि सुजाहि घणेरे।।160।।
अष्टाविंशति हैं जु अपिंडा। प्रकृती भेद जु चउदह पिंडा।।
चौदह के ह्वै पैंसठ भेदा। ए वै मिलि है त्रैणक वेदा।।161।।
नाम कर्म के ए जु विकारा। ज्ञानावरण सु पंच प्रकारा।।
दरसन आवरणी नव भेदा। अंतराय फुनि पंच विभेदा।।162।।
द्वै मो हौ तै अष्टा बीसी। तीनी मिथ्यात कषाय पचीसी।।
वेदनि कर्म जु जोय गनेसी। आऊ चौदिधि तू जु हनेसी।।163।।
गोत्र कर्म है नीच अर ऊचा। दो प्रकार जु सूच असूचा।।
अष्ट कर्म ए दायक मैं है। कबहू तो महि नाथ न अै हैं।।164।।
अष्टनि के सौं अर अठताली। तैं सब भेद हरे भ्रमजाली।।
तू जिन कर्म हरो हर अवसा। वश कीये तैं त्रिभुवन स्ववशा।।165।।
जीव समास जु जे गुत्रीसा। पूरणेतर गुनिये अढ़तीसा।
सबकौ रक्षक तू जु जिनेश्वर। सब भेदनि तैं रहित शिवेश्वर।।166।।
अठतीसां परि एक अधिक ह्वै। सब कल्पर ऊरधलोकहिं के।।
तेरौ वास जु है सब कै सिरि। कल्पातीत भेद ह्वै ऊपरि।।67।।
नांहि वासनां तोमैं कोऊ। वास देनहारो इक होऊ।।
अठतालीसौं काव्य जु तेरी। भक्तामर की ऋद्धि घनेरी।।168।।
ते निवसौ मेरे घरि देवा। मानतुंग दुःख दूरि करेवा।।
एक ऊन अठतालीसा जे। घाति प्रकति अति मलिन महा जे।।169।।
ते सब नासहि तेरे भक्ता। तू सौ अर अठताल विमुक्ता।।
चौईसौं माता अर ताता। ए अठ़ताल तो थकीं ख्याता।।170।।
अटठांवन के आधे स्वामी। गुणतीसौं रतनत्रय नांमी।।
ते सब भेद देहु किरपा करि। फुनि अभेद इपो करि भव हरि।।171।।

एक घाटि करिये जु अठावन। जीवसमास जु हैं सत्तावन।।
जीव रक्षण है तेरौ पंथा। तू योगीसुर रहित जु गंथा।।172।।
एक अधिक अठसठि सौ ऊपरि। ए निहचै पाँवै शिव भवतरि।।
कैयक तद्भव कैयक जन्मैं। पावै तुव पर ह्वैं तो तन्मै।।173।।
अढ़सठि वरष जु उपरि एका। गुणहित्तरि जीवी जुविका।।
एकादश मौं रुद्र जु स्वामी। चउवीसम ह्वैगौ शिवधामी।।174।।
तोहि धाय होसी तो सरिषो। तीथंकर परि पूरण पुरषो।।
अढसठि के आधे चौतीसां। ये है अतिशय तो करि ईशा।।175।।
अठहत्तरि के आधे देवा। लोक जु प्रथम कहेवा।।
गुणतालीसौं मांनहे जु जाचौं। अैसी करि तोमैं हरि राचौ।।176।।
अस्सी मंदिर तेरे स्वामी। पंचभेद मैं अनि अभिरामी।।
षाड़ षोड़स एकक सुहगिर। धारइ तेरै सौयसद घिर।।177।।
कै अस्सी कै इक्यासी। जाके चौरासी पचासी।।
जो प्रकति अघाती तेरम ठांणै तू सब भेदभाव परमाणै।।178।।
असी करौ मो सौं जिनराया। नई नई नहिं धारौ काया।।
तेरौ राम दास निज ह्वैं कै। आया तुव पुरि जग जल दैकै।।179।।
अट्ठासी के आधे देवा। चौ चालीस जु दूरि करेवा।
मद मूढत्व अनायतना जे। संकादिक अर भय विसना जे।।180।।
पंच अतीचारा प्रभु टारे। द्वैवीसी द्वै द्वू अघ सारे।।
ए समकित के शत्रु जु पापा। मो तैं सकल निवारि सु आपा।।181।।
अट्ठासी तैं तीन घटै जब। प्रकति पच्यासी निवल महा सब।।
त्रेसठि नासि जु केवल पावैं। पच्यासी तजि तो महि आवै।।182।।
होय अट्ठाणव जीव समासा। जग वासिनि के भेद निरासा।।
तू ही ख्यात करै जिन स्वामी। सबकौ पालक अंतरजामी।।183।।
पंच जु थावर चउदह भेदा। तिन मैं च्यारि सु अष्ट विवेदा।।
पृथ्वी जल अर अगनि जु वायु। सूक्ष्म बादर अष्ट गिनायू।।184।।
नित्येतर सूक्ष्म अर बादर। द्वै प्रत्येक मिले षट थावर।।
अष्ट सुषर मिलि चउदस भेदा। पूरण इतर अल ध्वजु वेदा।।185।।

चउदह कौं तिगुणैं जी करहीं। द्वै वीसी द्वै अधिके घर ही।।
द्वै सुर अर द्वै नारक गनियें। पूरण इतर गणें चउ भनिये।।186।।
विकल त्रय पूरण अर इतरा। फुनि जु अलबध मिले न विचितरा।।
मनुज तणें नव भेद सुनौं अब। षट अर तीन मिले है नव सब।।187।।
भोग कुभोग मलेछ जु खंभा। पर्यापत औ इतरजु मंडा।।
आरिज खंड मांहि द्वै भेदा। गर्भज सन्मूर्छन जिन वेदा।।188।।
गर्भजु होय सु दोय प्रकारा। पूरण इतर सही निरधारा।।
सन्मूर्छन अलवध ही होई। षट द्वौ इक मिलि नव विधि सोई।।189।।
पंचेन्द्री पसु हैं चउतीसा। तिनके भेद कहैं जु जतीशा।।
कर्मभूमि के समनां अमनां। गर्भज जलचर थलचर गगनां।।190।।
पर्यापत औ इतर गनौं ए। द्वादश सूत्र प्रमाण मुनौं ए।।
फुनि सनमूर्छन समनां अमनां। जलचर थलचर नभचर गमनां।।191।।
पूरण इतर अलब्ध मिले जब। द्वै इश आठ गिनैं जु भेद सब।।
भोगभूमि के समना अमना। नभचर थलचर द्वै द्वै गमनां।।192।।
अलबध गर्भज मैं है नांही। जलचर नांहि जु भोग धराहीं।।
वारा ठारा है द्वै साब ए। चउतीसी पसहेहैं अवए।।193।।
वैयालीसा नव चोतीसा। पच्यासी तिरजंच गतीशा।।
नव मनुजा द्वै सुर द्वै नारक। इन सब भेदनि तैं तू फारक।।194।।
अठ अधिका निवै तू भाषै। सर्व समास जु तू ही राषै।।
पच्यासी नव चउ जव सिलहीं। द्वै कम इक शत जब सव रहहीं।।195।।
ए त्रसथावर भेद सबै ही। भये सौं हि गहे जु अवैही।।
जिनवर तू सब कौ प्रति पालक। श्री भगवंत सकल दुख टालक।।196।।
इन भेदनि तैं मोहि निकासे। शुद्ध रूप करि प्रभु अविनासे।।
इनकौ रक्षक करि हरि मोकौं। इन तैं रहित करहु तुऊ धोकौं।।197।।

(सोरठा)

ठारा वारा च्यार, ए चउतीस जु भेद पशु।
नौ विकलत्रय धार, वैयालीस जु थावरा।।198।।

नौ मनुजा द्वै देव, द्वै नारक ए ठाणंवे।
इनमें तेरी सेव, करहि तिके ही श्लाघ्य जी।।199।।
ए सबही अनिषेद, जगत निवासी अति दुखी।
जो जन है निरवेद, षेद रहित द्वै शिव लहै।।200।।
जीव रषिक जो साध, सौ पावै जगदीस कौं।
कर ही जीव जु बाध, वह रुलिहै संसार मैं।।201।।

(चौपई)

अष्टोत्तर शत हैं मणिका जे। माला के तुव गुण गुणिका जे।।
तिन करि तोहि जपैं जे जीवा। ते तौंकौं पावैं जग पीवा।।202।।
पणतीसाक्षर षोडस अंका। षट अर पंचाक्षर चतुरंका।।
द्वै अर इक अक्षर के नामा। तेरे जाप जपैं सुख धामा।।203।।
अष्टोतर शत पाप निवारें। तोहि भजैं ते आप उधारैं।।
ते अष्टोतर शत अघ कैसे। जीव विषै कर्दम हैं जैसे।।204।।
संरंभो च समारंभो जी। आरंभो है अघषंभो जी।।
ए त्रय पाप मन बच कायें। नव भेदा है गुर समुझायें।।205।।
नव जे कृत कारित अनुमति करि। त्रिगुन करें सतवीस ठीक धरि।।
चउ कषाय तैं गुणिये ते सब। अष्टोत्तर शत है अघ ए तब।।206।।
ते सब पापा दूरि पुलावैं। जब गुण मणिका कोय फिरावै।।
अघहारी तू अमृत धारी। अमृत रूपो पतित उधारी।।207।।
हरि सौ अर अठताल जु मेरे। केवल दैव दो पद तेरे।।
अष्ट तणें सौं अर अठताला। हमरे घातक टारि विशाला।।208।।
पंच शरीर गनें एते ही। पन्द्रह गनें अधिक दस ए ही।।
टारि जु हमरे सौ अर ठावन। अपनौं वास देहु मनभावन।।209।।
वरष अढाईसै जब बीते। पारसनाथ पछैं जु अतीते।।
तब प्रगटे श्री जिनवर वीरा। वर्द्धमान अति गुण गम्भीरा।।210।।
तिन सब रीति बसी ही भाषी। जैसी तेवीसनि नैं राषी।।
चौवीसम अन्तिम जिन स्वामी। सनमति नाथ सु अंतरजामी।।211।।

अर्क विमान जु योजन अठसै। मनुज लोक थी उपरि निवसै।।
ससि मंडल है अठसत अस्सी। ससि सूरिज सव तोहिं जु नमिसी।।212।।
ससि अर अर्क जु तेरै वसि है। तू त्रिभुवन पति सबकौ ससि है।।
तारा गृह नक्षत्रादिक जे। तेरे दास जु शक्रादिक जे।।213।।
योतिग कौ इन्द्र नु हैं चंदा। अर्क प्रतिंदो ठउ करंदा।।
सात सैकरै अर निवै गनि। योजन तारामंडल जो फुनि।।214।।
मनुज लोक थी इह जु विचारा। नवशत योजन योतिष धारा।।
योतिष कौ मंडल दस सौ परि। योजन तारागण तें उपरि।।215।।
सर्व ज्योतिसी तेरे दासा। ज्योति रूप तू परम उदासा।।
अष्टाधिक दश सत शुभ लक्षण। तेरे कहियें तू जु अलक्षण।।216।।
अष्टोत्तर शत लक्षण स्वामी। नवसैं विजन जे अभिरांमी।।
ते सब धारहि तेरौ वपु जो। तू परमातम शिवपद थपजो।।217।।
अयुतलक्ष कोडादिक गिनती। अमम अटट भासक तू सु जती।।
अमित अनंत असंषि जु एका। संख्या नांहि सु तू जु अनेका।।218।।
उदधि असंषि असंषि जु दीपा। तिनको दीपक तू अवनीपा।
अस्सी चउ अधिका लष जौंनी। मेरी मेटि जु पकरि न मौंनी।।219।।
अगणित जीवा तैं जु उधारैं। अगणित कर्मा तैं जु पछारे।।
अति पापातम सार जु मेया। तो तैं सुरपद सुख बहु लेया।।220।।
अति असपरसु चंडालादिक। तोतैं शिव पायो धरि भव इक।।
अरणि निवासी जे मुनिराया। अवनी तज तैं मुक्ति पठाया।।221।।
अभयातम तू देव अभेवा। अभय कुमार कियो जु अछेवा।।
अर्चितनाथ सु अर्चा तुम्हरी। अर्चातैं नर पावैं अमरी।।222।।
अमरपुरी सुख भोगि वहुत जुग। नर है अमरण हौंहि रहित रुग।।
अब्दजिती ध्वनि तुम्हरी जिनपति। जे ध्यावैं निज ममि तजि सब छति।।223।।
ते निज निश्चय पाय स्वरसरति। पहुंचै लोक शिखर तजि जगतति।।
अवजोपम क्रम देव तुम्हारे। अलि सम सुरनर मुनि रव कारे।।224।।
तजि अभिमान जपैं जे जग जन। ते अवनी घर पावहि पद जिन।।
अनुचर होय जु सेवहि तोही। त्यागि अहंकृत भाव विमोही।।225।।

अनुचर तारक एक तू ही है। तू अपवर्ग जु दायक ही है।।
एक अनुक्षित भाव सु तू है। तू जु अहं ति रहित प्रभु है।।226।।
अर्जन पाँडव तैं जु उधार्‌यो। द्रुपद सुता कौ सब दुख टारयौ।।
धर्मपूत अर भीम उधारे। नकुल व सहदेवा निज कारे।।227।।
अनिरुध कुमर प्रद्युमन पूता। पूत पिता तैं कीनें पूता।।
अवधिनाथ तू अनवधि स्वामी। अनरनभूप सुतारक नामी।।228।।
अनरन राव सु रघुपति दादा। तुव भजि मुक्त भर्या तजि कादा।।
अतिवल षगपति महबल ताता। तुव भजि सिद्ध भयो अतिपाता।।229।।
अपर अकंपनराव उधारा। मेघेश्वर कौ तू इक तारा।।
राव अंकपन कासी राया। श्री सुलोचना तात कहाया।।230।।
मेघेश्वर हथनापुर कौ पति। पति सुलोचना कौ शिव सुख तति।।
नाथ वंस अरु सोम जु वंसा। तैं जु उधारैं तू जु निरंशा।।231।।
तव परसाद भये ते राजा। तव परभाव किये निज काजा।।
अर्क पती तू अर्क उधारा। तू अर्केंद्र अर्कगण तारा।।232।।
अर्ककीर्ति कौं मुक्ति जु दीनी। अर भरथ जु सौं अति भल कीनी।।
दिष्या लेत जु भरत उधार्‌यो। अग्रजु चक्री पार उतार्‌यो।।233।।
अग्रेश्वर तू सब के आगैं। सुर नर मुनिजन तुव पद लागैं।।
अप्रधांन तू आप प्रधांनां। सकल सुज्ञायक श्री भगवानां।।234।।
अ कहिये जग मैं हरिहर कौं। ते तुव ध्याय लहैंगे थिरकौं।।
हरि नारायण हर जो रुद्रा। इनकौ भेद न जांनहि क्षुद्रा।।235।।
हरि हर मुनिवर तोकौं ध्यावे। तो बिनु जगजन जन्म गुमांवै।।
अन्य नारि सम मिथ्या परणति। जो मैं धारी सठ मति दुख तति।।236।।
सो मेरी मेटो जगनाथा। निज परणति कौ दैहु जु साथा।।
पर परणति तैं मैं दुख पायो। आप विसारि सु जन्म गमायो।।237।।
अमित अपार जीव तैं तारे। ते मोंपे किम जाहिं सम्हारे।।
पै गुर की सुनि वांनी स्वामी। कैयक के भाषौं गुण ग्रामी।।238।।
अग्निभूति अर वायु जु भूती। सालिग्राम ग्राम मैं सोति।।
पहली मुनि सौं वाद जु कीनौं। पाछै तेरो धर्म जु चीनौं।।239।।

ते दोऊ तैं सुर्ग पठाये। वन के अशुभ समस्त उठाए।।
अग्निभूति तैं सप्तम भव मैं। कृष्णपुत्र द्वै आये तुव मैं।।240।।
अगनिभूति कौ जीव जु मदनां। भयो प्रद्युमन मदन जु कदनां।।
वायुभूति भौ शंबु कुमारा। दोऊ तुव भजि उतरे पारा।।241।।
अवर विप्र छै तै छै भेया। कौसांबी नगरी जु वसैंया।।
जेठौ वन मैं अगनि जु भूती। लहुरौ सठ मति वायु जु भूती।।242।।
पहले तौकौं तनमनि ध्यायो। सूरमित्र गुर कौ मत भायो।।
जिन मारग कौ गुण बहु गायो। तातैं तेरौ शिवपुर आयो।।243।।
दूजै तौकौं ध्यायो नांही। भयो गुर द्रोही जग मांही।।
कोढ़ी है मूवो सो पापी। भयो गदहरी अति संतापी।।244।।
सूरी ह्वै फुनि कूकरी हूवो। महादुखी ह्वै वह जन मूवो।।
भयो अंध चिंड़ाली देहा। जिन तुमसौं कीनौं नहि नेहा।।245।।
ह्वै चिंडाली तुव गुन भायो। अगनिभूनि कौ सबद सुहायो।।
नागश्री नामा द्विज पुत्री। भई धर्मरुचि अतिहि पवित्री।।246।।
सूरमित्र के सुनि जिनवैना। तुम ध्याये त्रिभुवन पति जैंना।।
तुम परसाद षोडशम सुर्गा। तिन पायो प्रभु बहु सुख दुर्गा।।247।।
फुनि सुकुमार सेठ है स्वामी। तुमकौं ध्याय भयो बहुनामी।।
अति उपसर्ग जीति वह ध्यानी। गयो जु सरवारथ सिधि ज्ञानी।।248।।
इक भव धरि बह तोमैं मिलिहैं। तेरो दास न जग मैं रुलिहैं।।
तेरे दास अनंत जु उधारें। तोकौं पाय बहुत जन उबारे।।249।।
अमरपती है तेरो दासा। इक भव धरि पावै शिव वासा।।
वसुविधि लौकांतिक सुर ऋषि जे। इक भव धरि पावैं ऋषि गति जे।।250।।
अहमिन्द्रनि तू ही धारैगो। नव पंचानुत्तर तारैगो।
अमरांणी जु शची है देवा। भव अंतरि पावै भव छेवा।।251।।
दांहिण शक्रा लोक जु पाला। तुव जपि पाँवै पद जु विशाला।।
अशन पान षादिम नहि तेरै। क्षुधा त्रिषा नहि तोहि जु घेरै।।252।।
अस्त्रादिक अर भूषन कोई। वस्त्रादिक तेरै नहि होई।।
अश्न भक्ष कौ नाम जु कहिये। तेरै अशन वसन नहि चहिये।।253।।

अहमेवादिक तो मैं नांही। तू जु अहंकृति रहित महांही।।
अहंकार अरमान न तेरै। दूरि करौ लागै प्रभु मेरै।।254।।

(दोहा)

अहंकार मय इह जगत, याकौ त्याग सुमोष।
इह तुम्हरौ उपदेश है, उत्तम गुण गण कोष।।255।।
त्यागि अहंकृति जिनि तुझै, ध्यायो दीन दयाल।
तिनि पायो तू गुणमई, निर्गुण परम कृपाल।।256।।
कुमर अशोकर रोहणी, तेरे भक्त अनन्य।
ते अशोक धर तैं कियो, अति सुखिया अति धन्य।।257।।
अरजन पूत जु अद्यमनां, नांव अभिमानां जास।
सो तेरे परसाद तै, पायो अमर विलास।।258।।
अकलंको निकलंक है, भाई जिनमत दास।
तिनको तुम राषि कला, कियो बोध मत नास।।259।।
कुमर अभैरुचि अभमती, भाई बहन सुजान।
ते तुम कीने आयुने, धरे पंथ निरवान।।260।।
अहि तौ धरणीधर कियो, अहिपतनी सु देवि।
करी जु तुम पदमावती, अपुनौ मंत्र कहेवि।।261।।
अद्‌भुत तोसौ को नहीं, जागि दातार जगेस।
मोहू दीजै मोषमग, सुनि विनती सु जिनेस।।262।।
तू अनादि अनिधन प्रभू, तू अविक्त अतिविक्त।
अहमिंद्रनि करि अर्च्य तू, तू अतीन्द्र जगतिक्त।।263।।
तू अमूर्त दर्शी प्रभू, अर अगाह्य भवपार।
अतिगांहन तू गहन हर, मोहू पार उतार।।264।।
तू अलक्ष लखिया विभू, तू अगम्य गमको जु।
जे अगम्यगमका जना, अब हीलक तिनकौ जु।।265।।
जे अभक्ष भक्षक जना, तिनकौ निंदाकार।
जे अतत्त्व रोचक नरा, तिनकौ नांहि उधार।।266।।

अहो अहिंस्य स्वरूप जो, परम अहिंसा कार।
सदा अहिंसक देव जो, करै सकल उपगार।।267।।
अहोरात्रि मुनिवर जपैं, जाकौं ते निज रूप।
पाँवै अल्प जु काल मैं, वहं मुनिपति अति भूप।।268।।
अह्नि विषै भोजन करैं, पिवहि न रजनी नीर।
अह्नि विषै मैथुन तजैं, तुव मत रत गृहि धीर।।269।।
अह्नि दिवस कौ नाम है, तू ही जिनवर अह्नि।
कर्मकाण्ड जालनपरो, जो इक दीसे वह्नि।।270।।

(चौपई)

तत्त्व अनेहा अविहित स्वामी। अचल खंडित अखलित धामी।।
अगणित द्रव्य अरूपी जोई। अचित अमूरति अमर जु होई।।271।।
अतुल अदेसी एक प्रदेसी। प्रचुरातम जड़ रूप अलेसी।।
अणु भरिताखिल लोक निवासी। काल द्रव्य जो सकल अभासी।।272।।
समवती जो है जु असंखा। वर्तन लक्षण अखिल अकंखा।।
द्रव्य सुगुन पर्याय समूहा। वह जु अनांमी सर्वजु दूहा।।273।।
काल चक्र परणति है ताकी। पर्जय रूप कदापि न थाकी।
तामैं हौं भरमत हे नाथा। दीनानाथ गहौ मुझ हाथा।।274।।
काल चक्र तैं मोहि उबारे। अपनौं वास देहु गुण भारे।।
तो बिनु काल न किनहि न जीते। कालनाथ तू काल अतीते।।275।।
अणुषंधा सब तू जु प्रकासै। पुदगल द्रव्य सकल तू भासै।।
अणुषंधा नहि तो मैं कोऊ। चेतन तू जु अमूरत होऊ।।276।।
अणु द्रव्यं षंधा पर्याया। फरसादिक गुणवीस बताया।।
ते गुण मोंतें टारि जु स्वामी। निज गुण दै च्यारयो अभिरामी।।277।।
केवल दर्शन केवल ज्ञानां। केवल वीरज सौख्य प्रधानां।।
इनहि आदि दै अमित जु दैहौ। अपनौं करि अपनैं पुरि लैहौ।।278।।
अणु कालाणु अर पुगलांणु। दुहु कौ ज्ञायक तू जु प्रमांणूं।।
मिलन शक्ति तैं रहित जु एका। दूजौ मिलन जु शक्ति अनेका।।279।।

अमर तू ही शिव तौ तैं होवै। अमरा सुर नर तुव सुख जोवै।।
देव सकल कहिवे के अमरा। अमर सही तू कबहु जु ना मरा।।280।।
अनत सु अधिकाधिक्य तु ही जो। अनत सु दिनकर तेजस ही जो।
अनत निशाकर जीत नियंता। अनत अहोकर रस्मि जयंता।।281।।
अनत बिवर्जित ईश अकेला। असुधि विवार्जित धीश अचेला।
वस्तु अशुद्ध न तो मैं पइए। केवल शुद्ध रूप तू गइए।।282।।
नांहि अनातम भाव जु तो मैं। हरहु अनातम भाव जु मोमैं।
तो विनु आतम भाव न लहिये। तजि जु अनातम तोहि जु गहिये।।283।।
अस्ति करंता अस्ति धरंता। तू अस्तित्व स्वरूप अनंता।
तू अनाप्त भावनि तैं न्यारा। तोहि अनाप्त पावंहि प्यारा।।284।।
अस्ति जु काय पंथ है स्वामी। तिनकौ भासक तू जु अनामी।।
अस्ति निरूपा अस्ति अधारा। अस्ति नास्ति स्वरूप अपारा।।285।।
अस्ति नास्ति कौ प्रगट जु ईशा। अस्ति नास्ति घर है जगदीसा।
अमित प्रदेसी गुण जु अनंता। गुण पर्याय स्वभाव धरंता।।286।।
अखिल प्रदर्शी सिद्धि स्वरूपा। अतिशय थूल असाध्य अनूपा।
तू अप्राकृत देह जु स्वामी। तू जु अबाध्य अराध्य अरांमी।।287।।
तू जु अभक्त सु भक्त न काकौ। तू सु प्रभू तारक भगता कौ।
तू जु अनाकृति आकृति रहिता। अकृत अकृति बोध जु सहिता।।288।।
तू जु अरूंधा अचर अचंपा। बोहथ भव की तू जु अकंपा।
अखिलातम अतुलातम स्वामी। अकलातम अमलातम नामी।।289।।
अचलातम अजड़ातम भूपा। अमितातम अमितीश अनूपा।
अगति गती दायक तू ईशा। असित भाव वर्जित जगदीशा।।290।।
अन्न औषधी शास्त्र जु अभया। ए चउ दान कहै तू विभया।।
अन्नपाँन निरदूषण लै कैं। तोहि जु ध्यावै निजमन दै कैं।।291।।
ते संता पाँवैं तत तेरा। तू निरदूषण भूषण मेरा।।
अन्न वीण अर जलहि जु छांणां। इह तेरौ मत है जु प्रवाणां।।292।।
अन्न जला विनु और जिके ही। जिव्हा साद जु होय तिके ही।।
ते नहि स्वादै तेरे भक्ता। अन्न वारि ले तो महि रक्ता।।293।।

अणु भोजन लै तोहि जु ध्यावैं। सर्व स्वाद जे दूरि वहावैं।।
ते निज स्वाद लहैं निज भक्ता। जिन रस चाखि जु विषय विरक्ता।।294।।

(पद्धडी)

अरविंद चक्षु अरविंद पाय। अरविंद हस्त अति गंधकाय।।
अरविंद वदन जगजीत देव। मधुकर मुनि सुर नर असुर भेव।।295।।
अविनंदा नंद अनंद देव। अति अकथ अपूरव असम टेव।।
अतिनाथ जु देव अनंत नाम। अति साथ जु एक अनंत धाम।।296।।
अतिहाथ अछेद अबेव बेव। अणुमति अमती किमयोज्ञ सेव।
अतिहित जु अनंत अनंत ज्ञान। अतिमितजु अनंतानंत मान।।297।
अति द्वितुल अनंतानंत रूप। अति अमल अलिप्त जु लोक रूप।।
मति श्रुति अवधी अर तुरिय ज्ञान। धारी मुनि हू नहि सकई गाँन।।298।।
अणुमति की कौंन जु वात देव। इक नाम अधार जु देव देव।।
इह विनति जु धारहु दीनबन्धु। लै हो निज पुरि अर हरहु बंध।।299।।

(भुजंगप्रयात)

अनंतर्द्धि सिद्धि तुही देव देवा। अचिंत्यर्द्धि वृद्धी तु ही नंत भेवा।।
अमेयर्द्धि पूरं असंख्येय स्वामी। अनिन्दित्वभावा तु ही सर्वजामी।।300।।
तु सर्वस्य अग्ग्रो तु ही अग्रनाथा। तु ही अग्रिमो अग्रजाता असाथा।।
तु ही अग्र अग्रेश्वरो ईश राया। तु ही पर्मतत्त्व अरूपी अकाया।।301।।
अलेषो अभेषो अलेशो अशेषो। अहेयो अमेयो अदेहो अदेसो।।
अडंको अटंको अनंको अबंको। असंको अरंको अकंपो अपंको।।302।।
अगाधो अबाधो अनंगो अभंगो। अनामो अकामो अरंगो असंगो।।
अपापो अपुन्यो अनेको अछेपो। अनाथो अजोगो अभोगो अलेपो।।303।।
अरोगो असोगो अगंधो अबंधो। अमोघो अचिंत्यो अकोपो अनंधो।।
अदीनो अनीनो अछीनो अहीनो। अरीसो अनीशो अलीनो निलीनो।।304।।
अलिंगो अदंभो अमोहो अरोहो। अधीशो अतीशो अछोहो अकोहो।।
अषंडो अडंडो, अफंदो अछंदो। अबूढ़ो अमूढ़ो अनंदो अमंदो।।305।।

अनादि अनंतो अखेदो अभेदो। अबादीशसंतो अरागो अषेदो।
अदोषो असोषो विमोषो अकोषो। अनोषो जु चोषो अरोषो अघोषो।।306।।

(सोरठा)

तू जु अफरसो देव, अरसो अरजो विरज तू।
तू जु अछंड अछेव, अकृतीनो अतिधर्म तू।।307।।

(छप्पय)

अतिरामो अभिरांम तू जु अतिदांत अनंता।
अतिधामो अतिशुद्ध तू जु अति बुद्ध प्रसंता।।
अतिशांतो अतिनाम तू जु अतिगूढ़ अरूढ़ा।
अतिरूढ़ो अवदात तू जु अतिरंग अगूढ़ा।।
अत्युक्षर अनगार तू, अत्युधार जग देव है।
अत्युदात अतिचंग तू, तू जु अनंत अछेव है।।308।।
अतितातो अतित्रांत तू, जु अतिवीर प्रवीरा।
अतिपातो अतिसार तू, जु अतिचारु अनीरा।।
अतिधीरो अतिमिंत तू, जु अतिस्वामि अनादी।
अतिरूपो अतिभूप तू, जु अतिपूत अबादी।
अनिवारो अतिरम्य तू, जु अति सुपुन्य अवधूत है।
अविकारो अतिशूर तू, अतिचूर जु अतिभूत है।।309।।
अतिपति तू अति ऊंच, तू जु अति शौच अनंदा।
अतिपूरण अतिबुद्ध तू, जु अति दूर अकंदा।।
तू अमरामर देव ज्योतिमय तेरी रूपा।
सर्व ज्योति जित देव तू जु अतिछति जिनभूपा।।
तो सौ तू ही देव है, और न देव कदापि को।
तू पूरण परमातमा, भगवांनो जु उदामि को।।310।।
तू जु अहिंसा शक्त त्यक्त अदया सब तू ही।
तू अनृत परिहार करण सब गुण जु समूही।।

सव परि तू जु दयालु, नांहि करमनि परि जैंना।
अमृत तुल्य महान नाथ तुव अद्‌भुत बैंना।
अदत प्रत्यक्त जु तू सही, अब्रह्मतिक्त सुब्रह्म तू।
अबध अबाध्य अकिंचनो, परमेश्वर परब्रह्म तू।।311।।
अपर द्रव्य कौ त्याग वस्तु तैं तेरे स्वामी।
अनृत माया जाल तासु कौ लेश न कामी।।
अमला कमला पासि पासि रूपा नहि कमला।
वहिरंगाते दूर तू जु अंतर लछि विमला।।
तू श्री व्यक्त अभीत है, अलभ अभाव अगृद्धि तू।
अबध निरूपो गुणमई, ऋद्धि वृद्धिधर सिद्धि तू।।312।।
तू जु अरोर अरोग तू जु श्रीयुक्त अनंता।
तू श्रीवान् जिनेश रहित अबला अरहंता।।
अनुभूती जो लच्छि ओर को लच्छि जु नांही।
तू अनुभूति स्वरूप वह जु तो ही कै मांही।।
व्रत रूपो समधार तू, अक्रिय भाव वितीत है।
क्रिया रहित तू अक्रियी, कूटस्थो जगजीत है।।313।।
तू अघ छेदक देव तू जु है अतत विहंडी।
असन विहंडक तू जु नाथ है आप अखंडी।।
परम पुनीत दयाल ईश तू नित्य स्वरूपी।
अलष अलेषक पाल स्वामी तू सदा अनूपी।।
अतिपति भूपो अतिशयी, अतिशय रूप अनूप है।
अतिगति रूपो अतिधृती, अतीचन्द्र अतिभूप है।।314।।
अरति वितीत जु तू जु पूज तू अनय वितीता।
तू जु अपुण्य विनीत पुण्य पापनि तैं वीता।।
रहित अनीति सुनीति तत्त्व निर्नीत जु तू ही।
तू अपराध वितीत जीत तू कर्म समूही।।
सदा अरीति कुरीति तैं, अधरम तै न्यारा तु ही।
तू जु अनाशामय जिती, अमत विजीतक है सही।।315।।

अमति कुमति नहि संगि संगि तेरे निज बोधा।
अगति उधारक देव तू जु निज रत अति सोधा।।
अति क्रम वितिक्रम नांहि नांहि तेरै अतिचारा।
अणाचार कौ लेश नांहि तेरै जु लगारा।
तू अतिचारु मनोज्ञ है, अनुचर गण तेरे सही।
अनुक्रम क्रम नहि पाइए, नांहि अनारज तो मही।।316।।
अशुभ वितीत सु तु जु पूज तू असुधि अतीता।
मोह लगी जु अनीक एक तैं ही सब जीता।।
तेरै नांहि अनीक नंत गुण ते जु अनीका।
नींका तेजु दयाल नांहि को तिन सम नीका।।
कहै अनीक जु फौज कौं। नीक अनीक जु गुणनि की।
तू अनीक धर गुणमई, आशा पूरहि मुनिनि की।।317।।
सप्त अनीक जु धार इन्द्र है तेरी दासा।
षटसेना धर चक्रि दास कौ होय तु दासा।।
अवर सकल नृप च्यारि धारहों सेना स्वामी।
तू सबकौ पति ईश एक बडभूप अनामी।
तो सम सेना तो कनैं, अवर ठौर दीषै नहीं।
तू अनीकपति एकलो, अमित अनीक जु तो मंही।।318।।
तु जु अलीक न होय तोहि नहि लहहि अलीका।
अव्रत व्यक्त दयाल तू जु है नाथ सुनीका।
अतिशय वंत अनंत तू जु जिन अति मुनि नाथा।
अनुचित वीत अनीत एक तू अमि जु साथा।
अतिदिन भूपो अति व्रतां, अति विरतो अवनीज तू।
अकरम देवो अति हि तू, एक एव जगदीप तू।।319।।
अतिशय सागर नाथ सकल अन्याय अतीता।
तू जु अमंत्रि अमंत्रमय तू जु अजीता।
नांहि अमात्य जु कोय, होय तेरै दरबारा।
तेरे दुर्ग को नांहि आप दीषै इक भारा।

तो सौ रावल तू मही, अजड़ अकर चिनमय प्रभू।
एक रावलौ रावरौ, और नांहि रावल कभू।।320।।
अभिजित जतिपति तू जु अति नगन स्वरुप।
अति शर्मातम देव तू जु अतिशय बड़ भूपा।।
अतिशय तंत्र जु एक अवर नहि तो विनु अतिशय।
तू अतिभूति विशाल नाथ तू रहित सकल भय।।
अविहित मिथ्यामत सवै, विहित शिव मग सार तू।
जिन आगम भासक विभो, अस्ति नास्ति नय धार तू।।321।।
तू अति भूमि क्षमा जु क्षांतिधर एक तू ही जो।
तू अप तुल्य दयाल पाप मल नासक ही जो।।
तपति हरण अति अमल जीव सम तू जग जीवन।
अनल समो भगवान, दहन कर कर्म महावन।।
अनिल समो विनु संग तू, महाबली हुतभुज सखा।
वातवलय आधार जो लोक सकल दायक सुखा।।322।।
तू नभतुल्य अलिप्त तू जु अभ मान अमानो।
नभ है तेरै मांहि तू जु नभ मांहि वखानों।।
अनुपम मानो तू जु अचलपती जित।
अकल समानो नाथ अकुल सम तू जु जगत हित।
नांहि किसी कौ पूज तू अखिल सरीसौ है प्रभू।
ज्ञेयाकार अनंत जो ज्ञान भाव तेरै विभू।।323।।
अर्क समो अतिभास मोह तिमर जु कौ हंता।
ममता रजनी मेटि बोधदिवस जु प्रगटंता।।
भव्य कमल प्रतिफुल्लकरण जो पंथ चलावै।
विषय विनोद मिटाय नादि सूते जु जगावै।
जीव जु चकवो मति प्रिया, विषम विरह तिनकौ हरै।
अभवि उलूका नहि लषै, अर्क अमित द्युति तू धरै।।324।।
अति जु अनंत प्रताप ताप नहि तेरै सब ही।
मिथ्या भावजु राहु तोहि बेढै नहि कबहि,

वाकौं नांव जु मित्र तू जु है साचौ मित्रा
अर्क नाहि तो तुल्य तू जु अति रश्मि विचित्रा।
अह्नि करण अवगममई अहो अहो कर अरुण तू।
अजड़ भावकर देव है, सेत न स्यांम न अरुण तू।।325।।
असु प्रांणनि कौ नांम तू जु असु मृअण नाथा।
अतुंल प्रमांण जु ईश असमस तू जु अनाथा।।
अगणित चन्द र सूरि नांहि नषद्युति सम तेरे।
अभमांनो अभिमांन तू जु हरि साहिब मेरे।
अवधि न अविधि न तो विषै, अतिविधि मूल जु तू जना।
अति गति ध्यान निवास तू, अतुलित शमकर तू दिना।।326।।
जो जु अविद्याकंद तासु कौ है जु निकंदा।
अनुपम काय जु तू जु पूजत तू अखिल अनंदा।।
अति सुगम कहै तू जु देव तू अभष विंडारी।
अभष भषक जे जीव तोहि पावैं न उधारी।।
अगम गमक जे पापिया, तोहि न पामैं नाथ जी।
अगम गमक फुनि जोगिया, तजहि न तेरौ साथ जी।।327।।
तू अविक्षेप अछेप नाहि परमाद सुतोमैं।
तू अप्रमत्तजि नित्य निवसै प्रभु मोमैं।
मैं परमादी मूढ़ नांहि लषियो पद तेरौ।
अविषय अतिशय रूप तू जु हरि तिमर जु मेरौ।
जाकरि तोहि लखौं प्रभू, वहैं दृष्टि दै सांइया।
नाम अपार जु जासु के, सो तू जगत गुसाइयां।।328।।
अति ठामो अतिग्राम तू जु अतिधाम अनांमां।
अतिहित मंत सुसंत, नांहि तेरै धन धामा।।
अश्वादिक चतुरंग सेन तजि तोहि नृपा जे
ध्यावै तन मन लाय हौई प्रभुपति विटपा जे।
अष्टम धर लहि सासती, द्वि भाव पाँवहि तिके।
सर्वत्यागि तोहि जु भजै, ह्वै तो सम जिन जन जिके।।329।।

तु जु अगोचर नाथ एक गोचर केवल में।
तु जु अनालस भाव नित्य निवसै देवल में।
अलंकार नहि कोय होय तेरै न अभूषन।
भूष न प्यास न कोय नांहि को वसन न दूषन।।
तू देवल में लोक में, सिद्धलोक में है सही।
घटि घटि अंतर साईंया, वसै अनाशक्तो तु ही।।330।।

(सोरठा)

अज्ञानादिक भाव, नांहि जु तोमैं पाइए।
ज्ञान मूल जग राव, तू अनंत भाव जु धरें।।331।।
तु जु अदर्शन नांहि, सही सुदर्शन है प्रभु।
दरशन तेरै मांहि, केवल एक अंनतधा।।332।।

(छन्द)

अति गुन भूषन अति निरदूषन।
अति जगतारन रतिपति दूषन।।
अति जग पारग अति शिवमारग।
अति सु उधारक धर जिन मारग।।333।।
अति भू मोचक अतिगुण रोचक।
अति दुख रोधक अतनु असोचक।।
अतिभूदायक अतिगुण लायक।
अतिमुनि नायक अतिरस भायक।।334।।
अतिक्षम क्षमकय अतिशमयमधर।
अतिपम दमकर अतिजत पवर।।
अतिभूक्षमपर अति रतनाकर।
अति उपरमकर अति समता धर।।335।।
अतिभूपोषक, अतिभूत्यागक।
अति जन मोषक अति जु विरागक।।

अवगुण टारक समकतकारक।
अतिनुदतारक अमन प्रचारक।।336।।
अतिनर अतिभर, अतिकर अतिघर।
अतिवर, अतिपर अतिचर अतितर।।
अतिचिर अतिथिर अतिपर अतिगुर।
अतिधुर अतिहर अतिहर जिनवर।।337।।
अतिसुखसागर अतिगुणआगर।
अतिनर नागर अति जगजागर।।
अति सु उजागर, प्रभु रत्नाकर।
सुरनर चाकर अतिजिन ठाकुर।।338।।
अति भव ज्ञायक अनुभवदायक।
अतिजुगचायक अतिजगपायक।।
अति भव नाशक अभय प्रकशक।
अति गतिभासक अभव विकासक।।339।।
अतिमुनिकारक अतिमुनितारक।
अति मुनि धारक अति मुनि पारक।
अति श्रावक कर, अतिश्रावक धर।
अति समकित धर समकित धरकर।।340।।
अतिभवभयहर, अतिशिव सुखकर।
अति परमेसुर अति पूजित सुर।
अति जुग हर गति अति जु त्रिजगपति।
अतिछति अतिजति अतिमति अतिगति।।341।।

(सोरठा)

तू अनुकूल सदैव, प्रतिकूलो नहि क्रापि हू।
जे ह्वै तो सो देव, अनुकूला ते भव तिरै।।342।।
अवग्रह ईहा आदि, भेद जिके मतिज्ञान के।
तू भाषै जु अनादि, तीन शतक अर तीस छह।।343।।

अमन अतिन्द्रि तू जु, इन्द्री और अनिंद्रीया।
तो महि नाहि पूज, नाम अनिन्द्रि मन तणौं।।344।।
अजर अजन्मा देव तू, जु अकर्मा राजई।
दै भव भव निज सेव, तू सु अभर्मा है प्रभू।।345।।
तू जू अभर्मा देव, मर्म ठौर तेरै नहीं।
तु जू अनंत अभेव, तू जु अचर्मा चर्म बिनु।।346।।
तू जु अश्रम्मा नाथ, श्रम खे जु तोमैं नहीं।
शर्म जु सुष तुव साथ, तू जु अवर्मा वर्म बिनु।।347।।
वर्म जु बगतर नांम, मर्म विनां वगतर किसै।
तेरै आवैं काम, तू जु स्वशर्मा राम है।।348।।

(सवैया तेईसा)

तू जु अमातृ अपितृक देव सदा जु अपुत्र कहै जु अलौकिक।
तू जु अबंध अबंधन नाथ, अबाधक एक महा जु अलौकिक।।
तू जु असाधक साध्य स्वरूप अदंभिक ईश जिनेश अरौपिक।
तू जु अराधक तार अराध्य अनंध अषंध असंध अगौपिक।।349।।
तू जु अबंधक बंधक नांहि अनिंदित नंदित है जु अरंजित।
तू जु अनिंगित ईंगित नांहि, अनंकित नाथ सदाजु अनंजित।।
तू जु अशंकित है जु अवंकित देव अलंघित नित्य अंगजित।
तू जु अंचभिक है जु अमंदित ईस अखंडित सर्व अर्घजित।।350।।
तु जु अनिंदक पूज अंबदक नित्य अफंदक है जु अनंदक।
तु जु अषंदक बोध अमंदक पाप निकंदक है जु अछंढक।।
तु जु अहंडक है जु अदंडक नाथ अछंडक नित्य अकंटक।
पुंस न नारि-सुरो न वि मांनव ढोर न नारक तु जु अषंटक।।351।।
तू जु अडंकित है जु अकंपित देव अखंडित नित्य अलिंपित।
तू जु अदंडित है जु अकिंचित नाथ अवंचित बोध विजंभित।।
तू जु अकंषित है जु असंखित ईश अविवित्त राय अकंपित।
तु जु अलंकृत स्वामि सुसंचित एक अजृंभित घीश जगंहित।।352।।

तु जु अलुंटक तात अबंचक है जु अभंडक नित्य अभंजक।
देव अचिंतक ईश अनंतक नाथ, अरंजक भूप अषंडक।।
पूज अभंजित स्वामि, असंगित है जु महाघ्रिप एक असंघक।
संघ उधारक आप अपारक, पार उतारक, सूत्र अलंघक।।353।।
देव अमंडित है जु अमंजित नित्य अमंजन ईश अरंजन।
नाथ अटंकित तात अरंगित स्वामि मनोहित आप निरंजन।
नांहि विकार विभाव जु जा महि एक अनेक स्वरूप अकिंचन।
नांहि लप्पो कछु जाय अनूपम द्वैत अद्वैत स्वभाव अभंजन।।354।।

(अरिल्ल)

लप्यो जाय नही नाथ तू जु अलपित सही।
अल्प बहुत नहि तू जु तू जु द्वै रूप ही।
अत्युज्जल तू देव अतिक्षमी है विभो।
अत्युत्कर जगदीस अतियमी है प्रभो।।355।।
अति तेजस अति सीत अतिदमी अतिगुरु।
अति ठाकुर अतिजीत अतिशमी अतिधुरु।।
अति साहिब अधिकार उपरमी तू सही।
अति सागर विधि रूप अति जती है तु ही।।356।।
अति लायक अणगार अणगरो तू नहीं।
तू ही आगरौ देव गुणनि कौ है सही।।
अति नागर, निज रूप गुणकार साईंया।
अति जोगी जगजीत अलेष गुसाईंया।।357।
अति सागर तू देव उजागर ज्ञान कौ।
सोवै नांहि कदापि प्रभू है ध्यान कौ।।
अटल भाव धर एक अचल भाव जु सदा।
अमल भाव जगदीस मलिन नांहि कदा।।358।।
तू जु अनंग विभाव सुटारक ईश है।
तू जु असंग स्वभाव सुधारक धीश है।।

तू जु अचिंत्य प्रभाव प्रभू है शाश्वता।
तू जु अहिंस्य स्वरूप नांहि को नासिता।।359।।
तू जु अशुद्ध विभाव नाशनो ईश है।
सदा अभेद स्वभाव भासनो धीश है।।
नांहि अभव्य स्वभाव भव्य भाव जु नहीं।
तू शुद्धता स्वभाव पारिणामिक सही।।360।।

(चौपई)

तू जु अलंघि भाव भूषो जु। तु जु अपाँवन तन दूषो जु।।
तू जु अमूरत भाव सपषो। तू जु अधूर भाव मषो।।361।।
तू जु अबोध भावदंडो जु। तू जु अनित्य भाव षंडो जु।।
तू जु अजडत्व विकासी देव। तू जु अचल प्रकास अभेव।।362।।
तु जु अचिंत्य भाव भारो जु। तू जु अलक्षभाव सारौजु।।
तु जु अलोक भाव जांनो जु। तू अवलोकन गुणवंतो जु।।363।।
अखिल भावटन तू नाथ। लोकाकास प्रमाण अनाथ।।
तू जु अमोहत्वादि प्रधान। अस्तित्वादिक गुणह निधांन।।364।।
तू जु अलोभत्वादि अधार। तू जु अधमगति तारन हार।।
तू जु अधोगतिहारी हरो। तू अरि चक्र विदारी अरो।।365।।
तू जु अशुभ गण टारक ईश। तू जु अशील जु ही लकधीश।।
तू अदयत्व विघातक देव। अकर रोग वर्जित अतिभेव।।366।।
अखिल भोग डारक जोगी जु। अखिल जोग टारक भोगी जु।।
मन वच काय तणैं जे जोग। तिन तें रहित अमित सुख भोग।।367।।
अखिल जु व्रत उपदेश करो जु। अणुव्रत उपदेशक अजरो जु।
अखिल मूति दर्शी भगवान। निखिल भूति त्यागक गुणवान।।368।।
अतुल भाव परसी मुनि भेस। अचल भाव दरसी जगतेश।
अमल भाव सरसी कह सूर। सदा जु अविचल भाव सु पूर।।369।।
अटल जु देवे अमल जु काय। अकल स्व ज्योति अतुल जु राम।।
अजड़ स्वरूपी विमल प्रभाव। अकर अकारकरण राव।।370।।

अकरम और असंपरदान। पर दरविनु कौ लेस न मान।।
तू निज अपादान जगदीस। अधिकरणो भगवंत अधीस।।371।।
पर षट कारक तोमैं नांहि। निज षट कारक तेरै मांहि।।
तू कर्त्ता कर्मो किरिया जु। संप्रदान निज विनु तिरिया जु।।372।।
तू निज शक्ति अपादानो जु। तू आधारो अधिकरणो जु।।
अकर राय तू अपर जु नाथ। अमल नाथ तू श्री जगनाथ।।373।।
अमर छाय तू नहि मुरझाय। अमित छाय तू है जु अछाय।।
अमर ध्येय तू अमित प्रभाव। असम काय तू रहित विभाव।।374।।
अतुल देव देवनि के देव। तेरी तुलना कोइ न देव।।
अखिल भाय तू अनत जु नाथ। जगतराय तू मुनिगण साथ।।375।।
अखिल मात तू अखिल जु त्रात। अखिल तात तू अखिल जु पात।।
असम घात तू अखिल जु गात। तू जु अरूपी देव अजात।।376।।

(त्रोटक)

तू ही जु अनुद्धत देव अरं। तू ही जु अनुज्झितभाव चिरं।।
तू ही अनयासो ईश परं। तू ही अद्वितीयो धीर धुरं।।377।।
तू ही सु अनाकाशो जु बरं। तू ही जु अबैर करो कि चरं।।
तू ही जु अनावासो विटरं। आवास चिती तो नाथ पुरं।।378।।
तू ही जु अनुत्कंठो विधरं। तू ही जु अनामासो अजरं।।
ईशो जु अनादि लहैं अपरं। धीशो जु अनाद्रित है अकरं।।379।।
देवो जु अनाकुल भाव थिरं। कर्मामय भैषज रूप सुरं।।
नाथो जु अनाशक्तात्म गुरं। पूज्यो सु अनात्म विभाव हरं।।380।।
तू ही जु अबंधित सूत्रकरं। तू जी जु असाधित साध्यतरं।।
तू ही जु अनुद्वेगो अजुरं। तू ही जु अनौपम्यो अदुरं।।381।।
अदभूतातम गुण पुंज भरं। तू ही जु अहौपम्यो सुधरं।।
तू जी अविनासी धामधरं। अक्षम गुण रासी पति नागरं।।382।।
तेरी अवधारण योज्ञ गिरा। तू ही जु अपूरब रूप थिरा।।
सर्वे जु अगोचर भाव जिके। तू ही गोचरकर नाथ तिके।।383।।

पाँवै जु अनालस साध तुमं। गांवै जु अनाग ससंघ तुमं।
तू ही जु अदूषित देव प्रभु। तू ही जु अक्षोभित लोक विभू।।384।।
तू ही अतिभासीधीश जिना। तू ही अतिभारी ईश बिना।।
तू ही अभिषारी मान जयो। तू ही जुं अधूको ज्ञान मया।।385।।
तू ही जु अविभचारी सु मुनी। तू ही अधिचारी नाथ दुनी।।
स्वामी जु अभूलो एक तू ही। भूलो सब जग जन ओर सही।।386।।

(त्रिभंगी)

जब लगि अतिंद्रिय बोध निरिंद्रिय, इन्द्रि अनिन्द्रिय रहित जिना।
जीवो नहि पावत तोहि सु तावत, अखिल न गावत रूप दिना।।
तू ही जु अवाच्यो, मुनिहि जु जाच्यो, कितहु न राच्यो सर्वगुरु।
तू अखिल सुवाच्यो नाथ अजाच्यो, निज रस राच्यो देव धुरू।।387।।
तू साधु अतंद्रा, बसहि जु कन्द्रा, मत जिन चंद्रा, दिढ़ जु धरै।
ते जपहि जु तोही है निरमोही, छांड़ि सबोही ध्यान करैं।
अतिरिक्त विभावो, शुद्ध स्वभावो, अमित प्रभावो काल हरै।।388।।
तू है अकलंको ईश चिंदको, नित्य अपंको देव हरी।
तू असम जु नाथो है अति साथो, अति बड़ हाथो रहित अरी।।
तू ही अपरापर, है जु मुधाहर, पूजि सुधाकर लोकपती।
प्रभु जी अति पात्रो, है अति धात्रो, ज्ञानहि मात्रो शुद्ध घती।।389।।
तू अतिभूतेश्वर, है जु महेश्वर, देव जिनेश्वर अतुल गुणो।
तू अनत विधानो, नाथ अमानो, अति गति दानों तत्त्व मुणो।।
तू ही जु अरूपी, अनत जु रूपी, परम अनूपी बोधकरो।
तू पात्र जु रहितो पात्र विमहितो, निज रस सहितो कर्म हरो।।390।।
तू है अतिचारी, जिन अविचारी, अतिगति भारी धर्म परो।
है जु अविलीनो, नाथ अदीनो, नांहि अधीनो सिद्धि वरो।।
देवो अति चेता मुक्ति सुनेता है जु प्रणेता चित्तहरो।
अति ही मदहारी, साधु सुधारी, अमृत धारी मृत्यु हरो।।391।।
तू अतिशमधारी, अगरव भारी, अति भवहारी शिव जु वरो।
तू है अतिपारी, अति अविकारी, भव्य उधारी, जिन विथरो।।

तू अतिरित माया अतिरित काया अतिरित माया क्षेत्रधरो।
तू है अतिक्षेत्री सर्व सुवेत्री मोह विजेत्री जगत गुरो।।392।।
तू प्रभु अवधूतो अति हि जु पूतो है जु अभूतो भूत महा।
तू है अति कामो, फुनि जु अकामो राम विरामो नाम लहा।।
अति कर्म जु नासा, अति जु अनाशा, रहित जु आशा संत धुरो।
जीवनि कौ पालक दोष जु टालक काम प्रहारक सर्व सुरो।।393।।

(दोहा)

तु जु अनातंको प्रभू, है जु अनावेशो हु।
पुजि अनादेशो तु ही, व्यापि रह्यो जगि जो हु।।394।।
तेरौ निर्माता नहीं, रचिता जग मैं कोय।
अनिर्मातु भगवान तू, अनिर्वाच्यको होय।।395।।
अतिभूतीश्वर असम तू, कर पात्रा जु महंत।
तोहि जपै निज मात्र तू, विनु गात्रो भगवंत।।396।।
अतिजेता अतिभूप तू, अतिधर्मी अतिधर्म।
अति जु भर्म रहितो तु ही, अतिशर्मी विनु कर्म।।397।।

(कवित्त)

तू अतिकर्म जु टारक स्वामी, शुभ कर्मा नहि अशुभ जु कोय।
अतिपुण्यो शुद्धत्व मात्र है, तो सौ देव सु तू ही होय।।
तू अनधेश नाथ अतिधागो, अतिरिक्तो छात्रनि तैं सोय।
तू अलशेष नाथ अति मात्रो, अत्यंतो अत्यर्थ न दोय।।398।।
तू अतिनाथ अतितंजु पात्रो अति सुहि तू अत्यंत जु भ्रात।
अतिभृत्या तेरै जिन स्वामी, अति चेतन तू अमित सु त्रात।।
अति जु अनंत भेद धर तू ही, आप अभेदो हैं अनपात।
तू सामान्य विशेषातम है, एकानेक जु मेद अजात।।399।।
जो अति क्रांति विज्ञांति दयाला, अरिहंता अतिशांत मुनीशा।
सुर नर मुनिवर षमतिर कौ मन हरै न चौरो अति जगदीशा।।

साचझूठ जे जगत प्रपंचा, जानै सब अर रहित जु रीस।
जीव रषिक जो नासक कर्मा निर्ग्रंथो अति कमलाधीस।।400।।
इह अद्भूत गति देषहु तापैं सौं अध्यातम धार सु सार।
अध्यातमि कौ तारक देवा, असुघारिनि कौ है प्रति पार।।
अश्व जु सांदन हस्ति सुपायक, देनहार सब कौ दातार।
सब सैंनातैं रहित जु स्वामी सेनाधर सेवैं दरवार।।401।।
अतिसै जड़ के दास न मांगैं, दै अतिशय चऊतीसु जो मोहि।
अष्ट जु प्रातिहार हू दैहौ, केवल दै विनऊं कहा तोहि।।
देहु अनंत चतुष्टयनि रवै तू, अतिशय तन चिद्धन होहि।
अतिशय प्रातिहार नहि दै तौ, अनंत चतुष्टय दै प्रभु सोहि।।402।।
अैजु अजात जान जान तू करई, निज संपति दै श्री भगवान।
अभवि न पावैं तेरौ पुर जो, तू भवितारक है अतिजान।।
तू जु अभीरु भीरु न पाँवै, अभिध्येयो तू है अभिधांन।
अहमेवादिक तोमैं नांहि, तू अभिदेव अनूपम मांन।।403।।
तू अतिध्येय सु तू अति ज्ञेयो, अप्रमेय तू है अतिमेय।
अद्भुत सार जु तू शिव सारो, अतिशय सागर है जु अहेय।
तो सौ अतिशय धरण जु तू ही, और ना दीसै जग मैं ज्ञेय।
मेरी इह विनती सुनि देवा, देहु अभैपद निज मैं लेय।।404।।

(दोहा)

अति प्यारौ आधार तू, अनत वसै जग देव।
अदभूत अध्यातम विमल, तु ही प्रकास अछेव।।405।।

(अतिप्यारा की ढाल - त्रिभंगी छंद)

है अति मति कारा, अतिसारा अवधि अधारा अतिधारा।
है अति सुखसारा, अमन प्रचारा, अवगम वार धर प्यारा।।
है अति विचरइया, अति बिहरइया, अति विथरइया अतिसारा।
है लक्षणगारा, अतिशय कारा, अति समवारा अति प्यारा।।406।।

अति ही वित भरिया, अति चित धरिया, अति गति हरिया अतिहारा।
है अत्युचंडा, अति सुखपिंडा, अगति विहंडा, अति प्यारा।
प्रभु अति गति कहिया, अति रति रहिया, अतिगण घरिया अतिसारा।
है अतिगुणधुरिया, अतिभव तरिया, अतियम हरिया अतिप्यारा।।407।।
है तथ्य सुधारा अवितथ धारा, अविधि विडारा अतिप्यारा।
है अरति जु हरिया रंग सु करिया संघ उधरिया अति कारा।
गुण संग न तजिया संग जु तजिया मुनि गण भजिया क्षम वारा।।408।।
जिन अति गति पिंडा आप अपिंडा अव्रत छंडा अति फारा।
है अतनु सुदंडा व्रत नहीं खंडा उपरम मंडा जन प्यारा।।
है अनघ अधारा अगम प्रहारा अगम अपारा अघटारा।
है तथ्य सुधारा अविरथ धारा अवधि विडारा अति प्यारा।।409।।
अति पर गुणरहिता अति निज सहिता, सुर नर महिता अतिपारा।
है अतिरस रसिया, अतिगुण लसिया अवगम बसिया अतिप्यारा।
अति अतिथि अधारा वितथ विदारा। पथ्य सुधारा अति सारा।।
है अतत विडारा अव्रतडारा अतिव्रतवारा अतिप्यारा।।410।।
अकलित अविरूपा अचलित भूपा, अतुल अनूपा अतिवारा।
है अनुभव कारा अति भवहारा अकथ अपारा जिन प्यारा।।
अति अतिशय मंडा अनुशय छंडा सौख्य करंडा अविकारा।
है अनुभव पिंडा अतिशय कंडा अतिगति षंडा अतिप्यारा।।411।।
है अपगति षंडा, अविगत पिंडा अतिहित मंडा अविधारा।
है अतिअघ दंडा अति जु प्रचंडा कर्म विहंडा अति प्यारा।।
है अविरति हारा विरति विहारा, अतनु प्रहारा अणगारा।
है भूति विथारा अखलित धारा अप्रमत वारा अति प्यारा।।412।।
है अमित विथारा सार सुसारा, अति जग पारा अतिचारा।
है अतिक्रम टारा मल जु विडारा, अवलोकन सुधि कर प्यारा।।
अकर अकारा अजर जरारा, अमर करारा अविचारा।
अमद प्रचारा अठ मद डारा, अविनय टारा, अतिप्यारा।।413।।

अति सुख वारा अकुलित डारा, अतिशम धारा, अतिगारा।
अठ दस जु हजारा, शील प्रकारा, अनतीचार जु धर प्यारा।।
अति तिक्षारी अतिक्षमधारी अलष जगारी अतिभारा।
क्षण क्षण धारा आप सम्हारा ज्ञान अभीक्षण धर प्यारा।।414।।
अतिमद मारा अमद सुघारा अति संवेगी जगतारा।
अतिगति धर्मी रहित जु भरमी असंवेग हर अति प्यारा।।
अकृपण चारा कृपण विडारा त्याग सुधारा जग भारा।
अति निज लागा अति पर त्यागा अति जस भागा अति प्यारा।।415।।
अति तप धारा अति तप सारा अतप प्रहारा तप कारा।
तप ज्वर हारा तप जप पारा, अतित पवारा अति प्यारा।।
अति तपकंडा अतप सु दंडा शक्ति अनंता अतिधारा।
नहि असमाधी साधु समाधी वह असमाधी हर प्यारा।।416।।
त्याग अषंडा तप जु प्रचंडा आप अबैया व्रत कारा।
दस भेद जु धारा साधु उधारा वह जु अवइयाव्रत हारा।।
अकपट गारा कपट प्रहारा, त्याग सुधारा उर हारा।
अति भवनहंता अति अरंहता अरहंताक्षर धरतारा।।417।।
अनुभव कारा परिगह डारा सर्व अधारा गुणगारा।
आरिजतारा भगत उधारा अठ दस उद्गुण धरतारा।।
अनुभव वारा वह अति प्यारा, अगमि प्रचारा अभिचारा।
अति श्रुति धारा बहु श्रुत पारा, अर्द्ध अर्द्ध शत धरतारा।।418।।
अवितथ कारा अतत विडारा अमत जु टारा अतिधारा।
प्रवचन सारा अवचन वारा अति श्रुति प्रवचन धरतारा।।
अवसि जु करणा, निति प्रति चरणा षट आवस्य जु मुनि प्यारा।
वह अति प्यारा मुनि जु उधारा, अवसि करण षट धरतारा।।419।।
अब्रह्म धूका शीलनिकूपा रत्नत्रय मारग धारा।
अपथ विडारा मारग सारा अप्रभावना हर प्यारा।।
अमद सुकरिया शक्ति सु भरिया, अतिक्षम धरिया व्रत धारा।
वत्सल भावा रहित विभावा, वह जु अवात्सल हर प्यारा।।420।।

अनुभव दाया अतिशय काया अतिशमिभाया अतिवारा।
अतिहित भारा अतिधृति धारा अनुभव वारा अतिप्यारा।।
अतिसति पारा असत प्रहारा, अति मल टारा अतिसारा।
भवजल तारा अतिछल डारा, अनुभव वारा अति प्यारा।।421।।
अति सुविचारा अशुचि निवारा, अधरमडारा भवडारा।
अमति प्रहारा अगति प्रहारा अनुभव वारा अतिप्यारा।।
अभियम धारा संयम पारा, इंद्रिय प्रांण जु व्रत गारा।
रक्ति प्रहारा भोग तजारा, अनुभव वारा अतिप्यारा।।422।।
अगम अपारा अकरम चारा अकरणकारा अगिवारा।
अवरणधारा अमरणकारा अनुभव वारा अतिप्यारा।।
अतिछतिवारा अति अतिकारा, ब्रह्म विहारा अविकारा।
विश्व विथारा विश्व अधारा, अनुभव वारा अतिप्यारा।।423।।
अतिभव कूला अतिरसझूला, अनुभव मूला अजरारा।
अतिशयभूपा अनुभव रूपा, अतिगुण वारा अतिप्यारा।।
अतिघन नामा अतिधन धामा, अति अभिरामा अतिकारा।
मुनि मन हारा अति दुख टारा, अनुभव वारा अतिप्यारा।।424।।

(सवैया इकतीसा)

असि मसि कृसि और वानिज कौ लेस कोऊं,
नांहि तेरै पुर मैं न शिल्पी पशु पालनां।
पठन न पाठन है शिक्ष गुर भेद नांहि,
स्वामी और सेवक कौ भेद न निहालनां।।
तू तौ जिन एक रूप दोय रूप भाव तेरौ,
तेरौ पुर शुद्ध रूप जहा वस काल नां।।
मोह नांहि दोह नांहि, नांहि जु विभाव कोऊ,
जहाँ तू विराजै देव सवै भ्रमजाल नां।।425।।
असिधारी तू जु नांहि खड्ग नांहि तेरै हाथ,
खड्ग धारा सम जिन मारग प्रकास तू।।

शस्त्र वस्त्र नांहि तेरै अस्त्र कौ न नाम कोऊ,
दूषन न भूषन जो भूष कौ विनाश तू।।
अस्यादिक भेद जे जु जीविका उपाय नाथ,
कर्मभूमि लागत जो आदि ही विभास तू।
असुधारी प्रांणिगण पाँवै मोष वोहि जपि,
मोक्षकौ जु दाता एक दीषै स्वविलास तू।।426।।
अरुण प्रकास होय तातैं पहली जु नाथ,
उठि भव्य जीव तेरौं नांम उर मैं धरैं।।
मध्यकाल सायंकाल अरध निसा जु मांहि,
तोहीसौं लगाय चित कामक्रोधकौं हरैं।।
अनडन बावण तू अनडन तोसौं और,
सुर नर मुनिजन तोही कौं जप्यौं करैं।।
तू ही एक ज्ञानरूप चेतनानिधान देव,
तोहीकौं जु ध्याय साधु वेगि भौदधि तरै।।427।।

(सोरठा)

मेरे टारि जु देव, अनिरक्षा अनिगुप्त भय।
अकस्मात दै सेव, अमी जु अमृत देहु मुझ।।428।।
तू जु अकार स्वरूप, सर्वाक्षरमय देव तू।
ब्रह्म रूप जग भूप, दौलतिकरण जु तू सही।।429।।
अस्मिन भवदधि मांहि, रागादिक जे क्षार जल।
तो विन दूजो नांहि, अंमी देनहारो प्रभु।।430।।
अंमी जु अमृत नाम, तू जु अंमी और सु नहीं।
अमी साधवो राम, तोहि त्यागि और न जपै।।431।।
अर्थ अंमी कौ एह, विद्यमान कौ नाम है।
अमी सुधा हू जेह, तोसौ नांहि अंमी जु को।।432।।
अवग्रह ईहा और, फुनि अवाय जु धारणा।
मति ज्ञान के दौर, तीन शतक छत्तीस जे।।433।।

तिनकौ भाषक एक, केवलरूपी देव तू।
तेरौ इह जु विवेक, जड़ चेतन न्यारे करै।।434।।
तू जु अनुत्सेको जु, उत्सेको गर्व जु सही।
तू गर्वारि जिनो जु, मांनी तोहि न पाँवही।।435।।
नांम रहित कौ ठीक, कहैं अपेत जु ग्रंथ मैं।
तू जु अपेत विलीक, सत्य उपेतो तू सही।।446।।

आ

आगैं दूजौ स्वर आकार तीकौ व्याख्यान करैं छै। सारा ककारादि अक्षरां कै कांनौ दीजै तठै आ अक्षर कौ उच्चार आवै। का असो सवद उच्चार करता का मांही आ कौ उच्चार हूवौ। ईही भांति सारा अक्षरा मैं यो स्वर गर्भित छै। दूसरी मात्रा छै। अकार कौ दीरघ स्वर छै। एकाक्षरी नाममाला मैं आ असौ पितामह कौ नांव, सो पितामह सारां का श्रीभगवान। पिता का पिता नैं पितामह कहजे, असो श्रीजी आकार रूप निराकार तीस्यौ आकार नैं मुख्य दे निराकार की स्तुति करै छै।

(श्लोक)

आदिदेवं युगाधारं, आत्मारामं पितामहम्।
वंदे साकाररूपाढ्यं, निराकारं निरजनं।।1।।

(दोहा)

आकाराक्षर पितृमह, नाम कहै श्रुतिधार।
सो तू सर्व पितामहो, निराकार अविकार।।2।।
आशु शीघ्र कौ नाम है, शीघ्र वेगि दे नाम।
वेगि उतारौ जगत तैं, ढील न लावो राम।।3।।
आवस्यक षट मोहि दैं, क्षमता वंदन भाव।
थुति करणां पड़िकमण विधि, व्युत्सर्गो सिज्झाव।।4।।

आवस्यक ए साधु के, कहे जु तुव मत मांहि।
फुनि आवस्यक गृहपती षट धारै सक नांहि।।5।।
देव जिनेश्वर पूजिवौ, गुरु सेवा स्वाध्याय।
संजम तप अर दान प्रभु, गृहि धारै षट भाय।।6।।
आवस्य जु यातैं सही, अवसि जु करणा एह।
इन करि शिवपुर पथ लहै, तो धारै तुव नेह।।7।।
आलय घर कौ नाम है, आस्पद कहिये थान।
तेरौ आलय सवनि मैं, आपद है निर्वान।।8।।

(सवैया)

आदिधुर आदिगुर आदिसुर आदिनर,
आदिथिर आदिचर आदिकर तू सही।।
आदिधर आदिघर आदिपुर आदिपर,
आदिहर आदिहरि आदिवर तू जु ही।
आदिगिर आदितर आदिचिर आदिभर,
आदिजिन आदिजन आदिदिन तू वही।
आदिगुन आदिगुनि आदिघन आदिवन,
आदितन आदिधन आदिपुनि मूल ही।।9।।

अर्थ : आदिधुर कहता धुरु आदि कौं नाव सो सारां मैं धुर धर्म तीकी आप आदि जेता धर्म का भेद त्यांमैं आप समान अर आपकी भगति समान और धर्म नहीं तीस्यौं धुर की आदि, अथवा धुर जे कलप की आदि तींहू की आदि अथवा धुर जे गाड़ी की धुर ती करि गाड़ी चलै सो आप धर्म रथ की धुर अर महाधोरी महाधुर धर धोरयां की आदि सर्व को आदि तींस्यौं आदिधुर कह्या। **आदिगुर** कहतां गुर जे मुनिराज अथवा गुरजन मातृ पित्रादिक अथवा राजादिक त्यां सारा की आदि सारां का गुरं तीस्यौ आदिगुर जे। **आदिसुर** कहतां सुर जे देव त्यां की आदि सारां इंद्रांदिक देवां मैं श्रेष्ठ देवां का देव तीस्यौं आदिसुर कह्या। **आदिनर** कहतां नर जे मनुक्ष अथवा बलवान समर्थ होय सो नर कहावै सो भगवान महानर छै आदिनर छैं।

आदिथिर कहतां थिर जे निश्चल पदारथ त्यांकी आदि अथवा थिर जे पंच थावर त्यां का रक्षक आप थिरीभूत स्वरूपस्थ अर थिर धर्म अधर्म आकाश काल अचल पदार्थ त्यांका ज्ञायक थिरा की आदि तीस्यौं आदिथिर कह्या। अर **आदिचर** कहतां चर जे जीव पुद्गल त्यांका ज्ञायक सारा का नाम। अथवा चर जे विनश्वर वस्तु तीनै हेय बतावा वाला सर्व हेय ज्ञेय उपादेय नै ज्ञान मैं राषिवा वाला। सारौ ठाट ज्यां का ज्ञान मैं राषिवा वाला। सारौ ठाट ज्यां का ज्ञान मैं माय रह्यो अथ्वा चर कहता त्रस काय त्याका रक्षक। अथवा आप हां सारै विचारि रह्या। सर्वगत चर परणति घिर गुण नैं धरयां आप ही घिर चर छै। अथवा निराकार दसा जो सिद्धावस्थता तीमैं थिर अर साकार जो अरहंत अवस्था तीमैं चर अथवा दौन्यौं ही अवस्था विषैं थिर चर छै। **आदिकर** कहता आदि का करिवा वाला। आदि मुख्य कौ प्रथम कौ नांव सो सारा कार्या मैं आदि धर्म कार्य और कार्य धर्म कै पाछै सो भगवान धर्म का करिदा वाला अर करावा वाला तीस्यौ आदिकर कहजे

आदिघर कहता घर नांव स्थान कौ छै सो जेता स्थान वान इन्द्रादिक त्यांमैं भगवंत का थांन समान आन थान नाहीं वो थान आदि छै आदि बड़ा कौ नांव सो भगवंत मोटा छै सारा वांकी आस करैं। सारा पद नाश रूप आप अविनासी तीस्यौं आदिघर मुख्य घर बड़ घर कह जे। **आदिधर** कहता धर पृथ्वी जो स्रिष्टी तो मैं आप आदि सारी स्रष्टी का धनी अदि नै धर्‌यो श्रेष्ठ तामैं धरयां तीस्यौं आदिधर कह्या। **आदिपुर** कहतां पुर अग्रेश्वर कौ नांव सो जे अग्रेश्वर त्यांमैं आप अग्रणी आप सारिखा अग्रगामी और नहीं। अथवा पुर नगर कौ नांव सो तीन लोक मैं इंद्रादि कां की अनेक राजधानी अनेक पुर परि आप कौ नगर बैंकुंठ तिसौ और पुर अथवा तीन लोक मैं जेता पुर त्यां मैं आप ही आदि छै पुर मैं जेराजादिक बसैं सो देव द्वार कै पाँछै। अथवा पुर मैं लोक बसै सो आप मैं सारा लोकालोक वसि रह्या। तीस्यौं आदिपुर अथवा सारा मैं आप बसि रह्या। सो सारा पदारथ आप का पुर। अथवा पुर शरीर कौ नांव सो पुर मैं और असौ तत्त्व कोइ नहीं आप सारिखौ। अथवा पुर अत्यंत कौ नांव प्रबल कौ नांव भर्या कौ नांव सो असौ और कुण तीस्यौं आदिपुर कह्या। अर **आदिपर** कहतां पर जे उतकिष्ट गणधरादिक मुनि त्यांमैं आदि

अथवा पर जे आप थकी न्यारा अन्य समस्त द्रव्य त्यांमैं आदि सो उतकिष्ट स्यौं उतकिष्ट अर निज पर में श्रेष्ठ तीस्यौं आदिपर कह्या। **आदिहर** कहता आदि का हरवा वाला ज्याकी आदि नहीं अनादि का अथवा हर नांव एकादश रुद्र त्यां करि पूज्य रुद्रादिक सारा भगवंत नैं ध्यांवै अर **आदिहरि** कहतां हरि नारायण हरि इन्द्र हरिसिंह सो सारा मैं आप आदि अथवा हरि आप ही कौ नांव। अर जे हरि कहांवै इन्द्रादिक त्यां का धनी सारा मैं श्रेष्ठ तीस्यौ आदिहरि कह्या। **आदिवर** कहतां अनंत शक्तीमय परणति का वर अथवा सांरा मैं श्रेष्ट अर आदिगिर कहतां गिरा वाणी कौ नांव सो वाणी की आदि सर्व ग्रन्था कै प्रथम ही ज्यांनै गाजे गिरा का नायक। अथवा गिर पहाड़ कौ नांव। सो पहाड़ कौ नांव अचल कहजे छै सो आप भी अचल अपदा अथवा पदारथ ने षट् द्रव्यं त्यांकी आदि सारां मैं प्रधान। अथवा आदिगिर जो मेरु पर्वत ती समान ॐचा तीसो **आदिगिर** कह्या अर **आदितर** कहतां तर तम ए विशेष का अत्यर्थ का नांव सो आप सारिखौ विशेषतर और नहीं तीस्यौं आदितर। अथवा तर भीज्या कौ नांव सो आप अनुभव रस का भीज्या महा सघन तीस्यौं तर। अथवा तरु वृक्ष कौ नांव सो वृक्ष भी सघन शीतल छाया करी सफल तपति हरण विश्राम दायक सो आप सारिखो और तरु नहीं। सर्व फल दायक महा कल्प वृक्ष आप तीस्यौं आदितर कह्या। **आदिचिर** कहतां चिर काल का पदार्थ नव तत्त्व त्यांमैं आदि चिरकाल का **आदिभर** कहतां संपदा का भर्‌या त्यांकी आदि असौ और नहीं। एक आदिभर विश्वम् भर और सारा देवरिक्त कोई भी भर नहीं। ज्यां कै नश्वर विभूति तैं भर किसा का भगवान आदिभर। **आदिजिन** कहतां जिन गणधरादिक कौ नांव छै सो सारा गणधरादिक मुन्यां मैं श्रेष्ट। **आदिजन** कहतां जन मनुष्यां त्यां की आदि असौ मनुष्य और नहीं। कोई पूछे **भगवान** तो चर्तुगति थी न्यारा, आदिजन क्यौं कहौ, वै कांई मनुष्य छै? तीको समाधान मनुष्य तौ नहीं, परि पुरिषाकार तीस्यौं आदिजन कह्या। अर **आदिदिन** कहतां असौ दिन और नहीं। आप अद्‌भुत दिन अकेला अनंत सूर्यां की प्रभा ने जीतैं अपना नख मैं अनन्त सूर्या की जोति नैं धरया मुनि पक्षा नैं शष्टित करनहारा माया रजनी का हरन हारा अज्ञांन तिमिर का हरन हारा जड़ भाव निसाकर का अस्त करनहारा, अमित विभाव तारागन नै सरवथा लोपन

हारा हृदै कमलनै प्रफुल्लित करनहारा, कुमन कुमुद नै मुद्रित करनहारा, मोक्ष का कपाट खोलनहारा, इंद्रीचोरा का विडारनहारा विषै विनोद का मिटावनहारा, तप तेज का प्रगट करनहारा, ताम सतलवर की गस्त का मिटावनहारा मोह गहल का खोवनहारा। अनंत स्वाभाविक परणति किरण का उद्योत करनहारा। अविद्या मूर्छा अतृप्ति निद्रा का भांजीवावाला कुमति कुलटा नैं निषैधनहारा कुश्रुति दूती नै जरदरू करनहारा मिथ्या भाव राहु का संयोग स्यौं वा अस्त हो वास्यौ रहित अर सुपंथ चलावैं जीव वकवा सुमति चकई कौ अनादि विरह मेटैं जीव नैं सुमति मिलावैं स्व पर प्रकास कारक अन्याय आताप करि वर्जित क्रोध लोभादि निसाचरां कौ संचार दूरि करनहारा आशा पिशाची का दूरि भगावन हारा सप्त भय मैं भयकारी सम्यग्रत्नत्रय। व्यवहार निश्चय का प्रगटा। लज्यादि गुणां का कारन, काम प्रकोप का मेटक, स्त्री विषै अरुचि करावन एकांतवाद अनय का उथापक, उभय नय का प्रगटक आत्म देव सेवा का दरसिक धर्म रीति का पोषक, सामायक पोसह पडिकमणादि विधि का भासक, सर्ववंद्य सर्वप्रिय अभव्य उलूकां करि अलक्ष तीस्यौं आदिदिन कह्या।

आदिगुन कहतां गुण पर्याय स्वभाव स्वशक्ति सत्ता नैं धर्‌या अकेला मैं अनंत तानैं धरिवा कौं गुण अथवा आप समस्त गुणां मैं प्रधान गुणकारी ज्ञानादि रूप तीस्यौं आदिगुन कह्या अर **आदिगुनि** कहता गुणी जै षट द्रव्य त्यांमैं आदि महागुणी सर्व गुण्यां की आदि केवल ज्ञान नैं धरयां तीस्यौं आदिगुनि कह्या। **आदिघन** कहतां घन समूह कौं नाव सो समूह की आदि धणा की आदि। अथवा घन मेघ कौ नामसो आप महामेघ तत्त्व ज्ञानामृत की वृष्टि करै, अनंत गुणां नैं अंकुरित करैं। धर्मध्यान नैं उपजावै भुक्ति तृण मुक्ति कण नैं प्रगट करे। ताप तृश्ना नैं मेटै मृत्यु दुकाल नै दूरी करैं, तीस्यौं आदि घन अथवा घन वज्र कौ नांव सो कर्म रूप जे पहाड़ त्यां नै भांजिवा नै महावज्र तीस्यौं आदिघन कह्या। अर **आदिवन** कहतां वन कौ नांव आराम सो आप योगीश्वरां का क्रीड़ा बन अनंत गुणा का क्रीड़ावन महा विभूति का क्रीड़ावन। अथवा वन जल को नांव, सो आप महा पवित्र अति निर्मल जड़ मात्र। महा शीतल तृश्ना हिरण सुख करण दाह बुझांवन जगजीवन महा पवित्र

अति निर्मल जड़ भाव मेटक अपूर्व जल अथवा वन विंतर को नांव सो आप महावन महाभूत सर्वभूत प्राणी त्यांकी आदि भूतनाथ भूतेश्वर अथवा महाभूत ई वास्तै कह्या तीस्यौं मिलैं तीनैं विदेह करैं, आप समान करैं अर कोई ही प्रकारस्यौं ज्यांकौ आवेस न मिटै सदा तन्मई ही रहै तीस्यौं महाभूत, अथवा भूत सत्यारथ कौं नांव सो आप सदा भूतार्थ महा सत्यारथ भूत भविष्यत वर्तमान काल विषै एकरूप तीस्यौं आदिवन कह्या, अर **आदितन** कहतां जे तनुधारी त्यां का धनी अथवा वज्रवृषभ नाराच संहनन समचतुरसंस्थान परमौदारिक तनु नै साकार दसा मैं धर्‌यां निराकार सिद्ध दसा मैं तनु नाहीं। पूर्व अवस्था मैं छै। अथवा पंच प्रकार शरीर औदारिक वैक्रियक अहारक तैजस कार्माण त्यांमैं आदितनु औदारिक धरिवा वाला ही नैं तद्‌भव लभ्य वैक्रियकादि स्यौं तद्‌भव मोक्ष नहीं। आदितनु वाला नैं मोक्ष देनहारा अर पंच शरीरस्यौं न्यारा। अथवा आदि छै तनु कहतां स्वरूप ज्यांह को तीस्यौं आदितनु कह्या। अर **आदिधन** कहतां धन द्रव्य कौ नांव सो आप सर्व द्रव्य की आदि असौ धन ई लोक मैं और नहीं, असौ कोई धनवान नहीं, महालक्ष्मी का पुंज लक्ष्मीनाथ तीस्यौं आदिधन कह्या। अर **आदिपुनि** कहतां पुण्य पवित्र को नांव सो आप सर्व पवित्र वस्तु की आदि महापुण्य का कारण पुण्य पाप तै रहित आदि मंगल आदि पावन असौ पुण्य पावन और नहीं तीस्यौं आदिपुण्य कह्या। श्री भगवान सर्व मैं श्रेष्ठ, प्रथम में प्रथम, प्रधान मैं प्रधान, मुख्य मैं मुख्य। ज्येष्ठ मैं ज्येष्ठ, सर्व कलपा की आदि, तीस्यौं अनेक नाम वाका जाननां अर जप करना।

(सवैया)

आदि मनु आदि मुनि आदिशमि आदिदमि,
आदि क्षमि आदियमी आदि जो उपरमी।
आदि मणि आदि गणि तिसै मन आदि वुनि,
वाही कौं जु आदिभनि आदिगिनि धरमी।
वहै आदित्र जो अनादि देव आदिनाथ ताकै
तू जु आदिगुणि आदिमुणि मरंमी।

वहै ईश आदिरम्य रम्यान की आदि भाई,
अगम्य है अगम्य ताहि भजि करमी।10।।
वहै आदि समभावधारी जिनराज देव,
ताही कौंजु आदिभणि आंन तजि बावरे।
आदि धुनि वाही की जु और नांही धुनि कोउ,
आदि विभु आदि प्रभु आदि जपि वावरे।।
आदिसत आदितत आदिमत,
आदिदत आदिवपु आदितप आदिथपि डावरे।
आदिशिव आदिधव आदिदेव सदाशिव,
ताहि कौं जु आदि थुणि छांड़ि भ्रम भाव रे।।11।।

अर्थ : विभु कहतां पूरण छै समर्थ छै व्यापक छै दत कहता दातारं छै रतनत्रय का दायक छै। अदत नहीं महा उदार छै। आदिवपु कहतां वपु शरीर कौ नांव सो भगवान सारां का शरीर। सारा पदार्थ आपका ज्ञान मै समाय रह्या। सारा ज्ञेय को घर आकास सो आकास भी अनंतो आपका भाव मैं आय रह्यो। समाय गयो तीस्यौं ताका वपु। फिर सारा ज्ञेय पदार्थ आप का शरीर छै। आदि तपु कहतां तप की आदि अथवा आदितप जो अनशन तीरूप शिव कहतां कल्याण कारी। धर कहता स्वामी। अर उपिरला कवित्त मैं शमी दमी यमी क्षमी कह्यो सो रागादिक कौ त्याग शम कहावै। मन इन्द्री को निरोध दम कहावै, जावज्जीव पापा कौ त्याग यमनियमादिक कौ साधन यम कहावै। अर निर्वेरता नि:क्रोधता अनाकोशता उपसर्ग सहनशीलता क्षम कहावै। निरभिलाषता उपरम कहावै। यांका धारी जे महामुनि ते शमी दमी क्षमी उपरमी कहावैं। त्यांमैं आप आदि छै, मुख्य छै।।

(कवित्त)

आदिध्यानि आदिज्ञानि आदितार आदिभार,
आदिपार आदिसार आदिक्रान्तिधार तू।
आदिनामि आदिग्रांमि आदिदानि आदिवानि,
आक्रोश न रोस जाकै सो है सुषकार तू।।

तू ही आम वातादिक वीत जामैं आंमता न,
आसमंत पूरि रह्यो एक अतिचारू तू।
आतप मिटावन तू आपदाहरण देव,
आलस न भाव तेरै महादु:ख टार तू।।12।।

(पद्धडी)

आलंवन सर्ववितीत देव। आलंवन दायक परम टेव।।
परद्रव्य तणौं आलंब नांहि। तेरौ आलंवन तोहि मांहि।।13।।
आलवंन सबकौ एक नाथ। वाकौ आलवंन ज्ञान साथ।।
आप्तो आपा पर भास एक। आवरणी रहितो अति विवेक।।13।।
आवरणी जाकै सर्व नांही। निर आवरनी छति आप पाँहि।।
तू परम निरावृति अलख देव। आवरणी कौ नहि एक भेव।।15।।
ज्ञानावरणी के पंच भेद। तेरै एक न तू स्वरस वेद।।
दरसन आवरणी नव प्रकार। तैं एक न वापी प्रभु लगार।।16।।
दरसन सुख बोध अनंत भासु। वीरज अति अतुल जु सुगुण पास।।
आठौं करम जु आवरण रूप। तै मूल न राखे जगत भूप।।17।।
आवरणी मेरी मेटि नाथ। देहो निज दरसण परम साथ।।
आतम गुण भर करि मोहि देव। आदीश्वर दै निज परम सेव।।18।।

(चौपई)

तू आकार विवर्जित देव। तू आधार वितीत अभेव।।
आदि पुराणी तू जु पुरान। आदि धुरांणी तू अतिज्ञान।।19।।
तू आहार बिना अतिपुष्ट। तू आगार बिना बहु तुष्ट।।
आदि चिरांणी तू चिरकाल। आदि थिरांणी तू प्रतिपाल।।20।।
तू आकार प्रगट्टक ईश। तू जु निराकारो जगदीश।।
तू आखंडल प्रणमित स्वामी। इंद्र तणौं पति अंतरजामि।।21।।
आदि गिरांणी तू जु अनादि। तू आदीशो एक अवादि।।
तू आचारिज बिन मित देव। अजरज रांणी तू जु अछेव।।22।।

तू आर्यागण सुगुणित नाथ। आदि दुरांणी तू जु अनाथ।।
तू आखंडल पूजित पूजि। आदि विथारी तू जु अदूजि।।23।।
तू आखंडल सेवित इंद। आदि अपारी आनंद कंद।।
आखंडल ध्यावै जसु पाय। तू आखंडल तारक राय।।24।।
आद्युपचारी आदित पूजि। आदि महंत न तेरै दूजि।।
तु जु अपूरव रांण मुनिंद। आदि न अंत न अतिशय चंद।।25।।
आदि अविद्या भेदक रांण। आदि मनोहर रूप धाराण।।
आतम घाति विघातक देव। आतम बोध विधातक सेव।।26।।
आशारासि विनिंदक स्वामी। आशा पासि निकंदक नांमि।।
आशामूल विचूरक ईश। आशापूर प्रपूरक धीश।।27।।
आशा पापि दंड कराय। आशा नागिनि खंडक भाय।।
आशात्यागि परम रस रंग। आतम सुखकर आतम संग।।28।।
आतम ज्ञान प्रकाशक आप। आतम ध्यान विभास प्रताप।
आतम गुणभर आतमरूप। आतम गुणपर आगम भूप।।29।।
आतम गणधर आगमकार। आतम लोकी आतम धार।।
आतम पूरण आतम चिन्न। अंबर मान तू अंबर भिन्न।।30।।
आरति हरण वि आपत हार। आपद दूरि करै भव तार।।
आरति ध्यान निकंदक देव। सरणागत पालक जसु टेव।।31।।
आरति पूरकं आरति नास। आर्जव भाषक तारक दास।।
आर्जव रूपक आर्जव मूल। आर्जव पूरक आश्रव दूर।।32।।
आपविक आप स्वरूप। आतम भासक आप प्ररूप।।
आप अनूप में नाथ अरूप। आज्ञादायक आगमरूप।।33।।
आज्ञानायक आज्ञासिद्धि। आज्ञादायक आतमऋद्धि।।
आज्ञा प्रगटक आप प्रसिद्ध। आप प्रबुद्धो आप विशुद्ध।।34।।
आरति रुद्र निवारक ईश। अगनि विनाशक जल जिम धीश।।
तू आराधन सार जु देव। है आराधक पार करेव।।35।।
तू आचारिज आरिज वंद्य। आदित चंद प्रवंदि अनिंद्य।।
तू आगमि गुर आगम कंद। अध्यातमि सेवित जिनचंद।।36।।

हैं आगम धर ध्येय अनंद। तू आतम गण विनमित इंद।।
आलापैं आखंडल राग। सो तू प्रगट जु देव विराग।।37।।
आतम रस धारक जगदीस। आगम गायत आगम सीस।।
तू आकुलता आश्रव भिन्न। आवास जु आश्रय सब भिन्न।।38।।
आशां भिन्न च आलश भिन्न। आरति भिन्न च आपद भिन्न।।
आगम भिन्न च आगम चिन्न। आतम देव सकल पद लिन्न।।39।।

(दोहा)

आश्रव बंध न संवरो, और जु निर्जर मोष।
पर वस्तुनि मैं एक नां, तू आतम गुण कोष।।40।।
जीवाजीव सु पुण्य अघ, ए नव तत्त्व जु होय।
परद्रव्यनि विनु एकलौ, तू अति चिदघन कोय।।41।।
आश्रव कहिये आगमन, कर्म शुभाशुभ कौ जु।
बंध जु बांधे कर्म कौं, संवर पर रुकिवौ जु।।42।।
निर्जर पर कौ नासिवौ, मोष सकल तै मोषं।
बंध जु मोक्ष जु कर्म कौ, तेरैं दोष न मोष।।43।
जीव जु कहिये चेतना, जड़ कहिये जु अजीव।
पुण्य शुभो एन जु अशुभ, तू जगपति जगपीव।।44।।
आश्रव मेरे टारि प्रभु, जे सत्तावन होय।
मिथ्या अव्रत जोग फुनि, दुष्ट कषाय जु कोयं।।45।।
द्वादश अव्रत पाप जे, मिथ्या पंच जु ईश।
पंद्रा जोग प्रमाद गनि, क्रोधादिक पचवीस।।46।।
आश्रव टारि जु आपुनौ, दे आश्रम जगदीस।
तोतैं आश्रम बहुत नैं, पायो त्रिभुवन सीस।।47।।

(गीता)

आदिक्षतिधर आदिक्षतहर, आदिक्षम नर सोभितं।
आदि क्षांती आदि दांती, आदि जग जन मोहितं।।48।।

आदि कांती आदि शांती, आदि सुर नर क्षोभितं।
आदि युगधर आदि जतिवर, आदि खंडित लोभितं।।49।।
आदि शमकर आदि दमकर, आदि धर्म धुरंधरं।
आदिदात्रं आदिपात्रं, आदिभूत परंपरं।।50।।
आदियमहर आदियमधर आदि समचित भूषितं।
आदि गरिमं आदि विरमं, आदि हरि शत पूजितं।।51।।

अर्थ : यमहर कालनैं हरिवा वाला, यमधर यम नियमादिक नैं धरिवावाला, गरिमं कहतां गरिष्ट, विरमं कहतां विरक्तं, हरिशत कहतां सौ इन्द्र ताकरि पूज्य।

आदिक्षमकर आदि शिवधर आदिरम्य मनोज्ञ त्वं।
आदिगमक जु आदि ग्रन्थ जु आदिदेव अरोगि त्वं।।52।।
आदि जप त्वं आदि तप त्वं आदि ग्रंथि विभेद त्वं।
आदि जति पति आदि हित मित आदि भरम उछेद त्वं।।53।।
आदि क्षपकं आदि थपकं आदि सरवस वेद त्वं।
आदि जो अपराध ताकौ हरण एक अभेद त्वं।।54।।

(चौपई)

आमरयादी कृत्य सु देव। तू मरयादाधर अतिभेव।।
तू आधीन न काहू कौ जु। और न जग मैं पर तोसौ जु।।55।।
तू आधीनता भिन्न अरूप। तू आधीन कर तारक भूप।।
तू आकुलता नाशक ईश। तू आतमता भासक धीश।।56।।
आदि परम गुर आदि अधार। आ जग मंडन शिव सुख धार।।
आदि परंपर आदि अपार। तू आतापन धारक तार।।57।।
ते आतापन जोग तपंत। तपत काल गिर शिखरि रहंत।।
वरषा तरु तलि तरिनी तीर। सीत काल मैं मुनिवर धीर।।58।।
ते पाँवै तो करि भवपार। तू आतापन तापस तार।।
आखेटक अति पाप जु कर्म। ताकौं निंदै तू अतिधर्म।।59।।

आखेटक करमी भरमैं जु। लख चौरासी धरि जनमैं जु।।
तू आरोग्य प्रचारक देव। पापर्द्धी न लहै तुव सेव।।60।।
ह्वै आरोज्ञ जु तोहि भजंत। तू आर्द्रवता कारण संत।।
कोमलता आर्द्रवता अर्थ। तू कोमल आर्द्रव अत्यर्थ।।61।।
तू जु धरैं प्रभु आर्द्रव भाव। तू जु हरै आर्द्रितता राव।।
आर्दितता कहिये पीड़ा जु। तू पीड़ाहर निज क्रीड़ा जु।।62।।

(सोरठा)

कोमलता कौ नाम, आर्द्रवता भाषै श्रुती।
तू आर्द्रवता धाम, कठिन कर्म नासक तु ही।।63।
पीड़ा कष्ट जु नाम, आर्दितता भारति कहैं।
तू आर्दित नहि राम, आर्द्रव भाव धरैं प्रभु।।64।।
तू आदित्य अनंत, ज्योति रूप राजैं सही।
तोहि जपैं जु महंत, आखंडल आदित्य जे।।65।।
तू आदीश अनादि, है आदेश जु दायको।
तू आलोक जु आदि, देव अशेस जु काय कौ।।66।।
तू आकाश जु काय, नभ छायोग गनेश तू।
तेरे छाय न माय, सब परि छाया कर तु ही।।67।।
तो मैं सर्व अकास, है आकाश जु मांहि तू।
चिदाकाश चिदभास, महाकाश रूपी तु ही।।68।।
सर्वाकाश मझांर, व्यापि रह्यो आकाश तू।
लोकालोक अधार, षट द्रव्यनि मैं आदि तू।।69।।
तेरौ इह आदेस, जीव सवै निज सम मुणौं।
तव पावौ निज देस, कनक कामिनी जब तजौं।।70।।

(भुजंगप्रयात)

तु ही है जु आभास शुद्धो अभासा। प्रभु हैं जु आवास शुद्धो अकासा।।
अनादीश गर्वापहारी जु तू ही। सदा भास पूरो सही है समूही।।71।।

अधीशो जु आवास दाता सदा तू। सदाकाश शुद्धो न लित्यो कहा तू।।
तु ही है जु आशक्तता त्याग कारी। विभू है जु आलिप्ती हारी विहारी।।72।।
चिदानंद चैतन्य आनंद रूपी। तू ही आतमाराम ज्योति अनूपी।।
प्रभु है जु आनंद कैरो सही तू। निजात्म स्वरूपोपदेशी तु ही तू।।73।।
स्वभू है जु आनंद धामो गुसांई। अभू है जु आनंदकारी सु सांई।।
सु आनंद धारी जु आनंद भारी। तू आनंद वंदो सु आनंद तारी।।74।।
तु आनंद रूपो च आनंद पुंजो। सदानंद भूपो जु आभास कुंजो।।
तु ही है जु आनंद नाथो अनंदी। जु आनंद मूलो दुकर्मैं निकंदी।।75।।
प्रभु है जु आनंद रामो उधारी। सही है जु आरामकारी अपारी।।
निजावास दे तू हमैं नाथ पूरा। विमोहापहारी सवै दोष दूरा।।76।।
समोभाव रूपा सु आली विभू जी। जु चिच्छक्ति रूपा सुदेवी प्रभु जी।।
नहीं और आली नहीं और नारी। इन्हीं आलि तो सो मिलावै विहारी।।77।।

(चौपई)

आनंदतनितो आनंद नीवा। आनंद जन को आनंद सीवां।।
आनंद रासी आनंद वासा। आधि व्याधि नासक सुख रासा।।78।।
आदि गिर वारनी की तू ही। तू गरीयसां गुर जु समूही।।
आदि अंत वर्जित तू स्वामी। मोहि देहि निज वास अनामी।।79।।
आधि व्याधि तेरै नहि कोई। मेरे लागि रही ए दोइ।।
दै के निज तत नाथ जिनिंदा। शिवपुर कौ सुख देहु मुनिंदा।।80।।
आगमपारग आगमकारी। आगमधारक आगसहारी।।
आगस है अपराध जु नामां। तैरे आगस एक न रामां।।81।।
आलस कौ नहि नाम जु तेरै। आगम सार जु तू शिव प्रेरै।।
आगम निरूपक आगम मूला। आतप वारण आकृति दूरा।।82।।
आकुलता कौ नाम न कोई। आकुलता रहितो इक होई।।
तू आसन्न जु भव्य उधारा। जग वच्छल तू देव अपारा।।83।।
आ जग दूरो तू जु महेशा। तू शुद्धत्व गुणो जु जिनेशा।।
जे आसन्नासन्न जु साधू। तोकौं जपि ते हौंहि अबाधू।।84।।

आसन यम नियमादि प्रकाशा। प्राणायाम जु त्रिविधि विभासा।।
प्रत्याहार जु धारण ध्याना। लय सु समाधि प्रकार विग्याना।।85।।
योगाभ्यास प्रकासी तू ही। योग सिद्धि है गुण जु समूही।।
आशा मारण आत्मोपासा। जीव उधारण योग विलासा।।86।।
योगारूढ़ा तोहि जु पाँवैं। आशन निश्चल ह्वै लव लावैं।।
आत्मोद्धारण आशा नाशा। तू आश्रय दाता स्व विभासा।।87।।
आश्रय अपुनैं राखि जु मोकौं। आपत काल न व्यापैं तोकौं।।
आतम पक्ष अनातम दूरा। आशातीत जु केवल पूरा।।88।।
आशन जीतक है इक तू ही। नादि काल तैं गुण जु समूही।।
आसन मारि जु बैठो देवा। लोक शिखरि राजैं बिनु छेवा।।89।।
आसन तेरै नांहि अनाशन। तू जु अरूपी पति जिन शासन।।
आशावीतक आशा पूरण। आकर गुण तू आशा चूरण।।90।।
आशा खंडन आपद दंडन। आतम ज्ञानी आरति छंडन।।
आशा दूरक आलस चूरग। आतम दरसी आशा पूरक।।91।।
आशा नाथक आशापालक। आश विनाशक त्रिश्ना टालक।।
आदर योज्ञ जु है इक तू ही। आलस तर्जित गुण जु समूही।।92।।
आतम परसी आगम राया। आगम दरसी आतम दाया।।
आवेशो न प्रवेशो तेरै। आदेशो न उदेशो प्रेरै।।93।।

(गीता)

आश्चर्यकारी लोक तारी, आप आप्त निरंजनं।
आशक्ति त्यागी परम भागी, आदि सकल जु रंजन।।94।।
आततायक कर्म निंदक, अदय कर्म निवारणं।
आत्मोपलंभ अनंद नंदी, आततायक दारणं।।95।।
आश्चर्यधारी आगहारी, आग नांव जु पाप कौ।
इह आगि तैं अति आग दाहै, तू विनाशक ताप कौ।।96।।
आदि स्वामी आदिधामी, एक नायक तू जु है।
आपद विदारी भगत तारी, आदि तत्त्व जु पूज है।।97।।

आतम विहारी पापहारी, एक एव जिनिंद त्वं।
आलोकपारी मुकति कारी, आदि गोरख इंद त्वं।।98।।
आदि व्यक्तं आदि त्रिप्तं, आदि अंत अलिप्त त्वं।
आदि धौतं आदि पूतं, ईश गुण गण लिप्त त्वं।।99।।
आदि हर हरि पूज्य तू ही, आदि आचारीश त्वं।
हैं पंच आचाराजिके हो, एक भासै धीश त्वं।।100।।
आदिचारी मारमारी, आदि धनपति देव त्वं।
आदि गणपति आदि जगपति, आदि मूल विभेद त्वं।।101।।
आदित्य वर्ण अवर्ण देवा, एक सार सुसार त्वं।
आदित्य आदि नंत कोटि, ज्योति धार अपार त्वं।।102।।

अथ षट आततायी महापापी त्यांकौं व्यौरौ कहै छै—

(दोहा)

अगनि दाह दायक जिको, अर गर दायक कोय।
परधन परदारा धरा, पित्त च हंता होय।।103।।
अघ भाजन ए निर्दयी, इनकौ नरभव बादि।
तिनकौं कहिये आतता, बहु पापी इत्यादि।।104।।
इनि पापिनिकौ निंदको, तू जिन रहित जु पाप।
पुण्य पाप तैं रहित तू, है हरि आपै आप।।105।।
आसेव्यो तू सेव्य है, आत्मस्थो जु दयाल।
तू आलोक विलोक है, आप्तस्थो जु कृपाल।।106।।
है आरोग्य प्रकार तू, है आपूर अदूर।
तू आचूल जु मूल है, स्वाचारी अघचूर।।107।।
आत्मीयो जु अनूप है, तू स्वाचार अशेस।
स्वात्मीको जु निकूप तू, आभासो बिनु भेस।।108।।
है आधारो एक तू, है आदेय जु एक।
तू आरूढ़ो है सही, योगारूढ़ विवेक।।109।।

आधेयो आराधि तू, आपूतो आसाधि।
आकूतो आदेस तू, आदिश्वर जु अबाधि।।110।।
आभोगो आयोग तू, आव्यक्तो जु प्रथक्त।
आसंतो नाशक्त तू, सर्व अनातम तिक्त।।111।।
अत्रिप्तो त्रिप्तातमा, आदि जु त्यागी देव।
आडि जु ज्ञानी एक तू, ज्ञानरूप निज बेव।।112।।
आदि कोष तैरै सही, औरन काहू कै जु।।
आदि मोख दाता तुही, तोहि जु सर्व फवै जु।।113।।
अदि जु भोगी योग तू, आदि जु योगी भोग।
निजरस कौ आस्वादिवौ, इहै योगरस भोग।।114।।
अदि जु सांई लोक कौ, आदि लोक तू नाथ।
आदि गुसाई है तु ही, आदि जु स्वामी साथ।।115।।
आदि थोक इक रावरौ, आदि सु ठाकुर तू जु।
चाकर सव तेरे प्रभु, सब करि पूजित पूज।।116।।
आदि जु मौनी नाथ तू, आदिनाथ जगनाथ।।
आदि जु ध्यानी एक तू, आदिराव वड हाथ।।117।।
आदि जु खेवा लोक कौ, भव सागर की नाव।
अदि सेय इक तू जुहै, नाहिं जु जाकै दाव।।118।।
आदि पाज जगसिंधु की, आदि पाल इक तू जु।
आदि राज जिनराज तू, आदि जु सवतैं दूज।।119।।

(चौपई)

अदि जु धरती आदि जु ध्येय। आदि जु मर्मी आदि जु ज्ञेय।।
आदि जु कर्मी निज गुण कर्म। अठ विध कर्म न जाकै मर्म।।120।।
आदि जु कर्त्ता आदि सुकाज। चउ विधि संघ तणी जसु लाज।।
आदि जु सुखिया, आदि जु ऋद्धि। आदि जु साधू आदि जु सिद्धि।।121।।
आदि जु शरणं है इक ईश। आदि न अंत न और जगीस।।
आदि सुरासुर पूज्य अरोष। आदि जु पोषा है जु अदोष।।122।।

आदि सु तपधन विधि गण सोष। अविधि विनाशक विधि विधि पोष।।
आदि जु पाता आदि जु सूर। आदि जु दाता आदि जु दूर।।123।।
आदि विधाता आदि विपूर। आदि जु त्राता आदि जु मूल।।
आदि जु पुरिषा आदि जु वीर। आदि सु क्षत्री अदि सु धीर।।124।।
आदि जु भर्त्ता आदि जु तंत्र। आदि जु ब्रह्मा आदि जु मंत्र।।
आदि जु शर्मा आदि स्वरूप। आदि जु वर्मा आदि जु भूप।।125।।
आदि सु जिनवर आदि सु ज्योति। आदि जु शिववर आदि तद्योति।।
आजि धन्य तुव दरस जु होय। दरसन तैं पावै गुण दोय।।126।।
केवल दरसन केवल ज्ञान। इह जिन दरसन कौं फल जानि।।
आजि नांव फुनि युद्ध तणौं जु। जिन कैं आजि न अरि न गिणौं जु।।127।।
आजि मांहि पावैं जयकार। मारि करम धावै भवपार।।
ए फल जिनवर दरस तणों जु। भाषैं मुनिवर अति जु घणौं जु।।128।।
आज्यादिक रस त्यागि मुनिंद। तोहिं जपैं तू देव जिनिंद।।
आज्यो घृत जो भोजन सार। ताहि तजैं रस त्याग सुधार।।129।।
आदि जु शास्ता, आदि जु ईश। आदि जु साहिब आदि गरीस।।
आदि अधीशो, आदि जु गीश। आदि जु धामी, आदि जु सीस।।130।।
आसति नासति तू जु प्रकास। नित्यानित्य विकाशक भास।।
आस्तां कहिये दूरि जु रहो। जो महिमा तुव है विनु सहो।।131।।
बिनु स्वरूप जाने हूं तोहि। जपियां सुरगति निश्चय होहि।।
तव सेवा तैं विघटै मोह। तेरी आस्था हमकौं होहु।।132।।
तेरी आस्था दिढ़ परतीति। धारहि सम्यक्ती करि प्रीति।।
तेरौ आक्रमण जु जिनचंद। कवन करै तू नाथ अनिंद।।133।।
तू आक्रांत न कबहूं नाथ। मोहि जु दाव्यौ मोह जु साथ।।
तू आक्रांतपणौं सब मेटि। करि जु निराक्रम तो अघ फेटि।।134।।
आदि जु तीरथ आदि सु राय। आदि सुर हि तो आनंद काय।।
आदि उधारी आदि जु देव। आदि सुयंत्री आदि अभेब।।136।।
आदि सु तंत्री आप अदूज। आदि जु दौलति कारी पूज।।
दौलति और न दौलति लच्छि। जो जिन सत्ता है परतच्छि।।136।।

इति आकाराक्षर संपूर्ण।



आगैं इकाराक्षर को व्याख्यान करै छै। यो त्रितिय स्वर तीजी मात्रा छै। सर्व ककारादि अक्षरां कैं पछ्यौं दीछे तैंठै यो स्वर प्रगट बोलै। कि इसौ शब्द उच्चर्‌यौं तैंठै इकार स्वर कौ उच्चार हुवो। ईही भांति सर्वत्र जांनिवौ। सो एकाक्षरी नाममाला मैं इकार नांम काम कौ कह्यौं। सो काम कहतां मदन, कांम कहता अर्थ, काम कहतां अभिलाष, कांम कहतां पंचइंद्रियां का विषै भोग अर कांम कहतां सुंदर महामनोज्ञ, अर काम इसौ नांम कांमदेव पुरिष को भी छै। सो श्री भगवान कांमदेव पुरिषां करि तौ पूज्य छै। चौबीसौं कामदेवां नै मुक्ति का दाता छै अर कांम भोग जे इन्द्रियां का विषै त्यांस्यौं सर्वथा रहित छै, अर अभिलाषा सौं रहित छै। कहीं वस्तु विषै ज्यांकौ अभिलाष नहीं स्वात्मा राम छै । अर अर्थ का सिद्धि करनहारा छै। धर्म अर्थ कांम मोक्ष का दाता है। अर आप परम अर्थ है, सर्व अर्थ सौं न्यारा है। अर सर्व कौ अर्थ सर्व कौ अभिलाष पूर्ण करिवा समर्थ है। भुक्ति मुक्ति का देनहारा है। अर कांम विकार का नासक है। मदन का शत्रु है। जीवां का मित्र है। सो भगवान की स्तुति इकाराक्षर करि करै है।

(श्लोक)

इकारिं इकारांकं, इभनाथेशनायकं।
जितेन्द्रियं जिताऽधीशं, लोकाधीशमहं यजे।।1।।

(दोहा)

इहै इकार जु सूत्र मैं, प्रगट कांम कौ नाम।
तुम जु कामहर कामपति, काम जु दायक रांम।।2।।
काम शत्रु के नाशकर, कामदेव के नाथ।
काम अर्थ के सिद्धकर, नमो नमो बड़ हाथ।।3।।
काम भोग तेरै नहीं, है एक न अभिलाष।
कामदेव कांमेश तू, पूरन सब अभिलाष।।4।।

इंदीवर कहिये कमल, तुव पद कमल समांन।
सुर नर मुनिवर भंवर सम, लपटि रहे धरि ध्यान।।5।।
इंदीवर जीतक वदन, इन्दीवर जित पाय।
इंदीवर जित नयन है, इंद्रिधर पतिराय।।6।।
इंदीवर जितकर जिको, इंद्रीवर जित गंध।
इंद्रीधर प्रतिपाल सो, तिसहि ध्याय मन अंध।।125।।
इंद्रपति अर इंदुपति, इंदु कहावै चंद।
इंद्र चंद्र आदित्य जे, तोहि भजैं शिवकंद।।8।।
इंदु मुषो इभ जीत गति, इभरिपु विक्रम सार।
इभ कहिये कुंजर जिको, तुव गति अगम अपार।।9।।
इभ पावै नहि चाल जो, तेरी चाल दयालं।
हंस चाल गज चाल तैं, तेरी चाल विशाल।।9क।।
इभरिपु केहरि नाम है, तेरौं बल नहि सिंह।
पावैं तीन जु काल मैं, तूं जिनवर नरसिंह।।9ख।।
इंदु कोटि जौ एक ह्वै, तेरे मुष की सोभ।
नहि पाँवै जिननाथ जी, तू अकलंक अक्षोभ।।10।।
तातैं तेरी ऊपमा, और न धारै कोय।
जड़ चेतन सब द्रव्य मैं, तोसौं तू इक होय।।11।।
तू जु इंद्र सबलोक कौ, तू त्रिभुवन कौ इंदु।
इंद्र लोक दातार तू, निरवांणी निरदुंद।।12।।
इंद्रादिक सेवैं तुझैं, इंद्राणी अतिभक्त।
पति पतंनी भव आंतिरै, तोतैं हो हैं मुक्त।।13।।
इषु चापादिक कौ प्रभु, तेरै नांही लेस।
शस्त्र वस्त्र एको नहीं, भूष न प्यास न भेस।।14।।
इषु जु नांव है बान कौ, धनुष जु कहिये चाप।
ज्ञान चाप व्रत रोप धर, नासै अखिल जु पाप।।15।।
इषु चापादिक तैं रहित, धनुर्धर अतिधीर।
निरवैरी निरदोष है, सर्वलोक कौ वीर।।16।।

इषु चापादिक विनु जिनै, किये कर्म चकचूर।
इंद्री वर्जित इंद्रतर, विषय वर्ग तैं दूर।।17।।
इन्द्री फल दातार जो, इंदु प्रभु जिनराय।
इंद्री बोध को इंद्र कर, इंद्री जाहि न पाय।।18।।
इंद्री जीतक इष्ट सब, इष्टानिष्ट न भाव।
इष्ट वस्तु दायक जिको, इष्टादिष्ट स्वभाव।।19।।
इंद्री गति ज्ञातार जो, इंद्री सोष करेव।
इंद्री तिक्त प्रकाश जो, इंद्रीधार अछेव।।20।।
इंद्री वीत जु इंद्रधर, इंद्री मुक्त जु देव।
वह जु इन्द्रियातीत है, पूरण रूप अभेव।।21।।
इंद्री भासक नाथ जो, इंद्री नाशक सो जु।
है जु अतिंद्रिय लभ्य जो, इंद्री दंडक जो जु।।22।।
नाम अनिंद्री चित्त कौ, मन अर इंद्री पंच।
वाहि न पावै बुद्धि हू, वह जु अतिंद्रि अवंच।।23।।
एकेन्द्री पंचेन्द्रि लौं, सब कौ पालक जोय।
पंचेन्द्री मानस बिना, तद्भव लभ्य न होय।।24।।

अर्थ— श्री भगवान एकेंद्री स्यौं ले पंचेंद्री तक सारां का दयाल प्रतिपाल है, परन्तु तद्भव मुक्त पंचेन्द्री ही नै करैं। मनुष्य वर्णत्रयी पुरुष लिंग बिना औरां नै तद्भव लभ्य नहीं। जनम कै आंतिरै सारां ही नै है।

इंद्री खंडन नाथ जो, जीव तणौ रछिपाल।
इंद्रेश्वर इंद्रीश्वरो, इंद्रि पार विशाल।।25।।
इंद्रिनि के विषया जिके, तिनकौ दूष कराव।
इंद्री लूष स्वभाव जो, इंद्रधनी भव नाव।।26।।
इंद्रि निवारक तत्त्व जो, वंचक विषयनि कौ जु।
इंद्रिनि कौ अर मन तणौं, विलय करण हरि सो जु।।27।।
इंद्रभेद विभास जो, ब्रह्म जु विद्या दाय।
इंद्रि तजि करि मन भया, सेय जु वाकै पाय।।28।।

इंद्री रोधक देव जो, इंद्री गोपक नाथ।
इंद्री प्रीति जु छांडि दै, करि मन वाकौ साथ।।29।।
वह जु इंदिरानाथ जो, कमला कौ इह नाम।
अखिल प्रभासक भानु सो, कमलापति शिवधाम।।30।।
इंद्रि प्रतारक द्रव्य जो इंद्रि प्रचारक नांहि।
सर्व विहारी देव जो, बसै हमारे मांहि।।31।।
इंदु रहित परकास जो, अमित प्रभाव प्रकास।
इंद्री चोर विडार सो, ताकी करि मन आस।।32।।
इंद्री षंड विहंड जो, इंद्री चंड निपात।
इंद्री ग्रांम विकास सो, इंद्राधीश अगात।।33।।
इंद्री प्रथक स्वरूप सो, इंद्रीधर गणपाल।
इंद्रजीत तारक जिको, मन जपि तजि जंजाल।।34।।
इंद्रजीत तार्यो जिनैं, तार्‌यो कुंभ जु कर्ण।
तार्यो इंद्र जु खगपती, इंद्र तणौं वह शर्ण।।35।।
तारे इंद्र अनंत जिह, इभ तारे केई जु।
इभ रिपु केई तारिया, रे मन ता सेई जु।।36।।
प्रभु जु इलाकौ पति जिको, पति जु इंदिरा जान।
इंद्री भोग जु रोग तजि, मन जिन जपि सु सयान।।37।।
इत्वरिका कुटिला जिका, पर औ अपर गृहीत।
करै कुशील क्रिया त्रिया, गमन तजे भवभीत।।38।।

(चौपई)

इंद्री भिन्न महारस चाष। इंद्री सुख नहि दुख जु विभाष।।
इंद्री सुख ए दुख के मूल। तिनकौं तजि है जिन अनुकूल।।39।।
इंद्रिनि के विषया मल पूर। वह हरि इनि विषयनि तैं दूर।।
इंद्री विरतितणौं फल एह। ह्वै जिन सौं अति परम सनेह।।40।।
इंद्री भोग विजोगक देव। इंद्री रति तजि करि मन सेव।।
इष्टानिष्ट विवर्जित ईश। इतर विभाव न तौमें धीश।।40क।।

इतर जु कहिये अवर जु वस्तु। तेरै इतर न तू निज वस्तु।।
इतरेतर तू इतर विभिन्न। इंगित ज्ञायक निज रस लिन्न।।41।।
इंगित चेष्टा कौ है नाम। तेरै इंगित क्रीड न राम।।
सब की इंगित जानै तूज। तेरी इंगित इतर जु पूज।।42।।
इंगित तिक्तर इंगित व्यक्त। पर इंगित तै अति जु प्रथक्त।।
इंद्रीपति है मन कौ नाम। तु जु मनोहर अविचल धाम।।43।।
इंद्रीपति को बोधक देव। रे इंद्रीपति करि तसु सेव।।
इंद्रीपति रोधक जे साध। वाकौ जपि ते हौंहि अबाध।।44।।
इंद्रीपति सोधक जसु ध्यान। इंद्रीपति मारक तसु ज्ञान।।
इंद्री पंच महा जड़ रूप। वाहि लहै किम वह जु अरूप।।45।
रे मन तू इंद्रिनि कौ नाथ। तजि विषया करि हरि कौ साथ।।
सर्वस दायक वह जिनधीर। इभपति पइए वातैं वीर।।46।।
भुक्ति मुक्ति को दाता वहै। ताहि छांडि मन और मग है।।
इभपति अैरावत कौं कहै। ऐरावत पति वाहि जु चहैं।।47।।
वह जिन इभपति कौ दातार। नमो नमो करि वाहि अपार।।
है जु इंदिरा मूल सही जु। है जु इंदिरादाय वही जु।।48।।
नाथ इंदिरा रूप अकाय। देव इंदिरा राय अमाय।।
श्रीधर नाम जु है ताकौ जु। रे मन और न है वासौ जु।।49।।
इतर भाव तैं गम्य न होय। केवल गम्य जु वह जिन कोय।।
ताकौ गम्य सकल की जानि। वाकी गम्य जु वाकौं मानि।।50।।
वासौं करि मन विनती एह। अमन करे प्रभु निज मैं लेह।।
रे मन तू जिन सकि जिन सौं जु। मोहि मारि हैं जो मिलिस्यौं जु।।51।।
वह मरिवौ नहि जीवौ जानि। सुमन होय अर जिन पहिचानि।।
मरिहू जिन सौं मिलि मन वीर। तन धन आपौ वारि जु धीर।।52।।
इत उत कौ फिरिवौ न भलौ जु। त्यागी कलपना जिनहि मिलो जु।।
इत्यादिक का तौकौं कहैं। धनि तू जो तोतैं हरि गहैं।।53क।।
पुदगल के परपंच जु छांडि। मिलि जिन सौं मन मोहि न भांडि।
रे मन तू मेरौ परधान। जौ तो तैं पाऊं निरवान।।53ख।।

भृत्य तणौं इह धर्म जु जान। स्वामि काज कौं तजिए प्रान।।
मेरै कारिज तू मन मित्र होहु सुमन मिलि हरि जग मित्र।।54।।
तव तू साचौ मित्र जु मंत्रि मोहि मिलावै जिनवर यंत्रि।।
रे मन तू जु विचक्षन होहु। हरि सौं मिलि छांडौ जग मोह।।55।।
करि जिन सौं मन विनती एह। भुक्ति न चाहौ भक्ति जु देह।।
तू जु इंदिरा अयन गरीस। लाइ इंदिरा तेरै धीश।।56।।
नाम इंदि तू लच्छि तणौं जु। तू लछिमी धर हे जु घणौं जु।।
तू जु इंदिरा षंध अबंध। है जु इंदिरा तिक्त अषंध।।57।।
बहिरंगा कमला तैं दूर। अंतरलछि रह्यो भरपूर।।
तू जु इंदिरा दांनि अनंत। पूज इंदिरा षांनि सु संत।।58।।
इंद्री पति षंडक जिन नाथ। इंद्री रति छंडक शिव साथ।।
इंद्रि विरति सु मंडक ईश। विरति मई जिनवर जग सीस।।59।।
इंद्री रति निदंक जग ज्योति। इन्द्री रती निरमूल उद्योति।
इंद्री पति तैं दूरि जु देव। इन्द्री पार करैं जसु सेव।।60।।
इंद्री ग्राम जु उदवस कार। इष्टादिष्ट जु तत्त्व प्रसार।।
इष्ट देव जग मैं नहि और। हमरौ इष्ट जु तू शिव मौर।।61।।
जब लग मन इंद्री चर होय। तब लग तू मन को रिपु कोय।।
अब तौ मैं हौं तेरौं दास। मोहि जु देहो भगति विलास।।62।।
इला नाथ है पृथ्वी कौं जु। तू जु इलावर गुणगण फौज।।
इंद्र उधार इला पति ईश। इलाजीत जगजित जगदीस।।63।।
इंद्र शतानि करैं जसु सेव। सौ इंद्रनि कौं पति जगदेव।।
इंद्राणी ध्येयो जु अहेय। तो बिनु और सवै जग हेय।।64।।
इंद्र नरिंद अहिंद जु पाल। शचि देवी कौं करणनिहाल।।
तू इज्यार्ह जिनिन्द मुनिंद। पूजा कीजे तेरी इंद।।65।।
इज्या कौ अर्थ जु पूजा जु। तो बिनु पूजि नहै दूजा जु।।
मै सठ इज्या कीधी नाहि। तातैं रुलिउ चहुं गति मांहि।।66।।
अब निज इज्या देहु दयाल। मति भरमाबै देव कृपाल।।
तू जु इलावर कमला वरो। तु जु इलेश्वर नाथ जु परो।।67।।

तू जु इलेतर सीस जु इला। मोह जीत तैं काल जु गिला।।
इंद्र सु कारक तेरी पूज। तू जु इलापति पति जग दूज।।68।।
इंद्रपदी नहीं मांगे दास। मांगे तेरी भगति विलास।।
तू जु इलाजित अजित कृपाल। अष्टम धर दे मोहि विशाल।।69।।
सर्व इला कौवित इक तू जु। इतर विभाव रहित जग पूज।।
अनंत अपार भवोदधि कूल। तू अघ टालक शिव सुख मूल।।70।

(त्रोटक)

इंद्री सुख दायक देव जिनं निज, तत्त्व प्रकाशक बोध दिनं।।
इंद्रीजित नायक आदि धनं, इंद्री गिर घायक वज्रि घनं।।71।।
इंद्रीपति सुत शत षंडकरं, धनु सायक पंच हरं सुनरं।।
चिद चाप जु व्रत सुरोप धरं, प्रणमामि पुनीत जु धर्मधुरं।।72।।

अर्थ—इंद्रीपति जो मन तींकौ सुत काम तीका शतषंड कहतां सौ टूक करिवा वाला छैं। चकचूर करणहारा छै, अर वैंकौं धनुष कुसुम अर बाण पंच हरणहारा छैं। वांण पाँच की ब्यौरौं—सोषन, संतापन, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण। सो श्रीजी वैंकौ नास करनहारा अर धनुष बांण षोसनहारा, महा नर छै अर आप चिद कहतां ज्ञान तीकौ तौ चाप कहतां धनुष धर्यो छै। अर चरित्र का रोप कहतां बाण कीया छै नमस्कार होहु बानै पुनीत धर्म की धुर छै।।
इंद्री पति हारक देव हरिं। इच्छा परिपूरक लोक गुरं।।
इच्छा हर इच्छिक दानकरं। इच्छा नहि जास नमो जु हरं।।73।।
निरइच्छा पारकरं विहरं। नि:कांक्षित अंग धरं सुचिरं।।
इच्छारोधक तप भासपरं। इह पर भव शरणं देव अरं।।74।।
इभपति ऐरावत चढ़ि सु गिरिं। मेरू परि न्हाण जु कार थिरं।।
इभ त्रिजगत मंडन तारकरं। इभपति नायक के नाथ घुरं।।75।।
इह इ वरण वरण जु प्रगट करं। सर्वाक्षर रूप जिनं अमरं।।
इत्यादिक महिमा पुंज पुरं। प्रणमामि जिनं जु विराट सुरं।।76।।

अर्थ—इह कहतां ई लोकविषै इ वरण जो तीसरी मात्रा तीका भगवान प्रगट करन हारा अर सर्व अक्षर रूप इसा जिनदेव अमरं कहतां मरणसौं रहित

इत्यादिक महिमा का पुंज पुराधिपुर त्यानैं हमारौ नमस्कार होहु। सर्व विराट का सुर कहतां देव छै, जगत देव छै।

(दोहा)

इड़ा पिंगला सुषमना, नारी तीन जु होय।
रहे सुषमना लागि कैं, रटै जु तोकौं कोय।।77।।
तू तारै वनकौं सही, जे अजपा जु जपंत।
सोहं हंसो सांइया, अनहद नाद सुनंत।।78।।
ॐ सोहं मोहि दै, और न जाचौं नाथ।
प्रणवो अजपा जपि तुझै, ध्याऊं श्री जगनाथ।।79।।
इषुधी बाण जु भाथड़ी, जामैं तीर रहंत।
शम दम तीरा मोहि दै, इषुधी मुनिव्रत संत।।80।।
मुनिव्रत इषु धीसारिसौ, जामैं शम दम तीर।
ज्ञान चाप शम बाण करिं, मारूं मोह अपीर।।81।।
ऐसे बांण र भाथड़ी, ऐसो चाप जु मोहि।
दै रणधीर गुसाइयां, ज्यौं मारूं अघ टोहि।।82।।
तू जु इभेश्वर नाथ कौ, नाथ जु है जगनाथ।
इभ अश्वादि न चाहिये, देह आपुनौं साथ।।83।।
तू जु धरें प्रभु ईशितां, सदा बसै सब मांहि।
इंद्रादिक तोहि जु भजैं, यामैं संसय नाहि।।84।।
इंद्र धनुष जल बुदबुदा, तड़ित अभ्र सम देह।
मैं धारी अतिनाथ जी, अब तौ निज पुर देहु।।85।।
मेरौ हरि जु इकार तू, जाकौं कहिये कांम।
काम रूप तू काम हर, काम जु दायक राम।।86।।

(गीता)

इलानायक इलादायक, इलापाता नाथ त्वं।
इलात्राता इलाताता, इलाधीश अनाथ त्वं।।87।।

इलाज्ञाता इलाधाता, इलासार जु तत्त्व त्वं।
इलातारी इलाधारी, इलाधरणी वित्त त्वं।।88।।
इलाभागी इलात्यागी, इलाव्यक्त प्रभुत्व त्वं।
इलास्वामी अमितधामी, इलातिक्त विभुत्व त्वं।।89।।
इलासीस जु थान जाकौ, इलानाथ मुनिंद त्वं।
ज्ञेयाकार जु ज्ञान सारै, इलादेव जिनिंद त्वं।।90।।
इष्ट देवा इष्ट सेवा, इष्टदायक वीर त्वं।
इलाजित वित इलाजित जित, इंदिराधर धीर त्वं।।91।।
इलागुरतर इलापरतर, इलामरण अधीर त्वं।
इत्यादि नांम अनामनामी, तू हरो हर पीर त्वं।।92।।
इक्ष्वाकु वंस भवा जु कोई, तैंजु तारे तार त्वं।
इंद्रजीत उधार तू ही, मुनि सुव्रत हरि हार त्वं।।93।।
मोहि देहु अनंद देवा, दौलति करण जु धीर त्वं।
वखतावर अति है जु तू ही, सुगति दाता वीर त्वं।।94।।
तु जु आनंदी स्वछंदो, जगत वीर अरोध त्वं।
निर्भय राम करे जु मोहैं, जिनदासैः देवो धत्वं।।95।।
अजित करौ जु अजीत स्वामी, शंभू नाथ अधार त्वं।
जादूंराय सु धारि मोकौं सीतल करि जिनसार त्वं।।96।।

ई मैं श्री जी की भक्ति प्रार्थना आई अर कवि का कबीलां कौं नांव आयो, आनंद पिता, दौलति इत्यादि पुत्र, अजितदास इत्यादि च्यारि दौलति का पुत्र।

इति इकाराक्षर स्तुति सम्पूर्ण।

ई

आगै ईकाराक्षर कौ निर्नय करै छै। यो स्वर चौथी मात्रा छै। सर्व ककारादि अक्षरां कै आगै दीजै तैठे यो स्वर प्रगट बोलै। की इसौ उच्चार कीयो तब ई

आयो। ईही भांति सारा अक्षरां मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं ई इसो लक्ष्मी कौ नांव छै। सो लक्ष्मी श्री भगवान की शुद्धता निज परणति, और लक्ष्मी नहीं, सोई कहै छै।

(श्लोक)

ई लक्ष्मी कमला श्री च, रमा पदमा तु मा सती।
सत्ता च संपदा देवी, स्वात्माराम विभूति या।।1।।

अर्थ—ए लक्ष्मी का नाव छै। ई कहजे, लक्ष्मी कहिजे, कमला कहै जे, श्री कहजे च कहिये बहुरि रमा कहिये पद्मा कहिजे, तु कहिए बहुरि, माँ कहिजे सती कहिजे, सत्ता कहिजे, संपदा कहिजै, देवी कहिजे, अनेक नाम छै, जेता भगवान का नाम तेता महालक्ष्मी का नाव। वै ईश्वर वा ईश्वरी, वै परमेश्वरी वा परमेश्वरी, वै जिन वा जिनसत्ता, वै चेतन वा चेतना, वै शुद्ध वा शुद्धता, वै परिणामी वा परणति, वै भगवान वा भवानी, वै तत्त्व वा तत्त्वता, वै अस्ति वा अस्तिता, वै वस्तु वा वस्तुता, वै ज्ञानी वा ज्ञानानुभूति, वै आत्मा वा आत्मानुभूति। इही भांति अनंतगुण अनंत नाम मैं श्रीजीसौं अभेद छै। जे भगवान चिदानंद त्यांकी विभूति छै, ज्योति छै, क्रांति छै, एक लक्ष्मी वाही जाननी और कनक कामिनी रूपा जु विभूति है, सो संपदा नहीं आपदा है, भगवान सर्व आपदा स्यौं न्यारा है, संपदा रूप है।

(दोहा)

ई कहिये आगम विषै, है कमला कौ नाम।
तू कमलाधर जिन प्रभू, लक्ष्मीनाथ स्व राम।।2।।
ई न जु ईश्वर ईश हर, ईशेश्वर जगराय।
वह जु ईश्वरेश्वर प्रभू, जैनेश्वर जिनराय।।3।।
ईहा वर्जित ईशकर, ईति हरण हर देव।
ईहा नांव जु चाहि कौ, जाकै चाहि न लेव।।4।।
ईश नांव रुद्रो सही, तू जु तत्त्व ईशेश।
ईश जु हू को ईश तू, ध्यावैं सुर नर सेस।।5।।

ईहा पूरक ईशपति, ईहा दूरग देव।
ईहा चूरक ईशतर, ईषा रहित अछेव।।6।।
ईशानेश्वर ईश्वरो, ईप्सित दासा तू जु।
ईशा नो ईकर तू ही, ईर्षाहर जगदूज।।7।।
ईर्षा जीवनि की सबै, ईति भीति मिटि जाय।
जब तू आवै घट विषै, घट भेदी जिनराय।।8।।
ईश गुरु जू ईश पर, ईति विदारण सेव।
ईहा वर्जक ईशतर, नमो नमो हर देव।।9।।
ईति सात जे लोक में, अति वर्षा च अवृष्टि।
मूषक शलभा शुक गणा, उभय कटक नहि इष्ट।।10।।
ए जु सात ईति जु कही, भीति जु सप्त प्रमान।
इह भव पर भव मरण रुग, चोर अरक्षा जान।।11।।
अकस्मात मिलि सप्त ए, भीति जु जीवनि कौ जु।
ईति भीति मिटि जाय सब, रंग लगै तोसौं जु।।12।।
ईश धरण ईश्वर सुरो, ईश नाथ बड़ हाथ।
ईहा रोधक ईश को, ईज्या लायक नाथ।।13।।
इज्या पूजा नाम है, तो बिनु पूजि न ओर।
ईडित सब करि एक तू, श्री जिन त्रिभुवन मौर।।14।।
ईर्ज्या भाषा एषणा, उचिता दान जु होय।
परिठवणा ए पंच हैं, समिति कहांवै सोय।।15।।
निरखि जु चलिवौ भाषिवौ, भषिवौ दोष बिना जु।
लैवो निरखि जु डारिवौ, समिति सु भेद गिना जु।।16।।
ए भाषी तैं ही प्रभू, धारैं तेरे दास।
इन करि तू ही पाइए, जो छांडै सब आस।।17।।
ईर्ज्या बोधक तू प्रभू, ईर्ज्या सोधक स्वामि।
ईषा दोष निवार तू, इष्ट वाक्य सुख धामि।।18।।
ईषर साधिक मिष्ट वच, वचनातीत जु देव।
ईनेश्वर हरि ईन जिन, ईति हरै जसु सेव।।19।।

ईश्वर को ईश्वर जिको, भव जल तारक नाथ।
ईनेनोजित जीत जो, रतनत्रय कौ नाथ।।20।।
ईठ न वासौ और को, धीठ न वासौ और।
सब मांहै पैसि जु रह्यो, करै कर्म चकचौर।।21।।
ईत भीत सब त्यागि कैं, धीठ पनौ सब त्यागी।
रे मन वाकौ ईठ करि, वाकै रंगि जु पागि।।22।।
ई हित दाता वह प्रभू, ईकाराक्षर कार।
ईड़ा पीड़ा सब मिटै, वाकौ ध्यान जु धार।।23।।
रे मन ईश्वर कौं जपि, वातैं होहु अदूज।
वाकी सेवा जाचि तू, और न जाचै दूज।।24।।

(गीता)

ईश्वरेश्वर ईश ईशा, अखिल लोक प्रकाश त्वं।
ईश्वराधि प्रभुत्व पूरण, ईश पतनी आश त्वं।।25।।
ईज्य ईज्या जोगि देवा, ईति टारी तत्त्व त्वं।
पंच समिति पाल साधू, जाहि सेवैं वित्त त्वं।।26।।
ईश्वराभि सु ध्येय सांई, ईश गर्व निवार त्वं।
ईश पतनी जाहि सेवै, सो जु ईश अधार त्वं।।27।।
ज्ञानामृत है ईष रस जो, तदहारी निरहार त्वं।
सो मानुज जो श्रेय राजा, कुरतारी बहु तार त्वं।।28।।
ईजकोद्धर ईज्य इंजित, भरथ तारी सिद्ध त्वं।
ईशता मद वीत स्वामी, तत्त्व सार प्रसिद्ध त्वं।।29।।
मनुज मुनि सुर असुर ईद्रित, सर्वईहा जीत त्वं।
ईति भीति अनीति हारी, सर्वेश्वर जु अतीत त्वं।।30।।

(मोतीदाम)

नहीं जगि ईश्वर तो बिनु और। तू ही जिन ईश्वर है शिव मौर।
प्रभू बुध धीश्वर ईश्वरनाथ। विभू जगदीश्वर श्रीश्वर साथ।।31।।

सही जिन ईश्वरता जु भरा जु। तू ही ईश्वरता करण सुराज।
जिनो ईश्वरता धरण जु तू जु। अनीश्वर ईश्वर तू जगपूज।।32।।
तू ही ईश्वर कारक जगतात। तू ही सु जिनिंदा जगपति पात।
तु ही ईश्वरता उदधि जु देव। सही ईश्वरता अयन अभेव।।33।।
तु ही शिव आगर जागर ईश। तु ही जु निरीश्वर मूल अधीस।
तु ही ईश्वरता थल जु प्रसंत। अनादि जु आदि जु एक अनंत।।34।।
तु ही जलता हर जाड़ि वितीत। जलंजित देवो जलज विजीत।
न तो बिनु ई अक्षर कहु होय। जु ई अर्थ जु इह दौलति जोय।।35।।

इति श्री ईकाराक्षर सम्पूर्ण।

उ

आगै उकार अक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो पंचम सुर पंचमी मात्रा छै। सर्व ककारादि अक्षरा कै ल्हौडै दीजे तब यो स्वर प्रगट बोलै। कु असौ उच्चार कीयो, तब कु विषै उ असौ उच्चर्‌यो ईही भांति सारा अक्षरां मै गर्भित छै। सो सुखकारी नै शंकर कहजे सो सुखकारी भगवान ही छै।

(श्लोक)

उकाराक्षं महादेवं, शंकरं भुवनत्रये।
वंदे सदा शिवाधीशं, नित्यमानंदमंदिरम्।।1।

(दोहा)

देव उकार जु शंकरो, शिव शंकर जसु नाम।
जीव दया पालक जिनो, सुखदायक सुखधाम।।2।।
दोष उछिन्न उदारधी, तू रागादि उछिन्न।
तू जु उपद्रव भिन्न है, है उद्‌भवतैं भिन्न।।3।।

उद्भव कहिये उपजिबो, तेरौ है जग मैं न।
तेरी उद्भव बोध मैं, उन्मूलित सब मैं न।।4।।
अद्भट उद्भव तू सही, भवसागर तैं दूर।
मोहू पार उतारि प्रभु, मेरौ दुख हरि शूर।।5।।
उर्वी नांम जु भूमि कौ, उर्वीधर भूपा जु।
उर्वीपति एको तु ही, जिनपति शिवरूपा जु।।6।।
उर्वीधर वंदहि चरण, तू अष्टम धर धाय।
उर्वीजित जित अखिलपति, उर्दी तजक सु राय।।7।।
उदंयकर प्रभु उर प्रबल, उदयंकर नहि और।
तेरौ उदय जु अस्त बिनु, उदय धाम अति दौर।।8।।
उदयंकर जे सूर ससि, तिनकौ उदय जु अस्त।
एक अस्त बिनु तू सही, जिनवर है जु प्रशस्त।।9।।
उपलपवाधातम देव तू, उदयंकर जित तेज।
है उपलब्धि स्वरूप तू, चढ़ै जगत की भेज।।10।।
उपलब्धी निजतत्व की, करि मेरै जु अजेज।
जगदीश्वर जग जाल लैं, काढि जु न करहु जेज।।11।।
तू उपलब्धी मयोाहरी, केवल हंस अनूप।
उदित उदार उधार उप, उद्यत उद्यमरूप।।112।।
उद्धत बोध प्रचंड तू, उपवासी उपशांत।
उप कहिए जु समीप है, तू जिनपरम प्रशांत।।13।।
उपयोगी उपयेाग धर, केवल दरशन ज्ञान।
बरह मै दोय जु तुही, शुद्धुपयोग प्रधान।।14।।
ज्ञान अष्ट चदु दरस हे, ए सब बारह भेद।
तिन मैं दोय जु तू धरै, और न राखै भेद।।15।।
उपधि नाम परिग्रह सही, उपधिविवर्जित तू जु।
उतपथ मारग रोध है, उद्धरणे जगपूज।।16।।
नाम उपेंद्र जु विष्णु कौ, व्यापक विष्णु जू कोय।
विष्णु मुरारि हू कहै, सो तो मय हरि होय।।17।।

तू उपेंद्र जु इंद्र तुही, उदयनाथ उद्दात।
उपयोगातम उच्च तू, उच्चादुच्च उदात।।18।।
उचित सु उज्जल उदक सम, उचितोचित उपकार।
उपकारी उपकारमय, उदभट उपमा सार।।19।।
नाम उपायन भेट कौ, तोकौ भेंट जु चित्त।
कर ही मुनि जन नागरा, तू जिन सबकौ मित्त।।20।।
नाम उपाय इलाज कौ, नाम अपाय जु नाश।
तू अपाय तै रहित है, अनुपाये सुख रास।।21।।
एक उपाय मुनीनि कै, तेरे पावे कौ जु।
और उपाय न दूसरौ, वनके नहि तौ सौ जु।।22।।
उपदिष्टा उपदेश तू, उपदिश्यो इक तू जु।
उपमा सिंधु उदंक तू, उपमा धर जग पूज।।23।।
उपमाता उपमेय तू, उपमा रूप जु देव।
तेरी उपमा तो विषै, करिहौ तेरी सेव।।24।।
उपरम त्याग विराग कौ, नाम जु श्रुति मैं होय।
उपरम मूल अवंक तू, देख्यो जिनवर जोय।।25।।
उज्जल तैं उज्जल अतुल, उपरम रूप अपंक।
शम दम मय क्षम नियम को, नाथ जु एक निशंक।।26।।
उपशम पारग उपरमी, उपरम धार अनंत।
उनमारग टारक शमी, उपधि विडारक संत।।27।।
उपमा लायक उर वसक, उत्तम उतकट भाव।
नाम उर्वरा भूमि कौ, ताके तुम जिनराव।।28।।
अखिल उर्वरा त्यागि तुम, रहौ उर्वरा सीस।
तुम जु उर्वरा धरण हौ, परमेश्वर जगदीस।।29।।
उपगूहन अवगुन ढपन, पर के इह गुण शिष्ट।
उपगूहन गुनधार तू, किये दोष सब क्षिष्ट।।30।।
उपगूहन गुन जिनि धर्यौ, तिनि पायो तुव वास।
उपगूहन गुन दाय तू, आनंदी जु उदास।।31।।

नाम जिनेंद्र जु भक्त जो, उपगूहन गुन पाल।
सो तुम परमारथ मई, कीयो नाथ निहाल।।32।।
उद्दायन नृप ख्यात जो, निरविकित्स प्रपाल।
सो तुम केवल रूपकरि, शिव कीयो जु कृपाल।।33।।
नाम उर्विला जो महा, राणी भक्ति निधान।
ताकी परतज्ञा प्रभू, राखी राखि विधान।।34।।
उर तेजस तुम उरि बसौ, उर कौ भरम मिटाय।
उभय नाम है दोय कौ, दुविधा दूरि बहाय।।35।।
उर परबल कौ नाम है, उर हिरदै कौ नाम।
प्रबल रूप तू बिन प्रभू, बसि हृदय मैं राम।।36।।
उभयातम तुम एक हौ, नांहि जु दोय सुरूप।
नय उभयातम रावरौ, जिन उपदेश अनूप।।37।।
उभय रूप उपयोग है तुम उपयोग निधान।
उभय प्रकार जु धर्म है, ताके दर्शिक जान।।38।।
मुनिधर्मो गृहि धर्म जो, ए जु धर्म के भेद।
उभय रूप भाषै तु ही, तू जु पाप मल छेद।।39।।
उभय पंथ है ग्रन्थ मैं, सग्रन्थो निरग्रन्थ।
गृहि पपीलिका पंथ मैं, मुनि जु विहंगम पंथ।।40।।
उभय श्रेणी जे तुम कही, उपशम क्षपक जु नाथ।
सप्तम गुणथानक परैं, अष्टम तिनकौ साथ।।41।।
उपशम वारे अष्ट सौं, एकादशलौं जांहि।
फरसि जु ग्यारम गुणधरा, षिसैं ठीक सक नांहि।।42।।
पाँवै कछुयक अंतिरै, तोकौं वै जोगीस।
क्षपक न ग्यारम फरसही, द्वादसमौं लहि ईश।।43।।
तेरम गुण केवल दसा, पाय सु मुक्त जु हौंहि।
सूधे आवैं तो विषैं, भव भरमी नहि हौंहि।।44।।
उभय श्रेणि धर जे मुनी, तिनकौ तू प्रभू भूप।
तारै दुहुकौं तू सही, देय जु क्षपक निकूप।।45।।

उभयलोक सुधरै प्रभू, इह भव परभव नाथ।
जब तू आवै घट विषै, उभयातम अर नाथ।।46।।
उभै लोक उपकार कर, उभय समय परकास।
स्वसमय परसमया जिके, तू जु प्रकासक भास।।47।।
स्वसमय जिन मारग जिको, परसमया परपंच।
स्वसमय शुद्ध स्वरूप जो, परसमया जगवंच।।48।।
स्वपर द्रव्य के भेद सब, तू ही भाषै देव।
शुद्धाशुद्ध स्वरूप सब, तू जु प्रकास अछेव।।49।।
स्वसमय रूप जु तू प्रभु, परसमया तोमैं न।
उभय समय कौ नाथ तू, ज्ञायक जितमद मैंन।।50।।
निश्चय अर व्यवहार नय, उन बिनु तत्त्व न ज्ञांन
अमित नयातम भेद तू, सप्त भंग परवान।।51।।
तू जु त्रिभंगी सार है, सप्त त्रिभंगी भास।
पूजि त्रिभंगी राय है, उभयातम परकास।।52।।
साकारो नाकार तू, नाकारो साकार।
दोय रूप राजै प्रभू, एक रूप अविकार।।53।।
उत्सेध जु उत्तंगता, तू उतंग अत्यंत।
उज्झित कबहू तू नहीं, सदा अनुज्झित क्रंत।।54।।
सिद्धन कौ उत्सेध तू, या विधि भाषै देव।
चरम देह तैं न्यून कछु, रूप रहित निज बेव।।55।।
जघनि जु उत्सेध जु प्रभू, सात हाथ किंचून।
अधिक जु उत्सेध सु विभू, त्रेपन दह पच नून।।56।।

अर्थ—त्रेपन ने दस गुणां कीजें तीमैं पंच नून, भावार्थ पाँच सै तीस मैं पाँच घाटि, पाँच सै पचीस हूवा।

(दोहा)

यामैं बीचि सु मध्य है, त्रिविधातम सब सिद्ध।
द्विविधा त्रिविधा नांहि को, एक रूप अविरुद्ध।।57।।

सिद्ध भक्ति मोकौं प्रभू, देहो सिद्ध अनूप।
सिद्धनि कौं मेरी नती, द्रव्य भाव स्वरूप।।58।।
उज्झित जग तू ही सही, उज्झित उज्झित भाव।।
नोज्झित आतमभाव तू, है जु अनुज्झित भाव।।59।।
उज्झित रागादिक सवै, उज्झित भव जल वास।
उज्झित मिथ्यातम सकल, शुद्ध रूप परकास।।60।।
उज्झित जग मोहू करो, उज्झित मोह अपार।
उज्झित तैं उज्झित करी, लेहु आपुनैं लार।।61।।
उत्कंठा मेरी हरौ, उत्कंठिक मति दूर।
उत्कंठा इंक देहु इहु, तुम्हरी भक्ति प्रपूर।।62।।
उत्छेदक जग फंद के, मेरे काटउ फंद।
उत्पथ मारग तैं प्रभू, राखि लैहु निरदुंद।।63।।
उन्मादादिक भाव जो, अर उदमाद अपार।
सो तुमकौं फरसैं नहीं, तू निज ज्ञान प्रसार।।64।।
उन्मदादिक भाव तैं, मोकौं रहित करेहु।
उणमणि मुद्रा मोहि दै, निजदासनि मैं लेहु।।65।।
उनमान जु तेरौ नहीं, मानोन्मान कछू न।
लोक प्रमाणे तू प्रभू, पुरषाकार अन्यून।।66।।
उनमतता तेरै नहीं, तू अति संयम रूप।
छकि जु रह्यो निज भाव में, तू उनमत्त अरूप।।67।।
उनमतता सब त्यागि कैं, रहै सदा उनमत्त।
सदा दिगंवर रूप तू, नांहि कभी जु प्रमत्त।।68।।
उन्मान जु तेरौ नहीं, मैं निज बुधि उनमान।
गुन जु रावरौ गायहौं, क्षमिज्यो श्री भगवान।।69।।
उल्लालातम इह जगत, तातैं पार करेहु।
उल्लालातम देव तू, निज दासनि मैं लेहु।।70।।
मेटि उपाधि जु सर्व तू, मेरी दीनदयाल।
उल्लालातम नाथ जी, हरहु जु कूड़ कु साल।।71।।

इहु उल्लेख प्रमाण कछु, जिनवाणी अनुसार।
दास रावरौ जस करै, तू जु सुनैं निरधार।।72।।

(पद्धड़ी)

सब तैं उतसेध तु उच्च तू जु। तेरे उपरिम नहि ओर दूज।।
उत्पाद विनाश ध्रुवत्व तीन। जड़ चेतन सकल जु इनहि लीन।।73।।
त्रिगुणातम तत्त्व प्रकाश एक। तू त्रिविध विकार जु रहित नेक।।
द्रव्यायर्थिक नय वस्तु नित्य। पर्यायार्थिक करि सब अनित्य।।74।।
तू नित्यानित्य स्वरूप भास। है नित्य रूप प्रभु चिदविलास।।
सहितो उमया जो ईश देव। पतिपतनी धारहि तोर सेव।।75।।
तु उमावर कौ है नाथ नाथ। सु उमापति पावै तोर साथ।।
सीता समनाथ उमा जु होय। पारवती जाकौं कहहि लोय।।76।।
तुब दास अपार जु जगत देव। तू उपरम राय अकाय लेव।।
तू उद्धव उतकिष्टो धवो जु। धव कहिये स्वामी माधवो जु।।77।।
तेरै को उद्धवहोय नाथ। तू सबकौ उद्धव लंब हाथ।।
तू उद्धव और निरुद्धवो जु। तू भोगी जोगी साधवो जु।।78।।
तू छिन्न जु दोष उछिन्न राग। तू मोह उछिन्न जु अति विराग।।
मोहू करि देव उछिन्न कर्म। तब जानूं जिनवर परम मर्म।।79।।
उपयोग मूल उपयोग सार। उपयोग रूप उपयोग धार।।
उपयोगो लक्षण जासु नित्य। उपसर्ग दूरि प्रभु है जु सत्य।।80।।
उपसर्गो जाकै नांहि होय। उपद्रव उपसर्ग तु एक कोय।।
उपसर्गो त्यागो सर्व कौ जु। धारण वाकौ वह आप सौजु।।81।।
उत्सर्गातम उपशंति कार। उतपात हरण उपसर्ग टार।।
उपसर्ग विदार उपास्यरूप। उपवास रूप अति उदय भूप।।82।।
उपशांति मूल उत्सर्ग पार। उपवास मूल उपवास कार।।
उपयोग राय उपयोग दाय। उपयोग सार उपयोग काय।।83।।
उल्कापातादिक अशुभ सूच। ए होवैं नहिं जहैं मूलि रंच।।
तेरे दासा निवसै जु यत्र। तहँ मंगल होवैं अति पवित्र।।84।।

तो सौं उजरजु नहि नाथ कोय। तू घट घट ज्ञायक एक होय।।
तो सौं न उजागर लोक मांहि। तोमैं जु उपाधि सु मूल नांहि।।85।।
उदितोदित तात उपाधि चूर। उन्मूलित भर्मा दोष दूर।।
उन्मूलित कर्मा धर्म धीर। उपशमता सागर जगतवीर।।86।।
नय उभय प्रजागर बोध वांन। तो सौ नहि कोय जु उदयवान।।
उदईको उपशम क्षयुपशांत। ए भाव न तीनौं तू जु दांत।।87।।
तू क्षायक पार जु णांम रूप। है भाव जु धारी परम भूप।।
भव्याभव्यत्व न पारणांम। तू शुद्धत्वादि अनंत धाम।।88।।
उपशांत वेद उपदेश सार। उत्तम पद दायक लोकतार।।
उत्तम मुनि नायक उच्च देस। उत्तम सुख भायक उत्तमेश।।89।
तू उच्च संग संगी अनंत। तेरै संग न नहि एक हुंत।।
मुनि उपाध्याय तोकौ भजंत। तू अध्यापक भगवंत संत।।90।
तू उपधि विनाश उपाधि भंग। हे उतकिष्टादुतकिष्ट संग।।
तू परम उपासन सार देव। तेरी जु उपासन करहि देव।।91।।
तू उपाध्याय कारी जिनिंद। तू परम उल्हास जु कार चंद।।
तेरै न उपासन कोय कीज। सब करहि उपासन रावरी ज।।92।।
स्वपरोपासन तू भाषको जु। उपहास न तेरी करय को जु।।
तेरे जु उपासक लहहिं सिद्धि। उन्मूलित मोहा हौंहि ऋद्धि।।93।।
जो हैं जु उपासक ध्ययन अंग। सत्तम तैं भाष्ये देव तुंग।।
तामैं गृह आश्रम रीति सर्व। तू द्वादशांग भाषी अगर्व।।94।।

(मोतीदाम)

न तो बिनु और उपासिन कोय। तू ही जु उपासन जोगि जु होय।
सदो उर अंतर तू जु दयाल। उपासक चाल निरूप कृपाल।।95।।
तू ही उपसर्ग हरोहर देव। सही जु उधारक एक अछेव।।
सदा जु उद्योत सु मांन जिनिंद। तू ही उद्वेग वितीत मुनिंद।।96।।
तु ही जु उतारक कारक ज्ञान। सु मोहि उधारि हु देव अमांन।।
तु ही उपभोग जु भोग अतीत। सदा जु सभोगी नाथ अजीत।।97।।

नहीं उतशृंखल भाव जु लेस। सदा उतशृंखल तू जु अलेस।।
नहीं उतकंठ जु तेरे हि कोय। उलंघ जु उभया श्रेणी जु होय।।98।।
नहीं उपरोध जु तेरहिं नाथ। उपद्रव फेटक तू जु अनाथ।।
नहीं जु उपाश्रय आश्रय कोय। सही जु निराश्रय तू इक होय।।99।।
जु तेरि हि उपमा तोहि फबंत। सबै जु उपद्रव कर ही अंत।।
तु ही उतसाह सुरूप अनूप। सदा उतसाह जु कारण भूप।।100।।
महा उग्रोग्र जु एक तू ही जु। सुपूज हि उग्र तपा जु सही जु।।
प्रभु जु उतमता सायर तू जु। महा जु उतमता आगर पूज।।101।।
तू ही उपरिमता सीस कृपान। सही उपरमता धीस दयाल।।
सदा उपकार धुरंधुर तू जु। सदोदित उत्पल लोचन पूज।।102।।
महोदित उत्पल अंहि जु लाल। तु ही जित उत्पल हू रसाल।।
तू ही कमलानन चंद्र मुखो जु। न तो सम और न कोइ सुखो जु।।103।।
तु ही उपकार स्वरूप जु नाथ। तू ही उपचारण धीश सनाथ।।
तु ही उपकार तणौं प्रभु एक। करै उपकार निरंतर नेक।।104।।
तु ही उपमा वर उपमा जीत। महा जु विथारो एक अतीत।।
तु ही जु महोत्तम क्षांति सुधार। तु ही दशलक्षण लक्षित सार।।105।।
कहैं उपलो सु पषांण जु नाम। सु धातु पषांण मई शिव धाम।।
करैं प्रतिमा तुव जे भवि जीव। सु पूजिर प्रतिमा पाँवहि पीव।।106।।
न तेरिहि प्रतिमा जे जु नमंत। न तोहि जु पाँवहि मूढ़ भ्रमंत।।
तू ही जु विराजि रह्यो सबमांहि। तू ही प्रतिमा महि है सक नांहि।।107।।

(चौपई)

उपल समान जु ह्वै कूटस्थ। तोहि जु ध्यावैं मुनिवर स्वस्थ।।
उपल समान जु जे जड़ भाव। तिन कौं त्यागि रजो जति राव।।108।।
तोहि भजई सो पावइ तोहि। साधुनि देख्यो तू इक टोहि।।
तेरौ उपश्रित जो नर होय। तोहि जु पावै सब मैं जोय।।109।।
तू उपश्रित तारक जिन पास। पासि हरण तू करण विलास।।
तू उपचार विवर्णित देव। उपचारी तो सौं न अछेव।।110

तू जु उपायक है शिव कौ जु। तू उपचारी है तो सौ जु।।
सदा उदासो आनंद रूप। उपकरणा दिन एक निरूप।।111।।
तेरैं उपकरणा किस कांम। तू उपकरणों एक जु राम।।
तु जु बसै हर देही मांहि। तू देही नहि देह जु नांहि।।112।।
तेरै देह न तू जु विदेह। उपकरणिनि तैं नांहि जु नेह।।
तू उत्तम पद भासक नाथ। तू उत्सर्ग स्वरूप अनाथ।।115
तू उर उद्योतक उरहार। तू उपसर्ग निमूल जु कार।।
जे उपद्रित उतकंठित जीव। तिनकौ शरण जु तू इक पीव।।114।।
उपशम रस हमकौ दै नाथ। दै उतसर्ग जु निज कौ साथ।।
तू उपदेसी ज्ञान जु कंद। है उपलभ्य स्वरूप अनंद।।115।।
तू परमोपासन तंत्रेश। तोहि उपासहि सुर नर सेस।।
उत्तम क्षमा आदि जे धर्म। तिनकौ दायक तू निज मर्म।।116।।
उन्मीलित रतनत्रय तू जु। उन्मीलित शल्यत्रय दूज।।
उन्मीलित कौ अर्थ विकास। उन्मीलित कौ अर्थ विकास।।117।।
तू उन्मीलित परम प्रमोद। तू उन्मूलित है जु अमोद।।
तू उन्मीलित सहज स्वभाव। तू उन्मीलित परम प्रभाव।।118।।
तू उद्भटता पुंज अनंत। तू जु उदासी आनन्दकंत।।
तू उन्मूलित सर्व अबोध। तू उन्मीलित परम प्रबोध।।119।।
जेहि उद्यान बसैया साध। तोहि जु ध्यावैं करि आराध।।
तेरै काजि तजैं घरबार। उदबस बसती करहि विहार।।120।।
बंधूदंत अति कपट करेह। भवसदंत छांड्यो बिनु नेह।।
भवसदंत सब दुख जु विदारि। पायो तो तैं सुख जस भारि।।121।।
उद्यानो गृह तोतैं होय। भवसदंत आयो घरि जोय।।
उपवन वन सरिता सर ग्राम। गिर पुर विषये इक तू राम।।122।।
सकल सु व्यापक सकल विभास। उदवस वसती करण अनाश।।
उल्कापातादिक उतपात। तू सब टारक त्रिभुवन तात।।123।।
तेरै उदरि जु लोक वसंत। लोकालोक विभास अनंत।।
जे उदमाद तजैं बड़ साधु। तोहि जु ध्याय हौंहि बिनु बाध।।124।।

उर तेरौ उदधी जु समान। परम अथाह रतन विसरांम।।
तातैं उपजी जो जिनवांनि। सोई अमृत अमृत दांनि।।125।।
ताकौं पीय बहुत जन छके। अजर होय निज रस मैं थके।।
अमृत सोई अमृत करै। और न अमृत गुर उच्चरै।।126।।
नांव जु अमृत कहिये नाथ। जाकौं पान करहिं सुर साथ।।
सो अमृत काहै को देव। मरण हरण नहिं जाकी टेव।।127
तेरी वांनी अमृत ठीक। और जु अमृत होय अलीक।।
अमरा मरण करहि जनमैं जु। काहै के अमरा सुर मैं जु।।128।।
जैसे कहिवे के अमरा जु। तेसौ वनकौं पान सुधा जु।।
चलती कौ गाड़ी जिन कहैं। मरतौं कौं अमरा तिम कहैं।।129।।
कहवति के अमरा सब मरा। कहवति कौ पीयूष जु दुरा।।
सुरापान वह अमृत नांहि। भरमावै जु चहुं गति मांहि।।130।।
सुरा पान सम वह पीयूष। भोग लुब्ध अति करहि सदूष।।
ज्ञानी वाहि न अमृत कहैं। तेरी वांनि सुधारस गहैं।।131।।
जिनवांनी बिनु तू जु अलभ्य। तत्त्व सार तू ज्ञान सुलभ्य।।
उर बसि हमरै तू हरि देव। करहु उरबसी तेरी सेव।।132।।
चटक न मटक न तोतैं चहूं। तेरौ होय र तोमैं रहूं।।
उरवसि और तिलोजुतमा जु। रंभा आदि न चाहूं साज।।33।।
मोहि न चहिये जू उरवसी। हार न कटक न कुंडल लसी।।
तुव आज्ञा मम उर वसि होऊ। मेटूं क्रोध लोभ छल मोह।।134।।
तू उदवासक इन्द्रिंय ग्राम। बासक ज्ञानादिक सुखधाम।।
मे उपहास करहि बुध लोक। मोसौ सठ मति और न लोक।।135।।
उपरम सौ नहिं धर्म जु कोई। उपरम उपरिम तू इक सोइ।।
उपवासो अनशन तप सार। द्वादस तप की आदि विचार।।136।।
पर्वोपास करहि जे जीव। पोसह युगत धरैं उर पीव।।
ऐसे उपवासी उपवास। पावहिं तेरौ परम प्रकास।।137।।

(गीता)

उपदेश नागर अति उजागर, उपशमातम देव त्वं।
उपदेश आगर अति उजागर, उपरमातम भेव त्वं।।138।।
उपवास भासक है उपास्यो, मंत्र सार उपासनं।
उदक पारी, उदधि भारी, तू उपासक शासनं।।139।।
उद्धरोद्धर उत्तरोत्तर, उद्धतोद्धत शुद्ध त्वं।
उज्ज्वलोउज्ज्वल उत्कोत्कट, उत्तमोत्तम बुद्ध त्वं।।140।।
उद्यमी मुनि त्यागि औरै, तोहि धारै तार त्वं।
उत्तरोपर पूरवाशा, दक्षणेशो सारत्वं।।141।।
तू अपूरव पूरवो है, दिसि विदिसि मैं एक त्वं।
ऊरधाधो एक तू ही, ज्ञान मूल विवेक त्वं।।142।।
धर्मचक्री चक्रि नाथो वज्रिनाथो नाथ त्वं।
उपदेश दाता जगत त्राता, उत्साही शिवसाथ त्वं।।143।।
तू उपादेयो जिनिन्दा, अवर हेया सर्व जी।
आदेयो जु पुनीत स्वामी, अकर अकारन गर्व जी।।144।।
उपादान अर निमत कारण, तू वखांनै नाथ जी।
तू न उत्कीर्णो कदापी, कूटस्थो जगनाथ जी।।145।।
टंकोत्कीरण ज्ञायकैको, तू उकीर्यो नांहि जी।
तोमैं सर्व उकांरि राखे, तू सकल कै मांहि जी।।146।।
उग्रसेनि औ उग्रवंसा तू जु तारैं देव जी।
उग्रसेनि की धी उधारी, मोहि देहु स्वसेव जी।।147।।
प्रश्न उत्तर तू जु कर्त्ता, उत्तरायन वीर जी।
तोसौं को नहि उत्तरेइ, तू उत्तर जगवीर जी।।148।।

(दोहा)

तू उदभासक तत्त्व को, उद्दामी उदघाट।
सीत न उष्ण न तो विषै, एक नाथ शिव बाट।।149।।

उष्ण गुणौ अगनी विषै, सहभावी जिम होय।
तिम सहभावी तो विषैं, रतनत्रय प्रभु जोय।।150।।
उच्छिटा विषया जिके, भुगति भुगति तजि दीन।
औंठि झौंठ सब जगत की, दासनि कैं नहि लीन।।151।।
देहु अपूरव वस्तु जो, भुक्ति मुक्ति की मात।
तेरी भक्ति दयाल जी, और न चाहैं तात।।152।।
स्वासो स्वासा जे रटै, सोहें हंसा मंत्र।
ते तौमैं थिति पावहीं, तो सौ तू इक तंत्र।।153।।
उज्जयनी जैनीपुरी, ताके उत्तम लोक।
सुकुमारादिक तारिया, तू तारक इक थोक।।154।।
उत्तिष्टो भव जीव तू, ऐसे वैंन जु मोहि।
कहै जिनिंद कृपाल जी, उठि करि ध्याऊं तोहि।।155।।
उठिवे की आसंगना, अैसो मोहि जु मोह।
मार्यो दीनदयाल जी, मिले क्रोध छल लोह।।156।।
उठिहौ तेरी मदतितैं, लरिहौं करमनि सौं जी।
भिरिहौं नंत विभाव तैं, मिलिहौं हरि तोसौं जु।।157।।
उगिलि नांषिहौं जड़ सबै, उलटि पलांणौं नाथ।
अब तक उलटी विधि भई, हौं वांध्यौ जड़ साथ।।158।।
उदितो उदयाचल हरी, जिन दिनकर जिनकै जु।
तिनकै तिमिर कहां रहै, प्रगटै ज्योति वहै जु।।159।।
जिन दिनकर की किरण जो, सोई पद्मा जानि।
दौलति भाषा मैं कहैं, और न दौलति मांनि।।160।।

इति उकार संपूर्ण।



आगैं ऊकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै, यो छठी मात्रा छठौ स्वर है। सारा ककारादिका कैं बड़ै दीजै तैंठे यो स्वर प्रगट बोलै, कू असौ उच्चार कीयो तब कू विषै ऊ कौ उच्चार आयौ। ईही भांति सारा अक्षरां मैं गर्भित छै। सो प्रथम ही ऊ असौ विश्नु कौं नाम एकाक्षरी नाममाला मैं कह्यौ, सो विश्नु व्यापक ब्रह्म नैं कहजे। सो भगवान सारै लोक मैं व्यापि रह्या छै, महाविश्नु है, महालक्ष्मी का पुंज छै।

(श्लोक)

ऊकारं च महाविष्णुं, परात्परपरं शिवं।
ब्रह्मानंदस्वरूपं यज्जिनं जैनागमाधिपम्।।1।।
वंदेहं मनसा वाचा, कर्मणा सिद्धिलब्धये।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धि या, नान्या सिद्धिः कदाचन।।2।।

(दोहा)

ऊ कहिये ग्रन्थनि विषै, नांव विश्नु कौ होय।
तू ही जिन विश्नु च शिवो, और न दूजौ कोय।।3।।
ऊषा मांहि जु ऊठिकैं, तेरौ नांव जपै जु।
अहनिसि तोकौं ध्यावहीं, सो जगसीस तपै जु।।4।।
ऊंघ नींद सब खोय कैं, दै विषयनि कौं पूठि।
तोहि जपी जीतैं जनम, त्यागहि सकल अहूठि।।5।।
तेई धन्य जु जगत मैं, जे तौसौं जु रचंत।
आतम ज्ञानाग्नि करी, कर्मारण्य दहंत।।6।।
तेरै नांहि जु ऊनता, नांहि न्यूनता कोय।
तू पूरण परमातमा, देख्यो मुनिनि जु कोय।।7।।
ऊग्यो जिनकै घरि प्रभू, तू हरि दीन दयाल।
माया मिथ्यातम गयो, तिनकौ अति जु विशाल।।8।।

ऊठ्यो जब तू गाजिकैं, मोह गयो तब भाजि।
ऊर्जित तोसो को नहीं, तू जु रह्यो इक साजि।।9।।
ऊपरि नीचै दिसि विदिसि, व्यापि रह्यो तू एक।
ऐसी ऊठि न मोह मैं, तोसौं पकडै टेक।।10।।
ऊपरि जग कै तू रहै, सबसौं ऊंचौ ईश।
लोक शिखरि तेरौ पुरा, ऊपरि बेठौ धीश।।11।।
ऊपर साधुनि कौ तुही, करै जु दीनानाथ।
तेरी ऊकससौं लरैं, मोह थकी मुनि साथ।।12।।
ऊर्णा ऊन जु वस्त्र जे, जिनवांनी नहि लेय।
त्रसकाया तैं ऊपजी, वस्तु अलीन कहेय।।13।।
थावर काया तैं जिकैं, उपजी वस्तु सुलीन।
रोम अस्थि पल चर्म मल, मद मधु वर्जित कीन।।14।।
ऊहापोह वितीत तू, ऊही तर्क जु होय।
फुनि जु अपोह सु उत्तरा, तू अवितर्क जु कोय।।15।।
ऊहापोह प्रपूर तू, ऊहापोह जु कार।
ऊर्मीधर जीतक सुथिर, ऊर्मी रहित अपार।।16।।
ऊर्मी नांव तरंग कौ, ऊर्मीधर उदधी जु।
ऊर्मी सम निज शक्ति जे, तिनकौ सिंधु तू ही जु।।17।।
नाम ऊर्मिला नदिन कौ, तटिनिनि कौ पति सिंधु।
सो कबहूं तुम सम नहीं, तुम उत्तम गुण सिंधु।।18।।
ऊधिम तेरै कछु नहीं, तू ऊधिम तैं दूरि।
मैं पापी अति ऊधमी, विनऊं आप हजूरि।।19।।
ऊधिम मेरौ सब हरौ, करौ जिनेश्वर दास।
ऊधिम तै न्यारौ करी, राखि आपुनैं पास।।20।।
ऊधिम रूप जु ए अव्रत, इनतैं रहित करेहु।
व्रतमूरति करि दास कौं, धरि आपुन मैं लेहु।।21।।
ऊभौ द्वारै रावरै, अरज गुदारौ देव।
मोह लूटि मम धन हर्यो, सो द्यावो जु अछेव।।22।।

ऊर्जित नाथ अनंत तू, ऊर्जित देव दयाल।
ऊर्जित भाव स्वभाव तू, ऊर्जित लोक विशाल।।23।।
उद्यापन कौ नाम है, ऊंजौनौं जग मांहि।
व्रत उद्यापन रीति सहु, तू भाषै सक नांहि।।24।।
ज्ञानांकुर ऊग्यो जबै, तब जान्यौं जिन तू जु।
ऋषिगण नैं जांनि र गृह्यो, त्याग्यौ सकल जु दूज।।25।।
तोसौं ऊलर जे रहैं, रहैं न मूढ़ा लागि।
ते जग मैं रुलते फिरैं, जरैं मोह की आगि।।26।।
ऊमरादि जे निंद्य फल, इनहि षाय जो कोय।
मरि मरि दुरगति संचरे, तोहि न पावै सोय।।27।।
मेरे गुन वन मैं प्रभु, ऊ कौ लांवै मोह।
मोह आत जु ताय है, जाकै रंच न मोह।।28।।
ऊक चूक करि मोह कौ, मारूं जा विधि नाथ।
सो मोकौं जतन जु कहै, तजौं न कबहू साथ।।29।।
ऊपर मेरौ हरि करौं, तब मैं मारूं मोह।
तेरो ऊपर लेय कैं, राखूं काम न कोह।।30।।
ऊकसि लरिबे सक नहीं, तुझ दासनि सौं मोह।
तू जु ऊघडो राजई, जाकै राग न द्रोह।।31।।
ऊर्जयंत गिरनारि कौ, नाम जु प्रगट सु होय।
तू गिरनारि पती प्रभु, ब्रह्मचर्य धर कोय।।32।।

(गीता)

ऊर्द्धगामी ऊर्द्धनामी, उर्द्धधामी देव त्वं।
ऊर्द्धलोकी नंत थोकां, देहु देहु जु सेव त्वं।।33।।
ऊर्द्धदाता ऊर्द्धपाता, उर्द्धताता धीश त्वं।
ऊर्द्ध भावी उर्द्धकामी, उर्द्धलोकाऽधीश त्वं।।34।।
ऊर्द्धलोकेश्वर जु देवा, उर्द्ध लोक सु सीस त्वं।
ऊर्द्ध लोक प्रदाय स्वामी, उर्द्धभागी गीश त्वं।।35 ।।

तु जु उर्द्धादूर्द्ध नाथा, उर्द्धलोक सिरस्थ त्वं।
ऊर्द्धलोक नियंत यंत्री, ऊर्द्धपारी स्वस्थ त्वं।।36।।
ऊर्द्धलोक सु त्रात तातां ऊर्द्ध लोक सु मूल त्वं।
ऊर्द्धलोक सु दर्शिको तू, उर्द्धलोक सु चूल त्वं।।37।।
ऊर्द्धभाव स्वभाव पूरा, उर्द्ध लोक प्रकार त्वं।
ऊर्द्ध शक्ति अखिल पाला, ऊर्द्धलोक प्रचार त्वं।।38।।
ऊर्द्धलोक सु दात दाता, ऊर्द्ध लोके पात त्वं।
पातका नहिं एक कोई, है जगत कौ छात त्वं।।39।।
उर्द्धलोक सुलभ्य कर्त्ता, उर्द्धभर्त्ता धीर त्वं।
ऊर्द्ध नेता उर्द्धचेता, उर्द्धलेता वीरत्वं।।40।।
ऊर्द्ध लोक सुधात धाता, ऊनता नहि लेश त्वं।
ऊर्द्धचारी उर्द्धतारी, देव देव जिनेशत्वं।।41।।
ऊर्द्धलोक सुवितरणेशा, उर्द्धलोक अधार त्वं।
लोकालोक विलोक स्वामी, एक एव अधार त्वं।।42।।

(दोहा)

उर्जित की जो ऊंचता, सो श्री संपति ऋद्धि।
रामा पद्मा लछि जो, रमा जु कमला सिद्धि।।43।।
आनंदोद्भव भूति जो, परम विभूति प्रवांन।
सोई दौलति जानिये, और न लक्ष्मी मांन।।44।।

इति श्री ऊकाराक्षर षष्ठ स्वर संपूर्ण।



आगैं ऋ काराक्षर को व्याख्यांन करैं छै। यो सप्तम स्वर छै। 'कृष्ण'—असौ शब्द बोल्यो तैंठै ककार कै पगि यो स्वर लाग्यो। दृष्टि, दृग—असो शब्द बोल्यो तैंठैं दकार कै पगि लाग्यो। हृत, हृदी—असौ शब्द बोल्यौ तैंठै हकार

कै पगि लागै। इही भांति सारा अक्षरां मैं गर्भित छै। सो प्रथम ही ऋ कार— असौ एकाक्षरी नाममाला मैं देवमाता कौ नांव कह्यो, सो देव तो औपपादिक जन्म छैं, गर्भज नहीं, अयोनि संभव, सो वांकै तो माता-पिता नहीं अर भगवंत देव सारां का माता-पिता त्याकै माता-पिता नहीं। देवमाता कुण नैं कहजे सोई कहै छै।

(श्लोक)

ऋकारो देवमाता स्यात्, हरेर्माता पिता न हि।
तद्विभूतिर्जगन्माता, चान्माभूतिस्तु भूति वा।।1।।
देवाश्चतुर्विधा सर्वे, गर्भजा न जिनागमे।
शज्या माता भवेत्तेषां, नान्या माता दिवौकसाम्।।2।।

(दोहा)

वर्ण ऋ कारो सूत्र मैं, कहिये देवतमात।
निर्जर देवो तू प्रभू, तेरे मात न तात।।3।।
तू नहिं उपज्यौ है कभी, नाव स्वयंभू आप।
अभू स्वभू भू है सही, विभू प्रभू परताप।।4।।
देव चतुर्विधि कहन के, तिन हू कै नहिं मात।
उपपादक शिज्या विषै, तिनको जनम विख्यात।।5।।
देवनि कै धातु जु नहीं, मल मूत्रादि न कोय।
रेत रक्त बिनु ऊपजैं, औपादिक सुर होय।।6।।
गर्भज तिर नर जौंनि मैं, सुर नारक मैं नांहि।
सुर नारक औपादिका, इह जिनवचननि मांहि।।7।।
तातैं इह निश्चय भयो, देव जौंनि सुरमात।
उतपादक शिज्या बिना, विबुधनि कै नहिं मात।।8।।
कै तीर्थंकरमात जो, देवमात है नाथ।
अथवा अंतिम तनुधरा, तिनकी मात सनाथ।।9।।
अवर सलाका पुरिष जे, तिनकी जननी मात।
देवनि की औरे नहिं, इह भाष्यो जगतात।।10।।

देव नाम अथवा मुनी, करैं क्रीड निज मांहि।
मुन्यौं सरीसा देवता, चतुर्विधि मैं नांहि।।11।।
मुनि देवनि की मात है, जिनवांनी जग सार।
तत्त्वज्ञान की मात जो,मुनि माता अधिकार।।12।।
सुरजनंनी जिनवानि जो, कै केवलि की मात।
याकी कुखि वाकी रुची, और न चाहूं तात।।13।।
तुमरी भक्ति जु नाथ जी, उपजावै गुन थोक।
तातैं गुन जननी इहै, शिव जननी बिनु शोक।।14।।
गुनदेवा क्रीडा करैं, रमैं द्रव्य कै मांहि।
तातैं गुण से देवता, त्रिभुवन मैं को नांहि।।15।।
गुन माता सुरमात है, तेरी भक्ति दयाल।
और न सुरमाता प्रभू, इह भाषैं सु रसाल।।16।।
तुमरी भक्ति प्रसाद तैं, सुरमाता की कुक्ष।
पाई बहुतनि मोहि दै, जिनवांनी परतक्ष।।17।।

(चौपई)

देवमात कहिये जिनवांनी। कै जिन भक्ति जु परमप्रवांनी।।
तीर्थंकर अर केवलिमाता। तिस पुरष की मात विख्याता।।18।।
इन बिनु सुरमाता नहिं कोई। ए सुरमाता प्रगट जु होई।।
सिल संपुट जो देव प्रसूती। सो दासा चाहैं न विभूती।।19।।
जिनवांनी जै हैं सुरमाता। ताकी श्रद्धा दै जगताता।।
केवलि माता की कुखि हमकौं। दैं ज्यौं बहुरि न पावैं जम कौं।20।।
दै ऋकार सुरमाता स्वामी। तू बिनु मात तात अभिरामी।
ऋत्विग होता कौ है नामा। तू होता होमैं मद कामा।।21।।
अष्टकर्म को ऋत्विग तू ही। भववन कौ होता जु समूही।।
दयारूप तू होम न तेरे। हिंसा यज्ञ जु तू नहिं प्रेरे।।22।।
मोहू ऋत्विग करि हरि देवा। हौमों कर्म जु अष्ट गिनेवा।।
आठ काठ सब जारि जु आऊँ। तेरे पुरि तोमैं जु समाऊँ।।23।।

जे ऋ त्विग पशुघन बिनु करुणा। भव भरमण करिहैं अति मरणा।
जे ऋ त्विग कामादिक के हैं। ते ऋ त्विग तोही को लेहैं।।24।।
ऋ जु कहिये सरलाइ नाथा। तू सरलातम जिन बड़हाथा।।
तेरे कपट न कूडा पइए। ऋ जुभावी तू ऋ जुगति कहिए।।25।।
ऋ जुभाषक तू ऋ जुताधीशा। ऋ जु हैं तोहि गहैं मुनिईशा।।
तेरे पुर को पंथ जु ऋ जुता। वक्र न पावहि तुव पद मृदुता।।26।।
ऋ जु जिनमारग तोकौं गावै। ऋ जु है भक्ता तुव पुरि आवैं।।
कपट करि जु अबलौ किनहीं नैं। तू नहिं पायो विषया भीनैं।।27।।
निज भीनां मुनि तोहि जु पाँवै। तेरे होय र इतर न आवैं।।
ऋ जुमति विपुलमती द्वै भेदा। मनपर्जय बोध जु के वेदा।।28।।
मुनि बिनु ओर न पावै कोई। मन की बात कहै अतिसोई।
ऋ जुमति बारे पर अर निज की। सात आठ भवलौं मन गति की।।29।।
तिर नर समनां की सहु बातैं। जोजन लौं जांनैं मनघातैं।।
विपुलमती है अति अधिका जी। जन्म असंखि जु नर तिर का जी।।30।।
मनुज क्षेत्र की मनगति जानै। तुव परसाद सकल दुख भांनै।।
विपुलमती निश्चय शिव जावैं। ऋ जुमति अल्पभवो भी पावै।।31।।

(बरवै)

हौं बिरवा सम हतमति जगजन मूढ।
भववन मांहि बसेरा अबुध अगूढ।।
पातपात करि झारिउ मिथ्या वायु।
मधुऋतु विषया पाय जु अति अधिकाय।।32।।
मधुऋतु भलिय जु इन विषयनितैं नाथ।
पतझर करि बिरवे कौं फुनि बडहाथ।।
पान फूलफलयुत करि अतिअधिकौ जु।
बिरवेकौं रमणीय जु करिह सु मौज।।33।।
ए विषया दुखदाई भव भव देव।
विरवे सौं भल करहि न कबहू अछेव।।

मिथ्या वायु न जानहि करि अंकूर।
पतझर करिवौ जानहि एक करूर।।34।।
तपिउ ताप दुख इन तहि हूं अति ईश।
तपऋतु सम ए विषया दाह करीश।।
इह जु अविद्या लू सम अति झगरा जु।
नहिं बरसावन सक है सुखवरषा जु।।35।।
झर लावन अमृत कौ तू अतिमेह।
ज्ञानांकुर तो बिनु को करिहै परम सनेह।।
भव्य शिखंडी हरषहि सुनि तुव गाज।
तपतिहरन तू प्रभूजी जगपति राज।।36।।
वरषा ऋतु सम सरस जु करि मुझ ईश।
सरद समानो सित तू है जगदीस।
ऋतु जु सरद सम उज्ज्वल केवलज्ञान।
दै हमकौं जिनराज जु परम प्रधान।।37।।
ससि जु भाव है उज्ज्वल हंस विलास।
मानस सरवर अद्भुत कमल प्रकास।।
ससि र समानो जड़ता भाव सु मोर।
लगिउ जु चिरतैं जिनवर हरि हर रोर।।38।।
ऋतु जु ससि र इह जड़ता भाव प्रकास।
करइ कंप तन जनकौ जिन जगभास।।
तू दिनकर सम हरि मुझ ए जड़भाव।
दै रतनत्रय तेज जु परमप्रभाव।।39।।
हिम ऋतु सम इह सठता मोतैं टारि।
जीव जु हिम सम कीयउ रूप बिगारि।।
जब ऊगै तू जिनवर दिनकर देव।
हिमता मिटि करि जीव होय निज वेव।।40।।
ऋतु भासक षट रतिपति हर जिनदेव।
ऋषिवर ऋषिपति सेवहि तो जु देव।।

ऋषभ ऋ षीश्वर देवा मोहि उधारि।
ऋषिधुर ऋषिगुर स्वामी मोहि सुधारि।।41।।
ऋषिकर ऋषिधर गुरतर शिवपुरि लेहु।
ऋषितर ऋषितम तमहर निजरस देहु।।
ऋषिपर ऋषिपुर नाथ कर्म मिटाय।
ऋषिथिर ऋषिचर संता भर्म छुडाय।।42।।
ऋषिगिर ऋषिचिर भूपा दै थिर थान।
तोहि जु ऋषि परनाम करि धरि ध्यान।।
ऋषिनर पतिया जतिया ऋषि करि मोहि।
ऋषिगति भरिया धुरिया ध्याऊं तोहि।।43।।
ऋषिक्षति नाथा दाता दै मुझ धर्म।
ऋषिमति ऋषिमत पाता दै निजमर्म।।
ऋषिमित रक्षक ताता मेटि तु भर्म।
ऋषिपति ऋषिजित गुर है तू अतिपर्म।।44।।
ऋषिहितहेतो ऋषि गत हत रागादि।
ऋषिगति तू इक जिनपति अवर जु वादि।।
तू ऋषिरत ऋषिरचिया है हरि ईश।
तू ऋषिरति ऋषि ऋषिया जिन जगदीस।।45।।
ऋषिक न तो सौ जग मैं जिन नहिं और।
ऋषिसंगा ऋषिरंगा तू ऋषिमौर।।
ऋषिवित ऋषिचित राया तू इक तत्त्व।
ऋषितति ध्यांवहि जाहि जु तू अतिसत्त्व।।46।।
ऋषिनायक ऋषिदायक ऋषिउर हार।
ऋषिलायक ऋषिगायक गुन भवपार।।
ऋषिभायक ऋषिकायक पति जगजीत।
ऋषिपायक वायक के वह अतिमीत।।47।।
ऋषिदुखघायक सायक बोध धरें जु।
ऋषिपालक अघटालक रूप करें जु।।

ऋषिदत गोरष पौरष एक तुही जु।
ऋषितारक ऋषिपारक देव वही जु।।48।।
ऋषिकारक ऋषिधारक एक जिनिंद।
ऋषिचारक ऋणटारक देव मुनिंद।।
ऋषिरावत ऋषिरावल मांनहि तोहि।
ऋषिराव जु ऋषि राजा हरि अघ मोहि।।49।।
ऋषिमंडलिका चक्री ऋषि गण तात।
ऋषि नारायन वज्री ऋषिगन पात।।
ऋषिगण त्राता माता तेरि हि वांनि।
तोसौ ऋषि या जग महि तू जु प्रवांनि।।50।।
ऋषिजन सब मिलि लषिया तू इक तत्त्व।
ऋषि सिंहो नरसिंह जु अति तू सत्त्व।।
ऋषि कुंजर जु सुगंधो हस्ती तू जु।
ऋषि प्रेरक जु ऋ षीशा है जगपूज।।51।।
ऋणघेरक जु अतीशा ऋण हरि मोहि।
ऋण करमनि कौ बधियो अति अधिकोहि।
ऋषिहेरक ऋषिमेरक ऋण नहिं तोहि।
ऋणरहितो ऋणहरिया दै शिव मोहि।।52।।
ऋषिचंदा विनु फंदा ऋषिगण भांनु।
मांनहि सुर नर मुनि जन धरि तुव ध्यान।।
ऋषि व्रतिधरिया भरिया तू ऋषिनाथ।
ऋषि साथा जिननाथा तू बडहाथ।।53।।
ऋषिसाई जु गुसांई तू इक देव।
ऋषिपूजित जु अदूजित ऋषिकर सेव।।
ऋषि सु धुरंधुर धुरिया परम दयाल।
ऋषि सु परंपर करिया परम कृपाल।।54।।
ऋषिगणगम्य अगम्या अलख अलेष।
ऋषिघन नम्य सुरम्या अपख अशेष।।

ऋषितन ऋषिमन ऋषिधन है जगदीस।
ऋषिजन सुखवन रूपा तू ऋषिसीस।।55।।
ऋषि सुखदाय राया तू जु अकाय।
ऋषिवपु ऋषि थप पाया ऋषिनि अमाय।।
ऋषि जु जपहि जाकौं निति सो तू अर्थ।
ऋषिवल्लभ ऋषिदुल्लभ तू अत्यर्थ।।56।।
ऋषिगण ध्येया सेया ऋषिपति रांण।
ऋषि घन ज्ञेया लेया अति परमांण।।
ऋद्धि कराणां भांणां तिमर विनास।
ऋषिधीरा ऋषिवीरा परम प्रकास।।57।।
ऋषिपभटारक टारक पापनि कौ जु।
ऋषिनि सुधारक भारक धर्मनि कौ जु।।
ऋषितीरा बिनु सीरा भूपति तू जु।
ऋषि ठाकुर ऋषिसाहिब पूज अदूज।।58।।
ऋषिस्वामी ऋषिनामी ऋषि छति छात।
ऋषिधामी ऋषिगामी अतिसुखदात।।
ऋषिपारग ऋण पारग ऋद्धि विशाल।
ऋषिमारग शिवमारग तू ऋषिपाल।।59।।
ऋषिपारकर धरिया शिवपुरि तैं जु।
ऋणछेदक निज वेदक लखि उनमैं जु।।
ऋषिगण मोहक तरिया है इक तू जु।
ऋषिमोषक ऋणसोषक तू ऋषिपूज।।60।।
ऋषिरोचक ऋणमोचक तू ऋषिबंधु।
ऋषिसागर ऋषिआगर तू गुणसिंधु।।
ऋषिनागर ऋषिजागर तू ऋणवीत।
ऋण चूरग ऋणदूरग तू रणजीत।।61।।
ऋषिकलकंठा गंठा तू जु वसंत।
तव वाक्याम्र जु कलिका तैं ऋषिमंत।।

ऋषि जु अर्क तू ग्रीषम अति परताप।
अर्कज वासा ग्रीषम महि विनु ताप।।62।।
ऋषि जु मयूरा पूरा तु जिन मेघ।
गर्जित वांणी तूरा है जु अमेघ।।
ऋषिगण हंसा देवा सरद जु तू जु।
करहि किलोला लोला भये अदूज।।63।
मानस सरवर निरमल जिनकौ वास।
ऋषिगण हंसा सत्य जु तेरे दास।।
ऋषिगण मीठा ईखा सम निरग्रंथि।
गांठहि तोहि जु स्वामि न तजि सब ग्रन्थ।।64।।
ससिर समानो सीतल तू तपहार।
रसयुत ऋषि ईखनि कौ करहि अपार।।
अगनि समांना ऋषिवर हिमऋतु तू ज।
जगवल्लभ ऋषि करई तूं जगपूज।।65।।
ऋषिमित्रू ऋणशत्रू तू जगमीत।
ऋषिपावन ऋषिभावन है जु नचीत।।
ऋद्धिपुरंदर शक्रा तू जिनचंद।
ऋद्धि धुरंधुर देवा तू जगइंद।।66।।
ऋषि सु परंपर पूरण तू इक नाथ।
ऋषि क्षतटाला पाला तू जु अनाथ।।
ऋषि सु क्षतिंधर ऋषिया तू इक ईश।
ऋणपूरण जगधुरिया तू जगदीश।।67।।
ऋषिध्यायत ऋण घायक ऋण गण नाश।
ऋषि सु क्षमंकर ताता है ऋषिभास।
ऋतु कारक ऋतु धारक ऋतु रति वीत।
ऋतुनायक ऋतुदायक रतिपति जीत।।68।।
ऋतुपारग ऋषिमारग सार अधार।
ऋतुरति तर्जित सांई विरति विहार।।

ऋतुरति विरचि सु रतिप दंडी तू जु।
कुनय विहंडी जोगी जोग अदूज।।69।।

(छप्पय)

ऋद्धि प्रचंडी तू जु तू जु है मन-सुत-खंडी।
मनखंडी जु अखंड तोहि ध्यावैं वनखंडी।
ऋद्धि निरंतर पासि पूजि तू ऋद्धि करंकर।
ऋद्धि जोधक जोधा जु तू जु हर सर्व सुखंकर।
ऋषिबोधक बोधा तुही, ऋषिसोधक सोधा प्रभू।
रोधक रोधा संवरो, ऋण रोधक जिनवर विभू।।70।।
ऋषिगण मोदकरो जु तू जु है ऋषिघन मेघा।
ऋषि पावैं मेधा जु तोहि तैं तू जु अमेघा।
ऋषिवेधा महदेव तू जु है ऋषि महराजा।
ऋषि आखंडल ईश तू जु है भवदधि पाजा।
ऋषि काजा ऋषिलाज तू, ऋषि आसा वासा मुनी।
निरहासा अनयास तू, ऋषि सु भिषगवर तू धनी।।71।।
ऋषिगण मध्य प्रधान जगतगुर तू जु अनंदी।
ऋषि अघहर गुणवान करन तू नाथ अफंदी।
ऋद्धि परंधर धीर तू जु निज ऋद्धि संपूरण।
ऋतुषट् पूरण वीर तू जु रतिपति अतिचूरण।
ऋद्धि सु वासा एक तू, ऋद्धि अवासा पास जी।
ऋद्धि निवासा है सदा, ऋद्धि विकास विलास जी।।72।।
ऋद्धिविभासकरास आस तू ऋषिजन केरी।
ऋद्धिप्रवेस अशेस थाह नहिं लहिये तेरी।
बहिरंगा जे ऋद्धि तोहि नहिं फरसहिं कब ही।
केवल ऋद्धि प्रकासरूप तेरौ जिन सब ही।
ऋद्धि अकासी तू धरें, ऋद्धि जु दासी रावरी।
ऋद्धिदास तू नां प्रभु, ऋद्धि नाथ बहुधा धरी।।73।।

(सवैया इकतीसा)

ऋद्धिधुर ऋद्धिगुर ऋद्धिपुर ऋद्धिगिर,
ऋद्धिहर ऋद्धिकर ऋद्धिधर तू सही।
ऋद्धिपर ऋद्धितर ऋद्धिवर ऋद्धिचर,
ऋद्धिथिर ऋद्धिचिर ऋद्धिघर तू जु ही।।
ऋद्धिभर ऋद्धिझर ऋद्धिमान ऋद्धिदान,
ऋद्धिभूर ऋद्धिपूर ऋद्धिचूल मूल ही।
ऋद्धिज्योति ऋद्धिद्योति ऋद्धिचंद ऋद्धिकंद,
ऋद्धिसिंधु ऋद्धिवृंद ऋद्धिवृद्धि तू लही।।74।।
ऋद्धिराय ऋद्धिकाय ऋद्धि सेवै पाय नाथ,
ऋद्धिदाय ऋद्धिभाय ऋद्धि थूल रावरी।
ऋद्धिसार ऋद्धिपार ऋद्धिलार तेरे देव,
ऋद्धि डारि पार की जु ऋद्धि बहुधा धरी।
ऋद्धिपुंज ऋद्धिकुंज ऋद्धि नाव ऋद्धि राव,
ऋद्धि भाव शुद्धता जु एक अति भाव री।
ऋद्धिभेव नंत तोमैं ऋद्धिभांन ऋद्धिजान,
ऋद्धि के बखाने भेद ऋद्धि अधिका करी।।75।।
ऋद्धि सारी तेरे द्वार ऋद्धि भारी तू अपार,
ऋद्धिखानि शुद्ध बांनि तू जु गुणसिंधु है।
ऋद्धि जाकै तीर तू सदा जु सब केरौ नाथ,
नीरौ अति जीवनि तैं जू तु जगबंधु है।।
ऋद्धि कौ जु भाजन तू ऋद्धिभाग ऋद्धिभेव,
ऋद्धि तू जु देवै तोहि ध्यावै जो न अंध है।
ऋद्धिकंत, ऋद्धिवंत ऋद्धिकौ विथार तेरे,
तो सौ नांहि ऋद्धिवांन दूसरौ अबंध है।।76।।
ऋद्धिधनी ऋद्धिघनी ऋद्धिनाथ ऋद्धिसाथ,
सांईं स्वामी ऋद्धि कौ जु लोक कौ प्रभू तु ही।

ऋद्धि सारी तेरे हाथ साथ नहि छांडै ऋद्धि,
ऋद्धि कौ आधार एक निराधार भूप ही।।
ऋद्धि को प्रचार तेरै ऋद्धि करै सेव तेरी,
ऋद्धि मैं बिहार तेरौ ऋद्धि को विभू सही।
ऋद्धि वृद्धि सिद्धिरूप एक तू विराजि रहो,
नमो नमो तोहि देव तूसही न रूसही।।77।।

(दोहा)

ऋद्धि जु बुद्धि क्रिया सही, ऋद्धि जु विक्रिय होय।
ऋद्धि सु तप अर बल प्रबल, ऋद्धि सु औषद जोय।।78।।
रस ऋद्धि अर क्षेत्र पुनि, ए आठौं ऋधिमूल।
इनके चौसठि भेद हैं, सबको जिनवर चूल।।79।।
ठारा नौ ग्यारा सही, सप्त तीन वसु ठीक।
षट् द्वै ए चौसठि सबै, भेद न हौंहि अलीक।।80।।
ठारा भेद जु बुद्धि है, नौ किरिया परवान।
ग्यारा विक्रिय भेद है, सप्त तपो जित भांन।।81।।
बलऋद्धी त्रय भेद हैं, औषध अष्ट बखांनि।
रस ऋद्धी षट् भेद हैं, द्वै क्षेत्र जु परवांनि।।82।।
ऋद्धि जु चौसठि भेद ए, अंतर भेद अनेक।
इनके धारक ऋषिवरा, तिनकै तत्त्वविवेक।।83।।
अष्टसिद्धि कै आदि ही, प्रथम हि बुद्धि जु ऋद्धि।
तामैं प्रथम हि केवला, सोहै केवल सिद्धि।।84।।
ऋद्धि एक केवल विमल, मुख्य अवर सब गौंन।
तू केवल नायक प्रभू, तोतैं अधिक जु कौंन।।85।।
ऋते नांव वर्जित सही, तू वर्जित परभाव।
परभावो निजभाव तू, चिदगुण सहज स्वभाव।।86।।
ऋते कहौ बिगरि जु कहौ, कहौ विना जु वितीत।
रहित रिकत एकार्थ ए, जिन जु ऋते सब भीत।।87।।

ऋते जु रात्री अह्नि तू, ऋते जु तोयं वायु।
ऋते जु धात्री वह्नि तू, ऋते जु अंबर काय।।88।।
ऋते जु इंद्र बल तु ही, ऋते जु आयु उपाय।
ऋते सास उस्सास तू, ऋते जु जन्म अपाय।।89।।
ऋते शून्य अंका तु ही, ऋते शंक अर पंक।
ऋते वंकता एक तू, अघट अघाट अनंक।।90।।
ऋते चापरोपा तुही, ऋते शाप अर कोप।
ऋते थापना लोप तू, ऋते ताप अर छोप।।91।।
ऋते गोप गो है तुही, ऋते जु चिंता भीति।
ऋते जु प्रीतम प्रीति तू, ऋते जु सकल अनीति।।92।।
ऋत जु श्रम भ्रम ध्वांत तू, ऋते पुण्य अर पाप।
ऋते जु घर्मा छांह तू, परम पुनीत प्रताप।।93।।
ऋते जु कर्मा भर्म तू, ऋते देह अर गेह।
ऋते स्रिष्टि स्रष्टा तुही, ऋते मोह अर नेह।।94।।
ऋते वृष्टि मेहा तुही, ऋते सस्य त्रिण तूल।
ऋते जु चर्मा वर्म तू, ऋते जु मर्मा मूल।।95।।
ऋते जु हर्म्या राम तू, ऋते जु क्रीडा व्रीड।
तू न कभी पीडा करै, धरै सदा निज क्रीड।।96।।
ऋते जु दिक्षा शिक्ष तू, ऋते जु रक्षक पक्ष।
ऋते जु सर्व अभाव तू, मुनिनि लख्यो परतक्ष।।97।।
ऋते जु पल अस्थी तुही, ऋते जु श्रोणित घात।
ऋते स्वांमि सेवक तुही, ऋते गात जगतात।।98।।
ऋते जु गुरशिक्षा तुही, ऋते जु भिक्षा नाथ।
ऋते क्षुधा त्रिशना तुही, ऋते सप्त भय साथ।।99।।
ऋते द्वेष रागादि तू, ऋते मोह अर स्वेद।
ऋते जरा रोगादि तू, ऋते मृत्यु अर खेद।।100।।
ऋते जु चिन्ता सोच तू, ऋते जु वसु मद देव।
ऋते जु रति अरती तुह, ऋते जु विस्मय भेव।।101।।

ऋते जु जन्म विषाद तू, ऋते जु निद्रा पंच।
इन दोषनि कौं आदि बहु, तेरे नाहीं जु रंच।।102।।
ऋते जु आभूषण तुही, ऋते जु वस्त्रा तू जु।
ऋते जु शासन आसना, ऋषिनि लख्यो जगपूज।।103।।
शस्त्रा अस्त्रा एक ना, दूषा भूषा नांहि।
लूषा नांहि स्वभाव तैं, जगभूषा सब पाँहि।।104।।
ऋते जु देशादेश जो, ऋते जु भेष अलेष।
ऋते जु लेस्या छहुनि तैं, जाहि जपैं जु अशेष।।105।।

(कुंडलिया)

अनुभवरूप अकाय तू, ऋते जु जाया छाय।
सही जु रायाराय तू, बिनु दायाद स्वभाय।।
विनु दायाद स्वभाव पाय जाके अति गाढे।
ऋते जु छदमासद्म कर्म जानैं सब बाढें।।
जाके कछु न विकार नगनि जगजार नगनि भव।
ऋते जु माया काय देव राजै धरि अनुभव।।106।।
अनुभै मूल सचूल तू, ऋते जु पद्मा भिन्न।
ऋते जु जन्मा पद्म तू, जाकै चिह्न न लिन्न।।
जाकै चिह्न न लिन्न खिन्न खेदो नहिं कबहीं।
ऋते जु कल्मष देव ताप जाकै नहिं सब ही।।
जाकै नहिं जु उपाधि नगनि असमाधि नगनि भै।
ऋते जु रांमा रांम नाथ गाजै पति अनुभै।।107।।
श्री कौ पति प्रभु है सही, ऋते जु भांमा वांम।
ऋते जु कांमा कांम तू, ऋते जु सांमा दांम।।
ऋते जु सांमा दांम गांम धांमा नहिं तेरे।
ऋते जु मांना दांन दंड भेदा हु न नेरै।।
तेरै नहिं जु अनाथि न कछु पर अथि जु ही कौ।
ऋते जु भेदा तू जु देव स्वांमी पति श्री कौ।।108।।

नीकौ जिनवर तू सही, ऋते जु तांना गान।
नृत्य गीत वादित्र जे, तैरै नांहि निसांन।।
तैरै नांहि निसांन स्यांन तेरी नहीं कोई।
ऋते जु खंड विहंड तू जु एको हरि होई।।
तेरे नहीं जगव्याधि नहीं कछु आधि सुधी कौ।
ऋते क्लेद सब वेद पूज परमेसुर नीकौ।।109।।
टीकौ जग कौ रावरै, सो है देव ललाट।
ऋते जु धामसधूम तू, धांम रूप शिव वाट।।
धाम रूप शिव वाट ठाट कौ नायक तू ही।
मुकति तणौ दातार एक दीखै जु समूही।।
तैरै नहिं गुनथांन नहीं शर बान अतीको।
ऋते जु मूर्छा धीर तू जु लीयां जग टीकौ।।110।।
पूरौ नाथ कृपाल जी, गुणपुंजनि करि तूज।
ऋते भोग भागा तुही, ऋते याग जग पूज।।
ऋते याग जगपूज दूज तू सबतैं देवा।
ऋते जु योगायोग योगि धारैं तुव सेवा।।
नांही जीवसमास नहीं कछु आस सुदूरा।
ऋ ते जु आगस आग ईश सांचौ गुण पूरौ।।111।।
दूरौ जग तैं तू सही, जग कैं शिखरि बसै जु।
ऋते जु शोक च रोक तू, घटि घटि प्रभु विलसौ जु।।
घटि घटि प्रभु विलसै जु, फैज पाँवैं मुनि तोतैं।
ऋते जु रंगा रक्ति, पूज दूहौ नहीं मोतैं।।
नांही परसंजोग नहीं जगभोग सुपूरो।
ऋते जु सुंगासंग नाथ जग तैं अति दूरो।।112।।

(दोहा)

ऋते जु रिक्ती तू भर्यो, आशक्तो न कदापि।
ऋते भंग भुक्ती तुही, मुक्तीशो जु उदापि।।113।।

ऋते जु बंधा-मुक्ति तू, ऋते जु आस्रव देव।
ऋते जु संवर-निर्जरा, पुण्य-पाप बिनु भेव।।114।।
जीवाजीव सु ज्ञायको, शुद्ध तत्त्व चिद्रूप।
ऋते जु द्वन्द्वा तू सही, ऋते जु छंदा नूप।।115।।
ऋते युक्ति उक्ती तु ही, ऋते जु धन्धा लिप्ति।
ऋते जु लुप्ती त्रिप्त तू, शुद्ध रूप निज व्यक्ति।।116।।
ऋते जु सपरस रस तुही, ऋते गंध अर वर्ण।
ऋते जु शब्दाशब्द तू, ऋते जु चक्षु व कर्ण।।117।।
ऋते जु जिह्वा स्वाद तू, ऋते घ्राण फरसादि।
ऋते जु ऊहापोह तू, राजै देव अनादि।।।118।।
ऋते जु आशापास है, ऋते जु मित्रू शत्रु।
ऋते जु सुख दुख है तुही, सुखरूपो जगमित्र।।119।।
ऋते जु लाभालोभ तू, ऋते जु माया क्रोध।
ऋते जु गर्व सु सर्व तू, ऋते जु वैर विरोध।।120।।
तू काढै कारा थकी, ऋते जु कारा तू जु।
कारा नाम जु भाकसी, भवरूपा नहीं दूज।।121।।
ऋते कुंज निरकुंज तू, ऋते पुंज अतिपुंज।
ऋते जु चर्चा अर्चि तू, ऋते गंज अतिगुंज।।122।।
ऋते जु निंदा थुति तुही, ऋते वृंद अतिवृंद।
ऋते जु सात्त्विक राजसा, ऋते जु तामस चंद।।123।।
ऋते द्रव्य कर्मा तुही, ऋते भाव नोकर्म।
ऋते जु आलस नाथ तू, ऋते भ्रांति भवभर्म।।124।।
ऋते जु मंत्रामंत्र तू, ऋते जु यंत्र सु तंत्र।
यंत्री तंत्री तू सही, मंत्री एक अमंत्र।।125।।
ऋते जु क्षोभ असोभ तू, सोभा मूल तुही सु।
ऋते कोष सोषादि तू, ऋते घोस जगदीस।।126।।
ऋते जु पोषक पोषको, तू दीसै जिन कोई।
रोष तोष बिनु मोख को, ऋते जु धोखा सोइ।।127।।

ऋते क्षुब्धता लुब्धता, गिरा दुग्ध सम जास।
सदा मुग्धता वेगलौ, महाविचक्षन पास।।128।।
ऋते आर्यता म्लेच्छता, ऋते जु भव्याभव्य।
ऋते जु तंद्रा इंद्र सो, तारै आसन भव्य।।129।।
ऋते जु हिंसा पाप तैं, ऋते झूठ परपंच।
ऋते जु चोरी नारि तैं, ऋते परिग्रह संच।।130।।
ऋते जु वासा वसन तैं, वसि जु रह्यो सब मांहि।
जारी नारी मारिका, जाहि न फरसैं नाहि।।131।।
चार चुगल जाकौं कभी, पावैं नांहि लगार।
ऋते जु दौर्जन्यादि जो, धरै सु नित्य विहार।।132।।
ऋते तात-माता जिको, ऋते जु बंधू जात।
ऋते पुत्र-पुत्री जिको, ऋते जु भगिनी-भ्रात।।133।।
ऋते गोत्र साषा जिको, ऋते नाम अतिनाम।
ऋते ज्ञाति विवहार जो, ऋते कांम अतिरांम।।134।।
ऋते जु वर्णावर्ण जो, ऋते ग्रन्थकर ग्रन्थ।
ऋते जु शिष्टाचार जो, ऋते दुष्टता पंथ।।135।।
ऋते जु विकथादिक हरो, ऋते जु बापी कूप।
ऋते जु सर नगरादि जो, ऋते जु सरिता तूप।।136।।
ऋते जु अणु खंधा तुही, पाखंडा न लहैं जु।
ऋते पुण्य-पापादि तू, योगींद्रा सु गहैं जु।।137।।
ऋते हस्तपादा प्रभू, ऋते नितंब जु पीठि।
ऋते जु छाती सीस तू, तोहि न लागै दीठ।।138।।
ऋते अंग उपअंग तू, ऋते ऋणारण जीत।
ऋते वृणा विश्वातमा, ऋते जु छात्र अतीत।।139।।
ऋते पात्र पात्रो तुही, ऋते पाठ अतिपाठ।
ऋते जु माला भल तुही, दहै आठ सब काठ।।140।।
ऋते जु दुर्भगता तुही, ऋते जु दुर्जरता जु।
ऋते जु संसारो तुही, संसारार्णव पाज।।141।।

ऋते जु रंध्रा छिद्र तू, ऋते जु दुर्गा शाल।
ऋते जु वर्गावर्ग तू, वर्गण गण सब टाल।।142।।
ऋते सपर्द्धक तू प्रभू, ऋते सपका तू जु।
ऋते जु भावाभाव तू, ऋते विभाव जु दूज।।143।।
ऋते जंतुता तू सही, ईश्वरता पूरो जु।
तंतु तेरौ ज्ञान बिनु, और न है दूजो जु।।144।।
ऋ वरण सुरमाता कही, जो लक्ष्मी जिनभूति।
सोई दौलति भाष मैं, जो आनंद विभूति।।145।।

इति ऋ वर्ण-वर्णन संपूर्णम्।



आगे ऋृकाराक्षर कौ व्याख्यान करे छै। यो अष्टम स्वर छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं ऋृकाकार दैत्य माता कौ नांव कह्यो सो दैत्य किसी और दैत्य की माता कौन सोइ कहजे।

(श्लोक)

दैत्या मोहादयो दुष्टा, तन्माता स्वात्मभ्रांति या।
दैत्यारि पुंडरीकाक्षो, भ्रांतिहारी जिनोत्तमा।।1।।

(दोहा)

ऋृकारो आगम विषै, दैत्य मात कौ नाम।
असुर जु दैत्या त्रिक भवा, देवा सुर्ग जु धाम।।2।।
भवन जु व्यंतर ज्योतिसी, इह त्रिक दैत्य जु होय।
वैमानिक सुरलोक के, देव कहावैं सोय।।3।।

देवा चतुरनिकाय का, तिनमैं दैत्य जु तीन।
एक जाति सुरलोक की, देव भोगरस लीन।।4।।
सुर-असुरनि के भेद ए, तू भाषै जगदेव।
तिनकै मात न तात है, औपादिक जु कहेव।।5।।
सिलसंपुट शिज्या विषै, देवा सुर उपजात।
देवत दानव सर्व कै, तात न मात न भ्रात।।6।।
उतपादक शिज्या जिको, सोई राक्षस मात।
देवमात भी वह सही, और न दूजी बात।।7।।
रावणादि जे दैत्य हैं, ते मानुष परसिद्ध।
राक्षस विद्या साधिकै, भये भोगरस गृद्ध।।8।।
इनकौं राक्षस नां कहैं, जैनमती मतिवान।
ए मानुष विद्याधरा, इह भाष्यो भगवान।।9।।
अध्यातम सैली विषै, दैत्य कहे मोहादि।
राग दोष कांमादि ए, जे लगि रहे अनादि।।10।।
एई पापा राक्षसा, असुरा दैत्या दुष्ट।
जीवनि कौं पीडैं सदा, मदमांते जु बलिष्ट।।11।।
इन दैत्यनि की मात प्रभू, आतम की विभ्रांति।
ताकौं दैत्यांबा कहै, सो नाशक विश्रांति।।12।।
ताकौं तुम डारी प्रभू, मारे वाके पूत।
दैत्यहरन तुव नाम है, तातैं जिन अवधूत।।13।।
दैत्यांतक तुम दैव हौ, दैत्यमात के शत्रु।
हमरी भ्रांति निवारि हरि, सब जीवनि के मित्र।।14।।
ऋ असुर जु माता सही, असुर जु माता भ्रांति।
भ्रांति मूल इह दौलती, बहिरंगा विश्रांति।।15।।

इति ऋकाराक्षर संपूर्णम्।



आगैं लृकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो नवमौं स्वर छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं लृकार नाम देवमाता कौ कह्यो। सो देवमाता कौ वर्णन ऋ कार वर्ण मैं करि आया, अब भी कहै छै। देवमाता कुण नैं कहजे—

(श्लोक)

लृकारो देवमाता स्यात्, देवमाता च भारती।
जिनदीक्षा च तन्माता, लक्ष्मी माता जिनात्मिका।।1।।
नान्या माता भवेत्तेषां, गर्भजा न सुरासुरा।
शिज्यामाता दिवौकानामेतत् प्रोक्तं जिनागमे।।2।।

(मोतीदाम)

लृकार जु नाम दिवौक जु माय। सु आगम नाम जु माला गाय।।
सुरासुर कै हि माय जु बाप। सु पुण्य थकी सुर उपजहि आप।।3।।
उपपादक शिज्या जन्म जु लेय। सु ततकालै नव जोवन भेय।।
अनादि जु काल थकी इह ठीक। नहीं जिनभासिउ होय अलीक।।4।।
सही जु उपादक शिज्या मात। सुरासुर की इह एक जु बात।।
नहीं सुरजौंनि सु दासनि चाहि। चहैं तुव भक्ति जु त्रिभुवन पाहि।।5।।
नहीं सुरमाता भगति समांन। सु भगति जु माता दैवत दांन।।
हमैं हरि देहु सु तेरि हि भक्ति। सही जननी जौ भक्ति र मुक्ति।।6।।
सु मुनिवर देवा देवत पूज। निरंतर क्रीडहि होय अदूज।।
सु तेरि हि दिक्षा मुनिवर मात। सही सुरजननी और न तात।।7।।
सही तुव कमला जो तुव मांहि। रहै जु अभिन्न निरंतर पाँहि।।
नहीं कछु ज्योति विना कमला जु। सु तेरि हि ज्योति सही पदमा जु।।8।।
धरें अति ज्योति सु तू लक्ष्मीश। न तेर हि कांमिनि कनक न धीश।।
सु तेरि हि कमला त्रिभुवन माय। सही सुरजननी होय अमाय।।9।।

सही जिनवांनि सदा सुखकार। सु तेरिहि भारति तत्त्वविचार।।
सदा हितजननी प्रांणि सु मात। सही सुरमात सु एहु विख्यात।।10।।
जनैं सुर अक्षर रूप सबै जु। सुर जनंनी पद याहि फबै जु।।
वहौरि तिथंकर मात सु मात। सु देवनि की नहिं और जु पात।।11।
सु तदभव मोक्ष जु गांमि हि पुत्र। जनैं जननी वह देव सवित्रि।।
सही जु सलाक पुरिष जु पूत। जनैं सुरमात सही जु प्रसूत।।12।।
जु सम्यग्दृष्टि सुयुत्र जनेय। सही सुरमात तणौ पद लेय।।
सु देहु जिनिंद हमै सुरमात। न चाहैं और कछू जगतात।।13।।
जु देहु निजातम दिक्ष दयाल। सदा जिन देहु जु भक्ति विशाल।।
सदा तुव ज्योति वसै उर मोहि। लषे जिनवांनि सु ध्यांउ ह तोहि।।14।।
सु जन्म जु देहुत केवलिमात। तणी कुखि और न चाहहि तात।।
नहीं कछु चाहि जु दासनि के जु। इकै इह चाहि जु भक्ति मिलैं जु।।15।।

(दोहा)

सुरमाता जो भक्ति है, सोई दौलति मूल।
कमला पदमा रावरी, और जु दौलति धूल।।16।।

इति लृकाराक्षर सम्पूर्णम्।

ऌ

आगै लृकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो दशमौं सुर छै। सो एकाक्षरी नांममाला मैं लृकार नागमाता को नाम कह्यो। सो नागमाता कौंण, सोई कहै छै।

(श्लोक)

लृकारो फणिमाता च, नागदेवा न गर्भजा।
नागमाता भवेत्काहो, तत्स्वरूपं निगद्यते।।1।।

(दोहा)

लृकारो अहिमात है, सो अहिमाता कौंन।
नागकुमारा देवता, ते उतपादक जौंन।।2।।
सो दासा चाहैं नहीं, जो कहिये सुरजौंनि।
दासा चाहैं दासता, पकरी जग तैं मौनि।।3।।
नाग जु हस्ती कौं कहैं, ताकी हथंनी मात।
दंति दंतिनी आदि जौ, दास न चाहैं तात।।4।।
नाग नांव पुनि सांप कौं, ताकी नागिनि मात।
नागिनि सम इह पिशुनता, मेटि मौंनि दै तात।।5।।
नागिनि मरण जु एकभव, दे अधिकौ नहिं दोष।
इह जु पिशुनता भव भवै, करिहै अधिक जु सोष।।6।।
जब तू आवै घट विषै, नागिनि की नहिं वास।
गरुडध्वज तू देव है, सर्व पिशुनता नाश।।7।।
नाग नाम सीसा सही, ताकी जननी खानि।
नागादिक सब धातु की, खांनि न माँगूँ दानि।।8।।
खानि एक जाचूं प्रभू, जो रतनत्रय खानि।
सो तू ही औरे नहीं, भक्ति मुक्ति कौ दानि।।9।।
तू नागेन्द्र जु कौ पती, मणि सम तेरौ ज्ञान।
सो मणि दै जग साइया, तू दातार प्रधान।।10।।
ज्ञान मणि जु है रावरी, दौलति सोई देव।
और न दौलति दूज है, सौ दे आतम बेव।।11।।

इति लृकाराक्षर निरूपणं संपूर्णम्।

ए

आगै एकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो एकादसमों स्वर छै। सर्व ककारादि अक्षरां कै एक मात्रा दीजै, तठै यौ स्वर प्रगट बोलै। के असौ उच्चार कीयो

तहां के विषै ए कौ उच्चार आयो। ईही भांति सर्वाक्षरा मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं एकार नांव महेश्वर कौ कह्यो, तो महा ईश्वर नैं महेश्वर कहजे, सो महेश्वर भगवान कौ नांव छै।

(श्लोक)

महेश्वरं महादेवं, सदैकारांकरूपिणम्।
सर्वाक्षरमयं धीरं, जिनं वंदे शिवाप्तये।।1।।

(दोहा)

ए कहिये ग्रन्थनि विषै, नांव महेश्वर कौ जु।
तुम जैनेश महेश्वरा, और न जगि दूजौ जु।।2।।
ईश्वर समरथ नाम है, समरथ है इंद्रादि।
काल जीतिबे सक नहीं, समरथता सब वादि।।3।।
समरथ एक जु तू सही, कालजीत जगजीत।
तातैं ईश्वर एक तू, महामहेश्वर प्रीत।।4।।
एक एव जिनदेव तू, एक जु केवलज्ञांन।
एक मोक्ष जगपार तू, एक सकल परधान।।5।।
एक बोध केवल सही, और न दूजौ बोध।
केवल सबको नायको, है परतक्ष प्रबोध।।6।।
एक धर्म जिन सार जो, धरें जु भेद अनंत।
तेरौ धर्म अनंतधा, एकानेक प्रसांत।।7।।
एकरूप जगदेव तू, अवर सकल भ्रम जार।
एकैश्वर जगराय तू, श्री जिनराय अपार।।8।।
एकाकार विभूतिधर, नैकाकार विथार।
एकाधार अकाय तू, एकतार जगसार।।9।।
एकीभाव अनेकजित, एकानेक स्वरूप।
नैक विषै एकौ अतूल, एक धरे बहु रूप।।10।।
एक देव अति भेव तू, पञ्च परमपद इष्ट।
परमेष्टी परदेव तू, निजदेवो जगइष्ट।।11।।

एकतत्त्व चिद्रूप तू, एक अर्थ सब अर्थ।
अर्थ प्रकासी तू सही, नरदेवो निरअर्थ।।12।।
एक द्रव्य निज द्रव्य तू, एक धनी धनरूप।
एक अस्तिकाया तुही, पंचच्छी पररूप।।13।।
एक पदारथ सिद्ध तू, नव पद अर्थप्रकास।
षट्द्रव्या पंचास्ति जे, सप्त जु तत्त्व विभास।।14।।
सप्तभंग भासक तु ही, है जु अभंग असंग।
संगी जग कौ तू सही, नि:संगी जु अरंग।।15।।
एकरसी द्वै भेद तू, त्रिक भेदो जु दयाल।
चउधा नंतचतुष्टधा, पंच परमपद भाल।।16।।
द्वै उपयोग जु तू धरें, साकारो निरधार।
सही निराकारो तुही, पुरिषाकार विथार।।17।।
रतनत्रय धर त्रिविध तू, दरशन ज्ञान स्वरूप।
सदा यथाख्यातो तुही, चारित्री जु अरूप।।18।।
द्रव्य गुणा पर्याय जे, कर्ता कर्म क्रिया जु।
ध्रुव उतपाद व्यया त्रयी, तू भासै जिनराज।।19।।
द्रव्य क्षेत्र कालो सही, भाव मिलें चदुधा जु।
अमित चतुष्टय नाथ तू, चउरूपो जगराज।।20।।
पंच परमपद तू धरे, पंच जु प्राव्रत जीत।
षट्रूपो षट्कार तू, षट्रस वीत अतीत।।21।।
सदा सप्तधा एक तू, सप्तभंग भगवंत।
नित्य त्रिभंगी लाल तू, सार त्रिभंगी कंत।।22।।
सदा अष्टधा गुणमंई, अष्टसिद्धि नवनिद्धि।
नव नय भेद परकास तू, नवधा शील प्रसिद्धि।।23।।
दसधा परिग्रह रहित तू, दशलक्षण लक्षो जु।
एकसरस तू अधिक रस, अरस रसीलो सो जु।।24।।
एकनाथ तू अति सुथिर, वित्त सदा जगमित्त।
एकातम अतिभाव तू, सब जगजाल अलिप्त।।25।।

एकीकरण अनंत तू, एकीभाव निधांन।
एकीभाव सतोत्र तैं, काटै बंध निदांन।।26।।
वादिराज मुनिराय नैं, कियो जु एकीभाव।
कोढ गयो अंतर वही, पायो परम प्रभाव।।27।।
एक रसिक सब जगवसक, शिववासी सुखवास।
एक तात सब लोक कौ, है जु अलोक प्रकास।।28।।
एक धर्म जो द्रव्य है, गति सहकार अरूप।
लोकप्रमांणो जडतरो, जू भासक चिद्रूप।।29।।
एक अधर्म जु द्रव्य है, लोकप्रमाण अनादि।
थितिसहकारो जडपरो, तो बिनू सर्व जु वादि।।30।।
एक प्रकाशोनंत धर, लोकालोक अरूप।
अनंतप्रदेसी तो बिना, को भासै जगभूप।।31।।
है जु आकाशो जडवरो, अवकास जु परदान।
तो बिनु एक न कांम को, तू चिदकास प्रधान।।32।।
एक प्रदेसी काल जो, वर्तन लक्षण रूप।
है जु अरूपो जड प्रभू, तू नायक चिद्रूप।।33।।
अमिलन शक्ती काल जौ, है जु असंख्याताणु।
एकाकाश प्रदेश मैं, एकाणु जु बखांण।।34।।
लोक जु वाहरि है नहीं, लोकाकाश जु मांहि।
तू जु लोक कौ नाथ है, सब दूरौ सब पाँहि।।35।।
एक जु परमाणू प्रभू, एक प्रदेसी रंच।
मिलन शक्ती बहुधा लिये, नंतप्रदेस जु संच।।36।।
जडरूपी मूरति धरैं, पुद्गल द्रव्य अनंत।
अुणखंधा द्वै भेद जे, तू भाषै भगवंत।।37।।
तेरे पुद्गल है नहीं, तू चेतन चिदभाव।
षट्द्रव्यनि कौ नाथ तू, है परकासक राव।।38।।
एक प्रदेसी काल कै, काया नांही होय।
पंच जु अस्तीकाय मैं, तुम नहिं लीयो सोय।।39।।

द्रव्यनि मैं राख्यो तुमैं, षट् मैं भेल्यो नाथ।
षटद्रव्या पंचास्तिका, तू भाषै जुगनाथ।।40।।
एक प्रदेश प्रमांण परि, परमांणू मिलि खंध।
निपजै तातैं काय है, तू भाषै जगबंधु।।41।।
एक जु परमाणू बहुरि, खंध प्रदेस विभेद।
खंद देश खंधादि जे, तू भाषै जडभेद।।42।।
इनमैं सूक्षमसूक्षमां, द्वितिय जु सूक्षम भेव।
त्रितियो सूक्ष्मथूल है, थूल जू सूक्षम लेव।।43।।
इह चौथो भेद जु कह्यो, पंचम थूल जु रूप।
छट्टम थूल जु थूल है, तू भाषे जिनभूप।।44।।
पुद्गल द्रव्य प्रकार ए, जीवा फुनि द्वै भेद।
हैं जु सिद्ध संसारिया, नित्य अनंत अछेद।।45।।
सिद्धा एक जु रूप है, तिनकै रूप न और।
संसारी भारी भ्रमी, करहि सदा भवदौर।।46।।
यद्यपि चेतन गुण धरें, सादृश सर्व जु जीव।
कर्म प्रपंच विभेदतैं, दशा अनेक जु लीव।।47।।
संसारी तैं मुक्त हैं, मुक्ता फिरि नहिं आंहि।
सदा अनंती रासि द्वै, तू भाषै सक नांहि।।48।।
संसारी मैं भेद बहु, भव्याभव्य अनेक।
सैंनी और असंज्ञनी, त्रस थावर अविवेक।।49।।
भव्या मुक्त दसा लहै, अभवि न मुक्त कभी जु।
भव्य भर्यो भी जग रहै, खाली होय न छीज।।50।।
संसारी पुद्गलमिले, सिद्धा पुद्गलवीत।
पंच सरीरी नास करि, सिद्ध भये जगजीत।।51।।
जीवा सब मूरति बिना, चिद्रूपा चिन्मूल।
हैं जु असंखि जु देसिया, लोक बसै या मूल।।52।।
पुद्गल एक प्रदेसिया, द्वै त्रय भेद अनंत।
संखि असंखि अनंतधर, तू भासै भगवंत।।53।।

धर्म अधर्म उभै जड़ा, हैं जु असंखि प्रदेस।
आकाशो अवकाश जो, है जु अनंत अशेस।।54।।
और द्रव्य मेरौ कछू, नांहि बिगारैं नाथ।
पुद्गल मेरौ रिपु लग्यो, नादि काल तैं साथ।।55।।
पुद्गल के जे भेद हैं, तिनतैं मोहि छुडाय।
करि जु अपुद्गल तास कौं, अपणौं रूप दिखाय।।56।।
षट्द्रव्यनि मैं पंच जड, एक सचेयण सार।
मूरति पुद्गल एक हैं, पंच अमूरतिधार।।57।।
बहुपरदेसी पंच हैं, काल जु एक प्रदेश।
अप्रदेस काया नहीं, काया बहु परदेस।।58।।
तीन द्रव्य ए एक हैं, धर्म अधर्म अकास।
ए तीन्यो जु अनेक हैं, पुद्गल काल चिदास।।59।।
परिणांमी तौ सब सही, परि परिणांमी दोय।
परपरणति दोई धरैं, च्यारि स्वभाव जु होय।।60।।
स्व स्वभाव परणति तजी, जीव पुद्गला दोय।
परपरणतितैं श्रुति कहैं, परिणांमी द्वै होय।।61।।
च्यारि अपरिणामी सही, पररूपा न कभी जु।
स्वस्वभाव परणति धरै, परिणामी जु सही जु।।62।।
क्रियावंत दौऊ भनैं, परकिरिया परवेस।
जीव र पुद्गल बिनु सबै, अक्रिय रूप अभेस।।63।।
च्यारों अक्रिय द्रव्य जे, निज क्रिया करतूति।
निजकरणी तजि पार की, धारैं नांहि प्रसूती।।64।।
क्षेत्री एक अकास है, सबकौं क्षेत्र जु देय।
पंच अक्षेत्री जानिये, जिनभाषित उर लेय।।65।।
अपनौं अपनौं क्षेत्र जौ, अपने अपने देस।
सबही धारैं छह प्रमा, क्षेत्री हैं जु अशेस।।66।।
परि औरनि कौं जायगा, देय सके नभ एक।
तातैं क्षेत्री एक है, और अक्षेत्री नेक।।67।।

सर्वाकाश अनंत जो, तेरे अंस जु माय।
तातैं क्षेत्री तू सही, श्री जिन त्रिभुवन राय।।68।।
नित्यद्रव्य ए सरव हैं, परि हैं दोय अनित्य।
पर धारन विछुरन थकी, जीव च कर्म अनित्य।।69।।
द्रव्य थकी सब नित्य है, पर्जय परणति भंग।
नित्यानित्य विभेद सब, तू भाषै शिव संग।।70।।
कारण पंच जु जीव कौं, जीव अकारण जोय।
व्यवहारैं जीवो कभी, जीव सहाय जु होय।।71।।
निश्चय कारण आपुनौं, धरहि सकल जु द्रव्य।
परकारण व्यवहार है, इह भाषै यति द्रव्य।।72।।
उपादांन कारण सबै, अपुनौं आपु धरंत।
सर्व द्रव्य असहाय हैं, इह भाष्यो भगवंत।।73।।
निमित जु कारण पार को, बहिरंगो जु सहाय।
कर्ता अपने भाव के, सकल द्रव्य समुदाय।।74।।
परभावनि के कारका, जीव च पुदगल दोय।
तातैं कर्ता ए सही, और अकर्ता होय।।75।।
सर्वगतो आकाश है, और जु लोकगता जु।
ज्ञानापेक्षा जीव भी, सर्वगतो विगता जु।।76।।
एक सबोध जु जीव है, पंच अबोध जडा जु।
द्वै अशुद्ध चौ शुद्ध है, एक जीव अजडा जु।।77।।
ए षट्द्रव्य जु एकठे, वसैं सदा के पासि।
रहित प्रवेसा सब सही, कोइ न किस ही वासि।।78।।
सिद्धा शुद्धा स्वभाव जो, शुद्ध गुणा समुदाय।
संसारी जु अशुद्ध हैं, गुण विभाव परजाय।।79।।
शुद्धनया शुद्धा सबै, व्यवहारें द्वय भेद।
अर्थ जु पर्याया धरें, षट्द्रव्य जु अछेद।।80।।
व्यंजनपर्यय दोय कै, जीव जु पुद्गल ठीक।
और न व्यंजन धारहिं, जिन भास्यो न अलीक।।81।।

च्यारि द्रव्य अर्थहि धरैं, व्यंजन पर्जय नांहि।
दोय द्रव्य धारहिं उभै, यामैं संशय कांहि।।82।।
धर्माधर्म जु काल नभ, ए केवल इक अर्थ।
धारहिं व्यंजन ना धरै, इह रचना न निरर्थ।।83।।

(चौपई)

अर्थ जु पर्जय कहिए सोय। द्रव्यतणी निज आकृति जोय।।
अर्थतणी परिणति को नाम। अर्थ जु पर्जय भासै राम।।84।।
या बिनु कोइ न द्रव्य जु होय। षट्द्रव्यनि मैं पइए सोई।।
व्यंजन परगट मूरति भाव। नश्वर पार जु तांत्रि विभाव।।85।।
याके धारक च्यारि न होय। जीव च पुदगल धारहि दोय।।
इह षट्द्रव्य तणौं व्यवहार। लोकाकाश मंही निरधार।।86।।
लोक परैं एको जु आकास। जाकौ नाम अलोकाकाश।।
लोक बिना नहिं पाँचो थोक। इह भाषै जिनवर स्वविलोक।।87।।
इह जड चेतन कौ विसतार। भाषै सर्वातम गुणधार।।
ए षटद्रव्य अनादि अनंत। कोउ न काकौ करता कंत।।
मैं षटद्रव्य मांहि मतिमंद। मोहि सुधारे जिनवर चंद।।88।।
सप्ततत्त्व मैं जीव अजीव। ए तौ या विधि भाषै पीव।।
अब तुम सुनहु जु आश्रव बात। जीवनि कौ दुखदायक घात।।89।।
मिथ्या अव्रत अवर कषाय। जोग प्रमादादिक अधिकाय।।
इन मैं जोग शुभाशुभ भेद। और सबै अशुभा अतिखेद।।90।।
इन द्वारै ह्वै कर्म जु आय। आश्रव भाव धरैं दुखदाय।।
आश्रव होय र बंध धरेय। जड़ चेतन कौ एक करेय।।91।।
बंध थकी भरमैं भव मांहि। संवर आश्रव रोक करांहि।।
संवर मुक्तितणौं है मूल। आश्रव बंध बढ़ावै भूल।।92।।
निर्जर पूरव बंध जु हरै। संवरनौतम रोध जु करै।।
तब प्रगटै वह मोक्ष जु तत्त्व। ताकौ नायक है अति सत्त्व।।93।।
ए सप्त जु तत्त्वा परसिद्ध। इनको ज्ञायक जिनवर सिद्ध।।
पुण्य पाप ए दौऊ जांनि। तब नवपद अर्था पहचांनि।।94।।

आश्रव बंध मांहि द्वै गिनैं। पुण्य पाप नहिं न्यारे भनैं।।
तब सप्त जु तत्त्वां कहिये जु। पुण्य पाप मिलि नव गहिये जु।।95।।
षट्द्रव्या पंचास्ति जु काय। सप्त जु तत्त्वा नवपद भाय।।
ए सब भेद कहै भगवान। तौ बिनु और न कोई बखान।।96।।
तू एको शून्या अवरा जु। एका बिनु शून्या नहि काजु।।
एक न कांमि न आवै शून्य। जौ तू होइ न एक अशून्य।।97।।
एक जु पाता त्राता तू जु। तो बिनु मात न तात न दूज।।
एक बंधु जगबंधु तु ही सु। सब बंधनि तैं न्यारौ ईशु।।98।।
एक शक्र इंद्राधिप नाथ। तू ही शत शक्रा तुव साथ।।
एक शशी अमृतधर तू जु। जगभाने एको हरिपूज।।99।।
एक सिंधु तू और न सिंधु। अति जु अथाह रतनधर बंधु।।
एक सु मेरो गिरपति तू जु। और न मेरो जडपति दूज।।100।।
एक अखिल भरि पूरिद ईश। है तू और न कोई अधीस।।
एक रतन तू अवर न मणी। पाषाणातम मणिगण घणी।।101।।
एक राव तू हे जगनाव। एक भूप तू ही बिनु दाव।।
एकपती स्वामी सांई सु। एक जु राजा सु गुंसाई सु।।102।।
एक राय तू छायो अती। छाया वर्जित जगजित पती।।
एक भेद बहु भेदमयो जु। एक बोध इक भाय रह्यो जु।।103।।
एक धन्य तू सबकै परै। एकानन्य स्वरूप जु धरै।।
एक रम्य तू और न रम्य। सबकै निकटि र सकल अगम्य।।104।।
एक नम्य तू और अनम्य। एक उपादेय परम जु रम्य।।
अवर सकल जग हेयो सही। इह श्रीगुर नै हमसौं कही।।105।।
जिनवानी इह शबद कहेय। मोक्ष जु रसिया एक जु सेय।।
एक धनी नहिं और जु धनी। इह पतिव्रत जु धारहि मुनी।।106।।
ए कहिये आगम कै मांहि। विश्नु नाम यामें सक नांहि।।
तू जिन हर हरि विष्णु महेश। शिव शंकर सुगतो जु जिनेश।।107।।
तो बिनु ईश्वर और न कोय। एक प्रभू नहिं दूजौ होय।।
एकेंद्री पंचेंद्री लौं जु। सबकौ पालक तू जु सु सौंज।।108।।

एकेंद्री के भेद जु पंच। थावर काया बोध जु रंच।।
पृथ्वी अप अगनी अर वायु। वनसपती मिलि पंच सु भाय।।109।।
वेंद्री तेंद्री चउ पंचिंदि। ए त्रस काया भेद अनिंदि।।
भाषैं जिनवर जग कौ राय। इनकौ रक्षक नाहिं जु पाय।।110।।
थिति उतकिष्टि जु इनकी देव। या विधि भाषै नाहि अछेव।।
भू काया द्वा वीस हजार। जलकाया फुनि सप्त हजार।।111।।
वरष इते फुनि अगनि दिना जु। तीनहि आगैं नांहि गिना जु।।
तीन हजार जु वरसा पौंन। वनफति दस सहसा सठमौंन।।112।।
प्रत्येका वनफति कौ काय। दस सहसा आगैं न रहाय।।
साधारण बनफति कौ काय। दस अठारम भाग गिनाय।।113।।
द्वेंद्री द्वादस वर्ष प्रमांन। तेंद्री दिन गुनचास जु जान।।
चौरिंद्री षटमास सही जु। इह उतकिष्ट सु थिति जु कही जु।।114।।
पंचेंद्री मैं भोगभुवा जु। नर पशु दौऊ सुख तनु भाज।।
तीन पल्य आगैं नहिं रहै। इह उतकिष्ट थिती जिन कहै।115।।
कर्मभोमियां नर पशु कौ जु। कोडि जु पूरव गनि इतनौ जु।।
उतकिष्टी थिती है सु प्रमान। जघनि जु अंतमहूरत मान।।116।।
पंचेंद्री नारक अर देव। सागर तेतीसा जु कहेव।।
इह उतकिष्ट जघनि अब सुनौं। दस जु सहस्र वरष ही मुनौं।।117।।
एकेंद्री तैं लोक जु भर्यो। खाली नांहि जु रंच न कह्यो।।
तीनैं लोक महैं एकेंदि। मध्यलोक बिनु नहिं विकलेंदि।।118।।
देवा ऊरधलोक हु रहै। कैयक मध्य जु लोक हु गहै।।
अधोलोक हू मैं देवा जु। नारक सर्व अधो जु भुवा जु।।119।।
मनुज मध्य ही लोक बसंत। दीप अढाई मांहि सहंत।
दीप असंख्याते सु तिरा। भरिया नर कौ नांव न चिरा।।120।।
जलचर मच्छादिक जे जीव। तीन समुद बिनु कहइ न पीव।।
लवणोदधि कालोदधि दोय। तीजौ अंतिम जलधि हु जोय।।121।।
भोगभूमि मैं जलचर नांहि। विकलिंद्री कौ नाम न पाँहि।।
कर्मभूमि बिनु विकलत्रया जु। नाहि जु भाषै श्री जिनराज।।122।।

कर्मभूमि के दीप अढाइ। कै अंतिम आधौ जु कहाय।।
नागेंद्राजल तैं परभूमि। कर्मभूमि भोग जु नहिं भूमि।।123।।
आधौ अंतिम दीप विथार। पैलौ कर्म जु भूमि विचार।।
सारौ अंतिम सिंधु जु कर्म। भोमिहि धारै नांहि जु भर्म।।124।।
एसे भेद कहै जिन तू जु। सब भेदनि तैं न्यारौ पूज।।
लोकनाथ तू लोक प्रधान। लोकालोक विलोकक भान।।125।।

(पद्धड़ी)

एकत्वगम्य एकत्वलीन। एकत्वमूल एकत्वचीन।।
एकत्वधार एकत्वसार। एकत्वपार एकत्वकार।।126।।
एकत्वतंत्र एकत्वमंत्र। एकत्वयंत्र एकत्वमित्र।।
एकत्ववास एकत्वभूप। एकांत निवासी जपहिं रूप।।127।।
एकांतवाद बौद्धादि जेहु। तिनकौ दूषक नैकांत लेहु।।
एकांतवाद क्षणकादि मूढ। पाँवै नहि तेरो पद जु गूढ।।128।।
एकांतदेव एकांत नाश। इह अदभुत गति तेरी विभांस।।
एकांतध्यानपति धीर तू जु। एकांत जु मिथ्या रहित पूज।।129।।
तू एनविधुंसक एनपार। एन जु कौ अर्थ जु पापचार।।
तेरै नहि पापा एक कोई। तू नि:पापी आपो जु होइ।।130।।
तू एन विहंडक एनमार। तू एन उथापक तत्त्वसार।।
तू एनतिमर घायक जिनिंद। तु परम प्रकास जु एक चंद।।131।।
तै एन जु निन्दे पुण्य थापि। तैं पुण्य हु निन्दे तत अलापि।।
तू एक पुरिष जग मांहि देव। लिंगत्रय रहितो परम भेव।।132।।
औरे सब कापुरिषा जु होई। कालैं सब मारे जोइ जोई।।
तू काल जु जीतो कामजीत। तू सर्व जु जीतो सर्ववीत।।133।।
एको जु तुही गुणभरित ईश। तू एक अनंतो हरि हरीशा।।
तू एकविद्य विद्या विशाल। तू बहु जु विद्या दे निहाल।।134।।
तू एक राम सरवत्र व्याप। सुनि विनति मोरि हु मेटि ताप।।
तू एकीभाव अनंत भाव। तैं चामीकर तन वादिराव।।135।।

कीयउ अर वाकै उभय लोक। तैं ही जु सुधारे नाथ लोक।।
जे तोहि जु जपिहै स्वांमि शुद्ध। मनसा वच काया है प्रबुद्ध।।136।।
ते ताहि जु पाँवैं पावनेश। तू भुक्ति जु मुक्ति जु वितरणेश।
एणांक कहावै चंद देव। तू चंदपती चंद्रो अछेव।।137।।
एणांक प्रमुख सब ज्योतिचक्र। तोही इक सेवहि है अवक्र।।
एणांक वदन जगज्योति देव। तेरै नहि चंद्रमुखी अभेव।।138।।
एणांक पूज्य एणांक स्वांमि। एणांक जीत ज्योतीसं धांमि।।
एणांक कोटि परकास मांहि। तुव चरणकमल सम ज्योति नाहि।।139।।
एणो जु कहावै मृग कुरंग। तू मृगनैंनी वेदो अरंग।।
एणादिक कौ तू रछिक पाल। तू एणघात टारक विशाल।।140।।
जे हिंसक जीवा एणमार। ते तोहि न पावै शिव बिहार।।
एडक बकरे कौ नाम ठीक। बकरा मारहि ते सम खटीक।।141।।
एडकघाती नरकां जु जांहि। ते तोहि न पाँवैं नास पाहिं।।
तू जीवनि कौ पालक दयाल। पापी नहि पाँवहि तोर नाल[1]।।142।।
एणा एडक अति अबल जीव। इनके घातक निरदय सदीव।।
बिनु करुणा तोहि न पावई जु। करुणा करि तोहि जु भावई जु।।143।।
एण जु घात सु महपाप होय। एडक हिंसक नर कु गति जोय।।
एतत भासक जिनदेव देव। हिंसा मत टारक जासु देव।।144।।
एकादस पडिमा श्रावकी जु। षष्ठम लौं जघनि जु भेद लीज।।
सप्तम अट्ठम नवमा जु मध्य। दस ग्यारम उतकिष्टी विसुद्ध।।145।।
इनमैं जु प्रवीन करौ सु मोहि। फुनि देहो मुनिपद भजहुँ तोहि।।
एकादशमीधर मुनि समाजु। ते तेरे दास जु जगतराज।।146।।

(त्रोटक)

एकदशमौं गुनथांनक जो, उपशम श्रेणी धरहैं मुनि जो।
ताकौं फरसे फुनि पतन करा, सीघ्र जु तोहि न पावै सुघरा।।147।।

---

1. तोर नाल = तेरा साथ

कघु अंतरि तोहि लहैं जु सही, क्षपका मुनि शीघ्र जु तोहि लही।
क्षपका एकादश मैं न धसैं, दसमांथी द्वादशघां विलसैं।।148।।
फु नि पाँवहि केवलज्योति प्रभू, आवैं तुव पुरि ह्वै लोक विभू।
हम एकादश बिनु द्वादशा मां, जांहहि केवल सब बंध वमां।।149।।
गुनथांनक फरसि जु रहित जु ह्वै, आवैं तुव पुरि तजि दोष जु ह्वै।
एही एही मुझ उर वसि तू, देहो जिननायक अष्टम भू।।150।।
एतत उपदेस जु दायक है, जीवा निज ध्यावहु तत्त्व वहै।
काहू की एकादसि न निभै, तेरी जु इकादसि है जु अभै।।151।।
तू एकदसा निति है प्रभू जी, एकादश रुद्रनि कौ पति जी।
एकादस दास जु तेरहि जू, तोही जपि पावहिगे शिव जू।।152।।

(सोरठा)

एकादश भनि अंग, अर दस पूरव लग भनैं।
तऊ हौंहि व्रत भंग, देखौ रुद्रनि की दसा।।153।।
एकादश ही रुद्र, एकादश लौ श्रुति भनैं।
फु नि जु तजैं मुनिमुद्र, दश पूरव भनि लुब्ध ह्वै।।154।।
तदभव धारहि भुक्ति, भोगी ह्वै मुक्ति न भजै।
इह प्रभु तेरी उक्ति, रुद्रा मुक्ति भवांतरै।।155।।
निकट भव्य सब रुद्र, पदवीधर पुरुषा बड़े।
कहा भयो मुनिमुद्र, तजि विषया संगहि लगे।।156।।
धारहिगे जिनमुद्र, पाँवहिगे जिनपुर सही।
भगवत दासा रुद्र, इह निश्चय धारौ भया।।157।।
साधु साध्वी संग, पाय हौहि रुद्रा सबै।
धरि जतिपद करि भंग, भंगुर विषया आदरैं।।158।।
एही एही नाथ, मैरै घट उद्योत करि।
तजौ न तेरौ साथ, ऐसौ करि तुव पुरि रहूं।।159।।
एक वीस गुण धार, श्रावक लज्यादिक लिये।
तिनकौ दास अपार, करि हरि मोहि जु शांतधी।160।।

श्रावक गुण इक्कीस, मुनि जु गुणा अठवीस हैं।
तू भाषै जगदीस, तू ही तारै मुनिगना।।161।।
दै इकवीस गुना जु, श्रावक के मौकौं जिना।
फुनि करि मुनि जिनराज, और कछू माँगूँ नहीं।।162।।
एक विंसती नाथ, सहस जु वरषा पंचमौ।
काल जु दुखम साथ, याके अंतिम लौ मुनी।।163।।
षष्टम दुखम दुख, एकविंसती सहस जो।
वरषा रंच न सुख, तामैं तेरौ धर्म नां।।164।।
ताके अंति प्रलै जु, प्रलै पछैं पुनि षष्टमां।
फु नि पंचम विलसै जु, ताके अंति जु तुव मता।।165।।
एक जु त्रिंशत नाथ, सागर नव ग्रींवा थिती।
यद्यपि वह बडहाथ, पाई परि तू ना लहो।।166।।
प्रलय पछैं इकताल, सहस जु वरषा धर्म नहि।
वरष हजार विशाल, फुनि पंचम वाकी रहै।।167।।
तब चौदा कुलकार, कुलधर दैवा ऊपजै।
तिनतैं कछुक विचार, धर्म कर्म का प्रगट ह्वै।।168।।
पीछैं फुनि चउथा जु, तामैं तीर्थंकर प्रभू।
प्रगटैं श्री जिनराज, उभै धर्म कर्तार जे।।169।।
वीस जु कोडाकोडि, सागर मान जु कलप है।
तामैं ठारा कोडि, भोगभूमि निश्चय कही।।170।।
दोय जु कोडा कोडि, कर्मभूमि निश्चय रहै।
ठारा दोय जु जोडि, कलप भयां परलै सही।।171।।
दश क्षेत्रनि मैं होय, और ठौर परलै नहीं।
इह भाषक तु कोय, प्रलय वितीतो शश्वतो।।172।।
एकावन्न जु कोडि, अट्ठ लख चउरासिया।
सहस जु छ सै जोडि, सतवीसा आगलि धरौ।।173।।
एक जु पद के श्लोक, एते तू भाषै सुधी।
तेरौ मत न स्तोक, अमित अपार जिनिंद तू।।174।।

एक शतक वारा जु, कोडी और तियासिया।
लक्ष जु गिनती साज, ठांवन सहस र पाँच ही।।175।।
एते पद विस्तार, एकक पद के श्लोक वै।
तू भाषै जगतार, एक पार भव कै तुही।।176।।
एक साठि परि एक, वासठि मारगणा जिके।
तू भाषै सु विवेक, एक विवेकी तू सही।।177।।
एकहत्तरि परि एक, है जु बहत्तरि सब कला।
तू भाषै जु अनेक, कलाधार तू कलबिना।।178।।
एक्यासि, चउरासि, कै पच्यासी लगि रहैं।
तेरम गुण सुखरासि, जुरी जेवरी सम बला।।179।।
प्रकृति सबै ही चूरि, पावै तेरो पुरजिको।
तू जु रहो भरपूरि, एकानव भी क्यौं न है।।80।।
तैं तारे जगनाथ, एकोत्तर शत ऋषभ सुत।
लये आपुनैं साथ, एकरूप करि सबनि कौं।।181।।
एक आतमां मोहि, करि प्रभु तू जु अद्वित्तियो।
ज्यौं ध्यांऊ हरि तोहि, तोसौं होय अभेदजी।।182।।
एकसतक सतरी जु, दीप अठाई मैं सवै।
क्षेत्र जु गिनति करी जु, इह नरलोक प्रवांन जी।।183।।
एक एक क्षेत्रैं जु, एक एक विजयारधा।
एक एक वन मैं जु, तेरौ चैत्यालय सही।।184।।
अजड प्रसंग करे जु, हरि मेरे जु विभाव तू।
हो हरि निज मैं ले जु, जिन मूरति करि शिव प्रभू।।185।।
जनम मरन की टेव, मेटि दयाल कृपा करे।
दै अपनी निज सेव, करि जु अछेवो देव तू।।186।।
एष एव परसिद्ध, बैठो हमरै मांहि तू।
प्रगट होहु जिन सिद्ध, सिद्ध दसा हमरी करे।।187।।
एही तोतैं नाथ, मांगू और न एक जी।
तू छुडाय बड़हाथ, कर्मपासि तैं मोहि जी।।188।।

एतत विनती राव, सुनो अनंत जु कर्ण जी।
देहु आपुनौं भाव, गुनह माफ करि भूल की।।189।।
हरे हरौ भव भाव, देहु जिनागम भाव जो।
निज दौलति दै राव, और न दौलति चाहिये।।190।।

इति श्री एकाराक्षर संपूर्णम्।



आगै ऐकाक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो द्वादशम स्वर छै। सर्व ककारादि अक्षरा कै दोय मात्रा दीजें तैंठे यो स्वर प्रगट बोलै। कै असौ उच्चार कीयो तहां कै विषै ऐकौ उच्चार आयो, ईही भांति सर्व अक्षरां मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं ऐकार महेश्वर कौ नाव कह्यो, सो महाईश्वर महादेव भगवान ही छै।

(श्लोक)

महेश्वरं जिनाधीशं, ऐकारांकमतीश्वरम्।
वंदे देवाधिपं देवं, धर्मचक्राधिनायकम्।।1।।

(दोहा)

ऐ कहिये सिद्धांत मैं, नाम महेश्वर देव।
तुम ही देव महेश्वरा, और न दूजौ भेव।।2।।

(चौपई)

ऐक्यातम तू ऐक्य स्वभाव। ऐक्यानैक्य अकथ्य प्रभाव।।
ऐहिक भाविक भूत जु वस्तु। तू त्रय कालि सु ध्यापक शस्त।।3।।
तू ऐश्वर्यस्वरूप अपार। तू ऐश्वर्यनिरूपक सार।।
तू ऐश्वर्यनाथ जगनाथ। तू ऐश्वर्य धार सु साथ।।4।।

तू ऐश्वर्यहरो हर देव। तू ऐश्वर्यधरो जिनदेव।।
कर्मनि कौ ऐश्वर्य जु हर्यो। ज्ञानैश्वर्य अनंत जु धर्यो।।5।।
तू ऐश्वर्य टेव धुर तैं जु। तो हि न जान्यों उर धरि मैं जु।।
तु ऐश्वर्य भेव निज सेव। तू ऐश्वर्य जु भूप अछेव।।6।।
तू ऐश्वर्य मूल शिव मूल। तू ऐश्वर्य थूल जगचूल।।
तू ऐश्वर्य धुरंधुर ईश। तू ऐश्वर्य परंपर धीस।।7।।
जगत पार तू मार जु मार। मार जु नांम कांम परचार।।
तू ऐश्वर्य स्वामि जगस्वामि। तू ऐश्वर्य थोक विसरांमि।।8।।
तू ऐश्वर्य हर्म्य शिव सौध। तोहि न पाइ सकैं सठ बौध।।
तू ऐश्वर्य लोक स्वविलोक। तोहि न पावैं नास्तिक थोक।।9।।
तू ऐश्वर्य योगि योगीश। तू ऐश्वर्य पार जगदीस।।
तू ऐश्वर्य कार जगभार। तू ऐश्वर्य चरन अधिकार।।10।।
तू ऐश्वर्य तंत्र जगमित्र। तू ऐश्वर्य तार शिवयंत्र।।
तू ऐश्वर्य राय शिवदाय। तू ऐश्वर्यकाय अतिभाय।।11।।
तू ऐश्वर्यभाग भगवंत। ते ऐश्वर्य भेद जगकंत।।
तै ऐश्वर्य तज्यो वहिरंग। तै ऐश्वर्य गह्यो निज संग।।12।।
तोहि लखें सबकौ ऐश्वर्य। मात होय तू अति ऐश्वर्य।।
तू ऐश्वर्य पुंज सुखकुंज। तोहि न ग जिसके परगंज।।13।।
तू ऐश्वर्य पूर अतिगुंज। तू ऐश्वर्यभूर निज जुंज।।
ते ऐश्वर्यदूर शिवपूर। ईश्वरता गरव जु चकचूर।।14।।

(छप्पय)

तू ऐश्वर्य सुराण भाण ऐश्वर्य जु तू ही।
तू ऐश्वर्य सुजांण ताण ऐश्वर्य समूही।।
तू ऐश्वर्यसथान दान कर ऐश्वर ताकौ।
तेरौ सौ नहि पाँण तू जु हर मत्सरता कौ।
तू ऐश्वर्य प्रमाण है, इंद्र चंद्र ऐश्वर्य कौ।
ज्ञान खंध शिवकंद तू, तू नायक सौंदर्य कौ।।15।।

तू ऐश्वर्य अनंद नंद वृद्धी कर ईशा।
है ऐश्वर्य जु वृंद सेय ऐश्वर्य पतीशा।।
तेरे छंद न बंध छंद भेद जु तू भाषै।
अलंकार इत्यादि काव्य परकास जु राषै।
तू ऐश्वर्य सुकंत है, तंत मंत ऐश्वर्य कौ।
तू ऐश्वर्य जु वंत जी, तो सम नां सौंदर्य को।।16।।
तू ऐश्वर्य सुमेर सिंधु ऐश्वर्य जु ताकौ।
तू ऐश्वर्य प्रबंध बंधहर घर प्रभुता कौ।।
तू ऐश्वर्य जु प्रेर धाम ऐश्वर्य तनौं जी।
तू ऐश्वर्य अकल्प कल्प ऐश्वर्य घनौ जी।।
तू ऐश्वर्य प्रजल्प है। कल्प कल्पना नांहि को।
तू ऐश्वर्य अहेय हैं, ध्येय सेय हम मांहि जो।।17।।
तू ऐश्वर्य सुरांम ज्ञेय ज्ञायक इक तू ही।
पर ऐश्वर्य विराम कामहर धाम समूही।।
तो तैं सब ऐश्वर्य ऊपनौ तात जु तातैं।
तू ऐश्वर्य सुदात जहि एको नहिं घातैं।।
त्राता पाता मात तू, ताता तारि जु सिंध तै।
घाता नांहि जु जीव कौ, धाता राखि जु बंधतै।।18।।
तू जगत कौ छात छात ऐश्वर्य जु केरौ।
तू नहि काकौ जात गात कौ नाम न नेरौ।।
तू ऐश्वर्य सु गात खानि रतनत्रय तू ही।
दानि न तोसौ और तू जु दे ऋद्धि समूही।।
ऋद्धि वृद्धिधर सिद्धि तू, सदा समृद्धि भर्यो प्रभू।
चूल लोक कै तू रहै, घटि घटि व्यापि रह्यो विभू।।19।।
तू जु लोक कै मांनि ज्ञान परमान जु तूही।
तू जु ज्ञेय कै मांनि पुरष परमान समूही।।
तू ऐश्वर्य सु भोग, तू जु जिन तावत मात्रो।
तू ऐश्वर्य सजोग पूज हरि परम सुपात्रो।।

तू ऐश्वर्य जु सागरो, पोत भवोदधि की तुही।
गोत एक ऐश्वर्य कौ, गोतगात तेरै नहीं।।20।।

(गीता)

ऐश्वर्यभागी अति विरागी नमो तोहि जु एक कौं।
ऐश्वर्यत्यागी बहिरभागी लगनि लागी सेव कौं।।21।।
ऐश्वर्य वासा तू निरासा अति उदासा आस त्वं।
अवर जगत की आस झूठी करि हमैं निज दास त्वं।।22।।
ऐश्वर्यरासी अतिविलासी परमभासी धीर त्वं।
अतिगति उल्हासी पति सुकासी पास पारस वीर त्वं।।23।।
ऐश्वर्य देवा ऋषभ देवा मुनि जु लेवा नाथ त्वं।
अतिगति विकासी अवधिवासी पति विनीता साथ त्वं।।24।।
आदिनाथा लंबहाथा षोडुसा कनका प्रभू।
षोडशाभरणा वितीता सोलकारणका विभू।।25।।
वीर वीरा धीरधीरा रहितचीरा जो स्वभू।
वीरनाथा धीर साथा, पावापुर नायक विभू।।26।।
अचरचारा अकरकारा, वसुपूजी कीयउ पूजि तै।
पुर जु चंपा अति अचंपा तोहि तैं नहि दूजि तैं।।27।।
वासुपूज्या तू अदूज्या वासवै सु वि पूजि त्वं।
देहु पूजा ह्वै अदूजा एक भाव अदूजि त्वं।।28।।
हस्तिनेशा परमं ईशा हस्तिनापुर जासु तैं।
शांति देवा कुंथ देवा अर जु देवा भास तैं।।29।।
द्वारिकेशा नाथ शेशा रहित लेशा ईश त्वं।
नेमिनाथा नियमसाथा लंबहाथा धीश त्वं।।30।।
ऐक्य रूपा नैक्यरूपा परमरूपा रूप त्वं।।
लोकभूपा तू निकूपा है अनूपा भूप त्वं।।31।।

(मंदाक्रांता)

एरावंतो गजपति महा इंद्रसेना विभूषो।
ताकौ दाता जिनपति प्रभू ज्ञानमूलो अदूषो।
इंद्रा सौ जे सब करि तुही पूजितो है अरूषो।
तो सौ तूही अवर न परो नांहि लूषो अलूषो।।32।।
ऐरावंतो परि चढ़ि तु ही स्नानकारी सुमैरो।
ऐरावंतेश च सुरपती तोहि ध्यावै घनेरौ।
सौधर्मो जो फुनि शचि जिका दंपती धाम तेरौ।
पावै तोतैं इक भव धरे, तू जु है साधु केरौ।।33।।
तेरे भक्ता सुरपति दशा नांहि चाहैं अभूजी।
तोतें ऐरावत बहु लहैं तू जु है नाथ भूजी।।
दासा तौकौ दृढ़ मन चहैं पाव सेवै विभूजी।
पादाब्जेषु अलि सम जना तत्त्वरूपा प्रभू जी।।34।
कर्मारण्यं दहति सुजनो भव्य जो तौहि ध्यावै।
पावै तोकौं तुवपद रतो ह्वैं विरक्तो जु गावै।
नागेशेशो तुव तजि कभी ओर कौं नाहिं भावै।
जिह्वानेका करि तुव भजे एक तोही रिझावै।।35।।
हूवो दासा इभपति पती, इंद्र नेत्रा हजारी।
तोही लोकै तुव जस कहै तोहि गावै जु भारी।।
नाचै राचै तुव पुर प्रभु ऐक्य तू है विथारी।
ऐरावंतादिक सब तुही, क्षेत्र भाषै विहारी[1]।।36।।

(चौपई)

सप्त जु क्षेत्रा भरतैरावत। हिमवत हरि विदेह तू गावत।
रम्यक हैरण्यवतादिक जे। तू जु विभासै करुणादिक जे।।37।।
ऐरावत भरता द्वै सम हैं। भोगकर्म भूमीधर गम हैं।।
पंचमेर के पंच जु भरता। पंचैरावत तैं हि जु कथिता।।38।।

दश क्षेत्रनि मैं काल जु फिरता। और क्षेत्र मैं इकरस रहता।।
ए सब भेद भाव तू भाषै। तो बिनु भव्य न निजरस चाखै।।39।।
ऐरावत कौ स्वामि जु देवा। तोहि निहारै त्रिप्ति न लेवा।।
देखत देखत भूख न भाजै। तोसौ तू ही रूप विराजै।।40।।
सहस्र नेत्र करि देख्यो तोकौं। तऊ न त्रिप्त भये तुझ धोकौं।।
सहस पाँणि करि भाव जु सांचे। सहस चरण करि इंद्र जु नाचे।।41।।
ऐणयी मृग चर्मादिक जे। तेरै मत नहिं पल मधु मद जे।।
तू निरग्रन्थ तजै सब ग्रन्था। मृगचर्मा नहि वकल न कंथा।।42।।
ऐणेयी छालादिक चांमी। तेरे दास न फरसहि स्वामी।।
ऐणेयी हिंसा तुम मेटी। ऋद्धि सिद्धि सब तुम्हरी चेटी।।43।।
नांम ऐलविल धनपति केरौ। जाकौ नाम जु कहिय कुवेरो।
इंद्र तणौ भंडारपती जौ। जाकैं कहियतु अति जु छती जो।।44।।
सो तुम्हरे दास जु कौ दासा। वाकौ पति सुरपति अति दासा।।
तू जु ऐलविल नाथ सुनाथा। राय एलविल कौ तुझ साथा।।45।।

(दोहा)

तू जु ऐलविल पतिपती, मेरौ रोर मिटाय।
ऋण कर्मनि कौ अति चढ्यो, तू मेटै जिनराय।।46।।
तू जु ऐलविल राज हरि, हरि ध्यावै इक तोहि।
हरि जु नांव है इंद्र कौ, तू हरि कौ हरि होहि।।47।।
तू जु द्रव्य हरि कौ सही, आपै हरि जिन देव।
तू जु ऐलविल कौ धनां, मोहि देहु निज सेव।।48।।
एहिक अर परलोक के, कारिज सुधरै नाथ।
तेरे ही उपदेश सौ, ऐसौ तू बडहाथ।।49।।
ऐहिक अर परलोक की, संपति मोहि न कांमि।
दै संपति निज सास्वती, तू दौलति कर स्वामि।।50।।

इति ऐकाक्षर संपूर्णम्।

---

1. अर्थ—सर्वत्र विहारी सर्वव्यापक जिस्यौं विहारी कहजै।



आगै ओकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो तेरमो स्वर छै। सर्व ककारादिका कै कानै मात्रा दीजै तैंठे यो स्वर प्रगट बोले। को असो उच्चर्यो तब को विषै ओ कौ उच्चार आयो। ईही भाँति सर्व अक्षरां मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नांममाला मैं ओकार ब्रह्मा कौ नाम कह्यो। सो ब्रह्मा विष्णु महेश ए भगवान ही का नाम छै, और देवतांतर नहीं।

(श्लोक)

चतुरानन ओंकारो, जिनो ब्रह्मेश्वरो शिवः।
नान्यो ब्रह्मा हरि रुद्रो, एकदेवो न चापरः।।1।।

(दोहा)

ओ कहिये आगम विषै, ब्रह्मा कौ है नाम।
तू हि जु ब्रह्मा हर हरी, और न दूजो राम।।2।।
ओजस्वी तुव वर्णना, कहि न सकै जगि कोय।
मैं मतिहीन अजांन जो, किम कहि सकिहौं सोय।।3।।
ओजस्वी को अर्थ है, तेजस्वी विख्यात।
तोसौ तेजस्वी प्रभू, और न दूजो तात।।4।।
ओक नाम घर कौ सही, तेरे घर नहि देह।
लोकालोक विषै तुही, व्यापि रह्यो विनु नेह।।5।।
ओक तिहारो ज्ञान है, वास लोक कै सीस।
ओषद भवथिति रोग की, तू एको जगदीस।।6।।
ओप चढावै ओपनी, जैसे सिकला पूरि।
ओप चढावै जीव कौं, तू कर्म जु सब घेरि।।7।।
एक ओपनी जगत की, तू ही और जु नांहि।
काट जु काढै जीव के, धसे जीव कै मांहि।।8।।

ओज धार ते ओज को, पार न पावैं लोक।
सुर नर फनि जगत सब, नंत मिलहि जौ थोक।।9।।
ओज अनंत अपार तुव, तो सम धरहि न ओज।
और दूसरौ जगत में, एक तू जु अधिको जु।।10।।
तू ओजातम अति अमल, मोहि देहु शिव खोज।
ओजमई तू ओजतन, है जु धरै अति ओज।।11।।
ओजस्वरूप अछेव तू, मोहु देहु सु ओज।
भवहरि निजमैं लेहु तू, या सम और न ओज।।12।।
ओष्ठ जु कहिये ओठ कौं, जासौं अधर कहेय।
धन्य ओठ जे जगत मैं, तोहि जपै अधिकेय।।13।।
ओठ न हालैं कर फिरै, मन फेरा मिटि जाय।
अहनिसि अजपा जप जपै, जब तोकौं जन पाय।।14।।
जौ ओठा तोहि जु जपैं, तो औष्ठ सु ऊंचा जु।
जौ प्रभु ए तोहि न जपैं, तौ सत्य जु अधरा जु।।15।।
अधर नाम है नीच कौ, ओठा अधरा ठीक।
जो तोहि न जपि है कुधी, अधरनलौ न अलीक।।16।।
ओहडि राख्यो मोहि जी, मोह जु कर्म वलिष्ठ।
तू जु छुडावै नाथजी, है जु जगत कौ इष्ट।।17।।
ओहडिवौ तेरे नंही, रोक न वांधन मार।
आहडि राख्यो लोक सब, वातवलै आधार।।18।।
ओषद अन्न जु दलान है, ज्ञानदान अतिदान।
अभैदान ए चारि ही, तू भाषै भगवान।।19।।
पात्रदत्ति समदत्ति जो, करुणा सकल जु दत्ति।
तू जु प्रकासै दत्तजी, तू दातार सु सत्ति।।20।।
ओज नाम विक्रम सही, कहै पराक्रम जाहि।।
तो सौ विक्रम साहसी, और न जग के माहिं।।21।।

(सवैया)

ओजभर ओजकर ओजपर ओजतर,
ओजहर ओजधुर ओजवर तू सही।
ओजथिर ओजगिर ओजगुर ओजपुर,
ओजसुर ओजनर सबतें अनंते ही।।
ओजपति ओजतति ओजछति ओजगति,
विक्रम कौ मूल चूल नाथ तू जु है वही।
एक पोत, नंत तार, भौदधी जु मांहि तूही,
लोक सब तेरे साथ प्राक्रमी अतीश ही।।22।।
ओजरूप ओजभूप तेज पुंज सौखिकुंज,
देवदेव देव सेव करैं जाकी सो तुही।
ओज सिंधु लोकबंधु मेरु मरजाद रूप,
ज्ञानधनी नांहि मनी ओजपूर भूर ही।।
तेजवंत महासंत ओज है अनंत तो मैं,
तो सौ नांहि लोक मैं जु दूसरौ विभू सही।
नमो नमो तोहि देव तेरी मोहि दैजू सेव,
तू तौ है अनंत भेव छेव बिनु धीश ही।।23।।

(सोरठा)

तेरी विक्रमता जु, जाकौ नाम जु श्रीरमा।
सोई श्री जिनराज, दौलति और न दौलती।।24।

इति ओकाराक्षरं संपूर्णम्।

औ

आगै औकाराक्षर को व्याख्यान करै छै। यो चौदमौं सुर छै। सर्व ककारादि अक्षरा कै दो मात्रा कानैं दीजे तैठै यौ स्वर प्रगट बोलै। कौ असौ उच्चार

कीयो, तब कौ विषै औ कौ उच्चार हूवो। इंही भांति सारा अक्षरां मैं गर्भित छै। सौ एकाक्षरी नाममाला मैं औकार नाम अनंत कौ कह्यो सो अनंत कहंतां ज्यांकौ अंत नहीं असा भगवान ही छै अनंत, और नहीं।

श्लोक

अनन्तानन्तज्ञानांकं, सदौकारांकरूपिणम्।
सर्वाक्षरप्रणेतारं, जिनं वंदे तदाप्तये।।1।।

(दोहा)

औ कहिए सिद्धान्त मैं, नांम अनंत विख्यात।
तुमहि अनादि अनंत हौ, सर्वगुणांतम तात।।2।।
ओपासक श्रुति अंग जौ, नाथ सातमौ होय।।
तामैं श्रावक रीति सब, तैं भाषी विधि जोय।।3।।
औदासीनि विभाश है, हर्ष भयो जिनसूत।
तेरो सूत्र जु उर धरै, ते हौंही न प्रसूत।।4।।

(मंदाक्रांता)

औत्सुक्यादी तव नहिं प्रभू तत्त्वरूपो तुही जो।
औद्धत्यादी कथमपि नहीं शान्तरूपो सही जो।
औपाधी जो लहहिं न तुझै श्रीगुरैं यों कही जो।
औदार्यादी गुणमय तुही तू जिनो है वही जो।।5।।
औचित्यादी अतिगुणधरो औपशांती न भावा।
औदैको जो रहहि न नखैं तू जु है एक रावा।
मिश्रा भावो गहहि न तुझैं एक तू वीतदावा।
शुद्धो शुद्धो परक्षय भवो क्षायको तूल लावा।।6।।
नित्यो शुद्धो सुत्य परणति भवो पारिणामो जु तू ही।
द्वै भावा तू त्रय नहिं कभी पंचभावा समूही।
तो सौ तू ही अवर न कभी एक सुद्धो अदूही।
तू ही तू ही जगपति प्रभू एकरूपो विभू ही।।7।।

औदारीकौ फुनि विक्रय जो और आहारको वा।
चौथो देहो फुनि पचमऊ तैजसो कार्मणो वा।
द्वै अंता जे तंजहिं न कभी जीवसंगाधिको वा।
तेरे पंचा रहहि न कभी तू विदेहो जिनो वा।।8।।
औदारीको नरतिर धरै विक्रियो देव नाकी।
आहारो जो मुनिहि जु धरै ऋद्धिधारा जितार्का।
द्वैअंता जे सबहि जु धरै सर्वस्यौं द्वै सपर्का।
तेरे नांही कथमपि प्रभू पंचदेहा वितर्का।।9।।

(गीता)

औपशांती फुनि उदैका बहुरि मिश्रा तीन ए।
तीन कै इकताल भेदा नांहि तोमैं चीनए।।10।।
औपशांती दोय भेदा एकवीसा है उदी।
मिश्र ठारा भेदरूपा नांहि तोमैं है सुधी।।11।।
क्षायको नवभेद स्वांमी साकृतैं सब तू धरै।
सिद्धरूपै च्यारि राखै पंच क्षायक परिहरै।।12।।
पारिणामो तीन भेदा ता मही एको धरै।
दोय भेदा बाहि के भी तू जु नाथ न आदरै।।13।।
दोय भावा बार भेदैं ताम हैं पंचो तु ही।
सात भावा एहु डारे तू जु एको है सही।।14।।
तीन के इकताल त्यागै दोय के सप्ता तजै।
त्रेपनां मैं पाँच राखै पाँच मैं दोय जु भजै।।15।।
नव जु मांहैं चारि राखै तीन मांहै एक जी।
पाँच दोय र एकतालां, तै जु नांखै छेक जी।।16।।
औद्धत्यादिक औपचारिक जिहैं न पइए सो जि त्वं।
सर्वोपम्य विराजमाना, एक एव अदोजि त्वं।।17।।
औदैकादि जु भिन्न भावा नाहिं तो मैं शुद्ध त्वं।
तू कैवल्य विभास सांई कैवल्यातम बुद्ध त्वं।।18।।

(सोरठा)

द्वै ठारा इकवीस, उपशम मिश्र उदैयका।
नव अर तीन अधीस, क्षायक पार च णांमि जो।।19।।
पंच तने त्रेपन्न, मूलोत्तर भावा सबै।
तेरे दोस जु लिन्न, दोय तनें पंच जु सही।।20।।
तैं अठताल जु नाखि, पंच भाव ही आदर्‌या।
तै दोय जु ही राखि, उपशम आदी त्रय हर्‌या।।21।।
औषद ऋद्धि धरा जु, मुनिराजा तोही भजै।
औषद भेद समाज, सब भाषै भिषजो तुही।।22।।
औषधदांन अहार, अभयदांन तू ही करे।
ज्ञांन जु दांन अपार, औषधीश चंद्र जु पती।।23।।
तू जु अरोग अमृत्यु, अजर अजन्मा जन्महा,
तोहि पाय मुनि मृत्यु, जीतंही तेरे बलि प्रभु।।24।।
औपाधिक नहि एक, औतकंठिक एको नंही।
तू केवल स्वविवेक, नैकातम एको प्रभू।।25।।
तेरी दौलति साच, औरन की औपाधिका।
तू नहीं कित हू राचि, राचि रहो निजरूप मैं।।26।।

इति औकाराक्षर व्याख्यानं संपूर्णम्।

अं

आगै अंकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो अनुस्वाराक्षर छै। सर्व ककारादि अक्षरां के मांथे बींदौ दीजे तैठे अनुस्वाराक्षर प्रगट बोलै। कं असौ उच्चार कीयो तेंठे कं विषै अं को उच्चार आयौ। ईही भांति सर्व अक्षरां मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नाममाला मैं अंकार नांम परब्रह्म कौ कह्यो, सो परब्रह्म परमेश्वर भगवान ही छै।

(श्लोक)

परब्रह्मस्वरूपं यत्परात्परतरं शिवम्।
जिनमङ्कारवर्णाङ्कं वंदे तद्गुणलब्धये।।1।।

(दोहा)

अं कहिये आगम विषै, परब्रह्म कौ नाम।
तू परब्रह्म परातमा, परमेश्वर निजधाम।।2।।
अंक नांव ग्रन्थनि विषै, अक्षर कहैं मुनीश।
तुम ही अक्षर देव हौ, क्षरौ न कबहू ईश।।3।।
अंक नांव है चिन्ह कौ, तेरे चिन्ह न कौय।
तेरौ चिन्ह स्वबोध है, चिदगुण सुखमय होय।।4।।

(मालिनी)

जिनपति जु चिदंको अंक जाकै न कोई।
वह प्रभु जु अबंको बंकता नांहि होई।।
जगजित जु अपंको पंकलेशो न जामैं।
भजहु भजहु भव्या नांहि रागादि तामैं।।5।।
जिन तजि जग मैं जे राचिया मूढ जीवा।
नहि लहहि शिवं ते जन्म धारै सदीवा।।
जिन भजि जग जीतैं ते लहैं स्वात्मतत्त्वा।
जिन सम लखि आपा हौहिं ते शुद्ध सत्त्वा।।6।।
जिन भजिहि विमुक्तो अंधको वृष्टि राजा।
जिन जपि भव तिक्तो अंजनो चोर काजा।।
जिन भजि दुख नास्यौ अंजनी पौंनरांनी।
जिन सम नहिं कोऊ और दूजौ जु दांनी।।7।।

(चौपई)

अंजन चोर उधारक देवा। अंजनवर्जित धुर की टेवा।।
अंधकवृष्टी संतति तारे। अर अंधकवृष्टि जु उधारे।।8।।

अंध हुतौ धृतराष्टर राया। जाके पूतनि तू नहि गाया।।
कपट कालिमां मांहि जु लपटे। ते सत सकल जु भारथ विघटे।।9।।
अंधक भाई के सुत पंचा। जिन तू ध्यायो भवथिति वंचा।।
तिनमैं तीनि जु मुक्ति पधारे। द्वै सरवारथ सिद्धि सिधारे।।10।।
इक भव धरि तेऊ हैं मुक्ता। तोमैं मिलि है तेरे भक्ता।
अंजन मेरो धोवो स्वांमी। अंजन मेटि करो शिव धामी।।11।।
अंजनि रांणी हणवत माता। ताकौ सब दुख मेट्यो ताता।।
अंध अचक्षु भूपाल नरेसा। सो तुम कियउ सचक्षु जिनेशा।।12।।
तुमरी भक्ति महाजिन चींनी। भूपाल जु चौबीसी कीनी।।
जे तोकौं ध्यावें निज मन धरि। भुक्ति मुक्ति पाँवै अतिदुख हरि।।13।।
अंबुज चरन तिहारे जिनपति। ध्यावैं मुनिजन त्यागि सबै छति।।
सुर नर नाग जु तोहि निहारै। तौहि जपै ते आपौ तारैं।।14।।
अंतक नाम जु काल हि केरौ। तू अंतक जीतक पति मैरो।।
अंतक नास करै सब लोका। तू अंतक कौ अंत विलोका।।15।।
अंतकनाशक तू जिन स्वामी। अंतक भासक तू जु अनांमी।।
अंतकत्रासक तू जु मुनीशा। अंतकांत है तू जु अधीशा।।16।।
अंतरभेदी अंतरजामी। अंतरछेदी अंतरस्वामी।।
अंतरआतम तोहि जु ध्यावै। बहिरातम नहिं तोहि जु पाँवै।।17।।
अंतरनायक अंतर मेटे। अंतरनाथ जपें शिव भेटे।।
अंतरभेद जु दायक तू ही। अंतदायहर एक अदूही।।18।।
अंतरयायक ज्ञायक देवा। अंतराय तै रहित करेवा।।
अंतर भायक भाव न ईशा। अंतरंग कौ ईश अतीशा।।19।।
अंतर बाहिर एक जु तू ही। और न दीखै परम प्रभू ही।।
अंतर दूरि जु तू ही देवा। अंतर चूर करौ सुख देवा।।20।।
अंतर पूरि रह्यो इक नाथा। अंगविदूरो तू जु अनाथा।।
अंतर रहिता अंतर सहिता। अंतर आतम देव सु महिता।।21।।
अंतर नाथ अनंतर नाथा। अंतर दूरि करौ बडहाथा।।
अंतर हरि अर करि निज दासा। अंतर ध्यान मई सुखरासा।।22।।

अंतर वसि छेदौ जग आसा। अंतर धसि काटौ मुझ पासा।।
अंतर ल्हसि तारौ अघ नाशा। रहसि देहु मोकौं जु उदासा।।23।।
करि न उदासी मोतैं स्वामी। ज्यों जानैं त्यों तारि विरामी।।
अंतरंग बहिरंग जु भेदा। तू जु प्रकासै अंतर वेदा।।24।।
अंतरमुख मोकौं करि देवा। जनमि जनमि दै अपनी सेवा।।
अंतर आतम करि जग स्वांमी। बहिरातमपण हरि अभिरांमी।।25।।
अंतकजीता अंतकवीता। अंतर आतम नाथ अभीता।।
अंबुधि गुन कौ अंबुधिजीतक। अंबुदमांनो अंबरवीतक।।26।।
अंबुधि नाम जु समुद प्रसिद्धा। तोसौ अंबुधि तू हि जु सिद्धा।।
अंबुद नाम जु मेघ तनौं जी। तू अमृत झर मेघ घनौं जी।।27।।
अंबर वस्त्र जु कौ है नामा। तेरे वसन न भूषन रामा।।
अंबर नाम अकास हु केरौ। तू अंबर सम चिदघन नेरो।।28।।
अंबर जड है तू जु चिदाभा। चिदाकास तू परम महाभा।।
सर्वाकाश जु एक अंस मैं। मान रहै तेरे अवगम मैं।।29।।
अवगम ज्ञांन तनो है नामा। तू ज्ञानी ज्ञानेश्वर रामा।।
अंबर मान जु तू जु अमांना। लोक प्रमांणो पुरष प्रमाणा।।30।।
सर्वज्ञेय कै मांनि जु तू ही। ज्ञेयाकार धरें जु समूही।।
तेरे मांनि न कोई तत्त्वा। तेरौ मान नहीं अतिसत्त्वा।।31।।
अंबर शून्य तणो है नामा। तेरौ ज्ञान न शून्य अकांमा।।
शून्य जु परभावनि तैं तू ही। पूरण ब्रह्म सही जु अदूही।।32।।
रूपातीतो शून्य जु ध्याना। तोतैं पइए तू अति ज्ञाना।।
अंभ समांनो सीतल स्वांमी। अंभ जु जडकर तू चिदधांमी।।33।।
कर्मदाह मेटक तू अंभा। भवअगनी शांतक बिनु दंभा।।
तोसौ जल नहिं तू जलजीता। जड़जीतो जगजीत अजीता।।34।।
अंभ अंबु ए जल के नामा। जल चंदन अक्षत करि रामा।।
पुष्प च चरु दीपा अर धूपा। फल अर अर्घ करे सुरभूपा।।35।।
तोहि जु पूजहि अष्ट प्रकारे। तू जगपूजि सु एक प्रकारै।।
अंबुज कमल तिहारे पाया। मुनि भ्रमरा ह्वै सेवहि रावा।।36।।

अंग विवर्जित तू जिन स्वामी। पंचदेह तै न्यारो नामी।।
अंग अनूपम अदभुत देवा। अंग सु बारह प्रगट करेवा।।37।।
द्वादशांग के पाठी ऋषिया। तोहि जु ध्यावै निज तत लखिया।।
भवजल अतुल अचल तू षेवा। अंगपूर्व परकीरण लेवा।।38।।
अंगपूर्व परकीरण भाषे । जग भटकत जग जन तुम राषे।।
अंग विनां जो कांम अनंगा। ताके मारक तुम जु अनंगा।।39।।
अंगरहित अर अंग प्रकासै। श्रुति समृति सब भेद विभासै।।
अंगातम अर अंगवितीता। इह तेरी अदभुत गति जीता।।40।।
तू सु अंतकृत परभावनि कौ। तू परभावक निज भावनि कौ।
अंतकहारी तू शिवकारी। मोकौं शिव दै अजित उधारी।।41।।
अंगदेस आदिक जे देसा। सब देसनि कौ तू जु नरेसा।।
अंगदेस कौ तिलक जु नगरा। चंपा नाम जु पावनसघरा।।42।।
सो जगभावन तोतैं देवा। तू श्री वासुपूज्ज विनु छेवा।।
अंगविवर्जित मदन विथारा। सो मेटौ दे शील अपारा।।43।।
अंतर अंदरि मुझ वसि ईशा। काटि जु फंद अफंद मुनीशा।।
मेरौ अंतहकरण जु वस्त्रा। ताके अंचलि वंधि अवस्त्रा।।44।।
अंशुक वस्त्र तणौं है नांमा। तेरै वस्त्र न शस्त्र न रांमा।।
अंशु किरण कौ नाम जु कहिये। तू अनंत किरणो जिन लहिये।।45।।

(दोहा)

अंशुक अंतहकरण मुझ, तांके अंचलि नाथ।
रतनरूप है थिर बंधौ, कबहु न तजिहौ साथ।।46।।
अंहिप वृक्ष जु नाम है, तू अंहिप सम होय।
धर्मपत्र पूरि जु रह्यो, ज्ञान पुष्प अधिकोय।।47।।
अति परिमल तेरी सरस, भुक्ति मुक्ति फलपूर।
अतिछाया कर वृक्ष तू, अह्रिप सम तप दूर।।148।।
तपरूपो विनु छाय तू, अदभुत अंहिप देव।
अंगीकृत पालक विरद, नमो नमो अतिभेव।।149।।

अंगीकृत मोकौं करे, ममता फंद मिटाय।
देहु आपुनौं साथ तू, करि शिवमय जिनराय।।50।।
अंह्रिचरन कौं नाम है, चरन तिहारे नाथ।
मेरे उरि अंदरि वसौ, इह मांगूं बडहाथ।।51।।
ह्रदै वसौ तुव अंह्रिमैं, अंह्रि वसौ उर मांहि।
दौऊ मिलि समरस रहौ, रहू सदा तुझ पाँहि।।52।।
तो सम अंभोद जु नहीं, अंभोद सु मेघो जु।
तू मेघो नहिं शुद्ध है, निहकपटि अधिको जु।।53।।
अमृत वर्षो मेघ तू, मेघो कपटी नांहि।
मेघो भाषा मैं जिसैं, कहैं जु कपट धरांहि।।54।।
अंभोदो अथिरो जडो, वरषा मैं वरषै जु।
तू वरषै सब ऋतु मंही अमृतझर सरसै जु।।55।।
वाकी वरतनि थिर नंही, तू थिर रूप सदीव।
जड अंक जु तेरो नहीं, तू ज्ञांनी जगपीव।।56।।
तू ज्ञांनाकित ज्ञांनघन, ज्ञांनमूल भगवान।
अंगाराधिक जगत की, तपति बुझांवनि जांन।।57।।
अंतकाल तेरो शरन, और सकल जग धंध।
अंतकालि मोकौं वितरि, प्रणवो प्रणय निबंध।।58।।

(शार्दूलविक्रीडित)

तेरौ देव गहैं अनन्य शरणा ते पाँवई तोहि जी।
अंतलक्ष्मयी तुही गुणयुतो तोसौ तुही हौहि जी।।
वाह्याभूति न तोहि सेय जु सकै तू त्यागको सोहि जी।
अंतर्भेद महाप्रपूरि जु रह्यो तू तारि लै मोहि जी।।59।।
अंतर्भूति विशेष तोहि जु गहै ना बाहिरी से सकै।
तै त्यागी बहिरंग भूति जु सबै, तोकौ न कर्मा तकै।।
अंत: मध्य बसौ सदा मुझ प्रभु तोतैं जु मो कर्मा रुकै।
तू ही देव सहाय और न परो तोतैं जु हो सकै।।60।।

अंधा तोहि न देव ध्यावहि जड़ा तू तारको है प्रभू।
मोहांधासुर मर्दको जु परमो तू फारको है विभू।।
अंधा आंखि लहैं सु तोहि जु थकी, तू अंधता नांस भू।
तोसौ तूहि जु देव और न परो ईशो अधीशो अभू।।61।।

(सोरठा)

अंधकांत तू देव, है जु अनंधो बंधहर।
तू जु सचक्षुस्वमेव, अंधक तामस हरन तू।।62।।
तेरी दासी देव, अंतरबाहिर भूति जे।
अंतर धारै सेव, बहिरंगा फरसि न सकै।।63।।

अथ साधु की अवस्था

(सवैया इकतीसा)

अंबर ही अंबर है वोढिवे कै काजि जाकै,
धरा सीसु सेज जाकै बडी है जु मीरीतैं।
दिसा परिधान परधान निजभाव भाई,
ज्ञानादिक नंत जाकै भले हैं स्वसीरी तैं।।
गुह गिर गेह अर नेह सब जीवनि तैं,
प्रज्ञा सी गेहिनी महेशिनी वजीरी तैं।।
रीरी नांहि भाखिवौ न जाचवौ न काहू पैं,
जु कोटिक अमीरी वारि डारूं या फकीरी पै।।64।।
अंबुधि तैं ऊपनी जु लक्षमी बखानै लोक,
तेरे गुन अंबुधि मैं ऊपनी अनादि की।
वहै गुनरूपिनी जु रावरी रमा अनंत,
शुद्ध निजसत्ता एक दूसरी न आदि की।।
वहै जग अंबा अर अंबिका कहावै नाथ,
और नांहि अंबा नहिं अंबिका जु वादि की।

जीवनिकी घातिनी सपापिनी कहावै नाथ,
अंबिका भवानी तेरी शक्ति करुणाधिकी।।65।।

(स्रग्धरा)

ज्ञानी तू एक स्वांमी, परम पद प्रभू, अंबिकानाथ संतो।
अंबा शक्ती जु तेरी, अवर नहि कभी, तू जु है श्री रमंतो।।
रामा पद्मा च लक्ष्मी प्रगट निजगुणा अंबिका तासु कंतो।
तू ही तू ही प्रभूजी अतिपति अतुलो, एक शुद्धो अनंतो।।66।।
मोकौं भक्ती जु देहो, अपर नहि चहूं एक तोही जु सेऊ।
तेरे पादांबुजा जे, मधुर मधुभरा, ह्वै अली वास लेऊं।।
अंबा ताता च भ्राता, इक तुवहि लखूं एक तोही जु वेऊं।
सेऊं सेऊं जु तोही तुवमय जु भयो, धर्मनांवा जु खेऊं।।67।।
वामां के जासु वामा, जग शिव जु कहै, सो शिवा तोहि ध्यावै।
तू ही एको शिवो जी, जिनपति जु हरो, विष्णु इंद्रो जु गांवै।।
तत्त्वा सर्वे जु तूही, कहइ नहिं परो, एक तू ही सुनावै।
नंताकाशो समावै, त्वयि जु अणु समो श्रीगुरो यों वतावै।।68।।

(उपेंद्रवज्रा)

नमोस्तु ते देव विशालमूर्तये, ज्ञानाय ध्यानाय भवाद्विमुक्तये।
शुद्धाय बुद्धाय निजात्मलब्धये, लोकाधिनाथाय परात्मसिद्धये।।69।।
वंदेभिवंद्यं जगतामधीशं, जैनेश्वरं ज्ञांनमयं चिदीशं।
लोकेश्वरेशं परमं मुनीशं, योगीशमानंदमयं यतीशं।।70।।

(दोहा)

अंबुधि तैं उपजी जिको, रतनमई पाषान।
सो लक्ष्मी संपति नहीं, जडरूपा परमान।।71।।
लक्ष्मी तेरी शक्ति जो, गुन अंबुधि उतपन्न।
सोई श्री कमला सही, और न दोलति लिन्न।।72।।

इति श्री अंकारांकं संपूर्णम्।



आगैं अः विसर्गाक्षर कौ व्याख्यान करै छै। यो स्वर सर्व ककारादिकां कै आगैं दो विसर्ग दीजै तैंठै प्रगट बोलै। कः असो शब्द उच्चार कीयो तब कः विषै अः कौ उच्चार हूवो। ईही भांति सर्व मैं गर्भित छै। सो एकाक्षरी नांममाला मैं अः असौ नांम कृष्ण कौ कह्यो। सो कृष्णसेव्य भगवांन छै।

(श्लोक)

अः कृष्णो हि त्रिखंडेशो, कृष्णसेव्यस्त्वमेव हि।
निरागो निरघो शांतो, जिनो जैनेश्वरो प्रभू।।1।।

(दोहा)

अः कहिए पुस्तक विषै, कृष्ण नांम विख्यात।
कृष्ण पूज्य परमातमा, श्री जिन हरि सुखदात।।2।।
कृष्ण भाव तुम्हरै नहीं, तुम उज्ज्वल जगदीस।
कृष्ण देव तुमकौं भजैं, तीनौं काल अधीस।।3।।
अः कहि फुनि ग्रन्थ मैं, नांम महेश्वर देव।
तुम जिनदेव महेश्वरा, और न दूजौ भेव।।4।।

(बरवै छंद)

अःकाराक्षर जिनवर तू जगदेव।
सब अक्षर प्रगटो जु अनादि अछेव।।
तू आतम जगज्योति अनादि अनंत।
तो सौ तू इक और न दीसइ कंत।।5।।
हमरी भूल मिटाय जु करि निजरूप।
अवर न चांहहि तोतैं जगपति भूप।
सुनि दातार जु तोहि जु जाचहि देव।
दै रतनत्रय हमकौं जो सु अभेव।।6।।

रतनत्रय कौ दायक तुव जिन एक।
मणि पाषांण जु दायक हौंहि अनेक।।
सबकी इच्छा पूरहि तू बिनु इच्छा।
निरग्रथो निरमोहो तू जु निरिच्छ।।7।।
अ आदी अः पर्यंताक्षर सोल।
तू जु प्रकासै देवा एक अमोल।।
प्रणवो तू ही सबमैं है इक तू जु।
अक्षर रूप विराजइ देव अदूज।।8।।
मैं मतिहीन जु विसरिउ विषयनि राजि।
भव भरमिउ जु अनंतो जगमहि नाचि।।
अब तू देव छुडावहि करि किरपा जु।
वंदि छुडांवन विरद जु तू महाराज।।9।।

(सवैया इकतीसा)

दौलति दै सासती जो अंति नाहिं जाकौ कभी,
तू तो शिव संतदेव परम महाजती।
अंकित न अंजित तू भो प्रभू जिनिंद देव,
तो सौ नांहि दूसरौ जु एक तू महापती।।
अंतर जु वाहिर तू लोक परलोक मांहि,
तो सौ तू प्रभू सही जु शुद्ध है महाछती।
छती छिटकाय तू जु है रह्यो दिगंबर है,
नमो नमो नाथ तोहि एक जो महा अती।।10।।

(सोरठा)

दौलति रूप सु तू जु, और न कमलाधर कभी।
दै हमकौं निज पूज, तत्त्वरूप करि जिन प्रभू।।11।।

इति अः विसर्गाक्षर संपूर्णम्।

अथ एक कवित्त में षोडशाक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(सवैया)

अमल अनादि तू जु आदिनाथ इष्टदेव,
ईश्वर उधारक है ऊंचता निवास तू।
ऋषिगण ध्यावैं तोहि, ऋ ॄ ऌ ॡ विभासक तू,
एक सरवज्ञ सब एक कौ विनाश तू।
ऐश्वरता पूर तू ही ऐरावत दायक है,
ओज तेज पुंज रूप औषधी प्रकास तू।
औदारिक आदि पंच देह नांहि एक तैरै,
अंकित न अंकनाथ अः प्रभू विलास तू।।12।।

इति श्री भक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन अध्यात्मबारहखडी नामध्येय उपासनातंत्रे जिनसहस्रनाम-एकाक्षरी-नाममालाद्यनेकग्रन्थानुसारेण भगवद्भ-जनानंदाधिकारे आनंदरामोद्भवदौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते अकारादि अःकारांत षोडशाक्षरप्ररूपको नाम द्वितीयपरिच्छेदः।

तृतीय परिच्छेद



अथानंतर ककारादि तेतीस व्यंजनाक्षरां को व्याख्यान करै छै। प्रथम ही कका की द्वादश मात्रा को निर्णय करै छै।

(श्लोक)

कलानिधिं कलातीतं, कामदं कामचातकम्।
किनाकघ्नं किलाधारं, कीटकुंथ्वादिरक्षकम्।।1।।
कुमार्गपरिहर्तारं, कूटलोकैकवासिनम्।
केवलाख्यं दधत्तेजं, केशवेशं नृकेहरिम्।।2।।
कैतवारिं जगन्मित्रं, कोपकामादिवर्जितम्।
कौटिल्यरहितं शुद्धं, कुंतखड्गाद्यपेतकम्।।3।।
कंठीरिव समं वीरं, कर्मनागौघनाशनम्।
वंदे परात्मरूपं तं, कःस्रष्टारमतीश्वरम्।।4।।

(त्रोटक)

कर्मामय भैषज रूप जिनं। मिथ्यातम फेटक शुद्ध दिनं।।
कष्टा नहीं पाँवहि जे जु भजैं। कर्मा बहु बांधहि जे जु तजैं।।5।।

कल्पा अति बीति गए अनतैं। तू कल्प जु नायक कल्प हतैं।।
तोसौ नहिं अवर जु लोकमही। कबहू नहिं तू जु विभाव गही।।6।।
जौ तू जु कदापि बसै हममैं। तौ आंवहि बेगि हमूं तुम मैं।।
तू जलद समानो तापहरो। भव्या जु कलापी हर्ष करो।।7।।
कहिए जु कलापी मोर सही। तू मोरपछिधर कौ पति ही।।
भव्य कलकंठा तू जु मधु। तव वाक्य जु आम्रकली रजधू।।8।।
भव्या जु कमोदिनि तू जु ससी। भव्या कमला तुव भानु जसी।।
तू सर्वकलाधर कपट हरो। कनकाचल न्हांन जु कारवरो।।9।।
कनकाचल के चउ वाग शुभा। इक इक चउ मंदिर धार विभा।
तिन महि तुव अर्चा अर्जित हैं। सुर चारन खग करि चर्चित है।।10।।
कहिया मिलिहै तुव मोहि जु कौं। वह कहहू उपाय नमो तुझकौं।
करुणाकर कर्मविदार तुही। कमलासन आसन धार सही।।11।।
कलपित लपितो नहिं तू जु कभी। नहिं करहि कषाय कदाचित भी।।
तेरै न कलाप अभावनि के। परमारथ तत्त्व स्वभावनि के।।12।।

(दोहा)

कल्याणक पंचक प्रगट, जाके सब जग मांहि।
सो शिवदायक जगत प्रभु, रहै सदा सब पाँहि।।13।।
ताका मरम न जांनही, जगत जीव अज्ञान।
ताकौ छांडि करैं सही, लौकिक दैवत ध्यान।।14।।

(पद्धरी)

कल्याणरूप कल्याणराय। कल्याणमूल कल्याणकाय।
कल्याणनाथ कल्याण देव। कल्याणसिंधु कल्यांण सेव।।15।।
कल्याणसौध कल्याणमेर। कल्याणपुंज कल्याणप्रेर।
कल्याणभूप कल्याणंदान। कल्याण जु धार सु निज अकाय।।16।।
कल्याणस्वामि कल्याण ईस। कल्यांणनाम कल्याणसीस।
कल्याणपूर कल्याणभूर। कल्याणकार अतिपापचूर।।17।।

कल्याणभोग कल्याणनाव। कल्याणजोग कल्याणभाव।
मंदिर कल्याण जु जासु थोत। भवसागर मांही महत पोत।।18।।

(गीता)

कल्याणनायक अति सुभायक जगतदेव निरंजनो।
कल्याणदायक जगतचायक भविक जन यन रंजनो।।19।।

(चौपई)

कलिकाल मांही जन मूढा। तुव तत छांडि आनि मत रूढा।
अधुनाहू तोकौं जे ध्यावैं। इक भव अंतरि तुव पुरि आवैं।।20।।
कणरूपातम तू जिन सांई। अवर सकल जग तुस की नांई।
सकल जगत तुस तजि करि साधा। कण ग्राहक हैं अमल अबाधा।।21।।
तू कलकंठ ज देव गुसांई। कलवाणी तेरी अति सांई।
तू कलमथन जु कलम प्रहारी। सब कलंक मेटक सुखधारी।।22।।
तू ज कलाधर कपट विदारी। नांव कपटहर परम अधारी।
तू कलंकहर भविजन केरा। मौकौं दे सरणां प्रभु तेरा।।23।।
तू ज कर्महर कर्मविजीता। कर्म अष्टविधि मूल वितीता।
कर्मशत्रु नासक हर देवा। कर्मकंद काटक तुव सेवा।।24।।
तू कलरहित कलाजित ईसा। कल्यातीत अभीत अनीसा।।
तू कमलासन कमल सु नैंनां। तू कमलक्रम सबजित बैनां।।25।।
कदली सम इह जगत असारा। तामैं तेरो नांव अधारा।।
कदली कंद समांन अविद्या। सो मेरी मेटो धन विद्या।।26।।

(दोहा)

कलावीत जगजीत तू, कलातीत शिवकंद।
कमठ विडारण भवहरण, करुणा सिंध अफंद।।27।।
करुणानिधि करुणामई, करुणारूप निधांन।
करुणासांग क्रमरहित, जुगपत जाकौ ज्ञांन।।28।।

क्रम जाकै सब पूजि हैं, क्रमातीत जिनदेव।
जाके क्रम मन धारिकै, करि मन अहिनिसि सेव।।29।।
मनुक्रम तेरै नहीं, तू अक्रम अघहार।
तेरै क्रम की टहल प्रभु, मोहि देहु निरधार।।30।।
करुणाखांनि अगाधपति, करुणामेरू अछेव।
करुणा लोक अलोक प्रभु, करुणाकंद अछेव।।31।।
कर्ता आतमभाव कौ, आतमभाव सु कर्म।
करुणा रूप आपै प्रभू, करुणजीत कृत धर्म।।32।।
कृपानाथ कृतकर्महर, कृत जु कर्म निरवर्त।
कृती कृतारथ क्रमरहित, कृपाधर्म परवर्त।।33।।
तू जु कृपाभर देव जिन, तू ज कृपाकर राम।
तू जु कृपामय कृतरहित, कृपण तजक तुव नांम।।34।।
करणराव पूजित प्रभू, कृष्णपूज्य भगवान।
कृतशर्मा सुकृतज्ञ जिन, कृतैन निवारक भांन।।35।।
कृष्ण नील कापोत अर, पीत पदम फुनि लेस।
शुक्ल अंति इनकै कही, सबतैं रहित अलेस।।36।।

(चौपई)

करकंडू राजा कौं सुर गति। तुम ही दीनी श्री जिन जगपति।
जनमांतर मैं पार करौगे। अपनौ जानि सु अटल धरौगे।।37।।
करकंडू पहलैं भव ग्वाला। जिन पायो यक कमल रसाला।।
सही सपत्र वह कमल जु देवा। ताकरि कीन्ही तुम्हरी सेवा।।38।।
जा परसाद सु राजा हूवौं। सकल सेव्य ता सम नहिं दुवो।
तुम ही करि यम नृप पद पायौ। अर तुमही सुरलौक पठायौ।।39।।
तुम कल्याणवर्ण जिनदेवा। कल्यांण सु लक्षण सुख देवा।
कल्पप्रशस्त जु नायक स्वामी। कल्प जु दायक शिव विश्रामी।।40।।
तू कल्याण प्रकृति कल्याणा। कल्पातीत स पूजित भाणा।।
कल्याणातम सब कल रहिता। तू कलिलघ्न जु निजगुन सहिता।।41।।

तू कनकप्रभ कनक जु छाया। कल्पवृक्ष जित सब वर दाया।।
तू जु कनत्कांचन सम स्वांमी। पंच वर्ण अर अवरण नामी।।42।।
तू कर्मारि कर्मगण खोवा। सर्वकर्म कालिम तू धोवा।
कर्म जु काष्टा तू वैस्वानर। कर्मण्य: तू कर्मठ अतिकर।।43।।
तू जु कृपाल कृतक्रिय जोगी। कवि काव्य जु कर निजरस भोगी।।
तू जु कर्म अरि हनन जु शक्ता। सर्व कर्म बंधन निर्मुक्ता।।44।।
तू कलेस वर्जिता अकलेसा। तू कठोरता रहित अधीसा।।
कटुक वचन तेरे नहिं पइए। तू करकसता रहित बतइए।।45।।
कृष्ण नील कापोत र पीता। पदम शुक्ल इन सब तै वीता।
करि सैलेस क्रिया जिन स्वामी। बस्यौ जु निज पुरि अतिलित धांमी।।46।।
तू कृतकृत्य पाल गुसाई। तू जु कृतांतक त्रिभुवन सांई।।
तू जु करंकवितीत अनंका। नांव करंक शरीर निशंका।।47।।
तू कठिन न कोमल जगदेवा। तू कद रजता भिन्न अछेवा।।
पेट कतरणी जे मुख मिष्टा। तोहि न पावैं जीव निकृष्टा।।48।।
तू सरलातम सरल स्वभावा। तोहि लहैं जे रहित विभावा।
कदरज जन नहिं तोकौं गांवै। कदरजता तजि तोहि जु पाँवैं।।49।।
कजी कमी तेरे कछु नांही। कष्टहरण तू घट घट माहीं।
कटकादिक तेरे नहिं कोई। कटक रहित एकल भड होई।।50।।
कसर कसक सब दूरि पलाया। जब तू भविय घटि गरजै राया।
कषा दुखनि कौ तू अद्यकषा। जीवरखिक तू मुनिगण सखा।।51।।
कच नख वृद्धि न होय कभी जु। कछु न उपाधि जु तो महि लीज।
तु जु कदाग्रहवीत जिनिंदा। कज्जल भाव न तौ मैं इंदा।।52।।
कलकलाट तैरै नहिं पइए। कचकचाट तैं रहित बतइए।
कब हू तैरै राग न होई। कबकौ तू जु निरागस कोई।।53।।
कलह हरण तू कपट बितीता। मोह कलभ कौं हरि सम जीता।
तु जु कृतीपति कृतघन दूषक। तू क्रय विक्रय वर्जित भूषक।।54।।
कटूकरड कल्पंदादिक जे। तू जु निषेधै मदमादिक जे।।
तू सब हेय ज्ञेय कौ प्रगटा। तू जु उपादे जिनवर अघटा।।55।।

कलपित बात न तेरै कबहू। कलप कौ नायक अबहू।।
सकल कलपनां मेरी देवा। तो बिनु और न दूरि करेवा।।56।
तू कतज्ञ कृतपाल जु जैंनी। कृतक कर्मकाटक तू छैंनी।।
कृतकर्मा जे तोकौं ध्यावैं। कर्म सकल तजि तुव पुरि आंवैं।।57।।
कनक कांमिनी तजि करि देवा। कीजे भवहर तेरी सेवा।।
कनक कांमिनी तेरे नांही। तू त्यागी बिरकत जग मांही।।58।।
सकल कर्मपारग तू देवा। कमलापति कमलाकर सेवा।।
तो सम कमलाधर नहिं कोऊ। तू कमलालय अदभुत होऊ।।59।।
करण दंडि करणी सब त्यागै। तेरी महिमा मैं मुनि लागै।।
तू करणीकर तूं ति विभिन्ना। तोकौं भजिकरि होय न खिन्ना।।60।।
तेरी कमला भिन्न न स्वामी। तोतैं एकरूप अबिनामी।।
तू चेतन वह चेतन सत्ता। भामारूप कहे ते मत्ता।।61।।
कालहरण तू कालविजीता। काल प्रगटकर काल अतीता।।
कालवंचणी विद्या तोपैं। वरिणन जाय न महिमा मौ पैं।।62।।
तेरो विरद कालहर देवा। कारण शिवपुर तेरी सेवा।।
तू कारण अर कारिज रूपी। कारण कारिज रहित अनूपी।।63।।
काली कंकाली के दासा। तोहि न पावैं जीव विनासा।।
कालकूट विष अमृत होई। जब तोकौं जप है जन कोई।।64।।
काठउकति अर सरले जु उकती। तू जु प्रकासै अखिल सु शक्ति।।
कालकंठ है शिव कौं नामा। तू शिवपति शिवदायक रामा।।65।।
काहू तैं तू रूसही नाही। तू स्वयमेव विगत सब मांही।।
काक विषै नहिं शौचु होई। द्यूतकार मैं सत्य न जोई।।66।।
राजा मित्र न होय कदापी। इह भाते है तू ज उदापी।।
कमरबांधि जे मोह पछारैं। ते संता तोकौं जु निहारैं।।67।।
कांमादि विकथा तैं तजही। ते साधु तोही कौं लहंही।।
काच समान जु इन्द्री विषया। मणि सम तू जगत कौ रखिया।।68।।
काट जीव कौं लागै स्वामी। तू जु निश्चै अंतरजामी।।
तू जु कांमहर कांम सुरूपी। कामशत्रुघातक व्रतरूपी।।69।।

सर्वकांमदायक तू जोगी। सर्व कांमत्यागक तू भोगी।।
कामदेव चौबीसों तेरे। सेवक अनुचर साहिब मेरे।।70।।
तू कारुण्यक करुणा मूला। तू जु क्रांतिधर निजरस भूला।।
कातर जन नहिं तोकौं पावैं। कापुरिषा तुव जस नहिं ध्यावैं।।71।।
कार्तिक फालगुन शुचि सित दिन मैं। नंदीसुर मैं सुर तुझ विनमैं।।
कारमांण अर तैजस देहा। इनतैं छूटै तुव लग नेहा।।72।।
आदिकाल तैं सब जीवनि कै। ए लगि आए थिरचर जनि कै।
तू सब पंच देह तैं न्यारा। तोकौं भजि जन उतरैं पारा।।73।।
कारज अरथि तोहि जे ध्यावै। ते तितरौ ही कारिज पावैं।।
सकल कांमनां कारिज केरी। तजि करि करिहैं सेवा तेरी।।74।।
ते दासा तोही कौं पावै। परम सुद्ध ह्वै तुझमैं आवैं।।
कांक्षाकरि करि तेरी सेवा। करिहैं दासा जगत अलेवा।।75।।
कांक्षा बिनु तोही कौं जपिहैं। तेरैं काजि सकल तप तपिहैं।।
काठ समूहा अगनि प्रजारै। तिम तेरौ जस कर्म निवारै।।76।।
काढि जगत तैं मोहि जु देवा। बोध अतीन्द्री देहु अछेवा।।
कर्दम तैं तो बिनु कौ काढै। का वसि जन की तूहि जु बाढै।।77।।
नाहि काहिली तेरैं देवा। सर्व काहिली दूरि करेवा।।
काहल संखादिक जे बाजा। तेरैं बाजैं तू जगराजा।।78।।
काज बीगर्‌यो मेरौं स्वामी। तू जु सुधारै विभु अभिरांमी।।
काज वीज है नांव जु तेरा। काज सुधारौ जिनवर मेरा।।79।।
काज परम तू शिवपुर कंता। कांतकरण तू जिन अरहंता।।
कासी जनमपुरी तुव स्वांमी। तातैं जगत मांहि अतिनांमी।।80।।
कत्यायनि देवत आराधी। पाँडवमारण कौरव साधी।।
पाँडव तेरे भगवंत दासा। गयी भागि कात्यायनि नासा।।81।।
कायरहित तू काय सु रक्षक। षटकायनि की रक्षा पक्षक।।
कामदेव चौबीसौं तारे। वन के कांम क्रोध सब टारे।।82।।
तू कारण अर कर्ता कर्मा। तू ज करण प्रभु अखलित धर्मा।।
संप्रदान तू जगत अधीसा। अपादांन अधिकरण मुनीसा।।83।।

किरण अनंत अखंडित धांमा। तू जु किनाक विनासक रांमा।।
सहस किरणि है तेरौ दासा। तू कमलाकर परम उदासा।।84।।
क्रिया भूष तव किरिया दरसी। क्रिया नाथ तू किरया सरसी।।
क्रियापाल तू किरियासिंधू। क्रियाटाल तू भविजन बंधू।।85।।
क्रियाकरण तू किरिया गोपी। क्रियापरायण किरियालोपी।।
क्रियारूप तू अक्रिय स्वामी। क्रियाभूप तू किरियाधामी।।86।।
क्रियाकार तू किरियापारा। क्रियाधार तू किरियासारा।।
किरियासागर तू जु गुसांई। किरियाआगर तू जु असाई।।87।।
किरिया नागर तू जु जगीसा। किरिया जागर तू जु अधीसा।।
किरिया तेरी परणति नाथा। तू परिणामी द्रव्य सुसाथा।।88।।
निज किरिया पूरण तू दरसै। पर किरिया शिव सुख गूती।।89।।
तू किरियाव्रत किरियाकंता। मौकौं किरिया दै भगवंता।।
तू जु किसोर सदैव जिनेशा। दिन दूलह जगपति जतिभेसा।।90।।
तू किसोर वय कबहुं नांहि। तू जूनौं जोगी जग मांही।।
तू जाहर जोग्पंद जगिंदा। तू कितहू नहिं रक्त मुनिंदा।।91।।
तू किलविष कलमष तैं न्यारा। तू किलरूप किलातम प्यारा।।
तू किनहूं नैं कीनां नाहीं। तू स्वयमेव प्रगट जग मांही।।92।।
कियौ किरावर मैं यह स्वांमी। विषयनि राचि भयौ न विरामी।।
जे किरात हू तोकौं ध्यावैं। भव अंतरि तेरै पुर आंवैं।।93।।
धन्य किराता जे गुन गांवै। धिग विप्री जै लव नहिं लावैं।।
कीट पतंगादिक जे जीवा। तू सब जीवनि कौं सुख दीवा।।94।।
कीट कालिमा तेरे नांही। कीरति तेरी सब जग मांही।।
कीरति का तू पुंज गुसांई। कीरति तेरा दासा सांई।।95।।
तू कीरतिधर कीरतिमूला। कीरतिरूप जतीसुर थूला।।
कीरतिनाथ जु तू परमेष्टी। कीरति स्वांमि जु तू जगश्रेष्टी।।96।।
तू ज कीमिया रूप जिनिंदा। संसारी कौं सिद्ध करंदा।।
तेरौ कीर्तन जे नर करिहैं। भवसागर कौं ते भल तरिहैं।।97।।
केलिरूप की न नहिं तैरे। नित्य बसौ जिनपति घट मेरै।।
कीचरूप जे इंद्री विषया। तू सब त्यागी सब जगरखिया।।98।।

कीच थकी ते छूटैं जीवा। जे तोकौं ध्यांवै जगपीवा।।
कीचक तेरौ मत नहिं जान्यौं। तातैं भीव भुजा दुख सांन्यो।।99।।
कीर्तिसेन मुनि तोकौं ध्यांयौ। भवजल उतरि सु जिनपुर आयौ।
कीलरूप जो माया सल्ली। सो तैरै नाहीं भवबल्ली।।100।।
कीटादिक रक्षक जे साधू। तोकौं भजि जिन हौंहि अबाधू।
जिन तू बिसर्‌यौ त्रिभुवन टीका। ते जग मांहि बालमति कीका।।101।।
कीरादिक जे पंखी स्वांमी। तोकौ ध्याय हौहि दिवगांमी।।
जन्मांतर लै तोमैं आंवै। जे अनन्यं ह्वै तोकौं ध्यावै।।102।।
कीर जु सूवा कीर जु कीरा। तोहि जु ध्यावै ते जगधीरा।।
नीच ऊंच जे तोकौ ध्यावैं। ते ही ऊंच ऊंच पद पाँवै।।103।।
तू जु कुसलमति त्रिभुवन कुसला। तू कुसलातम कुसलक असला।।
तू कुकर्मटारक जिनदेवा। कुत्सित मारग दूरि करेवा।।104।।
कुगति निवारक तू अरहंता। कुमति विडारक तू भगवंता।।
तु कुवेरपति कुसल करंदा। तेरौ नांव कुसल जग चंदा।।105।।
कुमदचंद की पण तुम राखी। रुद्रपिंडि प्रगटे जगसाखी।।
कुमदचंद आचारिज नांमी। सिद्ध जु सेन दिवाकर स्वामी।।106।।
जिन कल्याण सु मंदिर कीनौ। तेरो सतवन अतिरस भीनौं।।
कुषुमायुध षंडक तू शूरा। कुसमायुध नासक तू पूरा।।107।।
कुसमायुध जीतैं तुव भक्ता। कुसुमायुध दंडक तुव रक्ता।।
कुटिल भाव जब लग नहिं नाषै। तब लग तेरौ तत्त्व न चाषै।।108।।
तू कुटिलाई बर्जित सरला। तोकों पाँवै जगजन बिरला।।
कुसुम एक करि पूज्यौ देवा। द्वै मालिनि पुत्रिनि बिनु भेवा।।109।।
ते दोऊ सुरलोक पधारी। भई अप्सरा इंद्र अधारी।।
तू कुरजांगल देस अधीसा। हस्तिनागपुर भूषण ईसा।।110।।
शांति कुंथ अरनाथ जु तू ही। तू तीर्थंकर गुण जु समूही।।
कुगुर कुदेव कुधर्म निवारा। कुलकर चउदस पूजित प्यारा।।111।।
तू कुलतारक कुलकर स्वांमी। कुलधर पार उतारक नांमी।।
तू कुपात्र त्यागक शुभपात्री। तू कुचरणटारक शिवदात्री।।112।।

भव्यजीव जे कुमद समानां। तिन नैं तू चंद्रोपम माना।।
कुलकोडि जु जीवनि की देवा। तू ही जग मैं प्रगट करेवा।।113।।
तू कुलवर्जित अकुल सुरूपा। कुलकर प्रगटक कुलपति रूपा।।
तू कुदाल सम कर्म निकंदा। तू कुधात तै धात करंदा।।114।।
जड परणति सोई जु कुधाता। तातैं भिन्न करण तू ताता।।
तु कुसूत्र नासक भगवंता। सकल कुरीति निवारक संता।।115।।
तू कुकीर्ति रूपी नहिं कबहू। तेरौ जस प्रगटक श्रुति प्रबहू।।
कु आचार तैं तू प्रभु न्यारा। सर्व कुभेष विनिंदक प्यारा।।116।।
कुलाचलादिक नित्य पदारथ। तिनकौ भाषक तू जु सु कारथ।।
कुरदेव जु कुर उत्तर स्वामी। इन हि आदि दे त्रिंशत नांमी।।117।।
तू अब भोग भूमि कौ प्रगटा। भोग भूमि दायक अघटा।।
कुमत सेय तोकौ नहिं पावै। तेरे मत करि तोमैं आवै।।118।।
तू कुकला कुचलण तैं दूरा। तू घट अंतरि सब घट पूरा।।
कुसमय काल पडै नहिं देवा। जहं तेरी ह्वै निति प्रति सेवा।।119।।
सर्व कुसंग तजैं जे भक्ता। तै तोकौं भजि हौहिं सुमुक्ता।।
तू कुसंगतै न्यारा स्वामीं। आतम संगी निज परिणामी।।120
तेंरै संग लगै जति संगा। ते तोकौ पाँवै जिन रंगा।
तू कुद्रिष्टि दूषक शुचिद्रिष्टि। तू सुद्रिष्टि तारक पति स्रिष्टी।।
कुदिष्टि हमारी मेटि गुसांई। करि सम्यग्दृष्टि जग सांई।।121।।

(दोहा)

कु कहिए शास्त्र जु विषै, पृथ्वी नांव बिख्यात।
तुम पृथ्वी घट अखिलपति, पृथ्वी नाथ उदात।।122।।
कु कहिए आगम विषै, नांव जु कुत्सित वस्तु।
तुम सब कुत्सित रहित पर, आतम तत्त्व प्रशस्त।।123।।

(चौपई)

कूट जगत कै तैरो ठांमा। कूट कपट के हम जन धामा।।
हमरौ कूड़ निवारि गुसाई। कूट लोक कौ दै जग सांई।।124।।

क्रूर भाव तेंरै नहिं देवा। तू अक्रूर क्रूर नहिं लेवा।।
कूडीसाषि भरै जे जीवा। ते तोकौ न लहै जग पीवा।।125।।
कूट कुलेष क्रिया जे करंही। ते रूढ़ा तुव भक्ति न धरहीं।।
कूषमांड कोहल करहल जे। वर पीपर गूलर बडहल जे।।126।।
इकाष्टोदुंबर विंताकादी। पाकरि वौंडी कचनारादी।।
इत्यादिक जे अभख दयाला। तू जु निषेधै परम कृपाला।।17।।
कूट रहित तू देव अकूरा। जगत कूटकौ तू ही कूटा।।
कूरलोक तोकौ नहिं जानैं। तोकौ तजि औरनिकौ मानै।।128।।
कूर भाव मेटक तू स्वामी। कूल जगत कौ शिव विश्रामी।।
मेरी कूक सुनो हरि देवा। जगत कूप तैं उपरि लेवा।।129।।
कूखि मात की मेटौ स्वामी। करि अजरामर निजरस धामी।।
केवल रूप अरूप केवला। तू अतुलातम जगत अभेला।।130।।
केवल ज्ञानमई तू दरसै। केवल दर्शन रूप स्वपरसै।।
तू केवल सुख पुंज गुसांई। केवलवीरज कुंज असांई।।131।।
केवल सम्यक तत्त्व जु तू ही। सर्व गुणातम गुण जु समूही।।
केवल नव लब्धि का मूला। केवल शिवमय देव सथूला।।132।।
केवल दायक तेरी सेवा। केचित करिहैं जगत अलेवा।।
केतु धार तू केवलरांमा। केतु नाथ तू केवल नांमां।।133।।
जोग केम द्रुम तैंरै नांही। तू लक्ष्मीधर श्री तुव मांही।।
केलि कुतूहल सब ही त्यागै। तैरी कैलि माहि मन लागै।।134।।
तब यह जीव जीव छुटै जग सेती। मोक्ष हौंन की किरिया एती।।
केलि जु कीर्तन तैरे नांही। तू आतम केली सब मांही।।135।।
केलिरूप जे सुरपति स्वामी। ते तद्भव तुझ लहै न धांमी।।
केलिरूप जो निर्जर लोका। ताहि न चाहैं तेरे लोका।।136।।
तू वैरागी जोगारूढ़ा। तोकौ न लहै विषई मूढ़ा।।
केत प्रमुख जे नव ग्रह स्वामी। तिनकरि पूजि सदा तू नांमी।।137।।
तुझ दासनि कौं नवग्रह पीड़ा। होय न कबहू कष्ट जु नीड़ा।।
केन प्रकारै तू जित पइए। सो प्रकार मोकौ हू बतइए।।138।।

केर-केर कीयौ मुझ कर्मा। सो तुम जानत हौ सब मर्मा।।
केई तो करि उतरे पारा। मोहू तारिसु जगत अधारा।।139।।
केस उपारि करैं जे लोचा। तिन साधनि तुलकरि मुझ रोचा।।
केहरि तू नर केहरि स्वामी। कर्म जु कुंजर जीतक नांमी।।140।।
केसरि चंदन घसि घसि तौकौ। निति निति पूजौं इह दै मोकौं।।
केसव प्रतिकेशव हलि चक्री। शिव नारद कुलकर फणि वज्री।।141।।
कामदेव इत्यादिक जे हैं। तोही कौं ध्यावै प्रभु ते हैं।।
देवि केकई कौ सुत भरथा। भयौ हुतो तैं सम भरथा।।142।।
केयूरादिक सबही तजि कैं। ह्वै मुनि मुक्त भयौ तुव भजिकैं।।
केको राव करैं निज भक्ता। जब तू गरजै धनपति व्यक्ता।।143।।
तौ सौ मेघ न दूजो कोऊ। शिखी भव्यजन सौ नहि होऊ।।
मात केकई भरत जु केरी। सब तजि भक्त भई प्रभु तेरी।।144।।
तुव प्रसाद त्रिया पद तजिकैं। पायो दैवत तुव पद भजिकैं।।
भव अंतरि वह तुव पुरि अैहै। तोहि ध्याय भव दुख नहि पै है।।145।।
जे अनन्य ह्वै तोकौं ध्यावैं। ते दासा तुझही मैं आवैं।।
तू ज केवली ज्ञान जगीसा। केवल तन्मय श्री जगदीसा।।146।।
केवल मोकौं दै ज गुसाई। आवरणी मम मेटि गुसाई।।
तू कैवल्य विभास प्रकासा। कैवल्यातम केवल रासा।।147।।
कैतवहारी तू जग देवा। मेरौ कैतव मेटि अभेवा।।
तू कैलास नाथ जगनाथा। तू कैलास मुक्त बड़हाथा।।148।।
तैं ही ख्यात कियौ कैलासा। तू कैवल्य निवास अवासा।।
तू कैवल्य उल्हास विपासा। तू कैवल्य अभास अनासा।।149।।
कैतव करि तू नांही पइये। कैतव छांडि र तोहि ज लहिए।।
कैतव नांव कपट कौ स्वामी। सो भव भव दुखदायक नामी।।150।।
जिनि कैतव छांडौ जिनदेवा। ते जन करिहै तेरी सेवा।।
कैवर्तादिक जे नर नीचा। तौकौ भजि करि भए अनीचा।।151।।
जन्मान्तर लै तोमैं आए। तोकौ भजि हरि बहु सुष पाए।।
कैकसीय माता सुत रावन। तोकौ जपि ह्वैगौ मनभावन।।152।।

तुझ आज्ञा तजि अब्रह्म धार्‌यौ। तातै अधम पुरी जु सिधार्‌यौ।।
कैयक भवमैं तोमैं मिलिहै। तोहि ध्याय अति जग नहिं रुलिहै।।153।।
जे तोकौ ध्यावेंगे प्राणी। ते पावेंगे मुक्ति सु रांनी।।
तू कोविद कोदंड वितीता। कोपनिवारक तू जगजीता।।154।।
तू ज कलानिधि कुकलाबीता। तू कोबिद कर क्रोध अतीता।।
क्रोध तजे विन तू नहिं पइए। कोप त्याग तेरौ मत गइए।।155।।
कोष तजक तू गुण गण कोषा। को न लहै तुव भक्त विमोषा।।
कोस चारि कौ जोजन होइ। दोय सहस धनु कोस जु जोई।।156।।
च्यारि हाथ कौ धनुष जु एका। चौबीसांगुल हस्त विवेका।।
ए सब भेद कहै जिन तू ही। तू परमातम गुण ज समूही।।157।।
कोइक जन तेरौ तत जानै। कोइक तेरौ विरद बखानै।।
सब संसारी न लहै तोकौ। तेरो मत दै जिनवर मोकौ।।158।।
कोक समान जु हैं संसारी। नादिकाल कौ विरही भारी।।
मेरी कोक नारि सम निज छति। सौ मैं लही न सम्यक् परिणति।।159।।
मिथ्या रैनी अनादि अनंती। भव्यापेक्षा नादि सु सांति।।
सो अब तक बीती नहि ईसा। दर्शन दिवस न प्रगट्‌यौ धीसा।।160।।
कोक बधू सम परिणति मेरी। अब तक हाथ लगी नहिं मेरी।
तातैं हू जु दुखिते सो भटकौ। कनक कामिनी मांहि जु अटकौ।।161।।
तुम जिन सूरिज मेरे घट मैं। प्रगटौ सुखकर मम तन पट मैं।।
मेरी परिणति जब मैं पाऊँ। वासौ मिलि करि विरह गमाॐ।।162।।
कोर कसर मेटौ सब मेरी। पाऊँ परणति दीन्ही तेरी।।
नंत कोटि प्रभु चंद र सूरा। तो परि वारूँ मुनिवर पूरा।।163।।
कोडाकोडी काल अनंता। बीत्यौ जिनवर जगत बसंता।।
अब निज बास देहू जगराया। मेटि भरमनां मूल ज माया।।164।।
कोढ़रूप इह काम विकारा। सौ मेरौ मेटौ भवतारा।।
संवर कोट देहु मम दुर्गा। मोहि न चहिये तौ तैं सुर्गा।।165।।
कोढ जु वादिराज कौ हरियौ। कोढ़ रहित कोड़ीभड करियौ।।
दुरगंधा कौ कोढ़ मिटायौ। तो आगै पतिको जु मिटायौ।।166।।

कोकादिक जे भंड कुशास्त्रा। तिनकौ पढ़ि जे हौंहि कुपात्रा।।
ते काभी तोकौ किम पावै। भव सागर में जनम गमावैं।।167।।
कोतूहल कौतुक नहिं तेरे। कौटिलादिक भाव सु मेरै।।
तू आतम कौतूहल धामा। कौतक कारी अति विश्रामा।।168।।
कौटिल्यादि तजै नहिं जबलौं। जीव न पावै तोकौ तब लौं।।
कौंतेयनि तू ही जु पिछान्यौ। तोकौ ध्याय सु निजपद जान्यौ।।169।।
कौतूहल जग के सब त्यागै। कौतुक त्यागि सु तोमैं लागैं।।
जगधंधा तजि निज रस पागै। जब तू श्री जिन जन घट जागै।।170।।
कौलिक कापालिक जे दुष्टा। तोकौ ते न लहै अति भ्रष्टा।।
तोकौं तेरे दासा पावैं। सकल कामना तजि गुण गावैं।।171।।
कौशल्या तोही कौं ध्यायौ। तुव परसाद दैव पद पायौ।।
भव अंतरि तेरै पुरि अै है। तौकौ जपि जग को जल दै है।।172।।
कौसल्या सुत तोमय देवा। तू कौशल्या सुत सुखदेवा।।
कौसल्या सुत श्री रघुनाथा। तुव तत रूप भयो जग नाथा।।173।।
तू कंदर्प निकंद अनंदा। तू कंदर्प निवारक चंदा।।
जे कंदर्प तजै तुव साधा। ते तोकौ तजि हैंहि अबाधा।।174।।
कंचन गिर दो दो सै हौंही। एक एक सुरगिर गिर दौही।।
पंचमेर के सहसर सबवै। एक एक प्रतिमा धर गिरवै।।175।।
तू ही प्रगट करै जग स्वामी। तोही करि वै होहि जु नामी।।
तेरी प्रतिमा तैं वे पूजित। और जु उनमें वित्त न दूजित।।176।।
कंस राव नहिं तोकौ ध्यायौ। तातैं कृष्ण हाथ जम पायौ।।
जे तोकौ भूलेंगे पापा। ते जग मांहि लहैंगे तापा।।177।।
कंज समान जु तेरे चरणा। सेय र भवि जन जीतैं मरणा।।
कंदनिकंदक तू जम केरी। मोहू दै सेवा प्रभू तेरी।।178।।
कंचन वरण तिहारौ स्वामी। कंचन वर्जित तू जु अनामी।।
कंत जगत कौ तू जिनदेवा। कंप विवर्जित अमर अलेवा।।179।।
कंधै तेरे जिनमत भारा। मोह दै हरि भवदधि पारा।।
कांत अधिक तू कांतावर्जी। कांतरूप तू कांम बितर्जी।।180।।

कांक्षा मेटि करे जे सेवा। ते दासा पावै तुव मेवा।।
सर्व कामना मेरी स्वामी। दूरि करे करि आतम रामी।।181।।
कंठ सुकंठ करे तुव गावैं। जे भक्ता तोसौं लव पावैं।।
तेरी महिमा मैं मन दैकैं। तोकौ पावैं निजरस लैंकैं।।182।।
किंचित मात्र विभूति न राखै। सकल परिग्रह दूरि जु नाखै।।
तब पावै प्रभु तेरी टहला। तोकौं जपि पावै निज महला।।183।।
किंकर तेरे जे नर हैंगे। जम किंकर वनकौ न गहैंगे।।
किंकर तेरे पावैं मुक्ति। अद्‌भुत नाथ देहु मुझ भक्ति।।184।।
कुंदपहूप तैं तू अति उज्जल। तेरे नांहि कालिम कज्जल।
कुंदकुंद तेरौ निज दासा। सौ काटैगौ जम की पासा।।185।।
कुंठ रूप जे हैं जग मूढा। जे तोकौं गाँवै नहि गूढा।।
कुंतादिक तेरै नहिं शस्त्रा। तू जोगातम रहित जु वस्त्रा।।186।।
कंदमूल कौ निंदक तू ही। सर्व अभक्ष्य निकंद समूही।।
कंडीरिव सम तू जिनदेवा, कर्म जु कुंजर जीत अछेवा।।187।।
कंठाभरण जु तेरी वाणी। भव्य सु पहरै भुक्ति निसांणी।।
ते संता पावै तत तेरा। ते निरभूषण भूषण मेरा।।188।।
कंडू सम यह मदन विकारा। मेरौ मेटि जु जगत अधारा।।
कंडू आदिक रोगा सब ही। तैरै भये न हैंगे कब ही।।189।।
कुंती ताकौं ध्यायौ स्वामी। स्त्री पद छेदि भइ दिवगामी।।
इक भव अंतरि तोमैं मिलिहैं। तोकौ पाय सु जग नहिं रलिहैं।।190।।
कुंती पुत्रनि तू ही गायौ। तुव परसाद अटल पद पायौ।।
तू कौंतेय नितारक स्वामी। भक्त उधारक निज बिश्रामी।।191।।
कुंदोपम चित्त उज्जल करिकै। जे तुव ध्यावैंगे मन धरिकै।।
ते संता तेरौ तत पैहैं। तोको जपि प्रभु भवजल दैहैं।।192।।
तू कुंथ्वादिक रक्षक जोगी। तू श्री कुंथनाथ शिवभोगी।।
कूंची मोक्षतणी तुझ हाथा। मोकौ मोक्ष देहु शिवनाथा।।193।।

(दोहा)

कं कहिए सूत्र जु विषै, नांव सीसु कौ स्वामि।
सीस नाय बंदै तुम्हैं, सुर नर मुनि के स्वामि।।194।।
कं कहिए पुस्तक विषै, नाव जु सुख कौ ईस।
तु सुखदायक मुक्त कर, रहित सकल रति रीस।।195।।
कं भाष्यौ सिद्धांत मैं, नांव सु जल कौ नाथ।
तुम सीतल जल सम विभू, तपति हरण जग पाथ।।196।।
कः देवा कः समबली, कः पति पूजित नाथ।
कः विश्राती कः वितर, कः स्वरूप बड़साथ।।197।।
कः कहिए पुस्तक विषै, नांव प्रजापति देव।
तुम ही देव प्रजापती, और न दूजौ भेव।।198।।
कः कहिए सिद्धांत मैं, नांव वायु कौ नाथ।
वायहूति अगिणत गुणै, तुम मैं पाण सु साथ।।199।।
कः कहिये सूत्र जु विषै, नांव सुर्ग कौ स्वामि।
सुर्ग नाथ सेवैं तुमैं, श्री जिन अंतरजामि।।200।।
कः भाष्यौ वाणी विषै, नांव आतमाराम।
तुम परमात्मा ब्रह्म पर, जीवातम विश्रांम।।201।।
कः गायौ भारति विषै, नांव जु सुख कौ ईस।
तुम सुखदायक जगतप्रभु, सकल सुखाकर धीस।।202।।
कः भखियौ आगम विषै, नांव प्रकास जु तात।
तुम अनंत परकासमय, सुद्ध रूप अवदात।।203।।

अथ द्वादस मात्रा एक कवित्त मै—

(सवैया)

करि मोहि आपनौं जू कारिज तू ही जु एक,
कितहू न जाऊं देव कीरति रट्यौ करूं।

कुटिल कुभाव मेटि कूरता मिटाय मेरी,
केवल दै चक्षु नाथ नाहिं कबहूं मरूं।।
कैतव न भाव तोमैं कोप कौ न लेस कभी,
कौतुक न और कोय तोहि उरमैं धरूं।
कंठ जे सुकंठकरि तेरी ही जु गांनकरि,
कःप्रकाश आपरूप ध्याय भौदधि तरूं।।204।।

(दोहा)

कमला कंचनिवासिनी, चरन कमल में वास।
शक्ति रावरी है रमा, और न दौलति भास।।205।।

इति ककाराक्षर संपूर्णम्।

ख

आगैं कवर्गी खकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

खला रागादयो पापा, त्वया सर्वे निपातिताः।
ख्यातिलाभविनिर्मुक्ता, त्वां भजंति तपस्विनः।।1।।
खिन्नो न क्वापि कालेऽपि, क्षीणमोहो महाबलः।
खुरीखडगधाराभिर्विना सर्वा जिता धरा।।2।।
खेचरैरर्चितोभ्यर्च्यो खैरलभ्यश्च रूपवान्।
खौद्यालभ्यं तियं नाहो खं समानोपि पूर्णधी।।3।।

(दोहा)

ख कहिए आकास कौ, तू आकास स्वरूप।
शुद्ध चिदातम बोधमय, परमहंस जगभूप।।4।।

ख कहिए इंद्रीनि कौं, तुम इंद्रिनि तैं दूर।
मन अर बुधि हू कै परैं, घटि घटि अंतर पूर।।5।।
खर तीक्षण कौ नांव है, तुम नहिं तीक्षण देव।
परमकृपामय अतिक्षमक, करिहौं तुम्हरी सेव।।6।।
खर किरणि जु आदित्य है, तुम आदित्य महेश।
भांनु आदि जे सकल सुर, तेरे दास जिनेस।।7।।
खर कठोर कौ नांव है, तुम कठोर नहिं स्वांमि।
जीवातम परि तुम सुहिद, कर्महरण शिवनांमि।।8।।
खर समान ते जन प्रभु, जे नहिं ध्यावैं तोहि।
तोहि तजै औरनि भजै, इहै अचंभौ मोहि।।9।।
खर कै पीठि जु भार है, इनकै है ग्रिहभार।
तेरी भक्ति विना प्रभू, दोऊ सम निरधार।।10।।

(चौपई)

खलभावनि कौ त्यागी तूज। मैं खल करी न तेरी पूज।।
बह्यौ भर्म मैं अति ही देव। सो तू क्षमकरि दै निज सेव।।11।।
तू खजीत खलभाव वितीत। खगतम रूप विकार अतीत।।
ख प्रकास खलभाव अलभ्य। खप्रनाश निज भाव सुलभ्य।।12।।
तू खगेंद्र खगपति गणध्येय। सुर नर खग असुरनि कर सेव।।
खग अनंत कीने तैं पार। तू खगतारक शिवदातार।।13।।
खडगादिक तेरै नहिं शस्त्र। तू जौगी त्यागे तैं वस्त्र।।
बिनु खड्गादि किए भकभूर। आठौं कर्म न राखे मूर।।14।।
तू खातीत जिनिंद दयाल। ख्यातरूप तू जगत प्रपाल।।
ख्याति तजी पूजैं प्रभु तोहि। तिनकौं दास करीजे मोहि।।15।।
ख्यात कियौ तैं आतम धर्म। ख्यात कियौ तैं अनुभव मर्म।।
नाश कियौ तैं भवकर भर्म। ख्यात कियौ तैं केवल पर्म।।16।।
ख्यात कियौ तैं सम्यक बोध। ख्यात कियो सम्यक्त्व स्वसोध।
ख्यात कियो तैं सम्यकचर्ण। ख्यात कियौ तैं अनशन मर्ण।।17।।

ख्यात कियो द्वादश तप सार। ख्यात कियौ अनुकंपपार।।
ख्यात कियौ मुनि श्रावक धर्म। ख्यात कियौ जु अतिंद्री शर्म।।18।।
खात दियो मेरे घटि मोह। चोर न यासौ इह अतिद्रोह।।
मुसे ज्ञांन दृग चरण जु तीन। कियो मोहि अति तेरह तीन।।19।।
खात पडै तो राज करंत। इहै अचंभौ है भगवंत।।
तोकौ लाज न आवै प्रभू। कहौं कहा तोकौं अति विभु।।20।।
मेरे रतन जु द्यावै मोहि। चोरनि बांधै जगमैं टोहि।।
तब जानौ तोकौं जगराय। मेरौ निज तत मोहि बताय।।21।।
नहीं खातिका पौलि प्रकार। प्राकार न तेरै दरवार।।
सिद्धदसा मैं एक न कोय। अरहत पद मैं सब ही होय।।22।।

(भुजंगी)

न खिन्नो न भिन्नौ जु तू भिन्नदेहो। सुभिन्नो अभिन्नो तु ही है अनेहो।
सुलिन्नो अलिन्नो तु ही है प्रसन्नो। न छिन्नो न चिन्नो जु तू बोध सन्नो।।23।।
सया खीणमोहो सया खीणलोहो। पहू खीणकामो पहू खीणकोहो।।
ख नामा जु इंद्री हु खी इंद्रिधारी। नहीं खी तु ही इंद्रिवीतो प्रचारी।।24।।
खुभ्यौ नांहि मेरौ हृदै तू ज स्वांमी। खुभे इंद्रियादी विकारा विकांमी।।
रुल्यौं हौं जु तातैं अनंतौ जु कालौ। अबै तौ दया नाथ मोहू निकालौ।।25।।
खुस्यो हूं लूट्यो हूं पुकारूं जु द्वारै। तुही माल द्यावै सुनै जो पुकारै।।
खुटै नाहि तोकौं भजें क्रापि भूती। तुही जौं छुडावै सही भौ प्रसूती।।26।।
खुरो श्रृंगवीता पि ढोरा न राजे। न तोकौं जु ध्यावै अविद्या भरा जे।।
बिना है खुरी खडग धारा सबै भू। इको तू जु जीतै अनादीश शंभू।।27।।
कहैं नागवांणी मंझारे खु निश्चै। तु ही निश्चयो देव और अनिश्चै।।
तु ही है खु अर्थो जु निश्चै चिदात्मा। महादेव देवो जिनेंद्रो परात्मा।।28।।
जु खूंटौ तुही एक तेरै जु कांधै। मुनी मोहपैं ज्ञानरोपा जु साधै।।
जु तेरौ तिको कर्म नांही जु बाधै। मुनी वै जईसा तुझी कौं अराधै।।29।।
तुही खूब खूबी भर्या खूब देहा। करै खूब मोकौं तुही जौ अनेहा।।
करै खूंट सामोहि ध्याने अकंपा। इहै तोकनां नाथ मांगौं अचंपा।।30।।

(चौपई)

खेचर तू आकास जु गांमि। खेचर पूजित खेचर स्वांमि।।
खेचर देव विद्याधर नाथ। ते लागे प्रभु तैंरै साथ।।31।।
खेचर चारण मुनि हैं जेहा। ते सब तेरौ सरणौ लेहा।।
खेचर नाव पखेरू जीव। तू सब जीवनि कौ सुखदीव।।32।।
खेचर एक परेवा नाथ। एक परेई वाकै साथ।।
रतिवर रतिषेणा द्वै जीव। एक जु पतनी एक जु पीव।।33।।
पुंडरीकणी नगरी मांहि। ते दोऊ उपजे सक नांहि।।
सेठ कुवेर कांत कै गेह। वसैं जु दोऊ परम सनेह।।34।।
सेठ प्रसाद लह्यौ जिनधर्म। पायौ जिनवर तेरौ मर्म।।
कांतकुवेर जु कौ जो तात। नांव कुवेरमित्र सुखदात।।35।।
तात च पूत जु तोकौ ध्याय। भए जु मुक्त तजी द्वै काय।।
अर पंखी पंखणि तजि देह। तुव परसाद लहौ भल गेह।।36।।
विद्याधर चक्री पिय भयौ। नांव हिरण्य जु वर्मा दयौ।।
भई परेई ताकी प्रिया। नांव प्रभावति उत्तम त्रिया।।37।।
अति अदभुत कीनौं उन राजा। जातिसमर ह्वै छांड्यो काज।
वह साधू वह साध्वी भई। तप करि सुर्ग विभूति जु लई।।38।।
अमर थकी चय भूतल मांहि। दोऊ उपजे संसै नांहि।।
जय जु कमार हूवो बहु जांन। वा सुलोचना परमनिधांन।।39।।
वह तौ हथनापुर मैं भयो। सोमप्रभ जु नृपतात जु लयो।।
वा जनमी कासीपति गेह। सुता अकंपन उत्तम देह।।40।।
स्वंवर मंडप मैं उन माल। घाली जय कैं कंठ रसाल।।
तहां चक्रिसुत रीसि जु भयौ। जाकौं मानहरण जय कियौ।।41।।
परण सुलोचन जय जु कुमार। गयौ चक्रव्रति पैं निरधार।।
चक्री नैं बहु आदर कियौ। वस्त्राभरण बहुत धन दियो।।42।।
भरतचक्रवति जगत प्रतपाल। ताकौ जयकुमार भुजढाल।।
बहुत काल जग कौ सुख भोगि। लई ऋषभ दिक्षा अतिजोगि।।43।।

चौरासी गणधर मैं भयो। परमानंद परमपद लयो।।
अब नहिं आवै या जग मांहि। भयो सिद्ध यामैं सक नांहि।।44।।
कहां परेवा की यह दसा। तू जिन करण हरण है इसा।।
श्री सुलोचना स्त्री पद त्यागि। भई पुरुषपद तुव पद लागि।।45।।
तू परमातम खेचर तार। खेचर अति तैं कीनें पार।।
खे इंद्रिनि मैं विचरै जेह। खेचर भव वासी प्रभु एह।।46।।
तू खेचर नांही भगवान। आतमचारी परमनिधान।।
खेचर नायक भूचर देव। खेचर भूचर न लहै भेव।।47।।
खेट ग्रांम नगरादिक बास। तैं ही प्रगट किए जु अवास।।
तू अवासत्यागी अतिभास। खेटपती तू परम उदास।।48।।
खेती वांणिज तेरे नांहि। तू सब त्यागी सब घट मांहि।।
खेद त्याग जे हौंहि अखेद। ते साधू इक तौकौं वेद।।49।।
खेद न तेरे निजपुर मांहि। खेद खिन्न तू कबहू नांहि।।
खेद्यो मोंकौ मोहैं अती। खेदि उछेद्यौ दे चवगती।।50।।
अब तू दै पंचम गति मोहि। करि जु अखेद आपनौं टोहि।
तू ही खेदै मोह विलास। तू ही छेदै यम की पास।।51।।
तू ही भेदै पर परणती। तू जु उछेदै जगगति तती।।
खेडा खेट न खेल न कोय। खेचर पूजित तू जिन होय।।52।।
खेवट तोसौ और न कोय। भवदधि तारक तू इक सोय।।
खैरग्राह्य सु खंबत तू ज। इंद्री तोहि न पाँवै पूज।।53।।
ख कहिये इंद्रिनि कौ नांम। खैरलभ्य तू केवलरांम।।
खोट न तेरै घटि अतिघटा। तू अतिऋद्धि वृद्धि निजरटा।।54।।
खोदि करम क्षोणी तैं देव। काढे रतनत्रय अतिभेव।।
खोदनहार करम कौ तुही। घटि बधि तेरै कबहु न कही।।55।।
सिद्धि समृद्धि प्रवृद्धि जु भर्यो। नादिसिद्ध तू किनहू न कर्यो।।
खोसि न सकहीं तोकौं कोय। खोस्यो तू न खुसै जिन सोय।।56।।
तेरे दास न खोसे खुसैं। कर्म जु तस्कर दूरिहि नसै ।।
खोघ न पावैं तोकौं कभी। ख व्यापक तू देव जु अभी।।57।।

खौ धन तेरै तू जु सु खौघ। खैरगम्य तू देव अमोघ।।
खौ दिन तेरे को रन कोय। दौरि जु कर्म हते तैं सोय।।58।।
खौघ न खौक न तू कबहू ज। खौटे तोहि न पाँवहि पूज।।
खौघ अघौघ मुझे दुख देय। तूहि छुडाय अपुन मैं लेय।।59।।

(दोहा)

खं कहिए इंद्रीनि कौ, खं कहिये आकास।
खं कहिए सुरलोक कौं, खं खड्ग जु अरि नास।।60।।
शून्य वस्तु कौ खं कहौ, ए पाँचौं खं नांम।
तू खं वर्जित खं प्रगट, खं पति पूजित राम।।61।
खं त्यागी खं भाव हर, तू खं रूप जिनेस।
खं समान खं व्याधि हर, खं व्यापी निरलेस।।62।।

(चौपई)

खं इंद्री वर्जित तू देव। खं आकास प्रगट्ट अछेव।।
खंपति इंद्रनिकरि तू पूजि। खंतर वारि रहित जग दूजि।।63।।
खं शून्य सु तू नांही शून्य। रागादिक तैं शून्य सु पुन्य।।
तू शून्य र पूरण जिन स्वांमि। तू अदभुत गति अंतरजामि।।64।।
खं सम व्यापक तू जु बहुत्व। खंभलोक कौ तू सु प्रभुत्व।।
खं इंद्री जे व्याधि समांन। तू जु व्याधिहर श्री भगवान।।65।।
खं जे शून्य जडातमभाव। तिनकौ हरण जु तू जगराव।।
खं शून्यातम रूपातीत। शुद्ध सुकल निजध्यांन अजीत।।66।।
शून्य जु ध्यांन प्रकासक देव। शून्य रूप तेरी धुर टेव।।
शून्य भावनाशक तू दक्ष। तू सबदरसी सकल प्रतक्ष।।67।।
खंड अनारज आरज भेद। तैं ही प्रगट कियो बिनु खेद।।
पंच अनारजु भाषे सही। एक सु आरज खंड जु मही।।68।।
एक क्षेत्र मैं षट्षट् खंड। एक सहसविसंति जु अखंड।।
इकसत सप्तति सब हैं क्षेत्र। तैं ही भाषे जिनवर जेत्र।।69।।

दीप अठाई कौ व्यौहार। आगैं मनुक्ष नहीं निरधार।।
पंच भरत ऐरावत पंच। इक सत साठि विदेह अवंच।।70।।

(सोरठा)

खं खा पासि दु शून्य, खः कहिए वारमरमा।
तू सबमैं अति पुन्य, तो विनु मात्रा नांहि कौ।।71।।

अथ बारा मात्रा एक सवैया मैं—

(सवैया)

खल तोहि पाँवै नांहि, ख्याति तेरी लोक मांहि,
खिन्न नांहि होतो कभी, खीणमोह तू जिणा।
खु कहैं जु निश्चयकौं निश्चयस्वरूप आप,
खूंट भव्य लोकनि कौ खेचर तुही दिणा।।
खेद नहिं भेद नांहि खैरलभ्य खैरगम्य
खोदि नाखे अष्टकर्म नाथ तैं यथा तिणा।
खौध नांहि पावैं तोहि, खंडखंड नायक तू,
खं समांन तेरौ रूप खःप्रकाश तू जिणा।।

(सोरठा)

तेरी ख्याति विख्यात, सत्ता शक्ति जु है रमा।
और न दौलति तात, दौलति रूप जु एक तू।।73।।

इति खकाराक्षर सम्पूर्णम्।



आगैं गकार कौ व्याख्यान करै छै

(श्लोक)

गणाधारं गदातीतं, गरुडध्वजपूजितम्।
महागारुडिकं धीरं, मिथ्याजालविषापहम्।।1।।
गिरातीतं गिरौ स्नातं, गीर्वाणाधिपसेवितं।
गुणाकरं गुणांभोधिं, गूढरूपं महामुनिम्।।2।।
शिवास्पदं जगद्गेहं, गेहातीतमदेहकं।
ग्रैवेयकादिदातारं, मोक्षदं मोक्षमूलकम्।।3।।
गोपारं गोपतिं गोपं, गौतमं स्वामिनायकं।
गंधरूपरसस्पर्शशब्दातीतं निरंजनम्।।4।।
ग्रंथिभेदकरं वीरं, निर्ग्रन्थं महेश्वरम्।
ग:प्रकाशं चिदाभासं, वंदे देवाधिपं जिनम्।।5।।

(चौपई)

गणनायक तू गणपति देव। गणधर आदि करै तुव सेव।।
गतिहारी तू गतिदातार। गमनागमन वितीति अपार।।6।।
गदनासक तू गर्वविजीत। गदातीत गणिगण्य अभीत।।
गति-थिति कारण धर्म-अधर्म। तै तैं प्रगट किए बिनु भर्म।।7।।
गणना तेरे गुण की नांहि। गत्यागत्य रहित सब मांहि।।
गद अनादि के जे रागादि। तिनकौ हरण भिषज तू नादि।।8।।
गजकुमार श्रेणिक सुत देव। तोहि करि पावै भव छेव।।
गज सुकुमार कृष्ण को भ्रात। तैं ही मोक्ष कियौ जगतात।।9।।
गजदंत जु हैं वीस जु गिरी। एक मेर के चौ चौ थिरी।।
तिनमैं तेरे वीस जु सौध। नादि अकर्तृम रहित जु बोध।।10।।

तू गरिष्ठ अति शिष्ट प्रसिद्ध। गरिमासागर अतुलित सिद्ध।।
तू गणेस प्रभु और न कोय। गरहारी तू गारुड होय।।11।।
गरल प्रहारक अम्रतरूप। तू गरुडध्वज पूजित भूप।।
गण च गलांन प्रमुख जे साध। तिनकौ नाथ रहित सब बाध।।12।।
तू गलतां न गमक गतद्रोह। तू गदजीत गत क्लम छोह।।
तू गलतां न करण समरच्छ। तू गतमोह मुणि परमच्छ।।13।।
तू गतरोष गगनगति देव। तू गतदोष अनादि अछेव।।
तू गतराग विराग प्रधान। गगनरूप तू श्री भगवान।।14।।
गगन सु पारग गच्छ वितीत। गजपति दायक परम अतीत।।
गर्भनिवास रहित तू तात। गर्भवास निरवर्तक त्रात।।15।।
गर्व रहित तू त्रिभुवन राज। गर्व प्रहारक अमल सु काज।।
तू गरिमा गिर सब जग इष्ट। तू गणाग्रणी अद्भुत शिष्ट।।16।।
तू जु गणाधिप तू गण जेष्ट। तू जगहर गति त्रिभुवन श्रेष्ट।।
गरुड समांन कांम अहि नास। तू पंचम गति दायक वास।।17।।

(दोहा)

गणधरपति तू देव है, सब गण पूजि जिनिंद।
गणातीत गुरदेव तू, अखिल विभास मुन्यंद।।18।।

चौपई।

तू जु ग्रामणी ग्राम सुरूप। तू गाफिलता हरण अनूप।।
मैं मतिहीन जु गाफिल भयौ। तौमैं मन तन कबहु न दयौ।।19।।
ग्राम्यमूढ पावैं नहिं भेद। नागर जन तोकौं प्रभु वेद।।
तोकौं वेदैं ते ही जांण। नहिं वेदैं ते मूढ अयांण।।20।।
गात धात तेरै नहिं देव। गांन मान की नांही टेव।।
गाजा वाजा करि पूजंत। जे तोकौं ते सुगति लहंत।।21।।
गाध तिहारी न लहै कोय। मनपरजय ज्ञानी जौ होय।।
केवल ही करि तेरी गाध। तू केवलमय रहित जु बाध।।22।।

गार रहित तू वर्जित गारि। गारव रहित परम सुखकारि।।
गांठि चित्त की खोलि र तोहि। ध्यावै किंकर करि तिसु मोहि।।23।।
गाह्यौ जाय न तेरो थाह। ग्राह्य नंही तू अकथ अथाह।।
गार हमारी मेटि जिनिंद। करि जु अगार अरूप मुन्यंद।।24।।
तू ज्ञायक ज्ञानातम देव। ज्ञानगम्य ज्ञायक जसु टेव।।
ज्ञानरूप तू ज्ञानप्रमांण। ज्ञानमूल तुव ज्ञांन निसांण।।25।।
ज्ञांनी तेरौं पाँवै भेव। अज्ञानी न लहैं तुव छेव।।
तुव पावे कौ ज्ञान उपाव। अवर न देख्यौ मैं कछु दाव।।26।।
ज्ञान शरीर अभीर अकाय। श्रुति गांवै तोकौं जगराय।।
तू ज्ञानी शिवमूल प्रसिद्ध। हमकौं ज्ञानी करि शिवसिद्ध।।27।।
चौदह पूरव ग्यारह अंग। तैं ही भाषे नाथ अभंग।।
द्वादसमौ है अंग जु महा। ताके भेद सु पंच जु कहा।।28।।
चौथे भेद जु बारम अंग। नाम ज पूरव गत अतिरंग।।
तामै पूरव है दस चारि। इह बारह सब अंग विचार।।29।।
फु नि जु चतुर्दस हैं सु प्रकीर्ण। तेऊ हैं अनुभव रस कीर्ण।
अनत भेद है जिनमत सार। सब मैं आतम तत्त्व विचार।।30।।
ग्यारह अंग अभव्य हु गहै। परि नहिं कबहू द्वादस लहै।।
ग्यारह भनिउ अभव्य जु सेन। नहिं पायो वन आतम सेन।।31।।
गिरातीत गिरिपति तैं ऊँच। गिरा प्रकास अखिल तत सूच।।
तैं गिरनारि कियो परसिद्ध। तू श्री नेमनाथ जिन सिद्ध।।32।।
तू गिरराज सु करण पवित्र। तू विचित्र अर रहित सुचित्र।।
गिरपति ऊपरि न्हायो देव। सुर असुरन मिलि कीनी सेव।।33।।
गिरसिर तिष्टि र तप जु तपंत। ते साधू तोकौं जु जपंत।।
गिर समेद कियो तैं पूज। गिर कैलास बस्यौ सो तूज।।34।।
गिनती तुझ विभूति की नांहि। तू भरपूर रह्यो सब मांहि।।
तू ज दयागिर सत्य सुमेर। गिरधर पूजित मुनिगण प्रेर।।35।।
गिलै काल जीवनि कौं नित्य। तूज कालगिल जगत अनित्य।।
तेरौ सरणौं जो नर लेय। कालजीति जग कौं जल देय।।36।।

तू ज गिरापति सुरपति पती। तू त्रिभुवनपति उत्तम जती।।
गिरधारी सेवै जसु पाय। तू गिरधारि देव अकाय।।37।।

(अरिल्ल)

गीर्वाणादिक सर्वदास तेरे सही।
तू गीर्वाण प्रपूजि अचल गति जिनि गही।।
तू गीर्वाणपती जु अखिल स्वामी प्रभू।
गीत गान करि तोहि इंद्र सेवैं विभू।।38।।
गीधादिक पंछी जु तोहि जपि दिव गए।
तेरौ सरणौं लेय बहुत जन शिव भये।।
गीध एक वन मांहि हुतौ पक्षी महा।
आए तहं रघुनाथ परमतत उर बहा।।39।।
दीनौं मुनिकौ अन्न तहां सीतापती।
कियो निरंतर अशन परम रसमय जती।।
देखे जतिअर राम गीधनैं वनविखै।
भाव सुमरण ह्वै तुरत अयो सो मुनि नखै।।40।।
आगैं इह पक्षी समूढ राजा हुतौ।
कियो महामुनि घात दुष्ट पतिग खुतौ।।
एक ऊण पचसतक साधु जिनि पेलिया।
ते सब धरि सुसमाधि सुर्ग सुख मेलिया।।41।।
एक भयौ मुनि रोष शोष जिन सब किये।
राजा परजा देस कोस सब क्षय भये।।
गयौ राव वह नरकि बहुत दुख तहं सहे।
काल पाय अर निकसि अधिक भव जिन लहे।।42।।
करि जु अपार भ्रमंत गीध वह नृप भयो।
मुनि कौ दरसण देखि जाति समरण लयो।।
तब आयो मुनि पासि चरण सिर नाइया।
सकल कांमनां मेटि धरम उर लाइया।।43।।

सुनें साधु के बैंन भयो श्रावक सही।
लीनें द्वादश वरत परम सरधा लही।।
सो पक्षी श्रीराम कनारै राखियो।
वासौं कियो सनेह जिसौ जिन भाषियो।।44।।
पायो रघुपतिसंग गीध बडभाग तैं।
भयो परम द्रिढ धर्म रघू अनुराग तैं।।
सदा रहै रघु संग कभी नांही दुवो।
भयो रांममय गीध व्रती श्रावक हुवो।।45।।
एक दिवस लक्ष्मीश चले रण धारणैं।
खरदूषण खगराव सु मारण कारणैं।।
चलतैं बोले राम सुनौं हरिवीरजी।
मिले खगा अति जोर महारणधीर जी।।46।।
तुम एकाकी जाहु चित्त मुझ क्यों वगे।
करे करार जु जाहु भीर कबहू लगै।।
मैं आंऊं ततकाल पासि तुझ लखमनां।
सो सहनां नवतांव वीर मुझ अतिमनां।।47।।
तबै बोलियो वीरधीर रघुदेव सौं।
भीर परै नहिं मोहि तुम्हारी सेव सौं।।
पैं नहिं मेटौं देव सबद तुम्हरौ कभी।
करूं जु हौं हरिनाद प्रभू आज्यौ जभी।।48।।
इहै भ्रात कौ बैंन रघू उर बंधियो।
भक्तवछिल रघुनाथ वीर जाकौ हियो।।
तह आयो लंकेस कपट कौ सदन जो।
देखि जु सीता रूप भयो वश मदन सो।।49।।
सीता लेवे काज सु बूझी देवता।
विद्या बोली देव इहै नहिं सेविता।।
मैं ल्यावे सक नांहि इहै मोटी सती।
जौ तू लेय उपाय कहौं पिरथीपती।।50।।

लखमन गइउ झुझार युद्ध करिवे सही।
सिंहनाद कौ भ्रांत थकी परचौ कही।।
करि तू वह हरिनाद जाय ज्यौ राघवो।
भाई निकटि महंत महाभड साधवो।।51।।
लखमन ऐसो नांहि जाहि भै ह्वै कभी।
कियो वहै हरिनाद दसानन सिय खुभी।।
विद्या कै उपदेस नाद जब खगि कियो।
रघुपति जांन्यौं नाद इहै लखमण भियो।।52।।
मैं जाऊं अब वेगि जहां मम भ्रात है।
भाई मेरा प्राण सरव सुखदात है।।
लैकैं धनुष सु बाण चले रघुनाथजी।
राख्यौ सीतां पासि गीध व्रत साथ जी।।53।।
आयो सीतां लैंन असुर दसमुख जिको।
वासों भिड्यो जु गीध राम वल्लभ तिको।।
रावण अतिबल जोर गीध को वस कहा।
पर्यौ धरणि मैं गीध इहै निश्चय लहा।।54।।
लैकै रघुपति नारि गयो राक्षस पुरी।
धरी महामति मूढ विचारी अति बुरी।।
देखि राम कौं पासि सबद बोल्यौ हरी।
तुम क्यौं आए नाथ भीर मुझ ना परी।।55।।
बोल्यो श्री रघुदेव सबद सुनि आइयौ।
मैं नहि कीनौं कोय हरी यों भाषियो।।
प्रभू वेगि दे जाहु जहां है जांनकी।
महासती कौं छोडि अये नहिं स्यान की।।56।।
इहै सबद है नाथ किनी पापी कियौ।
सीतां की सुधि लेहु सु कंपै मम हियो।।
आयो जब रघुनाथ वीर देख्यौ विभूं।
देखै तो सिय नांहि पड्यो धरणी प्रभू।।57।।

उठि कै देख्यौ गीध कंठगत प्रांण जो।
दियो वाहि जिन नाम धन्य भगवान सो।।
सुनें राम के बैन गीध चित्त धारि कैं।
पायौं पंचम सुर्ग अखिल अघ टारि कै।।58।।
भव अंतरि वह गीध रामपुरि जाय है।
करि वल्लभ रघुनाथ भ्रमण नहिं पाय है।।
रघुपति रावण जीति राज बहुदिन कियो।
सकल त्यागि जगजाल अखैपुर जिन लियो।।59।।
रघुपतिकैं परसाद बहुत प्राणी तरे।
शुद्ध हु वीर भुदेव अखिल परकति हरे।।
तू रघुपतिमय देव गीधतारक प्रभू।
तारे जीव अनेक तू ज खेवट विभू।।60।।
ग्रीवा नाय र नाथ तोहि जे सिर नवैं।
ते नर अनये हौंहि अखिल पातिग चवैं।।
गीतगान करि तोहि असुरसुरनर जपैं।
तू गीतादिक रहित तोहि लखि मुनि तपैं।।61।।
गी कहिए गीनाथ नांव वांणी सही।
तू गीभासक देव सकल श्रुति जिन कही।।
तेरी गी परमांन और की ठीक नां।
तू गीर्वाण पतीश कभी जु अलीक नां।।62।।

(दोहा)

गुण्य गुणाकर तू प्रभू, गुणांभोधि गुणरूप।
गुणनायक गुणग्रांम शिव, तू गणज्ञ गुणभूप।।63।।
तू गुणादरी गुणपति, गुणछेदी गुणनाथ।
गुणी गुणद गुरतर गुरु, गुणमूल जु गुणसाथ।।64।।
गुणनिधांन गुणवान जिन, गुपत गुणातम टेव।
तू सु गुपत गुणगण मई, गुणातीत गुणदेव।।65।।

गुणाधार गुणधार तू, गुणगंभीर गुणनींव।
गणिक गुंसांई गुणभरित, गुण पालक गुण सीव।।66।।
गुह्य अखिल इंद्रीनि तैं, गुणसमुद्र तू गुह्य।
अखिल प्रकासक अखिलमय, तोतैं सकल अगुह्य।।67।।
गुफावास कर जे मुनी, तोहि जपैं जगदीस।
तोमैं चित्त लगाय कैं, हौंहि जगत कै सीस।।68।।
तजि गुमांन जे नर प्रभू, तोहि जपै मन लाय।
ते जन पावै परम सुख, हौंहि अखिल जगराय।।69।।

(सोरठा)

जीवसमास गुनीस, तैं ही भाषे जग प्रभू।
षट् घटि थावर बीस, बीस चतुर्थम जंगमा।।70।।
चौ थावर बसु भेद, सूखिम बादर भेद तैं।
वनसपती षट वेद, मूल वनस्पति भेद द्वै।।71।।
सुप्रतिष्टो अप्रतिष्ट, ए प्रत्येक जु भेद हैं।
नित्य र इतर अनिष्ट, सूक्षम वारद भेद चौ।।72।।
द्वै चौ मिलि षट भेद, अष्ट मिलें दस च्यारि ए।
ए थावर के भेद, तैं जु किए निरधार सब।।73।।
त्रय विकलत्रय जांनि, अर पंचेद्री भेद हैं।
संज्ञ असंज्ञ सु मांनि, सब मिलि ए गुन्नीस है।।74।।
गुण गुणि भेद अभेद, तैं ही भाषे भेद सहु।
गुणातीसौं सब भेद, ए रतन त्रय के तुम कहे।।75।।
दरसन के वसु भेद, अर दसु भेद सुबोध के।
चारित तेरा भेद, सब मिलि गुणतीस है।।76।।
गुणतालीसौं लोक, देवलोक मैं तुम कहै।
सुरग सु षोडस थोक, नवनव पंच सु ऊपरैं।।77।।
पाथड हैं गुणचास, सातौं नरकां मांहि सब।
तेरा ग्यारा भास, नव सप्त च पच त्रय इका।।78।।

भुगते नंती बार, तेरी भक्ति बिना प्रभू।
तेरा भक्ति उधार, नरकांतक तू देव है।।79।।

(अरिल्ल)

गूढ़ स्वभाव जिनिंद सदा तू सब पती।
महिमा तेरी गूढ लहै नहिं गणपती।।
तू गूढातम देव निरंतर सब मंही।
मैं मतिहीन अयांन भेद पायौ नंही।।80।।
गूढगती गति दूर सकल कौ तात तू।
गूढेंद्रिय अघचूर जगत कौ पात तू।।
तेरी भगति जु ईश मूढमति नहिं करै।
गूगल खेय र तुच्छ देव पूजत फिरै।।81।।
गूंथे द्वादस अंग प्रकीरण विस्तरा।
सुनि तेरी धुनि दिव्य बखाणैं गणधरा।।
तू अनंत भगवंत अनाहत रूप है।
गूंथक सबकौ तू ज सर्व जगभूप है।।82।।
गेह देह तव नहि तू जु ज्ञानी प्रभू।
गेह वसक तुव भेद लहैं नाहीं विभू।।
गेह त्यागि जे साध धरै तुव ध्यान जे।
तेरी भक्ति प्रसाद गहैं तुव ज्ञान ते।।83।।
ज्ञेयरूप तू भूप ज्ञेय ज्ञाता सही।
सकल गेय कौ नाथ ज्ञेय थिति जिनि कही।।
ज्ञेयांतर छेदी जु ज्ञेय प्रकास तू।
ज्ञानावरणी नासकरण शिवभास तू।।84।।
गैल तिहारी अनत ज्ञान सुख दरस है।
वीरज आदि अनंत परम गुण परस है।।
गैल तिहारै संघ लगे चव भेद जी।
हमकौ लै प्रभु गैल मोहमल छेद जी।।85।।

ग्रैवयकलौं जीव गये बहु बार जी।
तप करि पाए ग्रीवन पहुंचे पार जी।।
पार पहुचै सो जु जो जु तुव दास है।
तुव परसाद स्वरूप पाय सुखरासि ह्वै।।86।।

(दोहा)

गो कहिए इंद्रीनि कौं, गो कहिये जल नांम।
गौ कहिए वांणी जु कों, गो कहिए सुरधांम।।87।।
गो इंद्रायुध है सही, गो खग अरु गो छंद।
गो कहिए पृथ्वी जु कौं, गो किरणि जु नहिं मंद।।88।।
गो है नांव अकास कौ, गो कहिए तरु नाम।
ए सब गो कहिए सही, तू सबमय सिवधांम।।89।।

(अरिल्ल)

गो है वज्र सु नाम तू जु वज्रांग है।
वज्रघात भय नासकरण परमांग है।।
वज्र चित्त करि जो जु सकल परिग्रह तजै।
मोमचित्त ह्वै दास नाथ तोकौं भजे।।90।।
गोपति तू जगदीस महागोरख जती।
तू गोरख गणनाथ सदा गोविद पती।।
तू गोपाल प्रपूज्य अखिल गोपाल है।
गौरक्षक तू नाथ परम अघ टाल है।।91।।
गोपति पति गोजीत निरक्षर भास तू।
गोधारक धनपाल सकल गोपास तू।।
गोचर केवल मांहि अगोचर तू सही।
गो इंद्रीगण जीत अटल पद निज लही।।92।।
गो कहिए जल नाम तू जु जलरूप है।
जल तैं अधिक सु सीत नहीं जड़भूप है।।

गो कहिए वाणी जु तू जु तसु भास है।
गोपति तेरौ दास तू ज तस नाथ है।।93।।
गो कहिये सुरधाम सो न दासा चहैं।
तोही मांहि जु लागि एक तोही गहैं।।
गोधर वज्रीदास तू जु गोधरपती।
गोधर ध्यावै तोहि तू जु अदभुत जती।।94।।
गो कहिए खग नाम सकल तुझ साथ है।
गो है छंद जु नाम छंद विनु नाथ है।।
सकल छंद परकास अखिल व्यापक सही।
गो कहिए भू नांम तू ज भूधर वही।।95।।
गो है किरणि सु नांम किरणिपति तू जती।
सहसकिरणि तुव दास नंतरश्मि जु तती।।
गो अकास सम रूप परम तत भेसु तू।
गौ सिर जाकौ वास अलख निरलेस तू।।96।।
गो कहिए तरु नाम तू जु जिन रूख है।
दरशन वीज दयाल तत्त्व रुचि भूष है।।
ज्ञांनांकुर जगदेव व्रत्त पत्रो सदा।
भाव पुष्प धर तू जु नांहि पतझर कदा।।97।।
प्रशम डाल घनछाय सपक्षी उच्च तू।
मुनि पंखिनु कौ वास सदा अत्युच्च तू।।
कीरतिभास सुवास मुक्ति फलदाय तू।
अटल अनादि अछेह सकल जगराय तू।।98।।
गो कहिए गो मांहि गाय का नाम है।
गोसुत सम अतिमूढ हमारा धाम है।।
गोसुतता मुझ मेटि चिदातम भाव दै।
तू ज्ञानी परसिद्ध परातम भाव है।।99।।
गौ कहिए श्रुति मांहि सरस्वति नांम है।
सरस्वति तेरी वांणि जगत विश्रांम है।।

सरस्वति करि तू गम्य अलख स्वामी प्रभू।
गौ तुझ मुखउतपन्न तू जु नामी विभू।।100।।
गौतम मुनि तुव पाय भयौ तुव गणधरा।
तू गौतम ऋषितार अखिल तारणहरा।।
गौतम कौ है नाम इंद्रभूती धनी।
इंद्रादिक तसु दास वह जु तेरौ मुनी।।101।।
गौण मुख्य के भेद तैं जु परगट कहे।
तू नहिं गौण सुरूप अखिल परकति दहे।।
अवर सकल हैं गौंण तू ज मुखिरूप है।
सब तेरे हैं दास तू ज जगभूप है।।102।।
ग्रंथिभेद तू देव ग्रन्थ सब रहित है।
ग्रन्थ सकल प्रकाश करण गुण सहित है।।
ग्रन्थ श्रवण करि ग्रन्थ सागि जे तुव भजैं।
अखिल आपदा मूल भवोदधि ते तजैं।।103।।
गंध रहित तू देव सदा जु अगंध है।
तू निरगंध निरूप अगंध अबंध है।।
गंजदात तू नाथ अखिल गुण गंज है।
तोहि न गंजै कोय अगंज अभंज है।।104।।
गंगा जल समचित्त शुद्ध करि तुव भजैं।
सो पावै तुव लोक सकल परकति तजैं।।
गंगादिक देवी जु सर्व तुव दासिका।
तू गंगादि अधीस सर्व सुखरासिका।।105।।
तू गंगादि सुनद्य भेद भाषक सही।
गंधर्वनि कौ नाथ सर्व सुर नाथ ही।।
तू गांगेय उधारकरण जगदीस है।
तेरौ है गांगेय तू जु तसु ईश है।।106।।
गांधारी के पूत विकलमति जे भये।
तोहि न ध्यायो नाथ कपट मैं बहि गए।।

तिन नहिं पाई जीति नास वनकौ भयौ।
कुंती पुत्रनि ध्याय परमपद निज लयो।।107।।
करि गुंजार जिनेश तोहि जे पूजही।
काम क्रोध मद मोह तिनही नहिं पूजहीं।।
तेरे भक्त जिनेश मोह मद क्षय करैं।
तू निरमोह महेस तोहि मुनि उर धरैं।।108।।
गंतव्यं तुव धांम जहां तुव बिंब है।
तेरी प्रतिमा पूज्य सुरासुर मुनि कहैं।।
तेरी अरचा अरचि लहैं सुख सासता।
तू अव्यय जगदीस जु अवर अशाश्वता।।109।।
तुव पद कमल समान दास जो भ्रमर है।
चरण कमल कौ भ्रमर गुंजरवकार ह्वै।।
सो पावै निज वास परम मकरंद जो।
तोतैं विमुख जु होय नहीं बुध मंद सो।।110।।
गंधपूति दुरगंधि देह मम सांइयां।
तू करि ज्ञान शरीर विदेह अनामियां।।
तू है हसतीगंध सुगंध शरीर जी।
अर सब गंधवितीत अरूप अभीर जी।।111।।

(दोहा)

ग: कहिए पुस्तक विषै, स्वर कौ नाव जिनेश।
स्वर धरि गांवहि तोहि जे, ते पद लहहिं सुरेश।।112।।
ग: कहिए सिद्धांत मैं, गोसमूह कौ नाम।
गोपुत्र जु सम नरपसू, जे तुव भजै न राम।।113।।
ग: गायो सूत्र जु विषै, प्रगट जु गंधर्व नाम।
गंधर्वादिक देव जे, ते गांवैं तुम धाम।।114।।
ग: भाष्यौ गाथानि कौ, ग लिखियो फुनि गान।
सब गाथा अर गीत मैं, तेरौ ही प्रभु ध्यान।।115।।

अथ बारा मात्रा एक सवैया मैं—

गरव कौ हारी तू जु गाफिली न तेरै पूजा,
गिनती जु नांहि तेरे गुननि की नाथ जी।
गीरवाण नायक तू गुरनि को गुर सदा,
गूंथे द्वादशांग नाथ गूढ अति साथ जी।
गेह नांहि देह नांहि गैल तेरी लोक सब,
गोपती जु गोरख तू देव बडहाथ जी।
गोतमको तारक तू गौझारूप नांहि कभी,
ग्रंथिभेद ग्रन्थतिक्त ग:सुरूप पाथजी।।116।।

(दोहा)

गरव हरै सबकौ प्रभू, ऐसी तेरी शक्ति।
सोई कमला लक्ष्मी, भाषा दौलति व्यक्ति।।117।

इति गकार संपूर्णम्।

घ

आगैं घकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छे—

घटस्थमघटं देवं, घाति चाघातिवर्जितं।
वंदे देवाधिपं देवं, धर्मचक्राधिनायकम्।।1।।
घृतम्नवादिऋद्याढ्या, मुनयो शत्पदाबुंजं।
भजंति परमार्थज्ञा, तिक्तामायाकदंबकम्।।2।।
घृतेक्षुदधिदुग्धारख्या:, सागरा येन आगमे।
भासिता तं नमस्यामि, घुटोत्कचगुरोर्गुरुम्।।3।।
घूकतुल्या न भव्या ये, ये न दृश्यन्ति भास्करं।
बोधाह्निभासकं वीरं, वंदे मार्गप्रकाशकम्।।4।।
घोणाविवरमध्यास्य, स्थितं पुरचतुष्टयं।
येन व्यक्तीकृतं लोके, तं वंदे परमेश्वरम्।।5।।

घोरंतपो घोरपराक्रमाढ्या, ऋद्ध्याधिपा ब्रह्मपरायणा ये।
मुनीश्वरा नाथ विहाय क्वापि, त्वामन्यवस्तुं न विलोकयन्ति।।6।।
घंटारवो ते जिनमंदिरे भो, भव्यैः कृतो मे घरवं दुनोति।
घश्चापि मेघो जलदो त्वमेव, ज्ञानामृतं वर्षति चित्तभूमौ।।7।।

(दोहा)

घर घर की सेवा करत, उपज्यौ अति गति खेद।
अब तू अपनी टहल दै, लै निज मांहि अभेद।।8।।
घर घरणी मैं हम लगे, धन धरणी की चाहि।
चाहि हमारी मेटि सब, बहु भरमावै काहि।।9।।
घटि बधि तेरै कछु नहीं, तू घटि बधि तैं दूर।
घटि बधि मेरी मेटि प्रभु, करि निजरस भरपूर।।10।।
घन सम जिन तू है सही, कर्मपहाड़ प्रभंज।
घन ऊपम तू भाषियो, धर्म सस्य कर गंज।।11।।
घरी घरी यह जाय है, मेरी आयु जिनेस।
तेरी भक्ति बिनां विफल, वीत्यौ जनम असेस।।12।।
घस्मर कहिए भांनु कौ, घस्मर नहिं तो सौ जु।
बाहिर भीतरि तिमर हर, तू घस्मर सबकौ जु।।13।।
घटहर घटभेदी प्रभू, घटातीत घनपाल।
घटरक्षक घनजीत तू, घटनायक अघटाल।।14।।
घनप्रदेस घनतार तू, श्री घनश्याम अधीस।
घनशरीर घनस्वामि जिन, तू घटस्थ जगदीस।।15।।
घटपटादि ज्ञायक प्रभू, तू घट भिन्न अरूप।
घट घट अंतर लीन तू, अघट अघाट अनूप।।16।।
घातरहित तू घातहर, घातिहरण जिनदेव।
घाट वाट अरिठाट मैं, शांति करै तब सेव।।17।।
घाति कर्म मुझ मेटि तू, अर प्रभु मेटि अघाति।
सकल कर्म निवृत्ति करि, हरि जु अनादि अराति।।18।।

काल बसूया जगत मैं, हम जु ह्वै रहे घांघ।
घांघ पणौ सब मेट जिन, तू सब सुख की थांघ।।19।।
घा कहिये सूत्र जु विषै, नाव किंकणी ख्यात।
किंकणि सम वाचालता, मेटि मौंनि दै तात।।20।।
हम घायल हैं मोह के, घाव लगे अति जोर।
निज औषदि दैं घाव भरि, तू जु मोहमद मोर।।21।।
घासफू स सम जगविभव, हम नहिं चाहै याहि।
कणरूपा निजभक्ति दे, अवर नहीं कछु चाहि।।22।।
घां तेरी चौघैं प्रभू, वहै द्रिष्टि दै नाथ।
औरै घां कौ चौघिवौ, तू छुडाय बडहाथ।।23।।
घ्रितवर दधिवर ईश्वर, क्षीरोदधि सब सिंधु।
तैं ही प्रगट कहैं प्रभू, तू उत्तम गुण सिंधु।।24।।
घिर्यौ करम के घेर हूं, तू छुडाय जागदेय।
छूटि भरमतैं मैं सही, करिहौं तुम्हरी सेव।।25।।
घिणिधिणावणौं इह जु वपु, यामैं वास न इष्ट।
तनु धरिवौ अब दूरि करि, दै निर्वाण प्रतिष्ट।।26।।
घ्रितदधि, क्षीर सु ईख रस, लवण तेल रस भेद।
इनकी गृद्ध सु त्यागि कै, धरि कै व्रत्त अभेद।।27।।
नीरस भोजन लै प्रभू, जे ध्यावैं मन लाय।
तेरे चरण सरोज ते, हौंहि त्रिलोकी राय।।28।।
घी तेल जु जल चरम मैं, धर्यौ मांस सम होय।
हींग र सीधौ हाट कौ, भक्षजोगि नहिं सोय।।29।।
भक्षाभक्ष विभेद बहु, तुम ही भाषे देव।
तजि अभक्ष सब हेय कौं, करैं भव्य तुम सेव।।30।।
घीया तेला आदि दै, जे बहुबीजा वस्तु।
ते सब तैं ही निदिया, श्री जिन परम प्रशस्त।।31।।
वंदि अचेतन कै पर्‌यो, मैं घीघांऊं नाथ।
मेरी कूक सुनौ प्रभू, लेहु आपनै साथ।।32।।

घीस्यो मोकौं बहुत प्रभु, कर्म मिले वसु भेद।
अध ऊरध मधि लोक मैं, दियौ बहुत इन खेद।।33।।
घुण ह्वै मोकौं विधि लगे, कियो सु निकणौं स्वांमि।
इन तैं मोहि छुडाय प्रभु, तू है अंतरजांमि।।34।।
घुय होय जु मैं रमि रह्यो, कियो मोह मदपाँन।
तू दै श्री जिन चेतना, सुनि विनती धरि कांन।।35।।
घुटोत्कछ के तात कौं, तुम ही कीनौं मुक्त।
घुटोत्कछ कौं सुर कियौ, तुम हौ तारण शक्त।।36।।
घुघ भयो मैं मूढ़मति, लेटूं कूडे मांहि।
तू कूडे तैं काढि प्रभु, लै धरि अपनै पाँहि।।37।।
घूक समान जु हौं प्रभू, नहिं लखियो तू भान।
हमरी चक्षु उघारि हरि, करि सचक्षु भगवांन।।38।।
जिन आंखिन सौं तोहि प्रभु, देखूं त्रिभुवन राय।
सो मोकौं तू चक्षु दै, अहनिसि सेऊं पाय।।39।।
घूकपणौं मुज मेटि शिव, दै चकवै कौ भाव।
चकवो चाहै दिवस कौं, ज्यौं चाहूं तुव पाव।।40।।
घूनडता मम मेटि विभु, दै सरलातम भाव।
घूनड तोहि न पावहीं, पावैं सरल स्वभाव।।41।।
घूमत घूमत हौं फिर्यो, महा मोह मद पीय।
हमरी घूम मिटाय प्रभू, तू तारक अदुतीय।।42।।
घू कहिये सिद्धांत मैं, पीड़ा नाम महेश।
हमरी पीड मिटाय विभु, तू जगेस मुनि भेस।।43।।
घूर्यमाण यन अघनि तैं, हौं दुखिया जगजीव।
मेरौ दुख जु मिटाय प्रभु, तू मुनीस जगपीव।।44।।
घेरा मांहि जु हौं पर्यौ, तू घेरा तैं काढि।
दै निजभाव सुलक्षणा, पासि हमारी वाढि।।45।।
घेवर फैंनी आदि दै, तजि कैं सब ही स्वाद।
रूखा टुका खाय कैं, करिहैं तोकौं याद।।46।।

तोघैं चोधैं नाथ जी, सुर नर पति मुनि ईस।
तोसौ देव न दूसरौ, तू ज सही जगदीस।।47।।
सब अक्षर मात्रांनि मैं, तू ही तिष्टै देव।
घैकाराक्षर हू तुही, तू ही अनंत अभेव।।48।।

(सोरठा)

घोर वीर तप भास, घोर भाव वर्जित तुही।
घोर जु रोर विनास, घोरवरे कौं निंदिक जु।।49।।
घोष शबद कौ नांम, तैरै सबद न रूप जी।
तू घोषक निज भांन, घोटकादि तेरै नहीं।।50।।
घोटकादि चतुरंग, सेना सकल सु त्यागि कैं।
तोसौं लांवैं रंग, तेई तोकौं पाँवही।।51।।

(भुजंगी)

तुही घोर तापेश ईशो अतापी। तुही घोर वीरो मुनीशो अपापी।।
तुही घोर ब्रह्मा गुणाचार कोवा। तुही घोरता सर्वहारीश्वरो वा।।52।।
तुही घोर दुरकादि टारी अटल्ला। तुही घोर संताप तापी अचल्ला।।
तुही घोर संसारतारी अमल्ला। तुही घोरकर्मा निकंदो अकल्ला।।53।।
तुही है निषेधा बड़े घोल का जी। तु ही है उछेदा दधी द्वैदलां जी।।
तुही घोष धर्मी तुही घोष मर्मी। तुही घोष सत्यो अहिंसो विकरमी।।64।।
भयौ एक चौरो द्विजो सत्यघोषो। तुझै नांहि ध्यायो जिनी पाप पोषो।।
वृथा सत्यघोषो कहायो जु पापी। हरे रत्न जानै भयो जौ सतापी।।55।।
तुझैं नाथ ध्यांवै तिके सत्यघोषा। नंही तोहि गांवैं जिके एन कोषा।।
तुझैं ध्यावतैं नाश ह्वै घोर कर्मा। तुही वीतकर्मा विभासी सुधर्मा।।56।।

(सोरठा)

घोर भयंकर नाम, तू नहिं देव भयंकरा।
सर्वभयं हर राम, तेरौ सरणौं मोहि दै।।57।।*

---

* छन्द 58 पढ़ा नहीं जा सकता।

(अरिल्ल)

घोटकादि बहिरंग सैनि जे त्यागि कैं।
ह्वै निरग्रन्थ स्वरूप रहै तुव लागि कैं।।
ते पावैं तुव दरस परमरस परस ह्वै।
तोतैं हौंहि अभेद त्यागि संकल्प ह्वै।।59।।
घो कहिए श्रुति मांहि घंट का नाम है।
तू घंटाधर देव धुजाधर रांम है।।
मोकौं दै निज सेव ध्यांन तेरौ करूं।
निति प्रति देवल जाय नांम तुव उच्चरूं।।60।।
घौरक तेरी मांनि करम सब नासिया।
घौरक तुझकौं नांहि सकल तत भासिया।।
घौरक तेरे दास किसी की नां गिनैं।
घौटकादि सब त्यागि नाथ तोकौं मुनैं।।61।।
घंटा तेरै द्वार सबद अति ही करैं।
घंटा कौ सुनि नाद सकल पातिक डरै।।
जे निति देवल जाय घंट वही।
ते ह्वैं परम कल्याणरूप शिव पाँवही।।62।।
घंटा गज कैं कंठ फबै नहिं स्वांनं कैं।
घंटा तेरै द्वार छजै नहिं आंन कै।।
जे तौकौ तजि नाथ आन कौं ध्यांवही।
ते दुल्लभ नरदेह व्रथा जु गुमांवही।।63।।
घः कहिये श्रुति मांहि मेघ का नांम है।
तू है मेघ स्वरूप परम रस धांम है।।
त्रिश्ना कौ है दाह हमारै अति बड़ौ।
तू अमृत झर लाय पडे कौं करि खडौ।।64।।

अथ बारा मात्रा एक सवैया मैं—

घट घट नायक तू घाति तैं रहित देव,
घिस्यो हूं अनादि कौ सु तू छुडाय मोहि जी।
घीस्यौ मोहि करमनि फेरयौं तीनि लोक मांहि,
घुण होय लागे वै जु कहा कहूं तोहि जी।।
घूंमता मिटाय मेरी घेरा तैं निकासि ईश,
घ जु चोघै रावरी सुद्रिष्टि तेरी होहि जी।
घोष तेरौ सुनिकै न घौरक अघनिकी जु,
घंटाघर घ:स्वरूप देख्यौ इक टोहि जी।।65।।

(दोहा)

तू घस्मर जग कौ सही, तेरी रश्मि जु लच्छि।
कमला पद्मा श्री जिको, सा दौलति परतच्छि।।66।।

इति घकार संपूर्णम्।



आगैं ङकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

ङकारो भैरवो प्रोक्तो, भैरवा यक्षनायका:।
सर्वे सुरा भजंति त्वां, शांतरूपं जगद्गुरुम्।।1।।
भैरवो च भयंकारी, कर्मोपरि महाबल:।
सर्वोपरि कृपालो वा, स देवो नापरो भुवि।।

(दोहा)

ङ कहिये आगम विषै, भैरव नाम विख्यात।
भैरवादि सब यक्षगण, तेरे दास अजात।।3।।
तू कारुण्यमई प्रभू, भैरव रूप न कोय।
भैरव नाम भयंकरा, तू कृपाल अति होय।।4।।
ङ कहिये सिद्धांत मैं, नाम व्यसन कौ देव।
व्यसन जु कहिए कष्ट कौं, कष्टहरण तुव सेव।।5।।
ङ कहिये पुस्तक विषै, स्वर कौं नांव प्रसिद्ध।
सप्त स्वरादिक भेद जे, तैं ही भाषे सिद्ध।।6।।
स्वर धरि तोकूं गांवही, इंद फनिंद नरेस।
चंद सूर खग सूर अवर, तेरे दास जिनेस।।7।।
स्वर धरि तेरौ जस कहैं, नव नारद अति गान।
एकादस सब रुद्र जे, तोहि जपैं भगवान।।8।।
नरपति नारायण प्रभू, तोहि जपैं जगदेव।
प्रतिहरि हलधर आदि सब, करैं तिहारी सेव।।9।।
चक्री अधचक्री सबै, कुलकर अर सब काम।
तीर्थंकर के मात पित, तोहि जपैं अति धाम।।10।।
चौईसौं मात पिता, अर चौईसौं काम।
द्वादस चक्री च्यारिदस, कुलकर अति सुखधाम।।11।।
एक घाटि दस नारदा, एक अधिक दस रुद्र।
नव हलि नव नव अर्द्धचकि, ए सब ज्ञानसमुद्र।।12।।

(सोरठा)

केई तदभव सिद्ध, केई भव कै आंतिरै।
ए निर्वाण प्रसिद्ध, इन मांहै धोखा नहीं।।13।।
सब है तेरे दास, स्वर धरि तोकौं गांवही।
तूं काटन जगपास, तेरौ सरणौं मोहि दै।।14।।

(दोहा)

तीर्थंकर देवाधिपति, जे सब पूजि प्रसिद्ध।
ते उ तप कल्याण मैं, कहै सु उं नम सिद्ध।।15।।
तू श्री सिद्ध अनादि प्रभु, सब तोकौं गावंत।
तो सम आतम भाव लखि, तेरो पद पावंत।।16।।
स्वर धरि तोहि न गाइयो, मैं मूरिख मतिहीन।
अब तू मोहि उधारि हरि, तू पालक हूं दीन।।17।।

(सोरठा)

तस्कर नांव प्रसिद्ध, ङ कहिए आगम विषै।
तसकर पंच असुद्ध, इनतैं मोहि बचाय तू।।18।।

(दोहा)

तस्कर कहिए चोर कौं, पाचौं इंद्री चोर।
मन मत्सर मद मोह मल, ए तस्कर कर भोर।।19।।
तस्करगण तैं छूटि कै, लै रत्नत्रय ऋद्धि।
तेरै वासि वसैं प्रभू, जहां नहीं घटि वृद्धि।।20।।
चोर न तोकौं पाँवहि, नहि पाँवैं चमचोर।
चोरी जारी सब तजैं, तब देखैं तुव वोर।।21।।
परनारी कौं मात सम, परधन दैखैं धूरि।
सब प्राणी कौं आप संम, तब पाँवैं सु हजूरि।।22।।
ङ भैरव अर व्यसन है, ङ स्वर तस्कर जांनि।
नाथ रहित हर कथक प्रभु, तजक सुमन उर आनि।।23।।

(सवैया)

भैरव न तू जु देव भैरव करैं जु सेव,
व्यसन कौ नांम नांहि तेरी छत्र छाय मैं।
स्वर धरि गांवैं तोहि सुर नर नाग मुनि,

सर्वे लोक माय रहे तेरे गुन काय मैं।
तस्कर न पाँवैं वास चोरी नांहि वास मांहि,
वासना न तेरै देव नांहि कभी माय मैं।
नमो नमो नाथ तोहि दै जु निजभाव मोहि,
और कहा जाचूं ईश आवैं नांहि दाय मैं।।24।।

(दोहा)

ङेभ्यांभ्यस् ङसिभ्यांभ्यसि, ङसिओस जु आमो जु।
ङी वोस जु सुप शब्द ए, व्याकरणी रांमो जु।।25।।
भाषै शब्द विचार सहु, वाकी जो प्रभुता जु।
सोई शक्ति रमा विभा, दौलति अति विगता जु।।26।।

इति ङकाराक्षर संपूर्णम्।

इति श्रीभक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन-अध्यात्मबारहखडी-नामध्येये जिनसहस्त्रनाम-एकाक्षरी-नाममालादि-अनेकग्रन्थानुसारेण भगवद्भजनानंदाधिकारे आनंदरामसुतदौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते ककारादिङकारांतपंचाक्षरप्ररूपको नाम तृतीयः परिच्छेदः।।3।।

चतुर्थ परिच्छेद



आगैं चकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

चतुर्वक्त्रश्च चारित्री, चिच्चमत्कारचिन्मयः
अचीवरो निराभर्णो, न च्युतो जन्ममृत्युहा।।1।।
चूडामणिस्त्रिलोकेशो, चेतनाधिष्ठितो विभुः।
चैतन्यादिगुणाधीशो, चोत्तमो मोक्षदायकः।।2।।
चोलायास्तारको देवो, मनश्चौरो न चौरकः।
चौरापहारकश्चन्द्रो, चंचत्कांचनवर्णकः।।3।।
चःप्रकाशो महाभागो, सर्वलोकेश्वरो प्रभुः।
मदीयां चित्तभूमौ सः, सदा तिष्ठतु निश्चलः।।4।।

(सोरठा)

चतुरानन तू देव, चतुर्वक्त्र चतुरस्रधी।
तू चतुरास्य अभेव, नाथ चतुर्मुख तू सही।।5।।
चरथिर कौ सु गुरू ज, चतु शरण मंगलमई।
चतुरुत्तम तू पूज, चिंताहर चिंतामणी।।6।।

च कहिये श्रुति मांहि, नाम चंद्रमा ख्यात है।
तो सम चंद्र सु नांहि, नंत कोटि जौ चंद ह्वै।।7।।
च कहिये जु प्रसिद्ध, नांव चोर कौ सूत्र मैं।
अंजन हूवो सिद्ध, सब चोरी कौं त्यागि कै।।8।।
च नहीं पाँवै तोहि, तू चोरनि तैं दूरि है।
चोरी वर्जित मोहि, करि हरि देव अनंतधी।।9।।
च सु भाख्यौ श्रुति ठीक, नांव सु सोभा प्रगट है।
तू जिन रहत अलीक, सब सोभा कौं पुंज तू।।10।।
चतुहारी जगनाथ, कहि न सकैं सुर नर मुनी।
सोभा तेरैं साथ, और न सोभा जगत मैं।।11।।
च कहिए जु विख्यात, नाम बहुरि कौ सब कहैं।
बहुरि न आवै तात, जे तोमैं तन मन धरैं।।12।।
चतुपक्षांतर नाम, भास्यौ श्रुति सिद्धांत मैं।
पक्षांतर नहिं काम, तेरी पक्ष धरैं प्रभू।।13।।
पक्षांतर परकास, उभयातम तू देव है।
व्यवहृति निश्चय भास, द्वै नय थापक तू सही।।14।।
अतिक्रम वितिक्रम दोष, अतीचार णाचार ए।
चउ दोषनि तैं मोष, श्री जिन मोहि करौ तुमे।।15।।

(चौपई)

अनत चतुष्टय भाव तिहारा। संघ चतुर्विध तारणहारा।।
चतुरनिकायक देव अधीसा। तू सब देवनि कौ प्रभु ईसा।।16।।
चउ चउ वन इक इक मेरुंदरि। चउ चउ मंदिर इक इक अंदरि।।
पंच सु मेंरा वीस जु वन फु नि। वीस वनां असी तुम धर मुनि।।17।।
चउ बन फुनि जु अशोक सप्तछंद। चंपक आम्र जु सर्व सोभ हद।
समवसरण के माहि जु चारयों। जिनहि लखैं ह्वै आनंद भारयों।।18।।
चतुर अपार भरित चतुराई। तू जु चतुर्गति तार कराई।।
वेद चतुर्विध भासक स्वामी। वेद विदांवर अंतरजामी।।19।।

प्रथम करण चरणानु स जोगा। फुनि द्रव्यानुजोग अतिजोगा।
एई वेद च्यारि जग मांही। सब गिरंथ इनकी परछांही।।20।।
चतुर प्रकार निक्षेप विख्यापक। चउविधि दुष्ट कषाय प्रणासक।।
चउविधि विकथा निंदक सांई। चउ असनादि वितीत गुसांई।।21।।
चउविधि संज्ञा रहित जिनिंदा। चउ मुख दरस प्रकास मुनिंदा।।
भेद चतुर्गति भाषक देवा। चवविधि वरण करैं जसु सेवा।।22।।
चहुं दिसि चहुं विदिसा अध ऊरध। दस दिसि द्रिगपालनि कौ मूरध।।
चउ मैं आदिक भाव न भासा। चउ विधि दान प्रकास अनासा।।23।।
चउ विधि ध्यान विभासक ध्यानी। चउ शिक्षा व्रत देसक ज्ञानी।।
चउ कषाय के चउ चउ भेदा। इक इक ध्यान सु चउ चउ वेदा।।24।।
चउ दर्शन उपयोग सु भेदा। चक्षु अचक्षु सु अवधि अवेदा।।
तू केवलदर्शन जु अभेदा। केवलज्ञानमई सुखवेदा।।25।।
चहु दू आठ बोध उपयोगा। मति श्रुति अवधि सु मन परजोगा।।
केवलग्यांन सु सब मैं सारा।। ए विधि पंच सु समकितधारा।।26।।
कुमति च कुश्रुति कुवधि विनिंदा। ए मिथ्यादृष्टी जु धरंदा।।
केवल दरसन केवल ज्ञाना। बारह मांहि जु दोय प्रधाना।।27।।
इनि दोयनि बिनु निज गुण नांही। इह भाषक तू ही जग मांही।।
चव जंगम अर पंच सु थावर। सब जीवनि कौ तू प्रभु रावर।।28।।
पंच परमपद मैं इक देवा। चउविधि सतगुर सब सुख देवा।।
सिद्ध जु देवा चवविधि श्रीगुर। इन सेयें बिनु लहइ न शिवपुर।।29।।
चउ आराधन चउविधि सरणा। चउ मंगल चउ उत्तम धरणा।।
चउविधि द्रव्य सु क्षेत्र र काला। भाव मिले ह्वै चतुर प्रकारा।।30।।
स्वस्य चतुष्टय धारक तू ही। स्वपर चतुष्टय प्रगट समूही।।
चउ लख जौनि सु देवनि केरी। ते सब अर्चै अर्चा तेरी।।31।।
चउ लख जौनि सु नारकं पापा। तेरे भक्त न पाँवै आपा।।
चउ लख जौंनि पचिंद्री पसु जे। तेरे भक्त न पावैं गति ते।।32।।
चउ विधि लब्धि अनंती बारा। पाई जीवनि नांहि जु पारा।।
करणलब्धि पंचम नहिं पाई। सो हमकौ दै रहित जु काई।।33।।

क्षय उपसम अर लब्धि विसोही। देसन फुनि पावोग जु हौही।।
ए चव प्राणिनि पाई स्वांमी। तू पंचम दै अंतरजामी।।34।।
करणलब्धि कौ स्वांमी तू ही। तातैं वह दे गुण जु समूही।।
चउदस पूरव प्रगटक स्वांमी। चवद प्रकीर्णक भासक नांमी।।35।।
चउदस गुणथांनक तू भासा। चउदस मार्गण तू ज प्रकासा।।
चउदस जीवसमास निदेसा। चवदस विद्या रूप असेसा।।36।।
चउदस शत अर त्रेपन स्वांमी। गणधर चउ वीसनि के नांमी।।
तिनकौ पार करैया तू ही। मोहू दै चिदगुणज समूही।।37।।
चउदस कुलकर पूजित स्वांमी। चवदस स्वर अक्षरमय नांमी।।
चवदस नव पंचानुत्तर मिलि। इनकौ तार तू जु कालगिल।।38।।
चउदह पिंड जु प्रकृति गनेवा। तिनकै पैंसठि भेद जु देवा।।
अष्टाविसंति प्रकृति अपिंडा। ए त्र्यांणव सब नामं प्रचंडा।।39।।
चउदस भ्यंतर संग निकंदा। चउदस राजू लोक कहंदा।।
चउदस रतन तोहि जपि पावै। तू चउदस लख मनुगति गावै।।40।।
चवदस लख साधारण गति मैं। तोहि सु ध्याय न जाय अगति मैं।।
चउदसि कौ व्रत तैं ही भाख्यौ। जौ करिहै जिनि निजरस चाख्यौ।।41।।
चउदस सरिता जे गंगादी। तिनकौ कथक तुही जु अनादी।।
चउदह अतिसय सुकृत जेहो। तिनकौ धारक तू शिव देहो।।42।।
चउबीसौं तीर्थंकर दैव। चवबीसी फुनि रतिपति देव।।
चउबीसौ जिनजननी जांनि। चउबीसौं जिनजनक वंखानि।।43।।
चउबीसो है द्वै विधि संग। चउदह भ्यंतर दस बहिरंग।।
चउबीसौं परिग्रह जौ तजै। ह्वै निरग्रन्थ सु तौकौं भजै।।44।।
लख चवबीस वनसपति जौंनि। चवदह साधारण सब मौंनि।।
दस प्रत्येक मिलैं चउबीस। तूहि जु भाषै जिन जगदीस।।45।।
चउबीसांगुल हस्त जु होय। च्यारि हाथ कौ धनुष जु जोय।।
दोय सहस धनु कौ इक कोस। चउकौसे जो जन बिनु दोस।।46।।
गलणां कौ पहनां चउबीस। अंगुल लंबौ फुनि छत्तीस।
ताहू कौ दोवड करि छांण। ऐसी तू ज बखाणैं जांण।।47।।

चउबीसौं दंडक तै काढि। पुर अविनांसी दै गुण आढि।।
दूजी ग्रीव सु आयु जु ईस। तैं भाषी जलनिधि चउबीस।।48।।
चउबीसी जु अनंती भई। अर ह्वै है जु अनंती नई।।
चउतीसौं अतिसय कौ पुंज। तू जिन अतिशय धर सुखकुंज।।49।।

(अरिल्ल)

जे अतिशय चउतीस कहै तुम्हरे विभू।
दश उपजे तनु साथ परम सुखकर प्रभू।।
दश फुनि केवल मांहि चतुर्दश सुर धरे।
सब मिलि हैं चउतीस कर्मगण क्षय करे।।50।।
चत्वारिंशत नांम कहैं चालीस को।
ईते जु कोडाकोडि पयोधीथिति जु को।।
भागौ चारितमोह तो नखैं जोगिया।
तू दृगमोह विनाशकरण सुख भोगिया।।51।।
सत्तरि कोडा कोडि पयोनिधि दृगहरो।
उतकिष्टी थिति दोयवीस चारित हरो।।
जघनि दुहूं की रहनि एक माहूर्त है।
तेरे दोऊ नांहि मोह जडधूत है।।52।।
चउचालीस जु दोष न धारहि समकिती।
मद अष्टा त्रय मूढ नायतन षटतती।।
संकादी वसुमल जु सप्त अघ विसन हैं।
सप्तभय जु परसिद्ध तिनही ज्ञानी जहै।।53।।

(सोरठा)

अतीचार गनि पंच, सब मिलि चउ चालीस है।
इनहि त्यागि सव संच, है समदिट्ठी गुनमई।।54।।
चउपन दूनै नाथ, सौ ऊपरि अष्टोत्तरा।
माला मणिका साथ, जे सु जपै ते अघ क्षपै।।55।।

(चौपई)

चउसठि चमर जु तो परि ढरै। चउसठि सुरपति सेवा करैं।।
तू सब इंद्रनि वंद्य सु देव। तेरे सुर नर मुनि जन सेव।।56।।
चउसठि सहस सु वरष जु वीर। शिव कुमार वेला धरि धीर।।
पारण भात जु पाँणी लेय। जंबूस्वामि हुवो मुनि ध्येय।।57।।
चउहत्तरि के दुगुनें होय। सौ अठताल प्रकृति सहु जोय।।
तिन तैं मोहि छुडावो देव। दै अपनौ पुर निजरस वेव।।58।।
चउरासी लख जौंनि सु भेद। तिन सब भेदनि कौ तू वेद।।
बावन लाख सु थावर जाति। अर बत्तीस लाख त्रस ज्ञाति।।59।।
सप्त सु नित्यनिगोदि सु सही। सप्त होय फुनि इतर जु उही।।
दस लषवनफति प्रतिइक भाष। ए थावर गति बावन लाष।।60।।
सप्त लाख पृथ्वी की कही। सप्त लाख गति जल की सही।।
सप्त लाख है तेऊ काय। सप्त लाख वाऊ गति भाय।।61।।
द्वै द्वेंद्री द्वै तेंद्री जांनि। द्वै चौरिंद्री निश्चय मांनि।।
जौंनि मनुष की चउदह लाख। चउ लख पंचेंद्रीय सु भाख।।62।।
चउ नारक अर चउ लख देव। लाख बतीस जु जंगम भेव।।
ए चौरासी लख के भेद। तैं ही भाषे भव दुख छेद।।63।।
चौरासी तैं मोहि उतारि। तू प्रभु चौरासी की पार।।
तैं जु निकासे जगगुर पीव। चउरासी तैं केई जीव।।64।।

(अरिल्ल)

चउरासी जु हजार वरष थिति पाथडै।
पहलै प्रथम जु नरकि भोगि श्रेणिक अडै।।
अष्ट कर्म तौ नाथ होय तुव सारिसौ।
महापदम जगदीस आदिगुर तारिसौ।।65।।
चउरासी लख भेद नरक मैं जे बिला।
तीस पचीस र पंच दस जु दस फुनि मिला ।।

तीनलाख फुनि होय पंच घटि इकलखा।
सप्तम नरक जु मांहि पंच ही अतिकषा।।66।।
प्रथमादिक जे सप्त नरक भू अति दुखा।
तिन सबमैं इह भांति भेद चउरसि लखा।।
तू है नर्क उधार देव नरकांत जी।
मेरे पाप निवारि तू ज जगकांत जी।।67।।

(चौपई)

ह्वै चकोर सम जो भवि जीव। तोहि लखै प्रभु चंद्र सदीव।
चक्रवाक कौ भाव जु करै। तो सूरजि मैं तन मन धरै।।68।।
तुव परसाद लहैं निज छती। चमत्कार कारण तू जती।।
चर्म रोम अर अस्ति जु रक्त। मांसादिक तैरै न प्रशस्त।। ।।69।।
तू सब धात र मल तैं दूर। परम पुनीत धरमरस पूर।।70।।
चर्मादिक जे असुचि कुवस्तु। तिनके परस अभख ह्वै वस्तु।।
र्मराम कबहू नहि जोगि। इनकौ निदंक तू जु अरोगि।।71।।
मल मांसादिक मद मधु चर्म। मांखन कांजी मनमथ कर्म।।
ऊमर आदिक जे जु अखाज। तिनकौ निंदक तू जिनराज।।72।।
चढि जगसिखर विराज्यौ देव। चटक मटक नहिं तेरी टेव।।
चणकादिक जे द्विदल जु धांन। दधि जुत अभख कथक तू जांन।।73।।
चरण कमल तेरे जिनदेव। चरण धार मुनि धारै सेव।।
चलण जु तैं जु बतायो नाथ। तसु मग लागि लहैं शिव साथ।।74।।
चरित जु तेरे अति ही सुद्ध। तू शुद्धातम अचलित बुद्ध।।
चलित भाव तेरे नहिं कभी। तू निश्च गति शिवपति अभी।।75।।
चपलाई तैरे कछु नांहि। चपल चवार न तुव पुर जांहि।।
चर्म रंध्र कौ निंदक तू ज। चमचोर न पावैं तुव पूज।।76।।
चक्षु हृदै की खोलि र तोहि। ध्यावै दास करे तसु मोहि।।
चमर छत्र सिंहासन सबै। तोहि छजै और हि नहिं फबै।।77।।
चमरादिक तैं त्यागे देव। ए नहिं त्यागैं तेरी सेव।।
चमरेंद्रादिक तेरे दास। तू सबकौ पति मदन विनास।।78।।

चरथिर तेरौ रूप जिनिंद। चरथिर कौ तू गुर जु मुनिंद।।
चरथिर भेदनि तैं मुझ काढि। आपमई करि भव दुख वाढि।।79।।

(सोरठा)

चरु दीपादिक जेह, कुसम अखित फुनि गंध है।
धूप च जल फल लेह, तोकौं पूजैं सुर नरा।।80।।

(अरिल्ल)

चउ सप्ता अठवीस मूलगुण जे कहे।
तिनके धारक साध तोहि भजि शिव लहै।।
दया सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य जु महा।
पंचम परिग्रहत्याग महाव्रत जे कहा।।81।।
ईर्या भाषा जांनि अवर है एषणां।
आदांन सु निक्षेप चउथी पेखणां।।
परिठवणां है सीमित सर्व अघटाल सो।
ए पाँचौ समिति जु महामुनि पालसो।।82।।
चलै निरखि अर उचित कहै सुभ वचन जौ।
भषै अदोष अहार ग्रहै फुनि निरखि सो।।
मल मूत्रादिक सर्व ठवै निरजीव भू।
पंच समिति कौ भेद कह्यो जिन ज्ञानभू।।83।।
इंद्री पंचनिरोध भेद यह प्रगट हैं।
पंच पंच अर पंच पंच त्रिक अमिट है।
षट आवश्यक भेद सुनौं अब मन धरे।
समता वंदन और थुतीकरण जु करे।।84।।
पडिकमणा सिज्झाव सु काउसग्ग है।
षट आवस्यक भेद कहै जिनमग्ग है।
प्रासुक भूमि जु माहि अडिग आसन महा।
वोढण है नभ और विछांवण क्षति लहा।।85।।

मंजन कौं है त्याग त्याग फुनि वस्त्र कौ।
केसनि कौ है लोच तजन सब शस्त्र कौ।
जौ त्यागै दंतौंन सुगंध जु मुख महा।
ठाढा करखै असन एक टक लघु कहा।।86।।
ए सब हैं अठवीस मूलगुण साध के।
जे पालैं निरदोष हौहिं निरवाध के।
मूलगुणा अठवीस लाख चउरासिया।
उत्तर गुण दै नाथ महासुखरासिया।।87।।

(सोरठा)

पंच पंच अर पंच, षट सत मिलि अठवीस ह्वै।
इनमें दोष न रंच, ए सब हैं सिवदायका।।88।।
ए चौदा द्विक मूल, अवर उतरगुण बहुत हैं।
ए नाशन अघधूल, मेघरूप कहिए इनैं।।89।।

(अरिल्ल)

चउरासी लख नाथ उतरगुण साध के।
तैं ही भाषे ईस रहित सब बाध जे।।
चउरासी लखधार नाथ तौकौं जपें।
सकल कांमनां त्यागि तोहि लखि तप तपैं।।90।।
चवरासी लख भेद सूत्र तुव इम कहै।
प्रथम नाम इक ईस उछेद जु सुखद है।।
हिंसा अनृत चौर्य कुसील र परिग्रहा।
क्रोध मान छल लोभ जुगुप्सा दुखवहा।।91।।
भय रति अरति जु काय वाक चित दुष्टता।
मिथ्या और प्रमाद पिशुनता अव्रता।।
अज्ञानादि विभाव इंद्रिगुण पोषता।
ए इकवीस उछेद धर्मगण सोषता।।92।।

अतिक्रम वितिक्रम और अतीचार जु वुरा।
अणाचार मिलि च्यारि हौंहि अधरम धुरा।।
मन की शुद्धि विनास अतिक्रम जानिये।
विषयनि कौ अभिलाष व्यतिक्रम मांनिये।।93।।
किंचित दोष लगै सु अतीचार जु कह्या।
व्रतभंग कौ नाम अणाचार जु लह्या।।
वै इकवीस उछेद गुणौ इन चारि सों।
ह्वै चउरासी भेद सकल परिवार सौं।।94।।
दस विधि जीव सु भेद हैं हि संसार के।
भू जल हुतभुग वायु निगोद अपार के।।
वनसपती प्रत्येक तीन विकलत्रया।
पंचेंद्री मिलि भेद गिनों ए दस भया।।95।।
ए दस भेद जु होय सबै दस दंडका।
इक इक दंडक होय दसक दस षंडका।।
दसक दसौं मिलि भेद भए सत एक ए।
इनकी हिंसा जहां दोष एसौ भए।।96।।
इन सत सौंवे भेद चुरासी फुनि गुणैं।
चउरासी सैं हौंहि जिनाज्ञा यौं भणैं।।
सीलविराधन दोष दसौं जे हैं महा।
सिंगारादि विशेष पुष्ट भोजन चहा।।97।।
गीत नृत्य वादित्र सुनै जो राग सौं।
स्त्रीथल करे निवास भ्रष्ट वैराग सौं।।
जोषित विषय विकल्प भेद यह पाँचमां।
योषित अंग निरीख होय अघ षष्टमां।।98।।
स्त्री सताकार सु पैलभोग समरण जहां।
नवमौं भावी चिंत भोग की ग्रधि तहां।।
भोग समान न रोग जगत मैं नाहिं को।
नहीं सौख्य कौ नांम भोग कै मांहिको।।99।।

दसमो मैथुन दोष महा अघपुंज है।
ए दस सील विनास नरक पुर कुंज ह्वै।।
चउरासी सै भेद गुणै इन दसनि सौ।
ह्वै चउरासी सहंस भेद जिनवचन सौं।।100।।
फु नि दस दोष निषेद कहे जे श्रीगुरा।
आकंपित अनुमान दुष्ट वादर बुरा।।
पंचमसूक्षम नाम छन्न फुनि षष्टमां।
अविकत सप्तम दोष सुनो अब अष्टमां।।101।।
तत्सेवी फुनि नवम सदा कुल जो रहै।
दसमौं दोष प्रसिद्ध नांव बहु जन कहै।।
इन दोषनि सौं गुनैं सहस चौरासिया।
ह्वै लख आठ जु अवर सहस चालीसिया।।102।।
दोष शुद्धि जे करे महागुण दस कहे।
आलोचन प्रतिक्रमण उभय फुनि श्रुति गहे।।
शद्धत चउथौ भेद विवेक जु पंचमां।
कावोसग अर तप जु छेद फुनि अष्टमां।।103।।
उपथापन है नवम भेद अतिशिष्ट जी।
दसमौ है परिहार महागुण इष्ट जी।।
अठलख अवर हजार दोष चालीसवै।
तिनकौ त्याग करै सु महागुण सकल ह्वै।।104।।
बसु लख और दुवीस सहस इन दसनिसौं।
गुणौं सकल है च्यारि असी लख गुणनिसौं।।
ए चउरासी लाख जे जु उत्तरगुणा।
तिनके धारक साध सकल तुव गुण मुणा।।105।।
तू प्रभू गुणकौ पुंज राव सब मुनिनिकौ।
तू है जिनपतिदेव सुरासुर नरनिको।।
फुनि चउ आध सहस सीलांग है।
तू जिन सीलनिधान तत्त्व परमांग है।।106।।

सील भेद तुव उक्त अठारह सहस है।
ते मौकों दै स्वामि अवर सब अबसहै।।
चउ है नारी भेद मनुष सुर पसु जड़ा।
तिनसौ करिए प्रीति दोष है इह बड़ा।।107।।
चउ नारी मन वचन काय जब आदरै।
द्वादस ह्वै तब दोष जती ए नहिं करै।।108।।
ए बारह सब भेद कृत्य अर कारिता।
अनुमोदन मिलि गुणें तीस छह धारिता।।
पचइंद्री सौ गुणैं भेद छत्तीस जौ।
ह्वै सत एक असी जु दोष अघ ईस तौ।।109।।
सौ जु असी ए भेद परिग्रह दसनि तैं।
गुणैं सकल सतवार हौंहि जिनवचनि तैं।।
अष्टादस सतभेद दोष जब परिहरै।
ह्वै तव गुण ए सकल जिनांगम उच्चरे।।110।।
अष्टादस सत भेद गुणैं दस शीलसौं।
सब ह्वै नौ दुगुणा जु सहस बिनु ही लसौ।।
शील समान न पील जगत मैं और है।
हमको दे शिवशील सर्वव्रत मौर है।।111।।
ए सब जिननै कहे धरे जिननै सही।
वह जिन मोकौं देहु सील ए सरव ही।।
जिनसम नांहि कछू जु पदारथ जगतमैं।
जिन है जगकौ राव रक्त नहिं जगतमैं।।112।।
चक्री जाके दास धर्म चक्री जिकौ।
चक्री भरथ उधार करण जिन है तिकौ।।
चक्ररूप संसार पार कर देव है।
जा सम और न कोय अनादि अछेव है।।113।।
चरचा तेरी नाथ कहै अहमिंद जे।
इक भव धरिकै तोहि लहैं अति इंद्र जे।।

चरचा कौ नहिं अंत अंत है सर्व कौ।
चरचा तेरी नित्यहरण तू गर्व कौ।।114।।
चरचा करत जु करत देह मम अंत ह्वै।
इह मेरी अरदासि गहौ हरि संत ह्वै।।
अतंकाल विसरो न चरन तुव सांइयां।
चरचा कौ फल देहु एहु सु गुसांइयां।।115।।

(सोरठा)

चर्मकार कौं गेह, जैसौ निंद्य जु जगत मैं।
ता सम मेरौ देह, तोहि भजैं ते शुद्ध है।।116।।

(भुजंगी)

तुही चारु चारित्रधारी जिनिंदा। तुही चारुरूपी गुरु है मुनिंदा।।
तुही है जु चामीकरं जीत देहा। तुही पंच वर्णा अवर्णा अनेहा।।117।।
तुही चाडचाडी निकंदा अनंदा। तुही चाहि त्यागी अरागी स्वछंदा।।
तुही चाहि पूरी करै भव्य केरी। नहीं चाहि औरै इकै चाहि तेरी।।118।।
तुही चाहिवीता सही देव देवा। नहीं चाही लोकीक तेंरै अछेवा।।
तु ही चोहि मेरे मुन्यों की मुनीसा। तु ही मोछि देवै मुन्यों कौ अतीसा।।119।।
तुही चारुणी ऋद्धिदाता जगीसा। तुही चारणौं का गुरु लोकसीसा।।
तुझैं ध्यायस्वंभो मिचारी विमुक्ता। तुही मुक्तिदातार मुक्तो विरक्ता।।120।।
तुही चारणौ का उधारी सुशक्ता। नहीं तो विना चारणा क्वापि रक्ता।।
तुही चातकौ की त्रिषा फेट मेघा। सही चातकां भव्य जीवा अमेघा।।121।।
तुझे छांडि भव्या कि कौं न जाचैं। धरै चातकी भाव तोमैं जु राचै।।
तुही पंच चारित्रभासी गुसाई। तुही संयमाचार चारी असांई।।122।।
तुही स्व स्वरूपा स्वचारित्र रासी। त्रिपंचा च पंचा सु चारित्र भासी।।
तुही सर्वचारी स्वचारी अनंता। तुही चाकरौं का निवाही सु संता।।123।।
तुझे छांडि भ्रत्या करैं कौन साई। तुही चाकरी पारकारी सु सांई।।
तुही नित्य चाषा निजानंद चाषा। तुही ज्ञांन चापा दया वाण राषा।।124।।

नहीं चार तेरै सदां तू ज जानै। नहीं चाहि तेरे सबै तू बखानैं।।
तुही हंसचाला तुही हस्तिचाला। सबे चालजीता अचाला अकाला।।125।।
तुही सर्वपाला सही है निहाला। सदाचाल एको धरै तू विशाला।।
चलै चाल तेरी नहीं कोय दूजा। सुरा औ नरा साध तोही जु पूजा।।126।।
निषेधै सदा तू जु चामादि वस्तु। नहीं चालणी छाज चामा प्रशस्तु।।
चर्मस्य जोगे घृते तेल वारी। जु होई अभक्षा महादोषकारी।।127।।
महाचार रूपी सदाचार तूही। जु मांसादि मध्वादि वर्जी समूही।।
नहीं चाव दूजा करै ज्ञांनवांना। इकै चाव तेरे दरस्का प्रधाना।।128।।
नहीं चांटचूटा जहां तू रहै है। वहै वास मोकौं करौ चाहि वैहै।।
सही चांदिनी नाथ तेरी जु भक्ती। सबै और माया महा अंध व्यक्ती।।129।।
तुही चिच्चिमत्कार स्वामी अनीसा। तुही चिंत्यदाता जु चिंतामणीसा।।
तुही सर्व चिंता वितीता निचिंता। तुही है जु चिंताहरो सर्वदिंता।।130।।
तुही चित्तदंती नियंत्री अयंत्रा। तुही चित्तनासी दयापाल तंत्रा।।
नहीं चित्त रोकें विना तोहि लहिए। इहै चित्त रोकें तुही एक गहिए।।131।।

(दोहा)

चिदघन चिनमय देव तू, चिदानंद चिद्रूप।
चिनमूरति चिद्रूप तू, चिरंजीव चिदभूप।।132।।
चिदविलास परकास तू, चिदाकास चिदभास।
चिदाभास चिनमात्र तू, चित्प्रकास सुखरास।।133।।
चित्र जु धर्मा देव तू, चित्ररहित चितदूर।
चिदाकार चिन्मुद्र तु, चिदाधार चितचूर।।134।।
चिन्मुद्राधारी तुही, तू जु चिदंकित नाथ।
पूज्य चिदातम तत्त्व तू, चिंतारहित अनाथ।।135।।
चिरकाल जु हौं जगत मैं, रुल्यौ चिदातम देव।
अब तू मोहि उधारि हरि, दै पूरण निज सेव।।136।।
तू ज सदा सब निकट ही, मैं नहिं देख्यौ ईस।
चिगरूपा जो भरमनां, ताकी वोट अधीस।।137।।

(सोरठा)

चीन्हों मैं नहिं तोहि, चीनें विषय जु जगत के।
अब तू दे सिव मोहि, न्यारौ करिया न्याततैं।।138।।
जे चीनैं मन लाय, तोहि गहै जे सांइया।
ते ह्वैं अमर सुकाय, बहुरि न आवैं जगत मैं।।139।।
चीर रहित तू देव, नगन रूप राजै प्रभू।
न लहै कोई भेव, तेरौ मारग निर्वृता।।140।।
चीलै तेरै चालि, लहैं तत्त्व जोगीश्वरा।
चीलै तेरै धालि, मैं मारग भूल्यौ फिरूं।।141।।
चीर पटंबर त्यागि, त्याकै सर्व जु कांमना।
तेरे मारगि लागि, निर्वृत हैं तोकौं भजैं।।142।।
चीतादिक जे दुष्ट, हिंसाकारण जीव हैं।
तिनहि न पालैं शिष्ट, तेरी आग्या जिनि सुनी।।143।।
चुणकव्रत्ति करि तोहि, मुण्यौं ऋषीश्वर वृंदनै।
देख्यो वन तू टोहि, जब त्याग्यौ यह भववनां।।144।।
चुणक वित्ति दै मोहि, जा करि तोहि मुणौं प्रभू।
देखू सब मैं तोहि, इहे द्रिष्टि दै सांइयां।।145।।
चुगली है अतिपाप, तैं निंदी सब ग्रन्थ मैं।
चुगल लहैंगे ताप, तोहि न पाँवै ते सठा।।146।।
च्युतव्रत हैं जे जीव, ब्रह्मचर्य तैं जे च्युता।
तोहि न पाँवै पीव, द्रढव्रत तोकौं पाँवही।।147।।
च्युत भावनि तैं दूर, तू अच्युत जगदीस है।
तू अखिल सु भरिपूर, तेरी टहल सु मोहि दै।।148।।
चरचुराट की टेव, तेरे नांही जोगिया।
रीझ खीजि नहिं देव, राग दोष तैं दूरि तू।।149।।
भक्त लहैं सुर मोष, रुलैं अभक्त जु जगत मैं।
तेरे राग न रोष, अदभुत महिमा तू प्रभू।।150।।

(सवैया)

चूडामणि लोककौ अलोक परकासी तू ज,
चूक मेरी माफ करि तोहि नहिं ध्याये की।
चूक की है मेरी टेव तोहि नांहि पूज्यौ देव,
तेरी हरि करै सेव ज्ञान सुख भाये की।।
चूप नांहि तेरै सब चूप तैं रहित तू ज,
एक चूप तेरे सब जीव सुखदाय की।
मेरी भूल भूलि विभु दै स्वसेव योगि प्रभू,
गहौं दीनानाथ लाज सरणजु आए की।।151।।
चूल सब जगत कौ चूडामणि देव तुही,
चूहे सम हौं जु नाथ कायर अनादि कौ।
मेरी घात लगै दुष्ट अष्टकर्म वायस जु,
कालमारजार मोकौ तकत है आदि कौ।।
मिथ्याभाव स्वांन मोकौं खायवे कौं संगि लागे,
इनतैं छुडाय अब करे भावदादि को।
तूतौ दयानाथ सब जीवनिकौ प्रतिपाल,
तो छता विपीडित रहूं सु प्रभू वादि कौ।।152।।
चूतवृक्ष आंव कौ है नाम जग मांझ ख्यात,
तू है प्रभू आंव जित परम रसाल जी।
सूकै नांहि कबहू सजल घन जो सदीव,
सम्यक दरस मूल अतिहि विसालजी।।
ज्ञान व्रत्त डाल अर संजम है डाली जाकै,
शुद्ध भाव पत्र परिवार दुख टाल जी।
निर्मलता फूल जाकै गंध निज परणति,
केवल अवस्य मोक्ष इहै फलमाल जी।।153।।
चूर गिर करम के करिवे कौं वज्र सम,
चूरणव वेक के प्रदान कौं तु वेद है।
चूर मोहि कीयौ अर दाव्यौ यनि करमनि,

चोट अति लागी नाथ डार्‌यौ मुझ कैद है।।
आव तू छुडाय हरि ऋण मेरौ काटि सब,
औषदि दै आपनी जो रोग सब ही दहै।
बंधन छुडाय करि लैकैं निजपुर धरि,
तेरे पुर मांहि कछु चांटचूट नां रहै।।154।।
चेतनां निधान तू है चेतनस्वरूपी नाथ,
चेतनता पुंज देव चेतक अपार जो।
चेतकरि तोकौ मुनि ध्यावैं निज देह मांहि,
तो समांन आपा लखि गहैं सुखसार जो।।
चेतनता भूलि हूं ज ह्वै रह्यौ अचेतन सो,
मेरी भूल मेटि ईस देहु भवपार जो।
चेरा भयौ तेरौ अर रहूं भ्रमघेरा मांहि,
इहै कौंन न्याव राव आपही विचार जो।।155।।
चेला नांहि काहू कै हू तू जु है अचेला नाथ,
चेला सब तेरे अर तू जु गुरु सब कौ।
चेल नांव वस्त्र कौ है तेरे नांहि वस्त्र कोऊ,
तू है निरग्रन्थ जोगी निरंदुदी कब कौ।।
चेटक न नाटक न तेरै नांहि देखिए जू,
तू है राव चेटक कौ तारक अजब कौ।
चेलनां उधार तू ही चेलनां के पूत तार,
चेलना के धनी हूं कौ करेगौ सु ढबकौ।।156।।
चेरी सब तेरी नाथ इंद धरणिंद भूति,
चेरी तेरी देव अहमिंद्रनि की भूति है।
चक्रि भूति चेरी अर चेरी असुरिंद भूति,
चेरिनि की चेरी ख चक्रि परसूति है।।
चेरी राज ऋद्धि अब चेरी भोगभूमि सबै,
चेरी चंद सूर भूति जहां लौ विभूति है।
अखिल है चेरी तेरी मैं हू जब भयौ चेरा,
चेरी मोहि व्याहैगै तो कौन करतूति है।।157।।

जौ तू चेरा मांनि मुझै व्याहैगो जु मुक्ति नारि,
दोऊ पक्ष शुद्ध वहै बेटी सु बडेन की।
समकित है बाप जाकौ दया है सुमात ताकी,
नंतभाव भाई जाकै लाडिली घणेन की।।
जिनमत पीहर न नेरा गुरसंग जाकौ,
जामै नांहि विसन जु आगरी गुणेन की।
वहै प्यारी परणौं तो गिणौं उपगार तैरौ,
और भांति अरज गुदारौ नहिं लेन की।।158।।

(सोरठा)

कोऊ प्रश्न करै जु, चेरौ उत्तम कुल सुता।
कैसै कै परिनै जु, इह विनती नहिं योगि है।।159।।
ताकौ उत्तर एह, इह चेरा नहिं कुल बुरा।
प्रभु की न्याति जु जेह, चेरा सोई न्याति है।।160।।
कहिवे कौ चेरा जु, दासी पुत्र न यह सही।
तातै शिवहेरा जु, या मांहै दूषण नहीं।।161।।
फुनि उत्तर सुनि एक, जौ चेरा तो राव कौ।
इह धारौ जु विवेक, औरनि को सिरताज है।।162।।
जिनवर को चेरा जु, ब्याहै मुक्तिपति वरा।
करि है शिव डेरा जु, वडघर को चेरा इहै।।163।।
तातैं नांहि अचंभ, जो इह चाहै मुक्ति कौं।
तजि कै सकल सुदंभ, जिन परसाद वरै शिवा।।164।।

अथ जीव संबोधन—

(सवैया)

चेति रे अचेत चेत चेतन कौ ध्यान करि,
मूरिख ह्वै राच्यौ कहा विषयनि के घाट मैं।
विषै तो अनंत काल सेए तैं अनादि ही के,

नीच ऊंच दसा तेरी भई भवगाट मैं।
लेय लेय डारे तैं ही तेरे हैं उलाक सम,
जगत के भोग भया पग्यो कहा काट मैं।
लाज नांहि आवै तोकौं छादकौ अहार करै,
बूड्यो कहा चावरे तनक अवघाटमें।।165।।

(भुजंगी)

तुही चैतचैत्यालयो द्वार मूला। तुही शुद्ध चैतन्य रूपी सथूला।।
तुही चैत्य वृक्षस्य धारी जिनिंदा। तुही चैत्य वृक्षस्य मूले वसंदा।।166।।
तुही नाथ चैतन्यता पुंजपूरा। नहीं तत्त्व तेरा जु चैतन्य दूरा।।
सबै भाव तेरे जु चैतन्य रूपा। सदा सर्व भावेषु चैतन्य भूपा।।167।।
तुही चैत्यभासी अचैतन्यनासी। तुही जाडिताजीत चैतन्यरासी।।
सबै जाडिभावा नहीं क्रापि तौमैं। तुही चैत्यभावो जु द्रग्ज्ञान दो मैं।।168।।
नहीं आन देवा सु पूज्या कदापी। तुही पूजितो नाथ ईसो उदापी।।
अर्चा तिहारी जु औरै न अर्चा। चर्चा जु तेरी नहीं और चर्चा।।169।।
यवो मात्र पूज्या सु अर्चा तिहारी। सु बिंबा प्रमाणौ जु सौधो विथारी।।
करै जीव एतत् लहै सोपि सुरकं। क्षपै पाप सारे दुहै दोह दुरकं।।170।।
नहीं पुण्य पारा जु ताका सही जौ। करै जो विथारा शिखाबंध ही जो।।
थपै बिंब तेरा तहांत्यंत शुद्धा। करैं पूज तेरी सदा जो प्रबुद्धा।।171।।
लहै मोक्षभूती सु पूजै जु तोकौ। हमें देहु पूजा सु औरे न धोकौं।।
ग्रहै तत्त्व शुद्धा सु दासा तिहारा। करै जो जिनाज्ञा प्रमाणे विहारा।।172।।
तुही चैत्यमांही तुही सर्व मांही। तु ही चैत्यथांने प्रतीतो सु पाँही।।
तुही चैति चैत्यालये नाथ राजै। तुही मोक्ष धामे निरंतो विराजै।।173।।
तुही आप मांही तुही लोक मांही। नहीं अन्य ठौरा सदा आप पाँही।।
सदा चैव तू ही विराजै सबौं मैं। महादेव तू ही जु तिष्टै मुन्यौ मैं।।174।।

(कवित्त)

चोर पंचइंद्री मन चोर दुष्ट वाक तनु,
चौर काम क्रोध लोभ मोह अतिभार जी।
चोर है मिथ्यात मोटौ चोर है प्रमाद खोटो,
चोर नहिं छोटो अवरत अतिझार जी।।
इनहि लै अनंत चोर लागे मेरौ कियो भोंर,
हरी मेरी ज्ञान निधि जो है अतिसार जी।
सुनि तोकौं न्यायरूप कूकूं तेरै द्वार भूप,
निधि मेरी द्याय मोहि चोर गहि मार जी।।175।।

(सोरठा)

तू चोला कौ तार, भव अंतरि शिव देयगौ।
स्त्री पसु पाँवै पार, भव अंतरि तुव ध्यान तैं।।176।

(सवैया)

चोरनि कौ हारी तूज चोर नहिं पावै पूज,
तेरे राज मांहि मैंरै चोरी ह्वै सु हैफहै।
चौष नैक गहै देव तेरे अति चाखी टेव,
घुघ होय रहै सोज पीवै जो जु कैफहै।
तू तो नांहि कैफी राव न्याव कौ करनहार,
चोरनि कौ खोज लैव गहो अति को कहै।।
एक ग्रामपति जोऊ चोरी होन देत नांहि,
तूतौ तीन लोक नाथ चोरनिकौ क्यौं चहै।।177।।
चोट अति लागी मेरे चोरनि हूं मार्‌यौ अति,
द्रव्य खोस लीनौ अर कीनौं अति ष्वार हूँ।
ज्ञान हीन भयौ फुनि गयी सुद्धि बुद्धि मेरी,
एक सुधि रहै जो पुकारूँ तेरै द्वार हूँ।।
चोर शुद्धभाव कौ उतरि कीनौ वनही जु,

वेतो अति जोर नाथ कूरि कियो छार हूं।
चोल बिनु तेरे द्वारि ऊभौ नैक लाज गहि,
चोल मेरौ मोहि द्याय रहौ तेरे लारहूं।।178।।

(भुजंगी)

नहीं चौर तेरै तुही चौरदंडा। नहीं चौर तोकौं लहैं बोध मंडा।।
तुही चौरहारी तुही चारहारी अचौकीकचारी तुही लोकतारी।।179।।
कियौ चौर मेरौ मिले चौर दुष्टा। अबैं तू छुड़ावै सही देव पुष्टा।।
त्वया चौरता भेद निंदे सबै ही। सही पाप टारा सबै तो फबै ही।।180।।
तुही सत्यशीलो जु धर्मस्य इंदा। तुही जीवरक्षा प्रकासी जिनिंदा।।
हमैं चौंदमौ ठाण दैके जु सिद्धी। सु देहौ जिनिंदा विदेहोपलब्धी।।181।।

(सोरठा)

चंदनवाला तार, तू है भव के आंतिरै।
पैहैं भवजल पार, तोकौ ध्याय अनंत जिय।।182।।
कहा सु चंदन देव, मलजागिर जासौं कहैं।
तुव पद सीतल टेव, जैसे त्रिविधि जु तापहर।।183।।

(भुजंगी)

तुही चंद्रपोती सु चंद्रोपमास्यो। तुही नित्य चंगो अनंगो उपास्यो।।
सुचंचत्प्रकासो चमत्कार तूही। सुचंड प्रचंडोहतुही जो समूरी।।184।।
सुचंडा प्रचंडा तुही देव चंडा। सुचंडस्य नासा तुही है अचंडा।।
नहीं चंड पावै तिहारा जु भेवा। जु चंडी सु मुंडी करै मूढ सेवा।।185।।
सबै चंडता त्यागि निर्वैर होई। तबै देव देवा लहै भेव कोई।
नहीं चंचलाई जु तेरै कदापी। सबै चंचलाई वितीता उदापी।।186।।
तूही चंचलाई निमूला गुंसाई। तुझै कोय चंपै नहीं सर्व सांई।
तुही चिंत्य दाता तुही चिंतनासा। तुही दैव चिंतामणी लोकभासा।।187।।
नहीं चींतिव्यौ देव तोकौं नरा ह्वै। सही ढोर मूढा प्रतीता खरा वै।
कहा मानुषा ते जु तोकौं न ध्यावै। सही मानुषा नाथ जे तोहि गांवै।।188।।

सबै पूज तेरी करैं नित्य सेवा। सु चंप्यौ नहीं जाय तू देव देवा।
तुही चंद्रनाथा सु चंद्रप्रभूजी। तुही चंद्रचिन्हा सु योती विभू जी।।189।।

(सवैया)

चंदन स्वभाव तेरौ चंद्र सम शीतल जु,
मलयागिर चंदन सौ चंदना उधार है।
चंपक तैं अधिक सुवर्ण सम देह तेरौं,
पंच वर्ण मांहि जाकै एक न लगार है।।
सर्व वर्ण सर्वरूप सर्व भाव देव तू है,
अवरण वरण सु जीव कौ अधार है।
चंक्रमण जाकौ कोऊ करण समच्छ नांहि,
तू है लोककौ उतार सबकौ सुधार है।।190।।

(अरिल्ल)

चांद्रायण कौं आदि व्रत सब तैं कहे।
तेरै ही उपदेस सर्व संतनि गहे।।
शुक्लपक्ष मैं ग्रास एक एकोधिका।
कृष्णपक्ष मैं ऊण भक्ष सब सोधिका।।191।।

(भुजंगी)

नहीं नंत चंद्रा नहीं नंत सूरा। तिहारी नखद्योति मात्रे प्रपूरा।।
सुचंद्र प्रवेद्यादि शस्त्राधिचेष्टा। सबै त्यागि चेष्टा भजैं तोहि श्रेष्टा।।192।।
सु चंद्रादि पंचैव देवस्य भेदा। सबै जोतिसी तोहि पूजैं अभेदा।।
तुही सूर स्वांमी तुही सर्व स्वांमी। तुही चंद स्वामी अनामी अधामी।।193।।

(अरिल्ल)

च कहिए जगमांहि चंद्रमा नाम है।
ज्योतिष कौ है इंद्र सु सीतल धाम है।

तेरो है वह दास तू ज शशिपति प्रभू।
तू है तिमरविनास शांतिकर ज्ञांनभू।।194।।

अथ वारा मात्रा एक सवैया मैं—

(सवैया इकतीसा)

चरन सरोज तेरे चारन मुनी द्विरेफ,
सेवै चिरकाल तैं जु चित्त निज लाय कैं।।195।।
चीन्ह्यो मुनिराजनि तु चुप होय रहे लागि,
चूकै नांहि काहू काल मन वच काय कै।
चेतनां निधान तू ही चैतनिता भाव तेरौ,
तोमई भए जु साध सकल विहाय कै।
तेरे वास मांहि नाथ नांहि चोरी चौर साथ,
चंद्रपति चंद तू ही चः स्वरूप पायकै।।196।।

(दोहा)

तव चंद्र जु की चंद्रिका, सोई कमला देव।
शक्ति भवानी लच्छिमी, भाषा 'दौलति' बेव।।197।।

इति चकाराक्षर संपूर्णम्।

छ

आगैं छकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

छलछद्मविनिर्मुक्तं, सच्छास्त्रस्य निरूपकम्।
सच्छिवास्पदधातारं, सच्छीलनायकं विभुम्।।1।।

सच्छुक्लध्यानदातारं, अचिच्छून्यं स्वपूर्णकम्।
प्रज्ञाछेत्रीसुकर्तारं, स्वच्छैर्बोधयुतैर्नुतम्।।2।
न तच्छोकं न तच्छोच्यं, सर्वचिंतापहारकम्।
अछीदृग्बोधकौ यस्य, वंदेऽहं तमतीश्वरम्।।3।।
छन्दालङ्कारकर्तारं, छंदबन्धादिदूरगम्।
छस्छेदनविधौ दक्षं, छेदिता येन शत्रवः।।4।।

(दोहा)

छविधर छविकर छविमई, तू जु छवीलौ देव।
तेरी छवि देखें प्रभू, सकल मात ह्वैं देव।।5।।

(सवैया)

छल तैं रहित तू जु छद्म नांहि तेरै पूज,
छत्रधारी छत्रधनी छत्रपती पति है।
तेरी छत्रछाया तलि वसैं सब लोक प्रभू,
छदमस्थ अवस्था कौ उलंघक तू जति है।।
तेरौ भेद छदम अवस्था मैं न लहै कोऊ,
केवल ही मांहि तेरी महिमा बनति है।
छलकौ तू भंजक है छल मेरौ भांजि सबै,
छक तेरैं नांहि कौऊ छक्यौ तू स्वछति है।।6।।
छति तेरी देव देव नंतानंत राजै अति,
छति को तू सागर अछति को विडार है।
छती छिटकाय तू जु ह्वै रह्यो दिगंबर जू,
अंबर कौ अंबर तू जीव कौ सुधार है।।
छत्र नांहि काहू काल ऊघड्यो जगत पाल,
छजै तोकौं राजभार सबकौ अधार है।
छह द्रविभासक तू छह खंडपति पती,
छह भेद कारक तू छह काय पार है।।7।।

छहकर्म वर्जित तू लेस्या छह वीत देव,
छह कर्म जग मैं प्रकासक प्रधांन है।
छह काय पोहर तू छह द्रव्य नायक तू,
छहकाल देसिक स्वदेसिक प्रवांन है।।
छहभेद ऊब्भाषी श्रुति संम्रिति मैं,
तिन तैं अतीत छह भाषा कौ निधांन है।
छह रसत्यागी तुही छहतप बाहरि के,
छह तप भ्यंतर के भाषक अमांन है।।8।।
छह भेद सम्यक के भाषे तैं सिधंत मांहि,
पंच इंद्री छठौ मन इन तैं तू भिन्न है।
छह मत मांहि एक जिनमत मांहि तू ही,
छह कुल अचल प्रकास तू अखिन्न है।।
छह गिर मांहि छह द्रह तैं ही भाषे ईस,
छह देवी पूजित सकल सुख दिन्न है।
छह चक्र भेद तू ही छह ऋतु धार स्वांमी,
छहराग भेद तू अलापक अभिन्न है।।9।।

(सोरठा)

छह हास्यादि वितीत, छह जु अनायतना न तू।
छट्ठै कालि अतीत, नहि पइए तू ही कहै।।10।।

(सवैया इकतीसा)

छठौ जिन पदमाभ वारमौं सु वासिपूजि,
दोइ जिन लाल रंग भाषै तेरी धुनि है।
चंद्रनाथ पुष्पदंत सेत दोऊ भाषै तू जु,
सुव्रत सु नेमि एई स्याम रूप मुनि है।।
हरित सुपास पास षोडस कनक भास,
भाषै जिनवांनि तेरी धारै मुनि मनि है।

पंच वर्ण तू ही अर वर्ण नांहि कौऊ तेरै,
वर्णना जु तेरी देव तोही मांहि बनि है।।11।।
तौसौ नांहि अन्य कोऊ एक रूप नत होऊ,
गुनरूप तू ही नाथ तू ही फुनि गनि है।
पर्जय सुभाव स्वामी ध्रुव उतपाद नास,
सकल प्रकास तू जु षटभाव गनि है।।
छह भेद नायतन सम्यक मैं नांहि छहौं,
वेद लिंग तीनि तीन छह एऊ भनि है।
छह भेदपुग्गल के छह भेद भोजन के,
छह भेद सूक्ष्म र पर्यापत चुनि है।।12।।
छह छह भोग भूमि एक एक मेर नखैं,
छह भेद सहनन छह संसथांन है।
छह भेद सेना चक्रवर्ति नु कै देखियत,
छह विधि जीविका बंखानी तैं प्रमांन है।।
छठे गुनथांन लौं है वंदकर वंद्यभाव,
आगै सुद्ध धारा मांहि एक रंग ज्ञान है ।
छह विद्या भूपनिकी तैंही जो बखांनी देव,
तूही सब रूपी छहरूप अति मान है।।13।।
छह दस कलप बखांने ते जिनिंद देव,
छह दस करण करण तू अटल है।
छह दस ध्यान अर तेरे ही कषाय भेद,
भरत प्रजंत छहदस कुलकर है।।
छहदस सहंस बखानी रानी गिरधर कै,
तिनकौ उधारभूत तू ही जौ अचल है।
छहदस मंडन कौ मंडन र त्यागी तूज,
छहदस प्रकृति प्रथम द्विदसै दहै।।14।।

(सोरठा)

छहदस प्रथमहि क्षेपि, छहदस फुनि वारमि दहै।
केवल पाय अलेपि, तो सम ह्वै तो पुरि गयै।।15।।

(सवैया इकतीसा)

छहदसमौं जु नाथ नांव जसु सांतिनाथ,
कुंथ अर तीन एइ तीन पदपति हैं।
तीन कुरवंस हरिवंस दोय भूषक जे,
एक नाथवंस एक उग्रवंस छति है।।
इक्ष्वाक सुवंस माहि तीन घाटि विशंति जे,
चउवीस नाथ एई एक रूप अति है।
सबै धर्मभासक हैं सबै पापनासक हैं,
और हैं विदेहनि के तिनै मेरी नति हैं।।16।।

(दोहा)

सुव्रत नेमि जु हरि विभू, शांति कुंथ अर तीन।
कुरवंसी ए जानिए, पास उग्रकुल लीन।।17।।
वीरनाथ शिवनाथ जो, नाथवंस सुखदात।
सप्तदसा जे शेष हैं, वंस इक्ष्वाक उदात।।18।।
क्षत्री वंश बिना विभू, त्रेसठि पुरस न होय।
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य विन, केवलि होय न कोय।।19।।

(सवैया इकतीसा)

छहवीस प्रकृति जु मोह की बखानी तै ही,
ह्वै मिथ्यात तीन भेद होय तब है धिका।
अनादि मिथ्यात मांहि छवीस ही भेद हौंहि,
सादि मैं ह्वै अठवीस नाथ तैं कहे जिका।।

छहतीस गुनधार आचारज तोकौं नमै,
तूज छहतीस गुनदायक अगाधिका।
छहतीस भेद संनिपात के जु तै ही भाषै,
छहतीस राग अरुरागिनी अनादिका।।20।।

(सोरठा)

प्रकृति छत्तीस विनास, नौमै गुणथानैं हुवै।
दसमैं लोभ न भास, वारम फरसि जु तुव लहै।।21।।
छह चालीस गुणा जु, धरै तू जु पति गुननि कौं।
तोमैं नंत गुणा जु, दोष एक हू नां मिलैं।।22।।
छह चालीस जु टालि, दोषा जे भोजन करै।
पंच महाव्रत पालि, तत्त्व रूप ह्वै तुव लहै।।23।।
छप्पन देवि कुमारि, सेवहि तू अंबापदा।
तू जु स्वयंभू सार, अजर अजन्मा मृत्युहा।।24।।
छहसठि के आधे जु, तेतीसा सागर थिती।
सुर नारक मैं ले जु, आयु कर्म की तू कहै।।25।।
छहसत्तरि लख नाथ, तेरे देवल ईश्वरा।
भुवनपती सुर साथ, छह कुमरा भिन् भिन् धरै।।26।।
दीप जु उदधि कुमार, तनित अगनि दिसितडित जे।
दसमैं ए छह धार, एक एक छहतरी।।27।।
असुर धरैं सठिच्यार, लख मंदिर अहि चौरसी।
हेम बहत्तरि सार, लख छांणव पवना धरैं।।28।।
सबद सकुमरा नाथ, सप्त कोडि लख बहतरी।
तेरे जिन बडहाथ, मंदिर पूजैं भवनपति।।29।।
छआसी मैं एक, घटा पच्यासी प्रकृति जे।
तेरै इह प्रभु टेक, एक प्रकृति राषै नहीं।।30।।
छहनिवै जु हजार, रांनी त्यागै चक्रधर।
तोमैं राचि अपार, पावै तेरौ वास जो।।31।।

(चौपई)

छाया रहित सु छायाकार। छाक विवर्जित परम अधार।।
छानौं नांही तू जु विख्यात। फुनि छांनौं है जगत सुतात।।32।।
छाया तेरे होय न देव। छाया वर्जित चउविधि देव।।
ते सब तेरे सेवक स्वांमि। तू त्रिभुवनपति अंतरजांमि।।33।।
छाया कौ तू पुंज अपार। तेरी छांह बसै जगसार।।
छागादिक जे दुर्बल जीव। तिनकौ रक्षक तू जगपीव।।34।।
छागलि कौ जल निंद्यौ तैं जु। मांस समान विचार्यौ मैं जु।।
छाछि दही ए दुदलैं अन्न। लेण न भाषे तैं जु अछन्न।।35।।
छाछि दही ए दूजे दिना। तू जु निषेधै जगगुर जिना।।
छाछि दही पानी पकवान। बिनु श्रावक घर अजुगति जांन।।36।।
ऐसे भेद जु तू ही कहै। सकलाचार विधिहि जु गहै।।
जावण तू जु वतिवै सोय। नित्य नवो जावा बिनु होय।।37।।
छाछि समान सकल संसार। घृतरूपी तू सब मैं सार।।
छाज समान गुणग्रह होय। तब पावै तौकौ प्रभु कोय।।38।।
छाज चाली चर्मतणो जु। तू जु निषेधे दोष घणनी जु।।
छालि मूल कूपल फल पात। बीजांकुर को रक्षक तात।।39।।
छांटि छांटि सब जग के भाव। तोमैं चित धारै जति राव।।
छांडि छांडि सब विषय प्रपंच। तोकौं ध्यावै तू सुखसंच।।40।।
छांण बीण तू भाषक देव। छांण वीण की तेरी देव।।
अणछाण्यौं जल रुधिर समांन। अणवीण्यौ अन आंमिष मांन।।41।।
छांण्यौं जल द्वै घटिका शुद्ध। फुनि वह जल अति होय विरुद्ध।।
प्रासुक तिक्त कषायनि मिल्यौ। दोपहरां पहले ही गिल्यौ।।42।।
तातौ जल जो भात उकाल। अष्ट पहर कै पहली टाल।।
ऐसी भाषक तू ही देव। और न ऐसो भेद कहेय।।43।।
ग्रांम निकट जो सरवर होय। ताकौ जल निंद्यौ अति सोय।।
वापी कूप तणौ जल लीन। जहां नीच नहिं भरि है हीन।।44।।

शूद्र तणौ वासण जहां परै। अर चडसादिक जहं विस्तरै।।
सो तैं वरजे वापी कूप। तू आचारी अधिक अनूप।।45।।
नदी तीर मसांण जु होय। बहतै घाट निषेध्यो सोय।।
कुल अर किरिया वर्जित घरे। असन पान जु तै परिहरे।।46।।
गलणौं तैं भाष्यौ जगदीस। लंबो अंगुल द्रिढ छत्तीस।।
पहनौं चौईसांगुल होय। अदभुत तेरौ मारग कोय।।47।।
दोवड बिनु नहि छाणै जला। रंग बिरंग्यौ गलनौं मला।।
पहर्‌यो अंबर कांमि न कोय। यह तेरौ उपदेस जु होय।।48।।
जा निवांन को ल्यावै वारि। वाही मांहि जिवान्यौ डारि।।
और ठौर डारै नाहिं कभू। यह तेरौ उपदेश जु प्रभु।।
नदी सरोवर वापि माहि। जुगति थकी डारै सक नाहिं।।
कूपमांहि जौं विलछन करै। द्वै गुन डोल जतन करि धरै।।49।।
ऊपरसो डारै जौ कोय। बहु जीवन की हिंस्या होय।।
जल छांणत कर नहिं संचरै। जतन थकी छांणि जल धरै।।50।।
जल छाणण अर अन्न जु वीण। चंदवा चूलै जल परिं दीन।।
वासण अपनें अन्य न देय। अन्यतणें वासन नहि लेय।।51।।
यह तेरौ उपदेस जु सही। धारै ते श्रावक पद गही।।
रात्रि परें अन जल नहिं लीन। आमिष सम भाषे तुम ईन।।
वासी भोजन निंद्यौ तुमैं। पलभोजन सम जान्यौं हमैं।।52।।
छात जगत कौ तू जगदेव। तेरी छाप धरै गणदेव।।
छाद समान जु ए जगभोग। तिन तैं रहित करेधौ जोग।।53।।
राजानि कौ राजा तू पती। मुनिगण कौ गुरु अदभुत जती।।
माली सम तू है अतिभाव। भगतिमाल की मेलूं छाव।।54।।
गूंथि न जानौ मैं कछु रंच। कूड जु माली तू सुख संच।।
मेरी भेट लेहु जगराय। तू जगजीवन सब सुख दाय।।55।।
छार समांन जगत की भूति। सो चाहौ नहिं भव जु प्रसूति।।
परमपूत अविनासी रमा। सो मोकौं दै वल्लभ रमा।।56।।

(सोरठा)

छिनिवै सहस सु नारि, तै ही भाषी चक्रि कै।
तैंही चक्री तारि, किये कर्महर आप सम।।57।।
दोष छियालीस टालि, भोजन करणौ साध कौ।
मूलोत्तर गुन पालि, तोहि जपै तेई मुनी।।58।।
छियालीस गुणधार, तू अनंतगुणमय प्रभू।
तू ज भवौदधि पार, परमतत्त्व तू देव है।।59।।

(सवैया)

छिपानाथ नाथ तूही छिपा सम माया दूरि,
छिपा कौ हरनहार जगत कौ भांण तू।
छिन छिन ध्यांन तेरौ करै ग्यानी आतमज्ञ,
तू है ग्यान नाथ लोकालोक कौ सुजाण तू।
छिकछाक तेरे जिन आगम मैं नांही जिन,
आदि अंत एक शुद्ध सत्ता कौ बखान तू।
छिनक प्रवादी कौ उथापक है तू ही हर,
स्याद्वाद आगम कौ धारक प्रवाण तू।।60।।
छिद्र तैं रहित तू ज छिद्र नांहि पाँवै पूज,
छिद्र तेरे आगम मैं ढूंढे हूं न पाइए।
छिपै न छिपायौ प्रभू तू है सव राव विभु,
छिद्र त्याग तेरो जस अहनिसि गाइये।।
छिपालै जु वार तू हि विभु शिवदाता स्वामी,
छिपाकर अनंत तेरे नख मैं बताइए।
तेरे ध्यान बिनु छिन जाय जोई वादि गनि,
छिन छिन ध्यान नाथ तेरौ उर लाइए।।61।।
छीन मोह तू ही देव छीन दोष तेरी टेव,
छीन राग तेरौ भेव मुनिजन ध्यांवही।
छीजै नांहि काहू काल छींक न जम्हाई जाकै,

छीति नाहि मीति जाकै पदमैं वतांवही।।
छीतल अनारी जाकौ भेद नांहि पावैं कभी,
जगत के त्यागी जाको जस निति गांवंही।
छींटअर पाँटवर अंबर सकल त्यागि,
साधू निरग्रन्थ होय जामैं लव लावही।।62।।
वहैं छीनकाम सब छीनताहरन राम,
दीननि कौ नाथ जातैं सब सुख आवही।
छीन किए जानैं सब माया के प्रपंच भूरि,
छीनताहरन देव सिद्ध जामै जांवही।।
छीला के जु पात सम जाके आगैं चंद सुर,
जाकैं आगै सुरपति रंकता सुभाव ही।
सर्व भूति जाकै नषै तिण सम भासै भाई,
वहै भूतिनाथ जाकौ ठाव नहि गांव ही।।63।।
छूट्यो तू अनादि ही कौ तोहि नांहि वांध्यौ किनी,
छुरिका न तैरै कोऊ शस्त्र नांहि एक है।
डारे तैं असंखि लोक परमित नीच भाव,
रागादिक दोषनि को त्यागी तू विवेक है।।
छुटैं तोहि ध्यायें देव छुटकाल सबै पासि,
तूजु जमपासि को उछेदक अछेक है।
मेरी देह पूतिगंध छुऊ तोकौ कैसैं स्वांमी,
तू तौ महाशुद्धरूप अलख अनेक है।।64।।
छुटि मेरी करौ देव छूटि करि करौ सेव,
साधू है तेरौ जस गांऊ जिन जोगिया।
छूंछि सम जग सबै कणरूप तू ज सांई,
तेरौ गुण अहिनिसि गांवै पति भोगिया।।
तेरौ नाव लेत प्रभू आपदा पलाय जाय,
तेरौ ध्यान किए सब दूरि होत रोगिया।
छूवै नांहि तोकौं कभी राग दोष मोह मल,
छूवै न असोकधर तोकौं कोऊ सोगिया।।65।।

छेद नांहि तेरे कोऊ छेक न विलोकियत,
छेदक तू पासि कौ बखान्यो श्रुति मांहि जू।
छेप नांहि तेरे सुख मांहि कभी देखियत,
छेरै नांहि तोकौं कोऊ अरि तेरै नांहि जू।।
छेलादिक पसुवनि कौ रक्षक है तू ही जिन,
छेला इक भयौ सुर और न ह्वै कांहि जू।
चारुदत्त सेठ दयौ छेला कौं जू तुव नांम,
तेरौ नांम सुखमूल सुर्गमोखि पाँहि जू।।66।।
छेह नांहि तेरौ कभू छेव न विलोकिए जू,
छेदकर मोहादिक भावनि कौ तू सही।
छेमकारी तू जु देव दुखहर तेरी टेव,
हिंस्यादिक दोषनि कौं तू ही बहु दूसही।।
छेदन र बंधन सु वध अतिभार रोप,
अन्न पान रोधन कौ खंडक जु तू वही।
सबै धर्मभासी तुही सबै पापनासी तुही,
तुही तुही तुही देव देखौ जित तू जु ही।।67।।
छैल तोसौ दूसरौ न देखौ जग मांहि स्वांमी,
शुद्ध निज सत्ता कौ रमण तू महत है।
तेरी सत्ता तोहि मांहि तू है जिनसत्त मांगहि,
सत्ता ही कौ नाम श्रुति कमला कहत है।।
तू है कमलानिधान निज रस स्वाद भोगी,
नवल निरालस अनंत सु गहत है।
सत्ता बिनु दूजी कोऊ कमला जु नांहि दोऊ,
वहै सत्ता दूजौ नाम कमला बहत है।।68।।
छोटे मोटे जीवनि कौ रक्षक है तू ही नाथ,
छोटे मोटे दोषनि कौ तू ही हर देखिए।
तेरी सेवा बिनु छोछी करणी न आवै कांमि,
करणी कौ मूल तेरी भक्ति जो विसेखिए।।

छोह रहैं तेरे सब सुर नर मुनि जन,
तू है तात सबकौ प्रसिद्ध इहै लेखिए।
तातैं जग त्यागजोग तूही एक लैनजोग।
सबै चाहि छांडि एक तौंही कौ जु पेखिए।।69।।
छोति नांहि तेरै सब छोति कौ हरनहार,
छोति कौ निवास एक अबला जगत मैं।
तेरे नांहि भामा अर कामा नांहि तेरे कोऊ,
जेते हैं विकार तेतै कोउ नाहिं तत मैं।।
छोतिवान नारी दिन पाँच नांहि भीटियत,
सूतिवान तीन पक्ष इहै तेरे मत मैं।
परसत नारी कौ जनम लग त्याग तैं ही,
भाख्यौ जिनदेव देव वसै तू भगत मैं।।70।।
छोप नांहि तेरौ भाव तू ज है अछोप राव,
छोभ नांहि तेरै प्रभू छोभ तैं वितीत तू।
छोडे तै अनंत दोष गुण कौ अनंत पोष,
छोह कौ विनास कर अंतक कौ जीत तू।
छोछ पोछ वातनि तैं तू ज नहिं आंवै हाथि,
सबै त्यागि तोहि लहैं त्यागी है अभीत तू।
छोनां नांहि वूसा सब जगत के विषै भोग,
तिनतैं छुडाय मुझ प्रभू है अभीत तू।।71।।
छौनां नांहि काहू कौ जू तेरे सब छौनां नाथ,
तू है आज अजर अजौनी समुधुर कौ।
छौना तू कहायौ विवहार नाभिराय जू कौ,
छौंना तू कहायौ सब जिनपति गुर कौ।
छौगा पाघ बागा फैटा भूषन न गंध तेरे,
तू है स्वामी नगन गुरु जु सुरगुर कौ।
छौना उतकिष्ट साधु मध्य देसव्रती नाथ,
जघनि सु छौनां तेरे अव्रति स्वघर कौ।।72।।

(सोरठा)

छं कहिए श्रुति मांहि, निर्मलता कौ नाम है।
तो बिनु निर्मल नांहि, समल सबै ही जगत के।।73।।
छं भाष्यौ श्रुत ठीक, नांव तटस्था वस्तु कौ।
तू जु तटस्थ सटीक, और सबै बूडि जु रहै।।74।।

(सवैया इकतीसा)

छंद नांहि तेरै कौऊ छंडे तैं अनंत छंद,
छंदिन के भेद कौ प्रकासक न तो बिना।
छंद वंध त्यागै अर छंदनि तैं गांवै तोहि,
छटासम भूति भववास नास वै गिनां।
छ जु कहैं निर्मल कौं तू ही छ कहावै प्रभू,
छंडै नांहि भव्यनि कौं जीवनि सौं नाकि नां।
छं ह्वै जो जगतजीव ध्यावै तोकौ जगपीव,
तोहि सम लखैं जीव पाँवै तोकौं जोगिनां।।75।।
छः कह्यौ जिनागम मैं छेदन कौ नाम देव,
तेरौ है अछेद भेव छेदक मिथ्यात कौ।
छः भाष्यौ सूत्र मांहि संबर कौ नांव प्रभू,
तू है संबरीक सब टारक विघात कौ।
संवर सु निर्जर सु मोख हू सु तेरै नांहि,
तू है नित्य मुक्त रूप संगी नांही गात कौ।
संवर सु निर्जर सु मोख प्रभु तेरौ रूप,
तेरे नांहि आश्रवर बंध कर्म जात कौ।।76।।

अथ एक सवैया बारा मात्रा का—

(सवैया इकतीसा)

छल नांहि तेरे कभी छाक कौ न लेस नाथ,
छिक छाक छिन्नता जु तेरे मत नांहि जु।

छीजै नांहि खीजै कभी छुट्यौ तू न बांध्यौ किनी,
छूटि मेरी करै तू जु कहौं और कांहि जू।।
छेदन सु भेदन कौ नांव है न रावरै जु,
छैल तौसौ दूसरौ न शुद्ध सत्त्व मांहि जू।
सत्ता के रमनहार छोडि बैठौ तू जंजार,
छौटिक न छंद एक छः स्वरूप पाँहि जू।।77।।

(दोहा)

छति सत्ता तेरी जिको, सोई नित्य रमा जु।
दौलति और छटा समा, जग संपति निकमा जु।।78।।

इति छकाराक्षर संपूर्णम्।

ज

आगै जकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

जगन्नाथं जनाधीशं, जातरूपाभमीश्वरम्।
जिनं जीवाधिपं धीरं, जुटितं न च मायया।।1।।
जटाजूटात्मकं देवं, जेतारं जैननायकम्।
रजोहरं रुजोपाशं, मिलितं न हि कर्मणा।।2।।
ज्योतिरूपं सदा शांतं, यत्क्रमाब्जौ सुराधिपैः।
पूजितं तं नमस्यामि, जृंभितं जः प्रकाशकम्।।3।।

(सवैया इकतीसा)

जगदेव जगभांनु जगभास जगजांन,
जगत कौ नायक जौं जग मैं प्रधान है।

जगत को जीवनि वखांनी जानै जगत मैं,
वहै जग जीवन तू जगत कैं मांन है।।
जगत सिरोमणि है जगत उधार सांई,
जगत कौ तारक जौ जगत कौ रान है।
जगराय जगदीस जगत के रहै सीस,
जगत को गुरु जगपालक अमान है।।4।।
जगत कौ त्यागी सोय जग मैं न ऐसौ कोय,
जगत कौ बंधू सब जगत कौ तात है।
जगजीत देव वहै जय कौ धरनहार,
जडभाव मेटकार जगत कौ पात है।।
जलरूप भाव जाकौ जलज समांन क्रम,
जलज निवासिनी कौ नाथ जो अजात है।
जक नांहि परै जेतै पाइए न बाकौ पुर,
वहै जकरूप देव अजक कौ घात है।।5।।
जलजित चित्त जाकौ जलद समान ऊंच,
जलद न ऐसौ जैसो वहै जगदेव है।
जलनिधि नांहि ऐसो जैसौ है अगाध वहै,
जननी जनक नांहि जाकै अति भेव है।।
जनता उधार वहै जनम तैं पार करै,
जरामरणादि मेटि करै जौ अछेव है।
वहै जडजीत देव चेतना अधार नाथ,
जाकौ जस सुर नर गांवै अतिवेव है।।6।।
जघन्य र मध्य उतकिष्ट के विभेद जानै,
कहे बहुरूप उहै उतकिष्ट देव हैं।
जनक है अखिल कौ जनक कौ तारक जो,
जनकसुता कौ दुखहारक अछेव है।।
जलथल मांहि सब कष्ट कौ हरनहार,
जठर के मांहि जांकै लोकालोक भेव है।

यह जठरागनि कौ मेटक सु मेघरूप,
वहै जपतप कौ प्रकासक अभेव है।।7।।
जन कौ उधारक है जग कौ अधार सोई,
जब तब भव्यनि कौं तारैगो वहै प्रभू।
जिय को पहार जयरूप वहै देखिए जू,
जय जु कुमार कौ उधारक सही विभू।।
जनम जरा कौ अर मरण कौ लेस जामैं,
हूवो नाहि कबहू न होयगौ अबै कभू।
जहि जहि मूढभाव जाकौ जस मुनिरांव,
गावैं सासोस्वास वहै जसकौ निवास भू।।8।।
जल एक बूंद मात्र पीवै मास एक गए,
अन्न नहिं लेय तऊ मोखि नांहि जा बिनां।
जब नांव तेज कौ है तेज कौ समूह वहै,
सबै जब त्यागि जाकौ ध्यान धरै जोगिनां।।
जड अर चेतनि कौ भासकर वहै देव,
जटा जूट भांवनि कौ भावक अरूपि नां।
जटाधारी संकर जु जाकी पदरज सेवैं,
जाके ध्यान बिनु जाय धिक धिक जो दिनां।।9।।
जब तें कुमति गयी विमल सुमति भई,
वासना न कोऊ जहां रही धांमधन मैं।
पुत्र दारा मित्र वधू इनकौ विचारे कैसौ,
ममता न दीखै जहां अपने हूं तन मैं।।
परपरणति छेदि निजरस स्वाद वेदि,
मिथ्या उरगंठि भेदि थके ज्ञानघन मैं।
हेय ज्ञेय उपादेय जांनि परे नीकी विधि,
जैंन बिनु और बैंन आवत न मन मैं।।10।।

(दोहा)

जगज्जेष्ट जगपाल है, जन्म म्रित्यु जर नास।
जगतारण जगतांपती, जन्म स्नान विलास।।11।।
जगतदेव जगराव तू, तू जु जगत कौ नाथ।
तू हि जगद्धित जगप्रभू, जगज्योति निज साथ।।12।।
जगन्नाथ तू देव है, जरन जगत कौ बंधु।
जगतयोनि जगतात तू, जगदादिज गुणसिंधु।।13।।
जगद्गर्भ श्रीगर्भ तू, जगद्विभू भगवांन।
जगद्धतैषी जगतगुर, जगदग्रज जगभान।।14।।
ज्वलज्जलनप्रभ तू प्रभू, जगचूडामणि स्वांमि।
जगतप्रपालक अखिलपति, जगदि्भषक विश्रांम।।15।।
जगतमित्र तू ही सही, जगद्धांत जगजीव।
तू ही जगतां ज्योति है, जगसुंदर जगपीव।।16।।

(भुजंगी)

तु ही जातरूपाभजातात्म भावा। तु ही जातव्रत्तो जगद्राव रावा।।
तुही जातजात्यादि वर्जी गुसांई। तुही जातशुद्ध स्वभावी असांई।।17।।
तुही जानकीनाथ नाथो अनाथा। तुही जानकीतार ईशो असाथा।।
तुही जानकी तात कौ देव तारै। तुही जानकी पुत्र दोऊ उधारै।।18।।

(सोरठा)

तेरे नांही कोय, जाति जरा मरणादि जे।
अजर अजनमो सोय, तू जात्यादिक बाहिरौ।।19।।
जातु कदाचित नाथ, तू न विभाव जु आदरै।
एक स्वभाव सु साथ, अमित अनंत स्वभाव तू।।20।।

(सवैया)

जाग्रत अवस्था जाकी सबै काल देखिए जू,
जागरूक देव वहै जातक न कोय कौ।
जाग्रत स्वपोपति सुपन नांहि ताकै कभी,
जाकै नांहि काहू काल संपुट न जोय कौ।।
जान राय जातरूप जातरूप जितरूप,
सीतल सुभाव ऐसो नांहि कभी तोय कौ।
जाज नांहि काज जाकै जाज मन चादरि न,
आसन न वासन न नाथ सब लोय कौ।।21।।
जाडौ नंत लोक हू तैं पातरौ अनंत महा,
परमाणु दरसी जु साध हू न देख ही।
जाम जाम वीतत है कालकी कला अनेक,
जाके ध्यान विन सोन लेखे में न लेखही।
जार चोर जाकौ भेद नांही लहै काहू काल,
जारी चोरी तजें जाकौ भेद अति पेखही।।22।।
जावा की वसत जेती तेती सब मद्य सम,
वाही नैं जु भाषी वहै अभखि निकंद है।
जालरूप मायाजाल जाकै नांहि काहू काल,
जाकौ जस टालि सबै और दुख दंद है।।
जाय नांहि आवै कहू जाया नांहि माया जाकै,
काया हू कौ लेस न कदापि कोऊ फंद हैं।
जालिम है जोर अति मार्यौ जानै रतिपति,
वहै जाच्यौ देव और कोऊ न अनंद है।।23।।
जिनदेव नांव जाकौ जिननाथ जिनराय,
वहै जिनकुंजर जिनागम अधार है।
जिनमत भासी सोय जिनराज कहै जाकौ,
सोई जिनपति जितमोह जो अपार है।।
जितकांम जितमान जितकोप जितलोभ,

जितिनि कौ नायक जितीसुर सु सार है।
जित तित देखै जिहां जिहां वही भासै प्रभू,
वा बिना जु दीखै सोय सबै भ्रमजार है।।24।।
जिम जिम ध्यान वाकौ करैं ध्यानी आतमज्ञ,
तिम तिम माया मोह छूटै सब जग कौ।
जियरा विसुद्ध होय हियरा के मैल कटै,
जिनदास होय भेद पावै जिनमग कौ।
जिन इंद जिनचंद जिनसूर शूर वहै,
वहै जिननायक सनांनी पति नग कौ।
जाकौ नाम लेत दुखदोष सब दूरि होत,
वहै जिन नरसिंह त्यागी है अमग कौ।।25।।

(सोरठा)

जितामित्र जित जेय, जित कामारि तु ही सही।
तू जित क्रोध स्वज्ञेय, जित क्लेश तू नाथ है।।26।।
तू जु जितांतक देव, तू जिनेन्द्र जित ज्येष्ठ ते।
करै जितेन्द्री सेव, तू जु जितेन्द्रिय स्वामि है।।27।।
तू जु जिताक्ष जितीश, जितमन्मथ जितकाल तू।
जितामन्द जगदीश, जितकर्मा तू ही प्रभु।।28।।
देव जिनेसुर स्वामि, तू हषीक जित जिन प्रभु।
जिनदत तारक नाभि, अरहदास तारक तु ही।।29।।
जित विभाव तू जीत, जिगजिगाट जाकी छवी।
तू जित जीत अजीत, तेरी महिमा तू लषै।।30।।
जि कहिए श्रुति मांहि, जेता जीतक नाम है।
तो बिनु जेता नांहि, तू जीतक जित रिपुनि कौ।।31।।
अनिधन नाथ सुसिद्ध, जय कौ रूप जु तू सही।
जय कौ नाव प्रसिद्ध, जि कहिए आगम विषै।।32।।
जित शत्रु तुव नाम, तैरै शत्रु न अर्द्ध है।
और न दूजौ काम, तू ही जेता जगत कौ।।33।।

(सवैया)

जीव निरजीव के वषाने सब भेद जानै,
जीवनि कौ रछिक सु जीवनि कौ नाथ है।
जीरण न होय कभी जीते सब कर्म जानै,
जीवनि कौ तारक अनन्त बड़ हाथ है।।
जीव की दया कौ प्रतिपाल वहै जीव देव,
जीति कौ धरणहार परम स्वसाथ है।
जीन नाहि घोरा जाकै जीते जाने नन्त दोष,
अकेलौ सुभट महा औरनकौ साथ है।।34।।
जीभ शतविंसति तैं गावै नागपति निति निति,
तऊ नांहि ताके गुन कौन लहै पार सो।
तीस तीनि सागर लौ निति गावै जस,
सरवारथ सिद्धि वासी लहै न विथा सो।।
जीतन कौ जीत सो अजीत देव जीत लार,
जीतै नांहि जासौ कोऊ अति अनिवार सौ।।
एक जीभ मेरैं तामैं वाचक सकति नांहि,
कौन भाँति मोसौ सठ कहै समाचार सौ।।35।।
जीरा सम आस्रव अजीरण जरायवे कौ,
भव दुष पावक के दाह कौ जु मेट है।
जीव की अवस्था जेती कही जानै सब तेती,
जीव की जु भूल ताकौ मेटक अमेट है।।
जीव कौ सुधार निरजीव कौ विलेछकार,
जीवक सु सेठ कौ उधारक स्वभेट है।
वहै जीव नाथ सब जीव गण साथ जाकै,
जीवनिकी हिंसा कौ निवारक अलेट है।।36।।
जुदौ तू अनादि ही को माया के प्रपंच हू तै,
कर्मजाल कर्मणा कौ तौंमैं न प्रवेश है।
जुगपत ज्ञान तेरौ व्यापि रह्यौ सब मांहि,

तू ज सब लोक कौ प्रकासी बिनु भेष है।।
जु को दिन छिन तेरे ध्यान मांहि जाहि स्वामी,
सोई धनि धनि जामै दुख कौ न लेस है।
तेरे ध्यान बिना छिन जाय कोई वादि गनि,
तू ही एक देवदेव जग कौ नरेस है।।37।।
जुरै नाहि जासौ कोऊ जाकै नाहि अरि होऊ,
ज्वर आदि रोग जाकै भए नाहि तन मै।
जुष नांहि कबहू जो जुर्‌यो न जुरत कभी,
जुगति न जाकै भया ज्वलित न मन मै।।
ज्वलित प्रकास रूप जाज्वलिति मान वहै,
ठौर-ठौर व्यापि रह्यौ जिन जन जन मैं।
वहै जगदादिज जितेस्वर जिनंद देव,
जाकौ जस सुनौ जाय साधनि के गन मैं।।38।।

(सोरठा)

जुट नहि जाकौ भाव अन्य विभावनि सौ कभी।
वह मुनिगन कौ राव, देषौ वाहि जु आप मै।।39।।

(सवैया)

जुदो सब दोषनि तै गुण कौ निवास वहै,
जूवा मांस मदिरा कौ निंदक महाप्रभु।
गनिका कौ वरजी सु वरजी अहेरा जू कौ,
चोरी चारी जारी कौ निकन्दक सदा विभू।।
परदारा संगम निषेध्यौ जानै सबै विधि,
सातों ही विसन कौ उथापक अनादि भू।
वहै प्राणिनाथ सब प्राणिनि कौ सुखदाता,
सबै ही जु कुविसन निन्दे जानै पाप भू।।40।।
जूनौ नंतकाल कौ जु जूनौ नांहि देखिए जू,
निति निति नवल नवीन रसरूप है।

जूठि सम विषैभोग जाकै पुर पाइए न,
जाके पुर मांहि कोऊ वापी है न कूप है।।
जाके पुर मांहि कछू भूख तिस पीड नांहि,
काल हू कौ जोर न जहाँ जु वह भूप है।
जटाजूट चरचा कौ भासक है वही देव,
वह जु अजूह नाथ परम अनूप है।।41।।
जेता कर्मशत्रु कौ जु जेठा सब लोक मांहि,
भव्यनि कौ तारक जो जेज न नांहि जा सकै।
जेती केती वर्गणा जु लागि रही जीवनि कै,
तिन सब मांहि एक दीसै नाहि तासु कै।।
जेह लीन जाकौ भाव जेह लता दूरि वहै,
जेलि तै निकासै जामै जेह लीन आ सकै।
जेर सब वाके अर वहै जेर काहू कौ न,
ऐसो जगदीस राय जोगी जामै जा सकै।।42।।
जेरज औ अंडज सु पोतज के भेद जानै,
भिन्न-भिन्न भाषै अर भाख्यौ ए उदरजा।
उदर बिना जे सनमूरछिन भेद जेते,
ते ते सब वाही नै बखाने आप अरजा।।
औपपादिक जोनि जो है देव अर नारक की,
ताहू कौ वषान्यौ भेद पाप सब वरजा।
वहै देवदेव भाई काढे जग जेलि सेती,
वार वार वासौ कहा कीजे वहु अरजा।।43।।

(दोहा)

जेठ मास गिरसिर विषै, सूरज सनमुख जोग।
ऐसौ हू तप जौ तपै, वा बिनु कटै न रोग।।44।।

(छन्द भुजंगी)

तुही जैत्र शस्त्रस्य धारी यतिंदा। तु ही त्रअरूपी महाजीत यदा।।
तुही जैनधर्मस्य मूला गुसांई। तु ही जैनधर्मस्य भूपा सु सांई।।45।।
तुही जै असिंधू तु ही जैन सिंधू। तू ही जीव रक्षा प्रकासी विबंधू।।
नहीं तत्त्व तेरा विषै मूढ़ पावै। विषै त्यागी जोगी सदा तोहि ध्यावै।।46।।
नहीं जैत्र शस्त्रा बिना तो गुरुजी। तु ही जे जैत्र सस्त्रस्य दाता धुरू जी।।
कहै जेत्र सस्त्रा सु रत्नत्रयी को। तु ही है त्रयीधार तारा त्रयी कौ।।47।।
तु ही जैन देवा तु ही जैन नाथा। तु ही जैन सेवा तु ही जैन साथा।।
इहै जैन धर्मा तुझै ध्याय चालै। तु हू जैन धर्मी हुआ सर्व पालै।।48।।
इहै जैन तोकौ लहै देव स्वामी। तू ही जैन धर्मस्य स्वामी सु धामी।।
इहै जैन तेरा सबै पाप दारै। इहै जैन तेरा छहौ काय पारै।।49।।
इहै जैन तेरा हणै नाहि कोऊ। इहै जैन नाही मृषा रूप होऊ।।
इहै जैन चोरी निषैधे सदा ही। इहै जैन नारी न पर्सै कदा ही।।50।।
इहै जैन त्रिश्ना परिग्रा उडावै। इहै जैन क्रोधादि दोषा छुड़ावै।।
इहै जैन तोकौ बतावै प्रभूजी। सही जैन धर्मा जपै जे विभूजी।।51।।
इहै जैन तेरा तुहू जैन केरा। सही जैन धर्मा सु पंथा जु तेरा।।
नहीं तो समा अन्य दूजा सु जैनी। तु ही कर्म नासा धरै रूप छैनी।।52।।

(सवैया)

जोतीस्वर देव तू है ज्योति कौ धरनहार,
ज्योति कौ उजागर स्वजोति नाथ सार तू।
ज्योतिधर ज्योतिराय ज्योति ही है काय तेरी,
तू ही ज्योतिदाय देव मोहमदमार तू।।
ज्योति कौ सुमेर तू ही तू ही ज्योति मूरति है,
ज्योतिरूप ज्योतिभूप ज्योत गणकार तू।।53।।
जोरावर दूसरौ न देषिए जगत माऊ,
तू ही एक जोरावर जाहर जिहांन मै।
जौम नाहि तेंरै कोऊ जोसकौ नू नाम होऊ,

जोक सम इंद्री पाँच तेऊ नाहि ज्ञान मैं।।
जोल जाल तैरै नांहि पात देवता गिनै मैं,
जोहै तू न और ऐसो देखे मुनि ध्यान मैं।
जोट नाहि बाघ तेरे छोटा न तबेला कछू,
जान बिनु जीति लए सब ही सयान मैं।।54।।
जो कहै सिंधत माहि वेग कौ जु नाम प्रभू,
तू ही वेगावेग पार करैगौ अखिल तैं।
जोता नांहि खेती तैरै असि मसि नाहि कछू,
वाणिज कौ लेस न महंत तू सकल तै।।
जोवै तोकौ अहनिसि साधनि के संघ सदा,
तेरौ तत पाए मोख हौहि जो निखिल तै।
जो है नाम तेजसी कौ तो विना न और कौऊ,
तु ही एक तेजसी विचारै मुनि किल तै।।55।।
जौ कह्यौ सिधंत माहि जन कौ जु नाम ठीक,
जन सब दास तेरे तू जु जिनपति है।
जौ समूह सेवै तोहि जननि कौ नाथ तु ही,
जौ ह्वै पार लोकौ भजि तारक तू अति है।।
जौन्ह नाव चाँदिनी कौ तू ही जगचन्द स्वामी,
तिमर कौ मेटक ते नंतजोति छति है।
तेरी चाँदनी जु माहि विघन जु भासै नाहि,
राहु केत मेघादिकतैं न जो रुकति है।।56।।
जंतुनि कौ पीहर तू जंतुपाल जंतुराय,
तौकौ भजि जंतु लहै सुरग मुकति है।
जंगम सु थावर कौ तू ही दुखटार सांई,
जंगल निवासी साधु तौमैं धरै रति है।।
जंतुनि कौ नाथ तू ही जंतु सव साथ तैरे,
जंतुनि कौ तारक अनंत सुख तात है।
जंतुनिकौ रछिक जो निंदक अभक्ष हू कौ,

जंतुनि की पीड़ाकौ निवारक जो जति है।।57।।
जंघ तेरी वज्र सम वज्रजंघ नाम तेरौ,
जंपि न सकत कोऊ तू जु जिम मूरती।
जंपै तोकौ सुरनर खग मुनि गन,
सब तऊ तैरौ पार न लहत तू अमूरती।।
जंघ न जंभाई तेरै छीक नहि षासी कोऊँ,
तू जु जंघाचारणनि तारक असूरती।।
जंज तू करत स्वामी तंत मुनि ध्यावै नामी,
तू जु अतिरूप अतिभूप अतिसूरती।।58।।
जंबू कै उधारउकार तार्‌यौ जंबू स्वामि तै जु,
जंबू दीप आदि सब दीपकौ प्रकास तू।।
जंबू नाव स्याल कौ हू स्याल वहै ठीक देव,
तोहि न भजत जोई महासुख रास तू।।
भजै तोहि सिंह तेई तजै तोहि स्याल जेई,
स्याल हू उधार्‌यौ तै जु तारक सु पास तू।।
जंबू जामवनि नाम आदिक अनेक फल,
साधारन फल कौ निंदक सुभास तू।।59।।
ज: कहै जिनागम मै जन ही कौ नाम नाथ,
तू है जन नाथ जिननाथ अतिसाथ जू।
भवदुख टार तू ही शिवसुख धार ईश,
जनगनतार सांई अति बड़ हाथ जू।।
जीव कौ जतैया तू ही मोह कौ हरैया तू ही,
दुख कौ जरैया देव एकल असाथ जू।
जीवक के मंत्र तै जु तार्‌यौ सारमेय देव,
सुरग वतायौ वाहि तू है अतिनाथ जू।।60।।

(बारा मात्रा एक सवैया मैं)

जगत कौ तारक तू जाग्रत सुरूप देव,

जिननाथ जीतदोष वीतराग तू सही।
जुरै नाहि तोसौ कोऊ जूनौ तू न नौतन है,
जेलि तै निकासै तू जु लोकनाथ है तुही।।
जैन कौ प्रकास तू ही ज्योति कौ निवास सदा,
जौन्ह नांहि तेरी सी जु चन्द मैं कभी नहीं।
जंगम र थावर कौ एक रखियाल सांई,
ज: जना महंत तोहि ध्यावै गुर यौं कही।।61।।

(दोहा)

तेरी जाग्रत चेतना, मा पद्मा परतच्छि।
रमा भगोती शंकरी, कमला दौलति लच्छि।।62।।

।। इति जकाराक्षर सम्पूर्णम्।।

झ

आगै झकार को व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

झषध्वजरिपुं धीरं, सर्वप्राणिहितं परम्।
वंदे देवेन्द्रवृंदार्च्यं, संसारार्णवतारकम्।।1।।

(मालिनी छंद)

झटिति भवसमुद्रात्तारको वीतरागो,
जिनवर शिवसंतो वीतमोहो विरागो।
सहज परमभावो नंतवीर्यप्रभावो,
जगति तरलरूपे सर्वदेवो स्वभावो।।2।।

(श्लोक)

झंझावातसमा माया, मोहो मेघोपमो जडः।
शरत्कालसमो शुद्धो, त्वं च मोहविनाशकः।।3।।

(सोरठा)

झ कहिए जग माहि, भैरव नाम प्रसिद्ध है।
भैरवता कछु नाहि, तोमै तू ज दयाल है।।1।।
भैरव तेरौ दास, तू भैरव कौ नाथ है।
सब छति तैरे पास, तू दयाल जगदीस है।।2।।
घर्घर स्वर कौ नाम, झ कहिए सिद्धान्त मैं।
तेंरै नाहि राम, घर्घर स्वर कौ नांव हू।।4।।
तू आनन्द सुरूप, मिष्टवाक्य तू देव है।
तू अमृत कौ कूप, घर्घर स्वर तैरे कहा।।5।।
झलझलाहट तू देव, झलक झलक तेरी छवी।
झमझमाट करि सेव, करहि नृत्य तव पुर सुरा।।6।।

(सवैया)

झषकेतु रिपु तू जु काम कौ प्रचार हर,
झषनि कौ रक्षक झषध्वज विनास है।
झज्झर समान जीव कण छंड जे सदीव,
तोहि नाहि पावै पीव तू जु कणरास है।।
मेघरूप तू ही देव झर लावै अम्रित कौ,
अगनि सुरूप नाथ फलकौ निवास है।
करम जु ईंधन कौ भसमकरण तू ही,
झलकै न काहू काल क्षमा कौ उल्लास है।।7।।

(दोहा)

झकझोल जु तेंरै नहीं, तू है सीघ्र उतार।
झलमलाट वहिरंग जे, तैरे नांहि लगार।।8।।

तू झगरे तैं दूरि है, झगरा तेरे नांहि।
झगरा झाटा सब मिटै, जब आवै तुव पाँहि।।9।।

(सोरठा)

झालरि कौ झुणकार, तेरे होई सांईयां।
झांझि मजीरा सार, तैरै बाजै जोगिया।।10।।

(छंद भुजंगी)

तु ही झाणगम्या तु ही झाणधारी। तु ही है सु झायारं झाणं अधारी।।
प्रभू कर्मकारा तु ही है अकारा। तु ही झालवर्जी तु ही झालहारा।।11।।
नहीं झाल तैरै नही झाग नैरै। नहीं झांझ तैरे नहीं फाफ तेरै।।
तु ही सुद्धझायार झाणेण हीणा। जपै नारदा तोहि धारे जु वीणा।।12।।

(दोहा)

झिगति झिटति सिद्धांत मै, शीघ्र तणौ है नाम।
झिगति उतारै जगत तै, पार करण तुम राम।।13।।
ढील करण कौ काम नहि, झिटति पार करि देव।
उत्तम गुणगण कोष तू, भवतारक दै सेव।।14।।
तू झिकाय हमकौं सहि, पाय जु अमृत वानि।
तेरी वाणी बिनु सुधा, नाही गुण गण खानि।।15।।
झीण अंग तैरौ नहीं, तू अति पुष्ट स्वरूप।
झीणी चरचा तो विना, को भाषै जग भूप।।16।।
झीलि नाहि तुव गुण विषै, भरै न कर्म जु वारि।
झील कहै नीची धरा, तुव गुण उच्च विहारि।।17।।

(भुजंगी)

नहीं झील तेरी धरा मै गुसाई। तिहारी जु भू सर्व ऊंचै सु साईं।।
सवै तो जु नीचै नही तू जु नीचै। तु ही सर्व ऊंचै नही जास कीचै।।18।।

(सोरठा)

तो सम नाथ झुझार, और न दीसै जगत मै।
एकाकी नर धार, डारे कर्म समूह तै।।19।।
तेंरै है गुणकार, बाजे बाजे कोटि बहु।
नाहि जगत मंझार, तोसौ राव जु दूसरौ।।20।।
झुकै जीव जौ कोय, तेरी वोर गुसाइयां।
भववन तजि शिव होय, तू शिव दायक नाथ है।।21।।
तू न फुकै अघ मांहि, अनघातम तू देव है।
यामै संसय नांहि, तोहि भजे जन मुक्त है।।22।।
झुकिवौ तेरौ नाथ, भव्यनिही की वोर है।
अभवि न पावै साथ, इह तेंरै निरधार है।।23।।
झुगली और सवाद, झूमक झोलबरी सबै।
तज के जिह्वा स्वाद, तेरौ ध्यान धरै व्रती।।24।।

(सवैया)

झूठै है इकंतवाद जामै नांहि स्यादवाद,
क्षणक प्रवाद जाकौ बोधमत कहिए।
झूठै विपरीति महा जामै जीवघात कहा,
झूठे संसै थाप जाकौ भूलि हू न गहिए।।
झूठै नास्तीक वाक जोकौ वहै चारवाक,
झूठै कौल कापलिक तत्त्व नांहि लहिए।
झूठै विनै मिथ्या जामै पूजिए जु सबै देव,
झूठै है अज्ञान मत जातै तू न पइए।।25।।
झूठै कौ न लेस तेंरै तू है साचौ देव महा,
झूठै जीव तोहि नाहि पावै तीन काल मै।
जामै परपीड़ होय साच वहै झूठ सम,
दया सौ जु मिल्यौ सोई साच शुभ चाल मै।।

झूठै के जु भेद अर दोष है सु झूठ के जु,
तै ही सब भाखे नाथ व्रत्तनि की माल मै।
व्रतकौ धरैया तू ही पापकौ हरैया तू ही,
जीवकौ तरैया तू ही नाही जगजाल मै।।26।।
झूठै देव सबै नाथ तो बिना न देव कौऊ,
तू ही एक देव देव देवनि कौ नाथ है।
काल जीते देवनि कौ तू है कालजीत देव,
तेरी मोहि दै जू सेव तूज वडहाथ है।।
झूठै गुर वैई देव तोहि तजि जग राचे,
पुनि जु कहावै साध संग अति साथ है।
झूठै पंथ वही जामै दया कौ न जानै भेव,
झूठै मत वही जामै तेरौ नांहि साथ है।।27।।
झूठौ सूत्र वही जामै तेरी नांहीं कीजे सेव,
झूठौ तंत्र वही जामै जीवनि की घात है।
झूठौ ऋति वही जामै नास्तीक भेद वचै,
वहै झूठ आगम जो तू न जहा तात है।।
झूठै ही पुरान वहै चरचा न जामै तेरी वहै,
झूठ मारग जो तू न जहाँ छात है।
झूठ तै वितीत देव वीतराग देव तू ही,
मोकौ निज दै जू सेव वहै अति मात है।।28।।
झूप नांहि तेरै कोऊ त्यागै तै सकल झूप,
झूप बिनु जग भूप इहै अति वात है।
झूम्यौ नांहि काहू काल झूमै न झुमैगौ कभी,
झूम सब मेटै तू ही ऐसौ तू अपात है।।
झूलै निजरस मांहि झूला नहि डोला जाकै,
झोला नाहि झोटा कोऊ यौ ही जु विहात है।
तू ही जो सिघंतसार झूलत अखंड धार,
झूलै न झूलैगौ कभी परम अगात है।।29।।

(दोहा)

झेरा माहि जु हौं पर्‌यौ, तू झेरा तैं काढ़ि।
झेरा यह भवकूप है, तू काढ़ै गुण आदि।।30।।
झेलि हमारी वीनति, राखि न झेरा मांहि।
नंत काल बीत्यौ ईहां, यामै रस कहु नांहि।।31।।

(सवैया)

झेरा नाहि कुवा तैरै ग्राम धाम नाहि कोऊ,
नाम हू न ठाम एक ऐसौ तू अनेक है।
सबै गैर तू जु एक मोहु माहि क्यों न होय,
मैं न जान्यौ मूढ़ मति तेरौ जु विवेक है।।
तातै रह्यौ झेरा मांहि तेरौ गुण गह्यौ नांहि,
तेरी जिनबानि रसि धारे गुन नेक है।
रसी देहु मेरै हाथ खैंचि कै निकारि लेहु,
तो विना निकासै कौन काढ़क तू एक है।।32।।
काढ़े तै अनेक जीव मोहु क्यौ न काढै पीव,
काढ़क ते ठेठि कौ वषान्यौ श्रुति माहि जु।
खैचि लेहु मोकौ नाथ देहु क्यों न तेरौ साथ,
तू है बडहाथ नाथ तोमैं सक नांहि जू।।
मेरौई अभाग तातै रह्यौ हौ जु झेरा मांहि,
गही नाहि डोरी तेरी तुझै दो काहि जू।
आवै तू छुड़ाय देव दै जू भवतार सेव,
लै जू निज मांहि सदा रहू तोहि पाँहि जू।।33।।

(सोरठा)

झैक रूप तू नांहि, झ कहिए भैरव सही।
तू जु सदा सब पाहि, सब अक्षर मात्रानि मै।।34।।

(सवैया)

झोर कोऊ नाहि तेरे मूल मै कौ नाव झोर,
एकरूप देव तू ही और दूजौ भेद ना।
झोलझाल नाहि तेरे ज्ञान कै बतायवे मै,
तू ही एक ज्ञानरूप जाकै कछू खेद ना।।
झोक कौ न लेस तैरै झपट झकोला कछू,
झोला आदि रोगनि कौ भेदनांहि छेद ना।।
झोल आदि व्यंजन मै एक हू न तैरै कोऊ,
तू तौ निरहार देव तैरै नांहि वेदना।।35।।
झौर नाहि तैरै होऊ झगरा न मिलै कोऊ,
झगरे कौ मूल एक दूसरे कौ साथ है।
तैरै नांहि साथ स्वामी तू है एक रूप नामी,
नंतगुण साथ तैरै ऐसौ तू अनाथ है।।
तैरै गुण तोही रूप दूसरौ न भाव तैरै,
तातै झौर होत नांहि एकलौ असाथ है।
पर परिणति कौ जु लेस हू न पइए तेरै,
ऐसौ तू अनंत साथ अद्‌भुतनाथ है।।36।।

(सोरठा)

झंझावात जहां न, जहाँ घाम वृष्टि जु नहीं।
नहीं सीत कौ थान, जहाँ कौ थान है।।37।।

अथ मूढ की अवस्था—

(सवैया)

झंपापात लेत मूढ़ भोग कौ भिलाषी होय,
परलोक राज ऋद्धि चाहै सठधी सही।
तेरौ ध्यान किए झंपापात सब दूरि होता,
करम प्रपंच ज्ञान यंत्र मांहि पीसही।।

तू जु है अझं स्वामी झिंडा नाहि तेरै कोऊ,
लोकालोक सवे तेरै झिंडावीचि दीसही।
झिंडा तेरौ आतमीक ज्ञानभाव शुद्धरूप,
औरन को झिंडा तेरै ऐसौ तू ज ईस ही।।38।।
झः कहैं सिद्वंत माहि नष्ट कौ जु नाम नाथ,
नष्ट किए सकल करम तैं अनादि कै।
तू जु नांहि नष्ट सेव लष्टपष्ट नांहि भेव,
तू जु है स्पष्ट देव और सब वादि के।।
मेरौ नष्ट भाव एह तोही तैं नसै अछेह,
तू है एक सिवगेह और न कौ आदि कै।
मेरौ कष्ट हरौ नाथ नष्ट कौ छुड़ावो साथ,
और कहा माँगू आथि पूरण महाधि के।।39।।

अथ झझा की बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया)

झर लोवै अमृत कौ जगत की जीवनि तू,
झालरि इत्यादि बहु बाजे बजै रावरै।
झिगति तू पार करै झीणी चरचा जु कहै,
झुकै नांहि काहू काल झूठ कभी ना धरै।।
झेरा तै निकासै देव झैकरूप नांहि लेव,
झोलेझाल नांहि तेरै झौर झार ना करै।
झंझानिल तुल्य भ्रान्ति मेघसम मोह जड,
झः करै सु तू जु एक परम अमी झरै।।40।।

(दोहा)

झगर समातम गुणमई, इह जु अविद्या नाथ।
सो नासै तो देखतैं, तू समरथ बड़ हाथ।।41।।

शक्ति रावरी है रमा, सब झगरे तैं दूर।
सोई कमला दौलती, और न दौलति पूर।।42।।

इति झकाराक्षर सम्पूर्णम्।



आगै ञकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

ञकारो मूढभावेषु मूढभावैरलभ्य त्वं।
बोधभावेन भो देव, गम्योसि नान्यथा भवान्।।

(सोरठा)

ञकारसु अछिरठीक, मूढ़ विषै कहिए प्रगट।
तीन्यौ मूढ़ अलीक, देव धर्म गुर मूढ़ जो।।1।।
मूढ़ न पावै नाथ, तत्त्व तिहारौ सुद्ध जो।
नही मूढ़ कौ साथ, तेंरै मारग मैं प्रभू।।2।।
ह्वै मूढ़त्व विलीन, तेरी चरचा जौ सुणै।
होय महा परवीन, तू मूढत्व विडार है।।3।।
इंद्री विषयनि कौ जु, ञकारांक आगम कहै।
विषयनि की सब सौंज, तैं डारी जगतां प्रभू।।4।।
विषय समान न कोय, आतम कौ बैरी प्रबल।
याही तैं भव होय, और न कारण दूसरौ।।5।।
विषई लहै न तोहि, तू विषयनि तैं दूरि है।
विषय रहित करि मोहि, ज्यौ ध्याऊँ अहनिसि प्रभू।।6।।
गावै जाकौ नांम, ञकारांक पुस्तक विषै।
तू गायक सिव धाम, तेरौ जस गावै सबै।।7।।

तैरै राग न कोय, उरझावे कौ नाम ना।
तन मन तोमय होय, गावै तौको सुरपती।।18।।
सबै राग के भेद, सप्त सुरादिक जे सही।
तौर्यत्रिक कौ वेद, तो बिनु और न दूसरौ।।9।।
संगीतादिक भेद, अर गंधर्व कला सवै।
तू भाषक जु अछेद, तै ही सब भाषी विधी।।10।।
जर्ज्जर स्वर कौ नाम, ऊकारांक सिद्धांत मै।
तू जर्जर नहि राम, तैरै जर्ज्जर स्वर कहाँ।।11।।
जर्ज्जर बोलैं जे जु, क्रोध थकी क्षमया विना।
तोहि न पावै ते जु, तू जर्जर क्रोधी नहीं।।12।।
मिष्ट सु भाषक तू जु, पुष्टाक्षर भाषक तुही।
तोहि न पावै पूज, जर्जर दुर्जर जे लपैं।।13।।
जर्जर बोलै वृद्ध, नवलरूप तू वृद्ध नहि।
क्रोधी लोभी गृद्ध, जर्जर बोलै कुमतिया।।14।।

(दोहा)

तू जु जोजरी है जरा, जनम मृत्यु जर नास।
तैरै नांहि विभाव को, नित्य नवल सुखरास।।15।।

(सवैया)

मूढ़ता न तैरै माहि मूढ़ तोहि पावै नाहि,
इंद्रिनि के विषयान तोकौ कहूं पावही।
विषयी लहै न तोहि निर्विषै करै जु मोहि,
ज्ञायक तू तत्त्व कौ जु नायक बतांवही।।
गांवै तू जु च्यारि वेद रूप द्वाद्वशांग नाथ,
जर्जर न बोलै तू जु मिष्ट बैन गावही।
सर्वाक्षर मूरति तू क्यौ ऊकार मैं न होय,
सुर नर नाग नाथ एक तोहि ध्यावही।।16।।

(दोहा)

हयवरलोञणनङ्मयो, झडधघभो फुनि ठीक।
जडदगवो खफछठध, है, चटतकपो न अलीक।।17।।
इह व्याकरण विभेद बहु, तू ही भासै देव।
शब्द युक्ति परमागमा, तू जु प्रकास अछेव।।18।।
चित्प्रकाश निजशक्ति जो, तेरी नाथ विशाल।
सो कमला पद्मा रमा, लक्ष्मी दौलति माल।।19।।
अवर न संपति द्रव्य कौ, धन विभूति कछु नांहि।
जग की भूति जु भूति है, निज परिणति तुव मांहि।।20।।

इति श्रीभक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन-अध्यात्मबारहखड़ी नामधेय-उपासनातंत्रे जिनसहस्रनाम-एकाक्षरीनाममालाद्यनेकग्रन्थानुसारेण भगवद्भजनानंदाधिकारे आनंदरामसुतदौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते चकारादिञकारांत पंचाक्षरप्ररूपको नाम चतुर्थः परिच्छेदः।

पंचम परिच्छेद



आगै टकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

टंकोत्कीर्णस्वभावं च, चिच्चिमत्कारलक्षणम्।
वंदे सदा चिदाधीशम्, सर्वभूतहितं परम्।।1।।

(दोहा)

एक टकोरो बोध कौ, तेंरै ही बाजै जु।
तोसौ यंत्री नांहि को, अद्‌भुत गति राजै जु।।2।।

(सवैया इकतीसा)

टक बंधी बातै तेंरै टकसाल शुद्ध तेरी,
तेरी टक माहि स्वामी वृद्धि हानि नाहि जू।
टकेनि कौ त्यागी अर दाता है तु ही जु देव,
और भांति होत नाहि तेरी ऋद्धि माहि जू।।
टगी टची तेरे कोऊ ढूंढे हूं न पाइए जू,
टगी टची त्यागि साधु तोही माहि जाहिर जू।

टगटगा पुरी अर राम कौ कहावै राज,
चहै पुरी सही राम तैरे ही जु पाँहि जू।।3।।
टरै नांहि टार्‌यो कभी टर्‌यो न टरैगौ कहूं,
टग नाहि जाकै कोऊ टग एक ज्ञान की।
टल्ला जाकौ लगै नांहि कर्मनि कौ षोवा वहै,
जाके एक टल्ला ही तै भागी फौज मान की।।
टण टण वाजै जाकै वाजे अति कोटि भाई,
जीति के क्षमा में फौज मारी मोह राण की।
जाके पुर मांहि एक टपका न परै कोऊ,
जलरूप जडभाव जीते जिह स्याण की।।4।।
जाके पुर माहि कोऊ टपके कौ नाव हू न,
षेती नाहि पाती जहां वृष्टि नाहि मेह की।
असि मसि वाणिज कौ लेस हू न दीसै जहां,
वापी कूप सरिता न पंकति न गेह की।।
उपवन सरवर एक हू न दीखै जहां,
पाई कोट पौलि नाहि मूरति न देह की।
चंद सूर इंद्रादिक देवन मनुक्ष जहाँ,
जहाँ न बिकार भाव ऐसौ तू अनेह की।।5।।
टहल तिहारि मोहि देहू जू मल केरी,
टहल्यौ अनादि कौ सु भूलि मोमैं तावना।
तिहारी टहल पाय हुगौ जु निरखेद,
रावरी टहल बिनु मोमैं कछू आवना।।
टार्‌यौ नांहि टरौ स्वामी अब तौ उधारि मोहि,
टालाटली करौ जिन राखौ पासि बावनां।।
नाहि कछु चाहि मेरे तो कनां न मांगूं कछु,
एक सुद्धभाव देहु और कछू जावना।।6।।
टाडौ लादै ऊरध कौ शुद्ध पद जायवे कौ,
तू ही बडनायक जू अतिसुष साथ है।।

टांडे माहि नंतगुण नंतभाव भरे तै ही,
नंत पूंजी पासि तेंरै अैसो वड़नाथ है।।
नंत जीव नाल लगे वैडे ही जु टांडे के जु,
तैडे टांडे मांहि नांहि चोरनि कौ हाथ है।।
टांगरौ न तेंरै कौऊ मादी तू जगत कौ जु,
टापरौ तिहारौ देव सबनि के माथ है।।7।।
टा कहै सिधत मांहि पृथ्वी कौ नाव नाथ,
तू है पृथ्वी नाथ सब पृथ्वी तेंरै साथ जू।।
अष्ट ही जू पृथ्वी भेद भाषी सब पृथ्वी तैं ही,
अष्टम धरा कौ राव तू ही बडहाथ जू।।
नारक भवनवास नरजोतिषि निवास
सुरग सु नवग्रीव नुत्तर विलास जू।।
इनकी न चाहि मेंरै अष्टम धरा की चाहि,
अष्टम धरा है मोहि मोक्ष कौ तू नाथ जू।।8।।

(सोरठा)

टावर इवर नांहि, टांम न टूम न एक हूँ।
टापू सम वा मांहि, लोकालोक सबै रहै।।9।।

(सवैया)

टापू सम यहै लोक उदधि अलोक मांहि,
तामै षटद्रव्य तू वरतै अनादि कै।
चरचा जो इनकी सो वनिज कहावै नाथ,
वनिज करया साधु श्रावक जु आदि कै।।
वनिज कौ समकित चाहिए सुनाथ वहै पूंजी तेरी,
हाट मांहि है महाधिके।।
हाट तेरौ जिनमत सेव जु अनादि ही कौ करें,
सेव मोहि तू जु और सेठ आदि के।।10।।

टाकी नाहि टाची तेंरै टाट हू न पाटंवर,
रोम चर्म सूतादिक वकलन देखिए।।
तू तौ निरभूषण जु वस्त्र कौ न नाव तेरे,
टांची मिलै नांहि अघडित लेखिए।।
तोला तू अनादि ही कौ तोलि राखे सबै लोक,
तोला मास रती टांक एक हू न लेखिए।।
टांचटीच नांहि कोऊ टाटी नांहि टापरौ,
जु टूटहै न टार तेंरै भूपति तू पेखिए।।11।।
टाटी मोह मारग की जु भारी चिदधन आडी,
तोही तै टरैगी मेरी टारक तू तम कौ।।
टापरौ न तेरौ सव लोक कौ प्रपंच सांई,
टांपरौ जु मोक्ष तेरौ मारक तू जम कौ।।
मोक्ष मैटिकाव मेरौ तो ही तै जु है सदीव,
जग मै टिकाव नाहि जहाँ काल धमकौ।।
जग मै अवस्था नेक मोक्ष मै अवस्था एक,
वहे तेरौ नगर जहाँ न वस भ्रम कौ।।12।।
जैसे सखंग श्रद्ध सक्रट टिकांनी विनु,
विनु चलै मांहि मारग इहै कवता है।।
जैसे सखंग शुद्ध सकट टिकानी बिनु चलै,
नांहि मारण में इहै ठीक बात है।।
तैसे सखंग बहिरंग सब क्रिया भेद,
सकट भव जु एई यावदेक जात है।।
भगति टिकांनी तेरी जा विना न चालि सकै,
वृत्त रूप सकट तु वीचि ही रहात है।।
भगति टिकानीं होय तबै वहै चलै नाथ,
रत्नत्रय मारग है मोक्ष ही लहात है।।23।।
टिक्यौ नाहिं हौ जु कभी अनुभौ के मारग मैं,
टिक्यौ नांहि देह धारि हौ जु नाथ कबहू।।

टिकौ जौ कदाचि श्रद्धरूप निज भावनि,
मै तेरौ ही प्रसाद देव और नांहि कवहू।।
तो नखै टिकै न स्वामी राग दोष मोहमल,
तो, नखै टिकै न कर्म नंत जुरे जबहू।।
टिरे हू रहत मोस्यौ ऐसे ए अनंत पाप,
तू ही जो छुड़ावै राम जब तब अबहू।।24।।

(सोरठा)

टीप टाप कछु नाहि तेंरै दीसै जोगिया।
सबै सोभ तुऊ मांहि, और टीपझूठी सबै 126।।

(सवैया)

टीकौ त्रिभुवन कौ जु तेंरै ही ललाट देव,
तू ही एक टीकायत नृपति विधान मै।
काम क्रोध लोभ मोह मान मद छल सब,
जगत कौ जीति पापी ह्वै रहे जु मान मै।।
लोक सब जीति कै जु टीटि उपजाई इन्है
तू ही टीटि टारै नाथ इनकी जिहान मै।
तू ही टीटार अर टीटी नांहि तेंरै कौऊ,
टीसि न कदापि स्वामी टीप तेरी ज्ञान मै।।16।।
टीप जौ करावै कोऊ तेरे चैति मन्दिर की,
पावै सुरलोक अतिसुख कौ निवास जो।
तेरौ चैत्य मन्दिर जौ नौतम करावै ईश,
ताकौ पार कहा देव पूजा को अधार जो।।
घंट अर चंदवा चढावै तोकौ जोई भव्य,
छत्र चांमरादि उपकरण विकास जो।
टीच तेरे मंदिर की दूरि जो करावै भव्य
धवला-वै मंदिर कौ पावै जस रास जो।।20।।

टीपिवौ न तैरै कोऊ और और बातनि कौ,
एक रूप एक बात तेरे मत देखिये।।
नादि श्रुति रूप तू वषानै सब भेद तात,
नित्यानित्यचरचा कौ सागर तू पेखिये।।
टीपे और मारग जु जीवनि अनेक भांति,
उनमत लागि स्वामी तोहि नांहि लेखिए।।
एक तेरे पंथ बिनु तू जु नहिं आवै हाथ,
और काहू पंथ लागि तोहि न अनेखिए।।18।।

(सोरठा)

टुकड़ा लूषा पाय, टुकड़ी मोटा पहरिकै।।
अहनिसि जिनगुन गाय, रहै मगन तेई सुखी।।19।।
पहरि जु अंगर ऊँच, असन करै खटरसमई।।
लावै सील जु खूंच, धिक धिक ते नर जगत मैं।।20।।

(सवैया)

टुके कसे जीवनै पै भूल्या तोकौ जीव स्वामि,
विषयानि मै राचि मूढ जनम गमावै है।
टुक सी विभूति पाय श्रुति मोहमद छाय,
तोहि न लखै गमार जगत मै धावै है।।
दूंढ ढूंज्यौ जीव यहै पूंजी खोसी करमनि,
भिषारी अनादि कौ भरम उपजावै है।
तू ही चिदपूँजी देय कोठीबार करै याकौ,
याकी पूंजी याही मांहि तू ही जो बतावै है।।22।।

(सोरठा)

टूटि गए भ्रम भाव, टूटि गए बैरी सबै।
जाकौ देखे दाव, फुरै नाहि बैरीनि कौ।।22।।

(सवैया)

टूक टूक किए तै ही माया के प्रपंच भूरि,
टूक टूक करि डारे अखिल करम तै।
रूखा टूका खाय तेरा ध्यान जौ करै गुसांई,
तेरा दास होय सो रहित है भरम तै।।
टूम टाम सबै त्यागी तोही मै रहै सु लागि,
इहै ऊँच बात नाथ सकल धरम तै।
काम क्रोध लोभ मोह प्रबल प्रचंड बैरी,
टूप्यौ मेरौ गलौ अति मार्‌यौ जु मरम तै।।23।।
तेरे राज मांहि मोहि मारै अरि जोर मार,
देषिवौ करौ जु तुमकौ न भलपन है।
राव कौ न यहै धर्म दुर्बल कौ मारन दे,
तू तौ तीन लोक नाथ अति बडपन है।।
मार्‌यौ नंत काल मोहि मारि मारि चूर कीयो,
अब तौ छुडाय देव महाकलपन है।
टूटि जौ उतारै मेरी टीटि टारै अरि केरी,
तबै जानौ नीति राज नाहि छलपन है।।24।।
एक नांहि टेव तेंरै टव एक तारिवे की,
टेक एक इहै उधारि जगत तौं।
टबा सब जीवनि को तेंरै ही जु पासि देव,
तू ही शिव देवा स्वामी सकल विगत तै।।
तू ही बोध टेवा अर तू ही जोग टेवा राव,
तो समान तूसरौ न तारक कुगति तै।
टेरि टेरि मार्‌यौ मोहि टांग्यो इनि करमनि,
टेरि टेरि कहूँ तोकौ तारि तू अतत तै।।25।।

(सोरठा)

और टेव को नाहि, एक टेवकी रावरी।
तू सब ही कै पाहि, तोहि लखै विरला जरा।।26।।

तेरे नांही टेढि, टेठे सब सूधे किए।।
तोहि रह्यो सुख वेदि, तो सौ सुखिया नांहि को।।27।।
टेंणी तेंरै नाहि, टैलि उतारै मोह की।
तेरे देवल मांहि, बहु अतिशय दीसै प्रभु।।28।।
टो कहिए श्रुति मांहि, नांव महेसुर देव कौ।
और सु दूजौ नांहि, तू ही देव महेसुरा।।29।।

(सवैया)

टोटो भानि मेरौ मेंरै टोटौ पर्यौ अतिनाथ,
पूंजी षोई गांठि की सुमांय षोई वादि की।
तु ही अतिपूंजी देहि कोटि धुज करै ईस,
रंक सौ करै जु राव टेव तेरी आदि की।।
टोक टाक नांहि तेरे पालै तू उडंकनि कौ,
तू है दीनानाथ साह पूंजी तेंरै नादि की।
तोसौ कहा वारवार करौं जु पुकार देव,
पूंजी मोहि ध्यावै मेरी तवै जानौ दादि की।।30।।
टौंकरे पहार के जु बैठि जोग धारि जोगी,
तोही कौ चितारै नाथ तू ही सिद्ध तत्त है।
सिखर समेद के जु टौकरे प्रसिद्ध भए,
तोही तै जु देव और दूसरो न वित्त है।।
तौ ही जो किए विख्यात अष्टापद गिरनारि,
पावापुर चंपापुर ख्यापक तू मित्त है।
टौकरै जगतकै सुबैठौ तू जगतराज,
साधनिकौ लौकनाथ तोही मांहि चित्त है।।31।।
टंकतै रहित देव टांची करि घट्यो तू न,
टंकवतकीरणैक जायक स्वभाव है।
टंक है सिंघल माहि नाव जो किरीट कौ जु,
मुकट कहावै सौय जग में प्रभाव है।

तू ही जगमुकुट सु मुकट न तेरे कोऊ,
मुकट प्रमुख सब भूषण अभाव है।
मुकट धरैया सब तोही कौ अराधै नाथ,
तू ही सिवमुकट अघट अतिभाव है।।32।।
टंकार सु होय तैंरै बाजे बाजै नेक भांति,
टंटवंट मारग तै तोहि नाहि पाय वो।
तोकौ एक ज्ञान के सुमारग ही पावै जीव,
और काहू पंथ है न तैंरै पुर जायवो।
टाक है सिधंत मांहि शून्य को जु नाम देव,
शून्य नांहि तैंरै अर शूनि ध्यान गायवै।।
शून्यवादी तोहि न विलोकै काहू काल मांहि,
शून्य अर पूरण ह्वै तोहीमै जु आयवौ।।33।।

(सोरठा)

रूपातीत जु शून्य, रागादिक जु विभाव चतैं।
तू जु प्रकास अशून्य, पुन्य पाप तैं रहित जी।।34।।
तू पूरण अति पुन्य, धारण ध्यान समाधि तू।
तू ही एक अशून्य, तो सौ तू हिन दूसरौ।।35।।

अथ बारा मात्रा एक सवैया मे—

टरै नाहि टार्‌यो कभी टिकि जु रह्यो जिनिंद,
टिकायत लोक कौ तु ही जु शिवमूल है।
टुक सी विभूति पाय महामद धरै और,
तैंरै नंत भूति तौऊ गर्व कौ ण सूल है।।
टूकटूक करि डारे अखिल कर्म तैं जु,
टेक नांहि टेणी तेरे लोक को जु चूल है।
टोकटाक नाहि लोक टोकरै जु वैठोनाथ,
टंक तैं उकीर्‌यों नाहि ट:स्वरूप तूल है।।36।।

(दोहा)

तेंरै टग को नाहि है, निज परणति टग सोय।
सोई कमला लछिमी, दौलति और न होय।।39।।

इति टकाराक्षर सम्पूर्णम्।

ठ

आगै ठकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

ठकाराक्षरकर्तारं ज्ञातारं विश्वकर्मण:।
नेतारं मोक्षमार्गस्य, दातारं धर्मशुक्लयो:।।1।।
भेत्ता रंकर्मशैलस्य त्रातारं प्राणधारिणां।
ध्यातारं स्वात्मभावस्य, वंदे तत्पदलब्धये।।2।।

(दोहा)

ठयो न काहू काल जो, ठई सु जानैं रीति।
ठई न काहू की ठई, जाकी जग परतीति।।1।।
ठटे न जानै लोक ए, ठट्यो न लोक निजो जु।
ठटे न जानै ठाट है, वह जिनपति हरि सो जु।।2।।

(सवैया इकतीसा)

ठगहर देव जोई ठगनि कौ ठगवा जो,
ठगनितै लभ्य न विनिंदक ठगनिकौ।
ठग भाव वर्जित है ठगै तू न काहू काल,
ठग राग दोष मोह नासी तू अघनिकौ।
ठकुराई भर्यो तू ही ठगै तै अनंत ठग,
तौ सौ पर नाहि स्वामी तारक जननि कौ।

ठग्यो मोकौ ठगनि ठगौरी डारी मेरौ सिर,
लीनी नंत निधि मेरी नाहि मोमै कनिकौ।।3।।
ठठ कौ धनी जु तू जु ठट तेरै नखैं पूज,
ठगनि कौ वास नाहि तेरी छत्र छाया मैं।
ठरकै न काहू काल पधरै न कबहू जो,
एक रूप दसा जाकी जो न कभी माय मै।
ठल्ल किए तै ही सब मायक विभाव ठग,
रोग दोष सोंग नाहि क्वापि तेरी काय मैं।
काया तै रहित तू ही पुरुष अकार देव,
और भांति कहै सठ आवै नाहि दाय मै।।4।।
काया तेरी ज्ञान सुख लोक परमाण तू ही,
सरव अलोक जु माय रह्यौ ज्ञान मै।
पंचअस्तिकाय मांहि तोसौ नाहि काय कोऊ,
तू जू है अकाय स्वामी ध्यावे जोगी ध्यान मैं।
कायहू अकाय तेरै नर मात्र लोक मात्र,
झलहल खांडौ तू जु नांहि कभी म्यान में।
सबै लोकालोक एक अंस मै समाय स्वामी,
ऐसौ तू अनंतधाम आवत न गान मैं।।5।।

(सवैया तेईसा)

ठाकुर तू इक और न ठाकुर, आन सबै ठकुरायति झूठी।
ठाठ तिहार बन्यो जु अनादि सु, ऋद्धि तिहारि न होई अयूठी।
ठाहरि तू जु रह्यो सबके सिरि, छाप प्रसिद्ध न हाथ अंगूठी।
ठाक न ठोक न मार न पीर न, मारि लिए सब कर्म अहूठी।।6।।

(सोरठा)

ठाडे आसण धारि, कायोत्सर्ग धरें तपी।
आसा पासि जु डारि, रहै तो मई मुनि महा।।7।।

(सवैया तेईसा)

ठाहरि जे जु रहै लव धारि, सबै विध जोग प्रवीण जतीसा।
ध्यान करै न कछू पर आण, सबै तजि हौहि अतीव मतीसा।।
तेरहि ध्यान विणा नहि मोक्ष, नहि निजज्ञान नही जु ब्रतीसा।
ध्यान बिना जु करै तप संत, लहै सुर लोक न होय अतीसा।।8।।
तोहि न ठालि पठालि न तेरहि, ठालि जु नाम अकाम गुसाई।
तू उतपाद ध्रुवत्व व्ययातम, नंत गुणातम नित्य असांई।
तेरहि काम जु काम न तैरहि, ठाल ठसाक अनादि अघाई।
ठाडउ बैठउ तू नहि क्वापि जु, सीत न उश्न न होय जु सांई।।9।।

(सवैया इकतीसा)

ठिगाठिगी नाहि तैंरै तू जु है ठिकाणदार,
तौसो न ठिकाणदार और तीनि लोक में।
ठिठमरि रह्यो तू जु तो समान नाहि दूज,
ठिगनि कौ दाव नाहि नाथ तेरे थोक में।
मिथ्यारैनि माहि मेरी कोक जाया सम छति,
हाथ न लगत स्वामी जैसी दसा कोक में।
अैसी दसा भई मेरी ठिण कौ जौ हियो फारि,
तू ही जिनभान मेरौ दुख हरि नोक में।।10।।
जौ तू जिनभानु मेरे घट उदयाचल में,
किरणि प्रकासै तात काल लब्धि पाय कै।
मिथ्यारैनि पूरि होत समकत ह्वै उदोत,
मेरी छत्ति आवै हाथ आछाति नसाय कै।
दुख औ वियोग मिटै तिमर गुमर फटै,
निजपरणति पाय रहूँ लव लायकै।
तूही जगजोति भानु भानु पति है अमान,
तेंरै पुरि आवै साधु भरम गुमाय कै।।11।।
ठीकधर ठीककर ठीकभर न तौसौ और,
ठीक तेरौ आगम भवोदधि उतार है।

ठीक तेरी चरचा न और रूप होय कभी,
ठीगायति नाहि तैरै तू जु निरधार है।
ठीगौ तै बजायौ सब करमनि के सिरपरि,
तू ही एक ठीगायत जगत उबार है।
ठीभरता अति अर ठीक उपदेस तेरौ,
तू ही जिन साहिब परम उपगार है।।12।।

(दोहा)

कहै ठीकरा ठीव कौ, तोहि न भजही ठीव।
तोहि भजै ते ठीक के, तू ज सकल सुख कीव।।13।।
तेरे नाम प्रभाव तै, होय जु सीतल दीव।
तोहि भजै ते साधवा, तोहि तजै ते ठीव।।14।।

(सवैया इकतीसा)

ठुकुराई तेरी साय ठुकरावै करमनि कौ,
ठुढकनि तेरी एक तत्त्व ही की वोर है।
तेरी ठुकराई आगै ठाकुर न दीसै कोऊ,
सवै तेरे चाकर जो ठाकुर तु जोर है।
तेरी साहिबी जु मांहि चलाचली होत नांहि,
तेरी राजधानी मांहि नांहि कभी चोर है।
धन्य धन्य ठाकुर तू धन्य ठुकराई तेरी,
धन्य तेरे चाकर जिन कौ तू मौर है।।15।।
ठंठ सम हौ जु देव जडरूप भई टेव,
नादि हि की टेव मेरी पररूप ह्वै रही।
मैं न जान्यौ आप पर मैं न जान्यौ तू जु वर,
मैं न जाने हेयाहेय निज छति ना लही।
नंत काल बीते मोकौ जड की करत सेव,
नंत ऋद्धि मेरी सु तौ करमनि निग्रही।

तेरे परसाद नाथ ऋद्धि मेरी आवै हाथ,
और तौ उपाय नाहि तू ही जो करै सही।।16।।
ठूंठ सम दसा मेरी होय ध्यान लीन तामौ,
तोही कौ जु ध्याऊँ एक नाहि दूजौ चाव जू।
ठूठ सम जानि मोकौ मृगनि के जूथ नाथ,
खाजि जो खुजावै वै जु हो जु लव लावजू।
हौं न जानौ वै कुरंग वै न जानै नर अंग,
हौ तौ निज रस माहि नाहि भ्रम भावजु।
दसम दुवार होय निकसै जु स्वास मेरौ,
तोमई जु ह्वै रहू अखंड परभावजू।।17।।
इहै ठूंठ दसा करि वहै ठूंठ दसा हरि,
तबैं जांनौ करण हरण जिनराव जू।
तू तौ नंत रूप नंत भूप नंत भाव पूरौ,
मोहू क्यो न तारे स्वामि तू है जगनाव जू।
तू है चिदघन सुखतन मुनि पति ग्यानी,
तैरे नाहि रागादिक नांहि कोऊ दाव जू।
सरणा जोग है तेरौ ताकौ तू करै निवेरौ,
सरणां तिहारौ देहू और नांहि चाव जू।।18।।
ठेठि कौ धनाढ्य तू जु ठेठि को उधारक है,
तारे तैं अनंत जीव माया के प्रवाह तै।
ठेक तेरी नाव कै लगै न कभी जंग,
ठेठि कौ तू खेवर है जलाधि अथाह तैं।
ठेला ठेली नाही तेरे ठेले ते अनंत दोष,
तोसो ठेला नांही दूजो फारक अदाह तैं।।
ठेचरा न पोवै तू जु वात तैरे ठीक ही की,
वीते तोकौ नंतकाल नंतभाव गाह तै।।19।।
ठेठर न तोसो कोऊ ठोरि रह्यो जग सौ जु,
तेरी ठेठराई मोहि कमी नाहि कोय है।

तोसो लरि जीतै नाहि अनंत विभाव भाव,
नंत कोटि बाजेनि की ध्वनि तैरै होय है।
ठेघी भव्य जीवनि की तेरी ही जु आज्ञा नाथ,
तेरी आग्या माहि एकरूप भेद दोय है।
निश्चै अर विवहार ओर न को उरझार,
उभय प्रमाण नाथ खोवै भव खोय है।।20।।
ठेला नाहि तैरै अर ठेठरी न चाल कोऊ,
टेढे नु कौ सूधाकर तू ही एक वीर है।
ठेंक नाहि जाकै अर ठेसरा न एक कोऊ,
ठेठि ही कौ ईसुर जो ठेठि ही कौ धीर है।
ठेठि ही कौ पीर टारै षटकाय जीवनि की,
ठेठि कौ दयाल देव नाहि जाकै भीर है।
ठेसा देसी नाहि अर ठठा हू न क्रापि जाकै,
ठेकडै जु बैठौ नाथ जग कै अभीर है।।21।।

(सोरठा)

ठै ठै बाजे बाजि, धुनि जु ह्वै रहि जासु कै।
जाकी धुनि सुनि भाजि, भए सकल अघ नासिकै।।22।।

(सवैया इकतीसा)

ठोका सब पापनि कौ ठोठी नाहि पावै वाहि,
जाहि देखे ठोठता जु दूरि ही विलात है।
जाकी एक ठोकर सौ दूरि गए भ्रम कोट,
जाकी धाक आगै सब करम नसात है।
ठोक पीर नाहि जाकै जीवनि कौ कबहू जु,
सबनि कौ रावल जो सबनि कौ छात है।
ठोरि रह्यो माया सौं न माया कौ प्रवेस जाकै,
ऐसौ जिननाथ देव देवनि कौ तात है।।23।।

ठौरधुर ठौरधर वही ठौरदायक जो,
जाकी ठौर आगै सब ठौरठई मात जो।
ठौर मारे जानै सब करम प्रचंड भूरि,
ठौर राखै जानै सब भरम अगात जो।
ठौर धरे जानै निजगुण परजाय शुद्ध,
ठौर धरै जानै नंत जीव अतिपात हो।
ठंठ जीव जाहि न विलोकै काहू काल मांहि,
जाकौ ज्ञानवंत लहै अैसो है अज्ञात जो।।24।।
ठंठनि कौ तार नांहि सबै अघटाल वहै,
मदनगुपाल देव जाकौ ध्यान करहीं।
ठंडि नांहि उश्न जाकै रूख नांहि चीकण जो,
हलवो न भार्यौ म्रिदु कठिन न धरहीं।
ठः कहै सिद्धंत मांहि नांव अति धन कौ जु,
तू ही धनपति और आपदा जु भरहीं।
अति धन त्यागी चक्री ताही कौ अराधै देव,
तू ही अति धर्मदाता जपे ह्वै अमर ही।।25।।

(सोरठा)

ठः कहिए श्रुति मांहि, शशिमंडल कौ नाव है।
तो सम चन्द्र सु नांहि, नंत कोटि जौ चन्द ह्वै।।26।।
उज्जल तेरो भाग, उज्जल जस कौ तू धनी।
उज्जल परम विराग, तै ही धार्यौ भासियौ।।27।।
उज्जल शुद्ध सुभाव, तू उज्जलतर देव है।
नंत कोटि परभाव, तेरी उपमा तो विखै।।28।।
तो सम नाहि सूर, तो सम नाहि चंद है।
तू अति छति भरपूर, तो तुलना शक्र जु नही।।29।।
तो परछै नहि मेर, तो समता स्पंधुज नाहि।
सब इन्द्रिनि कौ प्रेर, अहिमंद्रनि कौ तात तू।।30।।

तो सम अन्य न कोय, चिन्तामणि सुरतरु सबै।
तो सर भरि नहि होय, पारस पोरस वेलि बहु।।31।।
कामधेनु इत्यादि, फलदायक जे जगत के।
तो देखत सब वादि, जड चेतन षटद्रव्य मैं।।32।।
शुद्ध स्वभाव लहेवि, जीव सबै तो सारिखा।
कर्म प्रपंच दहेवि, तोमै आवैं तव प्रभू।।33।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—
ठट्ठ को धनी जु नाथ ठाकुर न तो सौ ओर,
सदा कौ ठिकाणदार ठिगे नांहि ठीक है।
ठुकराई भर्‌यो तु जु ठुकरावै कर मनिकौं,
ठूणौ नांहि इदेत कभी तोरे नां अलीक है।
ठेठि कौं धनाढ्य तू ही ठैठै बाजे बाजै नाथ,
ठोका सब पापनि कौ बिना ही अनीक है।
ठौर पावै जातै साधु ठंठनिकौ लभ्य नांहि,
ठः प्रकाश ज्ञानचन्द्र तू ही जगटीक है।।34।।

(दोहा)

ठकुराई तेरी जिकौ, द्युति जु क्रांति कमला जु।
भाषा 'दौलति' हू कहै, रमा लछमि पद्‌मा जु।।

इति ठकार सम्पूर्णम्।

ड

आगै डकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

डकाराक्षरकर्त्तारं, सर्वसत्त्वहितप्रदं।
वंदे लोकाधिपं देवं, लोकालोकप्रकाशकं।।1।।

(सोरठा)

शंकर कौ है नाम, डकारांक आगम बिषै।
तू ही शंकर राम, और न शंकर जगत में।।1।।
ध्वनि कौ नावं प्रसिद्ध, डकारांक ग्रन्थनि विषै।
तेरी ध्वनि जिन सिद्ध, और न ध्वनि अैसी कहूँ।।2।।
डक्वा हू कौ नाम, डकारांक पुस्तक विखै।
कहिए परगट राम, डक्वा तेरौ जंगत में।।3।।
तेंरै नांहि डकार, तैं डकार परगट कर्यो।
धरती पै न लगार, तेरे नांहि उपाधि को।।4।।

(सवैया)

डर कौ हरनहार डर नाहि जाकै कोऊ,
डरतैं निवारै आप डग हू जू ना चलै।
डर सब मिटि कै जु अभय प्राकास होत,
ऐसो कौन सबल जु तौसो अधिकौ मिलै।
डक्व नाहि तैरै अर डक्का सर्व लोक परि,
तेरौ नाव लिए नाथ ईति भीति ना गिलै।
इहै लोक परलोक मरण जु वेदना कौ,
अनरक्षा अनिगुप्त अकस्मात ह्वै विलै।।5।।

(दोहा)

सप्तभय जु ए प्रगट है, डर कहिए इनकौ जु।
ए सब तेरै नाम तैं, भागैं सब ले सौंज।।6।।

(सवैया)

तेरी डग एक कौ जु लोक सब होय नाथ,
तेरी सी सकति नांहि और सुर नर में।
तेंरै नाम मंत्र तै जु डंक न लगावै अहि,
तेरे मंत्रराज तै कदापि विष नरमें।

तेरे परसाद नाथ शत्रु तैं जु मित्र होय,
टेढी चाल त्यागि अर बोलै बोल नर में।
तेरी थुति करन सकति नांहि इंद्रनि की,
हौं जु थुति करौ नाथ कौन सठ नर मैं।।7।।
डवडवी वाजै कहा जाकै होत रव महा,
बहु कोटि बाजैनि की ध्वनि वाही कै सही।
माटी कौ डला जु अर कनक कौ पुंज दोऊ,
समता लखै सुसाधु आग्या उनही कही।
डसै नाहि नाग जाकौ धसै नाहि अरि जाकै
फंसै नाहि आपद मैं भगति जिनै लहि।
डहक्यौ न काहू काल डहकै न डहकैगौ,
डरतै वितीत स्वामी अटल दसांगही।।81।।
डाकिनी पलाय जाय व्यंतर सवै नसाय,
यम की जु डाढ तैं बचै जू तेरे भक्त हैं।
डाक नाहि पैक तैरे खवरि न देवा कोऊ,
सकल खवरि तोकौ मुनि तो मैं रक्त है।
डावांडल नाहि चित्त लख्यो तोहि महा वित्त,
यतिनि के संघ तोहि भजे होत मुक्त हैं।
डाका नांहि परे तेरे भगतनिके घर परि,
डाकै तडिगरि जांहि दास तै न शक्त हैं।।9।।

(सोरठा)

डांण जुगाति न कोय, नाहि जु कोऊ चोलणी।
डाभ समान न होय, तीक्षण तू जु दयाल है।।10।।
आसन डाभ विछाय, चक्री अधचक्री जिके।
तोसो तन मन लाय, तुव परसाद जितै धरा।।11।।
डांवाडूल जु चित्त, डांड वलीडै ह्वे रह्यो।
तो हि लहौ किम मित्त, वह उपाय तू ही कहै।।12।।

डाढी मूंहठ सबै जु, लौंच करै निज हाथ तैं।
पावै तोहि तबै जु, सकल त्यागि तल्लीन ह्वै।।13।।
विनु तल्लीन कहा जु, लोच करे निज केस जौ।
पावै तोहि महा जु, जब निज मै तौकौ लखै।।14।।
डांग वोधकी हाथ, कर्म जु कूकर लखि डरै।
तू जू जगत कौ नाथ, जगपठैल जु कुविधि हर।।15।।
डाहौ सब मैं तू ज, डाही बात कहै करै।
डाहैं कर्म जु भूज, जे दुखफल बहु फलत हैं।।17।।
तू गुणसागर देव, तुच्छत डावरी सम सबै।
अवर जगत के देव, कालभानु शोषैं तिनैं।।18।।
तेरे दास जु नाथ, नर तेई, और न नरा।
अवर नरन को साथ, सींग पूछा बिन डांगरा।।19।।
तेंरै भूषण नांहि, डावाडावी नाहि कौ।
सकल सोभ तुव मांहि, तू जगभूषण देव है।।20।।
डाबा सम यह लोक, जू अद्भुत आभूषणा।
तोमै लोकालोक, लोक मांहि तू ही रह्यो।।21।।
लोक शिखर तुव वास, सर्व निवास जु तौ विषै।
तू सब ही कै पास, पासिहरण तू भविनि कौ।।21क।।

(सवैया)

डग ला न मैडी जाकै डाकिवौ न कूदिवौ न,
जायवौ न काहू ठौर सबै ठौर तू जु ही।
डावडा न डावडी जो माई नाहि बाप तेरे,
भाई बंध नाहि कोऊ तू ही एक पूज ही।
डिगाडिगी नाहि कोऊ डिगायौ डिगै कभी न,
सब ही डिगाए जानै रागादिक दूज ही।
दृढ़ता अपार जाकै डिगिवे की बात नांहि,
डिगरि गए अनंत द्वैषादिक भूजही।।22।।

डिमिडिमि बाजै नाथ बाजे तेरे नेक विधि,
तू ही एक ध्वजा धीर आनन्द स्वरूप है।
डिगरै न कबहू जो दान अर जुद्ध सेति,
दान भुक्ति मुक्ति जाकै पूरण अनूप है।
जुद्ध मै हराय जानै नंत बैरी मोहादिक,
ध्यान चाप ज्ञान रोप धारी बडभूप है।
डीठि नांहि भूंठी जाकौ जाकी डीठि सब परि,
डीठौ न कोऊ जाकै अद्‌भुत रूप है।।23।।
डील नांहि जाकै अरु डीला अति सावधान,
आरोगि सरीर जाकौ परम पुनीत है।
डील जाकै नंतभाव नंत गुण कोडीभड,
आय हू अनंत भड अतुल अजात है।
डीठि न लगत जाकौ डोठि सब बिलै होत,
जाकौ नांव लिए छूटे पासि तै अभीत है।
मूठि न चलत जापै जाकी सब मूंठी मांहि,
ऐसौ डीठिवाज स्वामी टारक अनीति है।।24।।

(सोरठा)

डीराभाजी आदि, साकपत्र सब ही तजै।
हरितकाय की दादि, करै जीव जब तू ढेरे।।25।।
नीली भाजी सर्व, तजै सुकांवन हरित हू।
अन्न भखै विनु पर्व, तब तू नाथ कृपा करै।।26।।
तजै जीव की घात, तजै कूड लपिवौ जबै।
तजै चौर की बात, तब स्वामी तू भेद दे।।27।।
नारी कौ तजि संग, त्रिश्ना धन की सब तजै।
धरै जु व्रत्त अभंग, तब तू अपनी टहल दे।।28।।
कुविणज त्यागै सर्व, त्यागै मिथ्या मत सबै।
काम क्रोध छल गर्व, लोभ तजै तव तू धरै।।29।।

त्यागै निसि कौ खान, पान सबै निसि कौ तजै।
तव तू दे निज ग्यान, छांणि पिबै वीधौ तजै।।30।।
सर्व अभक्ष जु छंडि, भक्ष विषै हू ग्रिद्धि नां।
पंच महाव्रत मंडि, कै अणुव्रत धरि तुव जपै।।31।।

(सवैया)

डुकरिया भई नाहिं वीते नंत काल तौऊ,
त्रिश्ना नवीन निति भोग लुब्ध देखिए।
डुकराई परी जांहि भरी विखे राधिसौ जु,
गूमरी ज्यों राधिनी कुलित आसा पेखिए।
डूमरी ज्यों राग कौ विखै कौ प्रचार धरै,
डूलि डूलि गति गति मांहि इहै लेखिए।
आसातै छुड़ावौ नाथ त्रिश्नाकौ मिटावो साथ,
तेरे ध्यान विनु यह कबहू न रेखिए।।32।।

(सोरठा)

डूब्यो जीव अनादि, तेरी भक्ति बिना प्रभू।
खोयौ जनम सु वादि, डूब्यौ मिथ्या मत विखै।।33।।

(सवैया)

डूगर तैं तू जु ऊँच तैरै नांहि लगै खैंच,
डूंगर कौ पति हू न तो सम अचल है।
वज्र कौ न घात जाकौ वज्र अंग तु जु तात,
वज्री सब दास तेरे तु ही जो अमल है।
डूडू लरि जीतै नाहि तो सौ तीनि लोक मांहि,
तो सौ और डूडूगर दूजौ न अटल है।
डूम होय रहे तेरे सुर नर नागपति,
डू डू मैं हराय तैही राग दोष मल है।।34।।

डेडर समान हौं जु थाह कहिवे की करौ,
अगम अगाध सिंधु तेरी थुति तास कौ।
डेढ दिन जीवौ मैरै तुछ रूप बुधि मेरी,
श्रुति को ना पायो भेव दया मूल जास कौ।
तेरी थुति कहि न सकत फणपति देव,
देवनि कौ साथ सब दास तेरे दास कौ।
डेरा तेरौ सिद्धलोक लोक कौ तू नाथ स्वामी,
वासना न तेरे मांहि देनहार वास कौ।।35।।

(अरिल्ल)

डैडर एक दयाल गयौ सुर लोक कौ।
तेंरै ही परसाद तज्यो दुख थोक कौ।।
कमल पत्र मुख मेलि वहै आवत हुतौ।
तुझ दरसन कौ नाथ भेक भक्ति जुतौ।।36।।
गज के पगतलि देह त्यागि वह डेडरा।
प्रथम सुरग कौ देव भयौ सुख देहरा।
कहाँ डेडरा जीव कहाँ दैवत दसा।
तू भगवत महंत भक्त वच्छिल असा।।37।।
डैक रूप भगवान एक शंकर तू ही।
डैकरूप जगधाम ध्वनिकर है वही।
डैक भाव तू देव एक डक्का सिरै।
तेरौ है जग मांहि जो न कबहूँ गिरै।।38।।
डैरू बाजै नांहि भयंकर शब्द ना।
नैक कोटि बाजित्र बजै जसु सब्द नां।
ध्वनि अैसी जा तुल्य कदे भी अन्द ना।
ध्वनि है जाकै नांहि नांहि रव छद्मनां।।39।।
डोकर जूनौ नांहि तुही जग डोकरा।
नादिकाल कौ तात सबै तुव छोकरा।

तू डोकर तू तरुण तू जु दोन्यो नही।
नवल रूप जग देव पुरातन तू सही।।40।।
डोडा लौंग सवाद सकल जे त्यागि के।
रूखा टूका पाय रहे तुव लागि कै।
ते जग डोकर हौहि साधु तोमय विभू।
मात तात तुव नांहि तुही डोकर प्रभू।।41।।
डोड काग सम जीव जे न तोकौ भजें।
महाभाग ते नाथ तोहि जपि तप तपै।।
डोवा सब पाखंड तू ज डोवा नहीं।
काठन को समरथ लेज तैं ही गही।।42।।
लेज तिहारी नाथ यहै जिनवानि जी।
याहि गहै द्रिठ जैह हौंहि सिव खानिजी।
तू नहि कूप मंझारि जीव भवकूप मैं।
तू ही काढै नाथ लेय निजरूप मैं।।43।।
कनक कामिनी दोय एजु डोरावसी।
इनहि त्यागि जे जीव हौहि इंद्रियवसी।।
तेरी लेजु गहै सुपार ते हौहि जी।
और न को उपचार तिहारी सौंह जी।।44।।
डोल चर्म कौ निंद्य नाथ तैं ही कह्यो।
चरमोदक कौ दोष सुणी भव्यनि जह्यो।
द्वै गुण डोल जु एक बतायौ तैं सही।
जीवाण्या कौ जतन और कोय जु नहीं।।45।।
डोहावाडी राव निषेधी तैं प्रभू।
जा वाकी सब वस्तु छुड़ाई तैं विभू।।
और जलेबी घोल वरक संधान है।
अच्छताणा मछाणा प्रमुख नाहिं खान है।।46।।
खाटा वोया विदल चलित रस वस्तु जे।
छाणवीण बिनु खाणपाण नहि शस्त जे।।

चर्म रोम मल अस्ति रक्त पल निंदि है।
तिनकौ निंदक तू ज जोहि भवि वंदिहै।।47।।
डोल्हा जीव न ध्यावे तोहि क्रिपाल जी।
तोकौ ध्याय सु साध हौहि जगपाल जी।।
डोब्यो मोकौ नाथ दुष्ट करमनि जले।
तू तारै जगदीस और कोय न वले।।48।।
डोरी तिहारी मोहि सर्व ही है सही।
डोरि तिहारै नांहि तुम जु बंधन रही।।
डोरि मांहि है साधु लोक बंधनजिता।
डोरि मांहि सब देव तू जु अति मति विता।।49।।
डौरी तिहारै नाथ एक नाही मिलै।
तो आगै सब डौरि भागि पाछी ठिलै।।
डौरी कहै परसिद्ध लोक भाषा सही।
जो अति करै वनाव टीसि अति ही गही।।50।।
तेरे नाही डौरि डोरि कौ वासना।
डोरै जीव न तोहि लहै यम त्रासना।।
सबै डोरिचक्रीश त्यागि निजदास ह्वै।
तोकौ जप करि शक्र परम सुखरास ह्वै।।51।।
डौरि त्यागि सब भरथ तुच्छकाल ज मही।
भयो तोमही नाथ सुद्ध संसय नहीं।।
डौरि त्यागि सब काम हली चक्री घने।
भये तोमहि देव परम रस जे सने।।52।।
डौरि त्यागि बहु जीव भए तुव सारिखा।
तू है जीव उधार करण अति पारिखा।।
नंत काल वीत्यो जु तोहि तारत प्रभु।
तारैगौ जु सदीव तू ज तारक विभू।।53।।
डंड हरण तू देव डंड वर्जित जिती।
नाव डंड कौ नाहि तु ही जगजितपती।।

डंड्यौ मौकौ नाथ तिहारे राज मैं।
कर्म मिले बहु जोर सु नाष्यो काज मै।।54।।
काम विगार वनी जु डंड मांथै कियौ।
मेरे हो निज माल दावि उनही लियौ।।
अब मैं सुनियौ भेद न्याव जिनपति करै।
तब तैं कूकौ द्वार दुरत तू ही हरै।।55।।
मेरौ द्यावै माल मूल जो लूटियौ।
कूटै उनकौ यौ जु ज्यो ज मुझ कूटियौ।।
वनकौ है जो माल सो जु वै ल्यो सही।
वनकौ माल जु नाथ हौं जुराखै नही।।56।।
विखै विनोद लगाय माल मम जो हुतो।
लीयौ सब ही औरि नांहि मो मै बुत्तो।।
दुर्बल को प्रभु माल लुटै तोराज मै।
चोर मरोरि जु बांधि मिलावो माज मै।।57।।
तब जानू तू डंडहरण जगदीस है।
तेंरै रावल न्याव सु विसवा बीस है।।
न्याव करै राजेस नाव पावै वही।
तातै करि अब न्याव राव राजा सही।।58।।

(सोरठा)

डिंभ जु बालक नाम, संस्कृती सब ही कहै।
तू बालक नही राम, एक पुरातन तू सही।।59।।

(सवैया)

डंडहर जीवनि कौ डंडकर अरिनि कौ,
डंड ते रहित तू ही डंडवत योगि है।
डंक नाहि तेरौ कोऊ डंक्यो नांहि तू,
ज होऊ डंक कौ निवारक तू अकल अरोगि है।

डंसमंस जीवनि कौ तू ही रछिपाल नाथ,
डंड डोर नांहि तेंरै कोऊ न अजोगि है।
डंड तै करम जोर डंडे मन इंद्री चोर,
पापनि कौ डंड तू अचल अभोग्य है।।60।।

(अरिल्ल)

डंडक देस मझारि मूढ राजा दुतौ।
डंडक जाकौ नाव धर्म तै हौ सुतौ।।
मुनि कौ यूथनि पीडि एक मुनि श्रापतैं।
भस्म होय करि गयौ नरक बहु पाप तै।।61।।
देस कोस सब भस्म भये मुनि क्रोध तै।
गयौ नास सबकौ जु न पायौ सोध तै।।
बहुत काल दुख जन्म पाय वह नृपति जो।
भयो गीध वन मांहि उधार्‌यो राम सो।। 62।।
राम सुनाए नाम पारकर जगत जे।
लह्‌यो सुरम सुख गीध हुवो निज भगत जे।।
भव अंतरि वह गीध जीव जो देव है।
तेरे पुर कौ पाय होय बिनु छेव है।।63।।
तो बिनु पायौ नरक दुखी वह अति भयौ,
तोकौ जपि करि देव त्रिदिव धाम जु लयौ।
तू है तारक दैव पाप सब छेद जी,
तू है गीध उधार कर्म गण भेद जी।।64।।
इहै गीध की कथा कही है प्रथम ही,
गी मात्रा में भक्ति करी जब अगमही।
डंडक कौ प्रस्ताव पाय अबहू कही,
वहाँ मुख्य ह्या गौण द्वितिप उक्ति जु नही।।65।।
डंडक खग हौ एक लोभलट महा,
तेंरै नाव विना जु मरण करि दुख लहा।।

मरि करि हूवो सांप रहै निज कोस में,
धर्‌यो हुतौ बहु माल जोरि जोरि जु जमै।।66।।
पुत्र विना नहि कोस मांहि आव न वहै,
देत और कौ देखि डंक मारयौ चहै।।
एक दिवस मुनि पूछि भेद पुत्र जु लह्यो,
जानि नाग कौ तात इहै विवरौ कह्यौ।।67।।
सुनि हो नाग सुजान हुतो मम तात तू,
लोभ लहरि मै लागि भयो अहि जात तू।
अब हू त्यागि उपाधि धारि संतुष्टता।
करि निज आतम काज त्यागि सब दुष्टता।
दिवस अठारा मांहि तुम्हारौ मरण है।
धरि भगवंत अधार और नाहि सरण है।।68।।
सुने वैन जब एह नाग निज कान दै।
उपज्यौ समकित ज्ञान सकल परदान है।।69।।
अनसन ले वह नाग भयौ श्रावक वृती।
देह नाग की त्यागी स्वर्ग पायो गती।
कहाँ नाग की ज्योनी कहाँ सुर लोक है।
तो तै विषम जु नाहि तू जु शिव थोक है।।70।।
डंड कमंडल नांहि नांहि उपधी कभू।
पोथी पींछी नाहि तू जु भगवत प्रभू।
डंड कमंडल नाखि तोमई ह्वै रहै।
वह जन तौकौ लहै और कौ ना लहै।।71।।
तो विनु और न कोय दंडवत जोगि है।
तू ही एक दंडोत लेन सुख भोगि है।
कै तू कै तुवदास कै जु वाणी सही।
इन विनु और न कोय दंडवत जोज्ञ ही।।72।।
ड:काराक्षर मात्र तो विना और को।
सब अक्षर के मांहि तू हर रोर को।

सब मै तोकौ जानि मगन जै ह्वै रहैं।
ते पावै निजधाम अटल पदवी गहैं।।73।।

अथ बारा मात्रा एक सवैया में—

डर नाहि तेरौ कोऊ डारे तैं विभाव दोउ,
डिगरै न तू जु कभी डीलां अति पुष्ट है।
डुल्यो नांहि डुलै कभी डूंगर तै ऊंच तु जु,
डेरा सिद्ध लोकमांहि तू ही एक शिष्ट है।
डैरू नांहि वाजै तैंरै वाजे वाजै नेक भांति,
डोकरौ तरुण तू न नाहि कभी नष्ट है।
तेरी डोरी मांहि सव डौरि नांहि तैंरै कोऊ,
डंडवत जोग्य तू ही ड:प्रकाश तुष्ट है।।74।।

(दोहा)

डला जु माटी कौ जिसौ, दौलति जग की देव।
तैसी मानै मुनिवरा, इह सम्पति न अछेव।।75।।
तेरी निज संपति जिकौ, सदा संपदा सत्य।
चिदपरणति लक्षमी जिकौ, सो विभूति है नित्य।।76।।

इति डकाराक्षर सम्पूर्णम्।

ढ

आगै ढकाराक्षर कौ व्याख्यान छै—

ढकाराक्षरकर्त्तारं, हंतारं सर्वकर्मणां।
लोकभावप्रज्ञातारं, वंदे ज्ञानाधिकं विभुं।।1।।

(अरिल्ल)

ढ कहिए श्रुत मांहि मूढ का नाम है।
तू नहि मूढ सु जान सकल सुखधाम है।।
सकल मूढता दूर होत तुव ध्यान तै।
केवलज्ञान उद्योत होत तुव ज्ञान तै।।1।।
ढ कहिए ध्वनि नाम फुनि जु जिनबैन में।
तेरी ध्वनि परसिद्ध विराजै जैन में।।
और नांहि ध्वनि कोई ध्वनिकर तू जु ही।
तेरी ध्वनि सुनि शुद्ध हौहि तजि दूज ही।।2।।
ढरै भव्य की बोर अभव्यनि पर नहीं।
तू है भव्य उधार करण भववन दही।।
ढव तेरौ ही सच और ढव झूठ है।
तू तारै जग मांहि सकल तव पूठ है।।3।।
ढलक्यो कबहू नांहि ढलै ढलकै नगौ।
ढकौ न कभहूँ ढके मिट्यौ न मिटै न गौ।।
ढकै दोष जो कोय पराये धर्म धी।
वह तोकौ जु लहै लहै नहि भर्म धी।।4।।
नहीं ढलै तजु कोय ढाल जाकै नहीं।
सब जीवनि की ढाल वहै भाष्यो सही।।
ढाक पत्र सम चंद सूर जाके नषै।
ढाढसीक छै साधु तवहि वाकौ लखै।।5।।
ढाढ़िस विनु वह नाथ हाथ नहि आव ही।
ढांणौ चूके जीव वाहि नहि पाव ही।
ढाण चूक कौ ढाण लगायै वह जु ही।
वा विनु ठाणौ हाथ लगै नहि सहज ही।।6।।
ढाहै जानै कोट अविद्या के सबै।
भाजि गयै सब कर्म भर्म भै करि तबै।।

ढाहैगौ वह देव हमारे बंधना।
जाकै सपरस नांहि नाही रस गंध ना।।7।।
ढाहा तोड वहै जु नदी आसातणी।
वही वतारै पार और कोय न धनी।।
ढाक पत्र कौ आदि सबै पातलिमनै।
वही करै जगदेव और कोय न भनै।।8।।
मुनि कौ पाणि जु पात्र भोजन कहै।
श्रावक कौ निजपात्र विना निंदक वहै।।
ढाप्यो ढपै न क्वापि व्यक्त अति भूप हैं।
ढाह्यो ढहै जु नांहि अजुह अनूप हैं।
ढाय्यो ढरै न नाथ आप ही वह ढरै।
भवथिति आवै नीड आपनौ तव करै।।9।।

(सवैया)

ढिग ही रहै सदीव वाहि नांहि लखै जीव,
सबकौ लखै जु वही परम प्रकास है।
ढिल नाहि जाकै अर ढिया ढिय नाहि कोऊ,
वेगि दे उतारे पार आनंद विलास है।
ढिव कहै मूढ कौ सु वाहि नांहि लखै ढीव,
वह तौ विचक्षण जो अति सुखरास है।
ढीढ न पावै वाहि ढीढ कहै अविनीत।
ढीढ होय त्यागै सबै तवै वही पास है।।10।।
ढीम सम गिनै लछि ढीव की न करै पछि,
नारी कौ अलीन सम जानि त्यागै जब ही।।
ढुकै जिनमारग मै ढुकै महाव्रत्तनि मैं,
ढुकिवौ जिनेसुर मैं, लहैं मोख तब ही।।
ढुकनि न होय जाकी विषै के प्रचार माहि,
ढुहि ढुकि चारित मैं छेड़े पाप सब ही।।

ढुलिडुलि साधुनि नै ढुलिवो मिथ्या माहि,
तबै जगफंद छुटै, और नाहि ढव ही।।11।।

अथ जीव सम्बोधन—
ढूकडौ जू आवै काल, तू जु तजि जगजाल,
प्रणव सुरूप माहि तू जु रमि वावरै।
ढूँढे कहा माया कौ जु ढूढि एक चेतन कौ,
चेतन मै लीन होहु त्यागि सब चाव रे।।
ढूकै तू विषै जु मांहि यामै कछू सिद्धि नाहि,
ढूँढ़ो नाहि पावै, कहूँ आप ही मैं दाव रे।
ढूँढ्यो तै सबै जु लोक पायौ नाहि निजभोन,
अबै तौ जिनिंद भजि समझि उपाव रे।।12।।
ढूढि विषै कौ जु पायौ तै अनंत खेद,
अव निज लीन होहु वहै मति डावरै।
ढुंढिवौ उपाय तोकौ सिद्धलोक जायवे कौ,
सिद्ध रूप तू ही निज तजि उझरव रे।।
ढूकडील वधिकाल पाय जिनजी कौ ध्याय,
समकित रूप होय निजरस लावरे।।
टेढि तजि जीव की, ठेगै तू अनादि ही कों,
टेढि विनु त्यागै भया पावै नांहि भावरे।।13।।
ढेढ घरसम देह भर्‌यौ मलमत्र सौ जु,
हाड मांस चाम रोम कुथिति कौ पुंज है।
उदधि के जल सौ पषालौ तऊ सुद्ध नाहि,
असुचि कौ सागर जो पापनि कौ कुंज है।।
ब्रह्म होय टेढस्यो मिलाप राखै कौन,
वात, छुए पाप लागै जाकौ दोषनि कौ भुंज है।।
तू तौ सठ ब्रह्म भया, ढेढनि सौ हित राखै,
इहै नाहि ब्रह्म तासु मारै कहा गुंजहै।।14।।

(सोरठा)

ढैक रूप तू नाहि, ढ कहिए मूढानि कौ।
तू जिनजी कै मांहि, जिनजी तोमै रमि रहे।।15।।
ढैक रूपता त्यागी, ध्वनि जिनजी की यादि करि।
रहौ जिनिंदहि लागि, अवस लगनि सब ही बुरी।।16।।

(सवैया)

ढोर होय रह्यौ कहा नैकु तौ विचार करि,
ठोलि मिथ्यामद कौ जु बावरौ तुझै कियौ।
ज्ञान कौ बजाय ढोल, निजपव बल तोलि,
भगति मदति लहि गाढौ करिकै हियौ।।
करमनि कौ वस खोय निजरस अंस जोय,
वांधि सब रागादिक दुख वन ही दियौ।
ढोकि ढोकि जिनजी कौ, ढोरी लाव जिनजी सौ,
ढोक दै जु बारंबार, वाछै जो प्रभु लियौ।।17।।
ढोकि जिनमारग कौ ढोरी लाव साधनि सौ,
ढोरि लाव दान सील जप तप व्रत सौ।
ढोलै जिन दयारस भरी ज्ञान सीसे माहिं,
ढोरता जु छाडि सब रूखौ ह्वै अव्रत सौ।।
ढोल षोसि मोह कौ जु पकरि मरोरि वांधि,
निजरस छाकि भया पूढि दै अकृत सौ।
ढोकै मति मिथ्यादेव कुगुर तणी न सेव,
धरि जिनमत भेव चूकै मति व्रत सौ।।18।।
ढोटा नाहि काहू कौ जू तू जु है अनादि,
सिद्ध जैसा सांई तैसा तू जु और नाहि भाव है।
सांई कौ जु भूल्या ढोर वाधे नाहि इंदी,
चोर हूवा तेरा भोर भया चूका तू जू दाव है।।

अबै सांई यादि करि सांई ही का ध्यान धरि,
सांई दी बतावै तोहि, छूटि का उपाव है।
ढोटा नाभिराव जू कौ ढोटा सब वादी के जु,
बाकौ छाड़ि वावरे करैगौ कहा चाव है।।19।।
ढोहे तै अनन्त ढंग ढंग तेरो वंध्यो नाहि,
अब सब त्यागि भया लेहु जिनसरनौ।
ढोरी मांहि आय जाहु ढौरी तजि लोकनि की,
तबै ढौल पावै तू जु और नाहि करनौ।।
ढौरी लै जु साधुनि की ढीठि सब परि मेलि,
झूठी ढेठि करै कहाँ, आषरि तौ मरनौ।
ढंग तौ विगरि गयौ ठंढ सौ जु होय रह्यौ,
जगत मै राचि भया भरै कहा भरनौ।।20।।
ढपै मति औगुन कौ गुर कै निकटि जाय,
सबै निज दोषभसि, आलोचन करि रे।
ढपि परदोषनि कौ परदोष जिनि भासै,
गुनग्राही होहु भया कथनी तू हरि रे।।
एक जिन नाम बिनु आंन जिन भासै नया,
मौनी होइ अंतर मै जिन ही कौ धरि रै।।21।।
ढंग तू पकरि भया, ढंढमति होय रहै,
ढीचा ढीची तजि अर, मोह ही सौ लरि रे।
ढंढता विनसि जाय ढंढा तेरौ बंधि जाय,
पावै मोय द्वार, भवसागर, कौ तरि रे।।
देह तौ तजी अनंत दोय कौ न किया,
अंत अबै वैसी करि पंच देहनिस्यो मरि रे।।22।।

(सोरठा)

ढः काराक्षर एक, सर्व अंक मै तू सही।
तू आनन्द अनेक, स्वर व्यंजन मात्रानि मै।।23।।

***
***

जे तोकौ तजि जीव, मूढ अविद्या मैं कहे।
किन पावै जगपीव, ह्वै निज महला शुद्धता।।24।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

ढरै नहि ढारयो कभी ढिग ही रहै सदीव,
ढील नाहिं जाकै कभी ढीया ढीय नाहिं जी।।
ढुकै जैन मारग मैं तबै नाथ आवै हाथ,
ढूंढ्यो नांहि पाइए जु बसै निज मांहि जो।।
ढेठि नांहि एक कोऊ ढेगेनि कौ सूधे करै,
ढैकता न जाकै कोइ ढोकतो हि यांहि जो।।
ढौरी लावै साधुनि कौ ढंढ नांहि पावै जाहि,
रूप विनु देव तू जु ध्यावै और कांहि जो।।25।।

(दोहा)

हरै ढंढता नादि की, ऐसी तेरी ज्योति।
सो विभूति निज संपदा, ओर न दौलति होति।।26।।

इति ढकाराक्षर सम्पूर्णम्।

ण

आगै णकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

णकाराक्षरधातारं, ज्ञानरूपं जगद्विभुं।
वंदे देवाधिपं देवं, जिनशासकनायकं।।1।।

(सोरठा)

ण कहिए श्रुत मांहि, ज्ञान नाव परगट प्रभु।
तो बिनु ज्ञान सु नाहि, ज्ञान मूल तू एक है।।2।।
ज्ञान रह्यौ भरि पूरि, तेरौ लोकालोक मैं।
वातैं ज्ञेय न दूर, वह तोतैं हू ह्वै नहिं।।2अ।।
स्तुति कौ नाव सुसिद्ध, ण कहिए आगम विषै।
स्तुति करै परसिद्ध, तेरी नाथ सुरासुरा।।3।।
स्तुति करै अहमिंद, इंद सबै ही थुति करै।
जपै सूर अरु चंद, चक्री अधचक्री भजै।।4।।
स्तुति करै नागिंद्र, असुर इंद सब थुति करै।
भूचर खेचर वृंद, तेरे सब ही दास है।।5।।
है निजदास मुनिंद, वन सम तेरौ कौ नही।
जिन त्यागे सब छंद, कामादिक तो कारणै।।6।।
मुनिनु तजे सब संग, एक संग तेरौ कियौ।
वै ध्यावै जु अभंग, और सबे ही ध्यावही।।7।।
तेरे उन सम नाहि, उन हूँ कै तो विनु नहीं।
तू साधुनि कै मांहि, साधु हु तोमै रमि रहे।।8।।

(छंद भुजंगी)

णमो देव तोकौ णमो णाह तोकौ। णमो अणाकाई तु ही तारि मोकौ।।
णमो णादि णंदा णमो णाह सिद्धा। णमो साहु तिविहा भजै जादि णिद्धा।।9।।
णमोयार मंते सरूवा, जु तू ही। णमो धीर तोकौ तुही जो समूही।।
तु ही णाणमूला तु ही णाणगम्मा। तु ही णाणरूवी तु ही णाणधम्मा।।10।।
तु ही देव णाणी तु ही णाह जाणी। तु ही है सुणायंद णाहा अझाणी।।
तु ही णायरा आण मूढासवैही। तु ही देव णादा सबै तो फवै ही।।11।।
तु ही णाण णाकेस, सांई असांई। तू ही णाण रूबा, सुणावेस साई।।
णादी णाण हीणा जु तो कौ सुध्यावै। जबै हौहि णाणी तु ही मांझ आवै।।12।।

तु ही णाण राया तु ही णाण काया। तू ही णाणदाया तु ही णाण भाया।
तु ही णाणणादा सबै कम्मघादा। तु ही णाणभासी अणादीस आदा।।13।।

(दोहा)

णियभावइ जो रमि रहइ, आत्मविभाव मुएइ।।
सो पावइ जिणधम्म ठिइ, सयल अभाव चएइ।।24।।
णिच्चणिगोय अनंत बहु णादि अणंत अछेव।
इयर णिगोय विदीय मुणि, भासइ जिण जु अभेव।।25।।
रुलिउ अणंत वि काल तुह, जीव णिगोय मझार।
जम्मण मरण अणंत किउ, संपय लय जिणसार।।26।।
णियडउ आवइ मरण जिया, णियतच्चे लवलाव।
छंडिवि सयल वियार तुह, उर धरि जिण जगणाव।।27।।
णियमादिसु उर धारि जिय णियमणाह भजधीर।
णमि णमि णाह महंत सो, परमाणंद अधीर।।27।।
णिच्चाणिच्चसरूव मुणि, णादा णाण सहाव।
णियसहाव झायेवि जिय, परहरि सयल विभाव।।28।।
णीय जु धारि अणीइ मुय, णीच संग परिहेय।
णीवे वोये अंवफल, मूढ मई किम लेइ।।20।।
णुति णति जिण की धारि जिय, थुति जिण की धरि धीर।
णवरि जिणिंदह झा सया, जिण सम अवर न वीर।।21।।
पूतण देव पुरातणउ, अणुवम देव अणाय।
णेयंदरछेदी पहू, णेय णाह अतिभाय।।22।।
णेयाकार सुणाण जसु, णाणाकार जु सोजि।
णाणावरणी वज्जियउ, णाणा भाव जु जोजि।।23।।
णेमि धम्मरहचक्क पहु, णेमिणाह भगवंत।
जम णियमादि आधार सो, णेय सामि णयवंत।।
अवर सयल णेयावली, णाणरूव णय होइ।
णाणणेय जुगवंत जो, णियणेय जु जिणसोइ।।25।।

णेदा मोखहं मग्ग जो, णेय सयल तसु मांहि।
णेये अंद हरि सो वसई, णेय मई पर णाहि।।26।।
णोयण जम्हिण्णेय सो, णिय णिय भाव ण छंड।
णादाणेय संबंध मुणि, णादि अणंत अखंड।।27।।
णेकरूव सो देव मुणि, णेकरूव मुणि णेय।
णेक भाव एयत्त मुणि, णैकाकार अहेय।।28।।
णोजीवस्स सहाव जियदव्वर्वि भाव विकम्म।
णोकम्मवि परभाव मुणि, णाण सुचेयण धम्म।।29।।
णो इंदिय णो मण हवई, णोजीवस्स य काय।
णो सद्द वि वंध वि वइ, सुहम ण थूल ण छाय।।30।।
णो वण्ण वि णो गंध रस, णो फास वि संठाण।
एक वि पुग्गल भेद जिय, तेरो होय ण ठाण।।31।।
णो कामण रिस लोह मऊ, छल पाखंड ण कोइ।
मोह हँ केरउ णाव णवि, णो परपंच विहोइ।।32।।
णोवम णिरूवम णाणतण, तू अरहंत सरीसं।
सिद्धमान सु तू भणिउं, छंडिवि कम्म अणीस।।33।।
णौकिक सम जिणदेव मुणि, णोका मुणि जिणधम्म।
इह णौका वह णोंकिको, पार करइ विणु छम्म।।34।।
णंदउ विरधउ जिणवयण, णंदउ जिणवरदेव।
णंदउ साहु महंतगण, णंदउ जिणमतसेव।।35।।
णंदीसर वउ णंदऊ, णंदण णंदउ णाहि।
जेण पयासिउ तत्त पर, धम्मचक रहणाहि।।36।।
णंद सु सिद्धारथ तणवो, वछमाण जिणदेव।
णंदउ सयलवित्तिछधरा, णंदउ केवल सेव।।37।।
जोयवि णंदीसर विवुह, चउरणिकाय जु देव।
वावणदेवल पूजहू, तिणिवारा जिण सेव।।38।।

(दोहा)

णंग अणंग कुमार, जाहि जपे सिद्ध जु भए।
वह जिन देव अधारा, और न दू जौ आसिरा।।39।।
णः काराक्षर मात, द्वादसमी मात्रा इहै।
तू जिनवर अतिछात, सर्वठौर तेरौ जसा।।40।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मै—

णमो णमो देव तोहि णाण रूव करे मोहि,
णियम सखत तू जु णीय को णिवास है।
णुति णाति तेरी णाह करै धण तेह,
णूतण पुरातण तू णेय को विभास है।।
णैकरूव एकरूव णोकमाण दव्वकम्म,
भावैकम्मेणधिक भी सुख रास है।
णौका सम तारक तू णंदौ जिणराय सदा,
णः पयास सर्व अंक णाण कौ विलास है।।41।।

(दोहा)

णामियामर णियरा विभो, तेरी भूति विशाल।
कमला पदमा लक्ष्मी, भाषा दौलति माल।।42।।

इति श्री भक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन अध्यात्मबारहखड़ी नामध्येय उपासनातंत्रे जिनसहस्रनाम-एकाक्षरी-नामलाद्यनेकग्रंथानुसारेण भगवद्भजनांदाधिकारे आनंदरामोद्भवदौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते टकारादि ण कारांत पंचाक्षरप्ररूपको नाम पंचम परिच्छेदः।

षष्ठ परिच्छेद



आगै तकाराक्षर कौ व्याख्यान करै छै—

तथ्यं तत्त्वप्रदातारं, तमसो पारकारकम्।
तारकं तापसैर्ध्येयं, तापत्रितयनाशकम्।।1।।
त्रिगुणं त्रिगुणातीतं, तृष्णासर्वनिवारकम्।
तारदं भवपायोधेः, त्रीणि शल्यानि ध्वंसकम्।।2।।
तुष्टं तुषविदूरं च, तूपहर्म्यावलीयुतम्।
तेजोराशिं दधत्तेजं, त्रैगुण्यगुणितं विभुम्।।3।।
तैर्लभ्यं यैर्जगत्त्यक्तं, लब्धं साधुगणैर्शिवम्।
तोषरोषादिरहितं हि, तोषामृतसागरम्।।4।।
तौर्यत्रिकादिवियुतं, तंत्रमंत्रादिदूरगम्।
तंत्रेशं तंत्रकर्तारं, महामंत्रहितप्रदम्।।5।।
तं वन्दे धर्मधातारं, सर्वज्ञं सर्वदर्शिनम्।
ततश्च प्रार्थयाम्येनं, कुर्यात् स्वात्मविभूति माम्।।6।।

(सोरठा)

त कहिए सिद्धांत, मांहि चित्त का नाम है।
तू प्रभु शांत सुदांत, चित्त वाक तनु ते नहीं।।7।।
चित्तवाक तैं दूर, काया तैं अतिदूर तू।
तू जु रह्यौ भरपूर, सर्वग व्यापक तू सही।।8।।
त भाष्यौ श्रुति मांहि, नांम क्रोध कौ ठीक है।
तेरै क्रोध सु नांहि, च्यारि चौकरी मांहि कौ।।9।।
क्रोध मान छल लोभ, मोहादिक तेरै नहीं।
नांहि न कोई क्षोभ, तू उदवेग वितीत है।।10।।
नांव पूंछ कौ ख्यात, तु कहिए आगम विषै।
पूँछ विना पसु जात, जो तोकौं सुमरैं नहीं।।11।।
नर वै ही जगदीस, जे तौकौं ध्यांवै सदा।
और पसू हैं ईस, पूछ नांहि तौ का भया।।12।।
इहै तमासौ देव, तोहि तजी जन भव रचे।
करहिं न तेरी सेव, नरभव खोवै ते व्रिथा।।13।।

अथ साधु की दसा—

(सवैया)

तपसोभिवृद्धि इष्ट मिष्ट भोजनादि जाकै,
आगम कौ अरथ सु अरथ इही सही।
गुण ही कुटंव और मित्र सब जीवरासि,
रागादिक सत्रुनि कौ नाशक वही जही।।
अप्रारथि वृत्ति जाकी जाचना न काहू तैं जु,
ज्ञानामृत पान करै ऐसौ है मुनीस ही।
ब्रह्म कियौ आपरूप आप भयौ ब्रह्मरूप,
सोहं हंसो नाद जाकै लख्यौ जिन ईस ही।।14।।

(चौपई)

तनु निरमुक्त जिनिंद दयाल। तू जु तमो यह अखिल क्रिपाल।।
तप्त सुचांमी कर छवि तू ज। तू तपनीय सु साद्रिस पूज।।15।।
तत्त्वरूप तू अखिल प्रकास। तत्त्व प्रकासी अदभुत भास।।
सप्त तत्त्व नव पद कौ भेद। तैं ही भाख्यौ जिन बिनु खेद।।16।।
तपमूल जु तू है तपरूप। द्वादस तप भासी जगभूप।।
तथ्यरूप तू वितथ विडार। तकै न तोकौं कर्म प्रचार।।17।।
तपधारी तू अतप स्वरूप। तू जु तपोधन तपहर भूप।।
तमनासक तू तत्त्व विलास। तरण सु तारण अकल अभास।।
तपसागर तपपुंज जिनेस। तू तटस्थ जगदीस अलेस।।18।।
तव दरशन विनु हौं अतिदीन। यौं तलफौं ज्यौं जल विनु मीन।।
सुक्कतडाग समान भवो जु। मानसरोवर तू जु शिवो जु।।19।।
तटिनी तटि जे हिमऋतु मांहि। तिष्ठि जु तोहि भजैं सक नांहि।।
तप्तकाल गिरिशिखर तपंत। वर्षा तरुतलि मुनि जु रहंत।।20।।
तव पावैं कौ करहिं उपाव। और न तपसी धारहि भाव।।
ते तपसी जे तोहि लखंत। तव लखि आतम ज्ञान चखंत।।21।।
तकि जु रह्यौ तू सबकौ स्वांमि। तोहि तकै कोउ विरले नांमि।।
तकिवौ तेरौ जब ही होय। सकल प्रपंच हरै तब कोय।।22।।
तज्यौ तोहि जिनि जीवनि जिना। तव सेवा विनु खोये दिना।।
ते दुख त्रास लहैंगे कुधी। तोहि भजी शिव पाँवै सुधी।।23।।
तजे तैं जु सब कर्म प्रपंच। तजै न तोकौं मुनिवर रंच।।
तनु पंचक तैं तू अति दूर। अतनु विनासक अखिल जू पूर।।24।।
तद्भव मुक्ति हौंहि जे जीव। जे तोसौं लव लांवैं पीव।।
तरवर सम तू जिनवर देव। फल छाया मंडित बिनु छेव।।25।।
तरवर ज्ञान विवर्जित सही। तू ज्ञानातम आनंद गही।।
तलवर तेरैं नाही कोय। तेरै पुरि तसकर नहिं होय।।26।।
तेरै तलि सब लोक बसंत। तू सब ते ऊंचौ जगकंत।।
त्राता तारक तू जग देव। त्यागी भोगी तू बिनु छेव।।27।।

नमो तायने पालक तोहि। तापहरण तू तारि जु मोहि।।
तारण जग कौ तू शिवदाय। तान नहीं को मान अमाय।।28।।
तारन तांति न तेरे कोय। राग रंग कौ नाम न होय।।
च्यारि प्रकार जु है वादित्र। तू सब त्यागीधर चारित्र।।29।।
तू विराग रागक विभु कोय। तत्त वितत्त घनादि न होय।।
सुखिर प्रमुख वाजैं कौ नांम। तैरै कोय न दीसै राम।।30।।
तत्त नाम जे तार सजंत। वितत दमामा डोल बजंत।।
घन झालरि झांझ्यादिक कहे। सुखिर फूंक के वाजे लहे।।31।।
अरहत पद मैं सब ही होय। सिद्ध दसा मैं एक न जोय।।
ताल मजीरा राग न कोय। गांन मांन कौ नांव न सोय।।32।।
ताब तिहारी सहि नहिं सके। कर्म भाजि भववन मैं लुके।।
तात सबनि कौ तू ही सही। तेरै तात न भाष्यौ मही।।33।।
तामस कौ तेरै नहिं नांम। राजस सात्त्विक एक न रांम।।
ताडन मारन एक न कोय। ताडे कर्म कलंक जु जोय।।34।।
ताणैं सिवपुर कौं जो साध। तोकौं जपि करि होहि अवाध।।
तो बिनु तारक दूजौ नांहि। तू फारक सब ही कै मांहि।।35।।
ताव न जुर नहिं सिरदुख कछू। तोहि जपे सांप न कौ विछू।।
त्रास न एको उपजै कभी। त्राता तू उरि तिष्टै जभी।।36।।
ताल तमाल न उपवन वापि। कूप नदी नहिं आपै आपि।।
त्याग सकल परद्रव्य तणौं जु। कीयौ तैं भाष्यौ सु घणौं जु।।37।।
ताखा मोखी तेरै नांहि। पार करै यामैं सक कांहि।।
त्रिदशाधिप तू है त्रिपुरारि। तू जु त्रिनेत्र त्रिज्ञांन अधारि।।38।।
त्रिज्ञ त्रिज्ञान सुधारक जेत्र। तू त्रिकालदरसी शिवक्षेत्र।।
तिगमक रोज सु दास जपंत। त्रिपथविहारी तू भगवंत।।39।।
त्रिधा बुद्ध सनमारग सही। तू त्रिगुणातम देव जु वही।।
त्रिविधातम तू त्रिविधि हरो जु। ध्याता ध्यांन जु धेय धरो जु।।40।।
ज्ञाता ज्ञान जु तू निज ज्ञेय। तू प्रमाता तू परमेय।।
तू ज प्रमाण अहेय अमेय। तू ज विधाता विधि जु विधेय।।41।।

त्रिकरूपी तू एक उपेय। सर्वरूप तू एक सु ज्ञेय।।
तू जु त्रिजग परमेसुर विभू। त्रिदशाधिक्ष त्रिगुण मैं प्रभू।।42।।
तू त्रिकाल विषिया सु विलोक। त्रिभुवन वल्लभ शिवमय थोक।।
तू जु त्रिभंगी सप्त प्रकास। सप्तभंग भाषक सुखरास।।43।।
तू जु त्रिभंगी भंग सु धीस। देव त्रिभंगी लाल हरीस।।
त्रिभुवन मंगल उदय स्वरूप। त्रिजगतपति पूज्यांह्रि अनूप।।44।।
त्रिभुवन शिखर शिखामणि तुही। त्र्यक्ष च त्र्यंबक कहिए वही।।
तू जु त्रिचक्षु त्रिलोचन स्वांमि। त्रिविधातम तू अंतरजामि।।45।।
त्रिप्त त्रिदोष रहित तू ईस। त्रिश्नाहरण तुही जगदीस।।
त्रिश्ना पापिनि कबहु न गिलै। त्रिभुवन नाथ तहां तू मिलै।।46।।
तू त्रिशल्य वर्जित जगबंधु। माया मिथ्या रहित अबंधु।।
अग्रसोच तेरै नहिं कभू। शल्यरहित तू दरसै विभू।।47।।
तो सम त्रिप्त नहीं जगि कोय। त्रियारहित तू एकल होय।
त्रिविधातम है तेरौ रूप। धुव उतपाद विनास स्वरूप।।48।।
द्रव्य सु गुण अर परजै सही। एक रूप तू त्रिविध जु वही।।
तू जु त्रिवेदरहित निरवेद। स्त्री निपुंसक पुरष न भेद।।49।।
तू त्रिदंड दंडी विनु दंड। सबै दंड घातक परचंड।।
मन वच काय रूप जे पाप। ए त्रिदंड कहिए अति ताप।।50।।
तू त्रिताप तापक जिनदेव। अग्नि प्रकाशक तू विनु छेव।।
त्रिण सम जग की त्यागि विभूति। जांनि सरीर अपाँवन पूति।।51।।
सब ही भ्रम तजि तोकौं भजे। तब तू नाथ न वाकौं तजै।।
त्रिप्तिमूल तू श्री भगवांन। त्रिप्त किए तैं नंत सु जान।।52।।
मोह तिमंगल निगलै मोहि। तू ही राखौ कठिन न तोहि।।
त्रिविधि साधु तोही कौं जपैं। तुव मत पाय सकल तप तपै।।53।।
तिनकौ तू जु करै जिन सिद्ध। तू भगवंत महंत प्रसिद्ध।।
तिष्टै तू जु सदा सब पाँहि। मैं मूरिख लखियउ प्रभु नांहि।।54।।

(अरिल्ल)

तीजी वात जु नाथ न जाचौं तोहि जी।
उभयातम गुण देहु महासुख मोहि जी।।
सोहं हंसो अवर ब्रह्म बीजो सही।
अजपा प्रणवो देहु आन जाचौं नहीं।।55।।
भेदाभेद जु रतन तीन दै मोहि जी।
तीजी वात न और सु जाचौं तोहि जी।।
तू सब दायक देव देहि सब वस्तु जी।
पै नहिं जाचैं साधु तुझी मैं मस्त जी।।56।।
वैसाखी शुक्ल जु तीज अक्षय भई।
ऋषभ कियौ जा दिवस पारनौं विधि ठई।।
वरष एक उपवास धारि यम धार जो।
मारग प्रगट कियो जु मोहमद मार जो।।57।।
घरि श्रेयांस पुनीत कियौ जानैं सही।
सो मानुज भव तारि कियो शिव ईस ही।।
ईखरसाहारी जु देवपति देव जो।
अखैतीज सम करहु कही हम सेव जो।।58।।
त्रितिया हू कीनी जु अखै जानैं सही।
भक्त्यक्षरमाला जु करहु अक्षर वही।।
अखै तीज कौ करण हमहि अक्षय करौ।
दै केवल निजबोध आपु मैं ले धरौ।।59।।
एको असुभपयोग दूज शुभ जोग है।
तीजौ शुद्ध स्वभाव शुद्ध उपयोग है।।
पहलि अशुभ मिटाय वहुरि शुभ टारि तू।
दै निज शुद्ध स्वभाव आपु मैं धारि तू।।60।।
तू तौ शुद्धस्वभाव क्यौं न मोहू करै।
तो बिनु और जु कौंन मोहि निज मैं धरै।।

विना एक शुद्धोपयोग दूजौ नहीं।
तेरे पुर कौ पंथ इहै मुनिवर कही।।61।।
तीर्थंकृत जिनदेव तू जु तीरथपती।
तो करि तीरथ भये तीरधर तू जती।।
तू तीरथधर नाथ तीन लोकेस जी।
तीन रतन की खांनि तू जु विनु भेस जी।।62।।
तीरथकर तू देव देव सब जगत कौ।
तीसन कोय कदापि पारकर भगत कौ।।
तीन सतक तेयाल राजु घणरूप जो।
लोकपती भगवान तू जु जिनभूप जो।।63।।
तीन जु समकित भेद नाथ तैं ही कहे।
उपसम वेदक क्षायको जु ए सरदहे।।
क्षायक सबकौ राव तुरत ही मोख दे।
कै भव तीनिक चारि अधिक नहिं दोष दे।।64।।
तीन सल्य कौ ध्वंस मूल जो व्रत्त को।
तू जु प्रकासै नाथ पंच बडव्रत्त को।।
तीन लोक अर तीन काल मैं वस्तु जे।
तू जांनै सब भेद एक परशस्त जे।।65।।
सोहै तू नहिं मोह तीन विधि तो विषे।
राग दोष अर मोह तोहि कबहु न लिषै।।
तीनि सु मिथ्या भेद प्रकृति जगमोह ए।
तेरै आगमि तीन मूढ नहिं सोह ए।।66।।
देवमूढ गुरमूढ लोकमतमूढ ए।
तोहि न पाँवै मूढ तू जु अतिगूढ ए।।
तीनि वेद हू नांहि नांहि लिंग जु प्रभू।
तीन भाव हू नांहि नांहि त्रिक ते विभू।।67।।
तीन लोक के भेद रूप तैं ही कहे।
तीन पौंन के भेद वातवल जे गहे।।

एक घनोदधि अवर दुतिय घनवात है।
तीजौ है तनुवात लोक कौ छात है।।68।।
ए है तीन जु वायु अगनि फुनि तीन हैं।
दक्षणाग्नि अर गार्हपत्य द्विज चीन हैं।।
आहवनीय जु भेद अगनि को तीसरौ।
गणधर केवलि तीर्थधार मति वीसरौ।।69।।
धुव उतपाद विलीन भेद ए तीन हैं।
तीनरूप जगदीस तास में लीन है।।
द्रव्य सु गुण परजाय भेद श्रुति सरदहे।
द्रव्यभाव नोकर्म तीन विधि मल दहै।।70।।
अंग सु पूर्व प्रकीर्ण भेद परगट किये।
शब्द युक्ति अर परम तीन आगम लिये।।
तीन करण के भेद नाथ तू ही कहै।
अधो अपूरव करण भेद अनिवृति गहै।।71।।
करण त्रयी कैं अंत समकती ह्वै सही।
तेरी करि परतीति आपकौं सरदही।।
समकितके पहलैं च श्रेणिके प्रथम ही।
दोय बार ह्वै करण मरणभय तब नहीं।।72।।
पहले करण जु करै प्रथम के अंत ही।
दूजे सप्तम अंत धरै निज संत ही।।
करण करण द्वै वार तीन विधि तू कहै।
पहले दरसन करण चरण फुनि तू गहै।।73।।
ब्रह्मा विसन महेस नाम ए नाथ के।
और न दूजौ भेद एक जिनसाथ के।।
देव धर्म गुर तीन पूजिए जांनिए।
कुगुर कुदेव कुधर्म हिए नहिं आनिए।।74।।
तीन दिवस है आयु अगनि कायानि की।
तीन सहस वर्षाणि वायुजातानि की।।

अगनि पौन तैं मरे मनुज होवै नहीं।
अवर जु दंडक मनुज होय तौ हौ सही।।75।।
तीन पल्य कौ आय पसू अर नरनि कौ।
उतकिष्टी भोगाधिधरा सुख करनि कौ।।
तीन कोस को काय जुगल नर तिर जु को।
सुखमासुखमा रीति कहै हर जुरज कौ।।76।।
कर्मभोमि मैं कोटिपूर्व ही आउषो।
पंच सतक धनु देह धरन जो सुख दुखो।।
तीजै नरकथकी जु असुर सुर दुख करैं।
आगैं असुर न जाय आपही दुख भरैं।।77।।
परस परैं दुखरूप नारकी सब कहै।
नारक हौंहि न जेहु जिनै तुव क्रम ग्रहे।।
जनम जरा अर मरण हमारौ मेटि तू।
दै त्रिगुणातम भाव त्रिविधि हरि टेटि तू।।78।।
आचारज उबझाय साध ए तीन हैं।
सकल त्यागि परपंच ब्रह्म मैं लीन हैं।।
तीन असुर के भेद भवन वन जोतिसी।
सुरगि बसैं ते देव और सुर राकिसी।।79।।
भूत भविष्यत वरतमान जे भाखिया।
तीनों चौबीसी जु मुनिनि उर राखिया।।
दस खेत्रनि की तीन तीन चौबीसिया।
सब ह्वै तीस प्रमाण एक जगदीसया।।80।।
समयक दरसन ज्ञांन चरण को नाथ जो।
वह जगदीस जिनिंद देहु निजसाथ जो।।
सात्विक राजस तामसादि ए नहिं कहूं।
त्रिविधातम परकास नांहि जामैं अहूं।।81।।
वहिरातम अर अतरात्म परमातमा।
तीन आतमा भेद कहै सरवातमा।।

वहिरातमपण छांडि अंतरातम हुवै।
परमातम कौं ध्याय आप परपद छुवै।।82।।
वात पित्त कफ रोग जास मैं तीन नां।
जनम जरा अर मरण कदेहू लीन नां।।
सुर्ग मृत्यु पाताल कौ जु पति दीन नां।
गीत नृत्य वादित्र एक नहिं चीन नां।।83।।
तीन सु उपनय भेद कहै परगट तु ही।
सद्भूतेतर दोय एक उपचर सही।।
तीन जु तिगुनें करे हौंहि नव भेद नै।
तू भाषै सब भेद तू जु त्यागक अनै।।84।।
तीन परिग्रह भेद सचित्त जु अचित है।
मिश्र समेत जु तीन तजै मुनि वित्त है।।
तीन जोनि के भेद तू जु भाषै पती।
तीन कोटधर तू जु विराजै पति जीती।।85।।
पर्यापत औ इतर अलब्ध जु तीसरौ।
ह्वै सनमूर्छन भेद सुधी मति वीसरौ।।
गर्भज पर्यापत औ इतर जु भेद ह्वैं।
अलवध कौ जो भेद सु गर्भज मैं न ह्वै।।86।।
नारक सुर औपाद जन्म तू ही कहै।
सब भेदनि के भेद साधु तोतैं गहै।।
तीन समै दो एक अनाहारी सही।
अंतरालवरती जु अधिक रहि है नहीं।।87।।
इहै देह देही जु त्यागि जब पर गहै।
अंतराल सम ये जु तीन ह्वै इक रहै।।
क्षणके समय असंख हौंहि इह ठीक है।
नांहि समै सौ काल जघनिकौ ईन है।।88।।
ए सब भेद जिनिंद तो बिनां को कहे।
तेरी सुनि जिनवानि भविक जन सरदहै।।

मन वच तन ए तीन तीन कृत कारिता।
अनुमति तीन कुज्ञान मिथ्यात सुधारिता।।89।।
कुमती कुश्रुति कुवधि बोध मिथ्या त्रयी।
तू जु निवारै तात पारकर तू त्रयी।।
संशय विभ्रम मोह तीन मैं एक नां।
तू परपंच वितीत जाहि वदने कना।।90।।
केवलि वच श्रुति और समृति गनधर कथी।
कहैं पुरांन मुनिंद तीन हूं श्रुतिपंथी।।
श्रुति समृति अर सकल पुराणादिक जिके।
भाषे सब ही भेद धर्ममय तै तिके।।91।।
प्राणायाम सु भेद तीन विख्यात हैं।
पूरक कुंभक रेच तीन विधि वात हैं।।
चउ मंडल मुद्रादि पंच तत ध्यांन मैं।
पंच सु बीज समेत तिहारे ज्ञान मैं।।92।।
इडा पिंगला और सुषमना तीन ए।
नाडी भेद कहै जु तू सु परवीन ए।।
तीन वरुण करि एक प्रणव निपज्या सही।
अवरण उम मिलि नाथ ब्रह्मबीजु तुही।।93।।
गुप्ति जु तीनि विभेद गुणव्रत तीन ही।
तीन अठाई व्रत्त करै परवीन ही।।
तीन और दस भेद चरण कै जे कहे।
तेरै ही उपदेस भव्य जीवनि गहै।।94।।
तीन गुप्ति अर पंच महाव्रत जांननें।
पंच समिति कौं भेलि त्रयोदस मांनने।।
तीन र दस जे चोर कहांवे काठिया।
तीन र दस चारित्र देखि ते ना ठिया।।95।।
तीन और दस प्रकृति राग की हैं सही।
बारा प्रकृति कषाय दोष की जिन कही।।

तीन मोह की प्रकृति मिथ्यात जु न हवै।
सब मिलिहैं अठवीस मोहमैं लीन वै।।96।।
चौ माया चौ लोभ हासि रति वे कही।
तीन वेद के भेद मिलें दस तीन ही।।
चौविधि कोप जु तूर्य भेद हैं गरव के।
अरति सोक भैं ग्लानि मिलैं द्वादस तके।।97।।
तेरा वारा तीन मोह अठवीस ह्वै।
तुव परसाद जिनिंद मोहहर ईस है।।
तीन र बीस विभेद विषै के सब कहे।
वरण पंच रस पंच आठ सपरस लहे।।98।।
दोय गंध के भेद तीनि हैं शब्द के।
ए तेईसौं विषै सेवहीं लुब्ध के।।
तीन बीस अहमिंद्र लोक तोही थकी।
जानें नौ नौ पंच नांहि यामैं सकी।।99।।
तीस भोग है भूमि मनुज क्षेत्रनि विषै।
तू ही भाषै देव सर्व तू ही लिखै।।
तीस जु चौईसी जु पूजि तैं भाषिया।
तीस पंच गुणें दोय कभी तैं नाखिया।।100।।
तीस वरष के होय भये मुनिराय जो।
जिन पारस अर वीर हमैं सुखदाय जौ।।
तीस ज कोडा कोडि उदधि थिति जे कही।
ज्ञानावरणी दरस अंतराय जु लही।।101।।
वेदनि हूं ए तीजु पराथिति जांनिये।
नाम गोत्र ए दोयवीस परमांनिए।।
मोहो सत्तरि और दुवीसी मुनि कह्यौ।
आऊ तीस र तीन अधिक नहि सरदहह्यौ।।102।।
इह उतकिष्टी थिति जु कर्म की तैं कहीं।
जघनि वेदनी द्विदस महूरत सरदही।।

नाम गोत्र ए जघनि आठ माहूर्त है।
एक महूरत सेष महा ए धूर्त्त हैं।।103।।
इनतैं मोहि छुडाय और को वात नां।
सौ अठताल मिटाय करहि अति यातनां।।
तीखौ कठिन न तू जु तू जु नां कुंठ है।
महालछि कौ पुंज पूज निजगंठ है।।104।।
तू सब मैं तो मांहि सकल ही ज्ञेय है।
तू सब तैं दूजौ जु एक परध्येय है।
तीस र तीनि जलोधि आउषौ सात मैं।
नरक मांहि भुगत्यौ जु अनंती घात मैं।।105।।
नव ग्रीवक लौ गयौ धारि तप व्रंद मैं।
तीस र एक समुद्र जियौ अहिमिंद्र मैं।
नव अर पंच विमानभूति नांही लही।
तीस र तीन पयोधि देवथिति नां गही।।106।।
तेरी भक्ति विना तु अनंतो काल मैं।
रल्यौ चहू गति मांहि फह्यौ जगजाल मैं।
तीयालीस जु पकृति न वांधै समकती।
परसौ जब गुणठाण चउत्था अविरती।।107।।
बीस अधिक सत एक प्रकृति जे बंध हैं।
तीयालीस वितीत सात सत्तरि रहैं।
घटत घटत घटि जाय बंध परकति सबै।
समकित धारी तोहि लहैं सांई तबै।।108।।
तीन र और पचास तरेपन जे क्रिया।
श्रावक की परसिद्ध मुक्ति की जे प्रिया।
आठ मूलगुण और व्रत्त द्वादस कहे।
द्वादस तप के भेद ग्यार पडिमा गहे।।109।।
दांन च्यारि करिवौ जु वारि कौ छांणिवौ।
समकित निरमल करे तत्त्व की जांणिवौ।

निसि कौ अनसन करै रतनत्रय धारिवौ।
ए सब त्रेपन किया धारि अघ मारिवो।।110।।
गर्भाधान सु आदि मुक्ति लौं त्रेपनां।
तै ही भाषी और क्रिया अघछेदनां।।
दीक्षान्वय अवतार आदि अठतालसी।
सज्जात्यादिक और सात नहि ढाल सी।।111।।
त्रेपन अठतालीस सात मिलि सकल ह्वैं।
सौ अर आठ प्रसिद्ध तिनहि धरि अकल ह्वैं।।
सबकौ भासक तूज नाथ तूही सही।
तो बिनु और किनी न क्रियाकी विधि कही।।112।।
तीन र और पचास भेद पच भाव के।
ह्वै नव इकवीसी जु अठारह चाव के।।
तीन मिलें त्रिक अधिक अर्द्धशत जे कहे।
त्रेपन मैं दस आध देहु अवर न चहे।।113।।
तीन र साठि महंत सिलाका पुरष हैं।
तू ज बखानैं देव ग्रन्थ तुव सरस हैं।।
तीनि र साठि जिनिंद देव गुण संपती।
सोलह भांव न पंच कल्याणक पंकती।।114।।
चउतीसौं अतिसै जु दस र दस चौदसा।
प्रातिहार्य वसु भेद मिलें त्रेसठि लसा।।
सबकौ तू ही मूल तुही है धार जी।
तू विभूति भर देव क्रिया कै पार जी।।115।।
तीन र साठि प्रकृत्य क्षेपें बिनु केवली।
होहि नही तहकीक कही तैं ही भली।।
सा अर अठतालीस क्षपें विनु सिद्धनां।
तै ही कियौ विचार तो बिना शुद्ध ना।।116।।
तीन र साठि जु पटल कहे सुरलोक के।
तोतैं जानें मुनिनि भेद सब थोक के।।

तीन र साठि जु लाख पूरवा नृप रहे।
बीस जु पहली लाख पूरवा शिशु जु है।।117।।
सहस वरष मुनिराय इते कम लाख जो।
पूरव केवल मांहि सबै श्रुति साख जो।।
चोरासी लख पूरवा जुगथिति धारि कै।
ए आपनैं लोक जगत जन तारि कै।।118।।
सो हमकौं निजवास देहु ऋषभो जिनो।
और न कोई दूज तिमरहर जो दिनां।।
तीनि र सत्तरि कला वहत्तरि जगतकी।
एक मोछिकी कला सबै जिनि विगत की।।119।।
तीयासी परि एक धरै चौरासिया।
लख जौंनी ह्वै नाथ रुलैं नहिं दासिया।।
तीयासी परि अधिक दोइ पच्यासिया।
तेऊ नासि मुनिंद लहैं सिवरासिया।।120।।
.....।।
तीयासी लाखो जु काल पूरव ग्रहे।
रहे रिषभ जिनदेव पै न पर मैं फहे।।121।।
तीन र निवै प्रकृति नामकर्म जु तणीं।
जिन भाषी श्रुति मांहि सोहि त्रिभुवन धणी।।
पंच सरीर समेत निवै अर तीन ह्वै।
देह पंच दस गिनें एक सौ तीन वै।।122।।
वरष तीन सै गयें तज्यो घर वार जो।
सो श्री नेमि जिनिंद मदन मद मार जो।।
गिर गिरनारि थकी जु लोक कै सीस जो।
गयो दयाल हमैं हु देहु शिव ईश जो।।123।।
तीन सैकडा और तीस छह भेद जे।
मति सु ज्ञांन के नाथ कहे विनु खेद ते।।

तीन सैकडा और अधिक तीयालसी।
राजू गिरदाकार लोक सब भालसी।।124।।
चौदा राजू ऊंच सप्त अध उरधा।
सब कै उपरि रहै नाथ जग मूरधा।।
तीन सतक अर साठि तीनहैं ऊपरैं।
एते पाखंडी सु प्रगट है भूपरै।।125।।
एक एक नय धार नांहिं उभयात्मका।
तिनतैं मोहि छुडाय देव जगदात्मका।।
देहो जिनमत सार अमित नय भास जो।
और न चांहै नाथ सकल परकास जो।।126।।

(सोरठा)

तुरही अर सहनाय, इत्यादिक वाजे जिके।
तेरै राग न राय, तूर वजैं तैरै सही।।127।।
साकृति मांहि सबै जु, नांहि निराकृत मांहि को।
तोकौ सर्व फबै जु, एकरूप तू वेधरा।।128।।

(सवैया इकतीसा)

तुच्छमति देव मेरी तुच्छगति नांहि तेरी,
तुलना विभौ की तेरी करण समत्थ को।
तुज नांहि तैरै कोऊ तुज कहैं पुत्रनि कौं,
तुक मैं न आवै तू जु तो सम अकत्थ को।।
तुम्हरी अपार सोभा कहि न सकत कोऊ,
तुरत ही पार करै ऐसो बडहत्थ को।
तुष अर कणकौ जु तुमही बतायो भेद,
आप विनु और सब दीखै सु निरत्थ को।।129।।
तुनका समान हौं जु कर्मवाय घेरयो फिरौं,
अतुल तुषार जाडि सीतज्वर पीडियौ।

कंपणी चढ़ी जु मेरै आयौ नांहि द्वार तेरै,
हूं तौ जड़ सौ जु स्वांमी भरम मैं वीडियौ।।
तुचनिकरि वेढ्यौ हौं जु तुझ मैं न लागौ कभी,
तूटै कैसैं मोहपासि पापनि मैं क्रीडियो।
तुस सम कायनिमैं वीत्यौ नंतकाल मोहि,
कण हाथ आयौ नांहि दुखनिमैं नीडियौ।।130।।

(सोरठा)

जुररा छौगा नांहि, नांहि जु तेरै वादिला।
सकल सोभ तो मांहि, वस्त्राभरण न एक को।।131।।
तुज कसु तेरै नांहि, तू मत डाक न एक को।
सर्व ज्ञेय तो मांहि, आप पाँहि तू ही रह्यौ।।132।।
तुण तुण तार बजंत, तेरै देवलि मंगला।
साज जु वाज सजंत, शक्रादिक गांवै तुझै।।133।।
तुला ताखडी नाम, ज्ञांन तराजू मांहि तैं।
तोले अखिल जु धाम, तेरी तुला न दूसरौ।।134।।
तुम तारौ जगदीस, और कौन तारै हमैं।
तुव सारिस नहिं ईश, और पदारथ एक कौ।।135।।
तुही तुही सु तुही जु, तुही वही और न सही।
कही कही जु सही जु, गुरनैं इह आज्ञा हमै।।136।।

(सवैया इकतीसा)

तू तौ नंत सक्तिनि कौ पुंज है अगाध नाथ,
तूल सम हौं जु लघु उड्यौ फिरौ वाय तैं।
भरम ही बाय और वाय न उडायवे की,
भरम मैं भूलि अर दाह्यो अघ लाय तैं।।
तूर तेरै बाजैं नंत ते है राव धुजावंत,
मोकौं काढि लाय ते सु जगत की माय तैं।

तूल अतिभूति तेरी कहिवौ न सकति मेरी,
तूपनिकौ धार तू छुडाय मोकौं काय तैं।।137।।
तू न मायाजाल मैं फंस्यौ न काहू काल मांहि,
तेरै नांहि कालिमां जु जगत मैं देखिए।
तूटै सब मोह फंद तेरौ नांव जपे देव,
तूठै तू न रूठै कभी अलख अलेखिए।।
तत आदि दोषवंत हरीनि को त्याग तैं ही,
भाष्यौ जगजीवन दयालतू ही पेखिए।
तू मन तडाक तेरै राव सब लोक कौ जु,
तेरी बडमानसी जु परगट लेखिए।।138।।

(सोरठा)

तूदौ वध्यो अनंत, मैरै मांथै करम कौ।
तू तारै जगकंत, और उपाय न दूसरौ।।139।।
तूडा सम जगभूति, कूडा तैं हू अति बुरी।
याहि चहैं पसु पूति, अवधूता चाहैं नहीं।।140।।
कण सम भक्ति जु देहु, भक्ति मुक्ति की मात जो।
अपनौं करि हरि लेहु, गेहु देहु जो शास्वतो।।141।।
तूड समूह जु नाम, सब समूह इक तो विषै।
लै समीप सुखधाम, वासी करि सिवलोक कौ।।142।।
तूष्णी मौन जु नाम, मौंन देहु या जगत तैं।
ह्वै तूष्णी जु विराम, कामरहित ह्वै तुव भजौ।।143।।
तेजोरासि अनंत, तेजोमय तू ही सही।
तेजुपुंज भगवंत, तेजमूल तू नाथ है।।144।।
तेरौ सौ नहिं तेज, सूर चंद हतभुग विषै।
तो आगलि सगरे जु, रतन रतनधर शक्र के।।145।।
तेगादिक जे शस्त्र, तेरैं एक न पाइए।
तेखरेख नहिं वस्त्र, तेड्यौ तू आंवै नहीं।।146।।

तेजरादि सब रोग, तेरौ नांव लिए नसै।
तैं त्यागे सब भोग, जोगरूप तू देखिए।।147।।
ज्यौं तिल मांही तेल, त्यौं घट मैं इह जीव है।
निजभांवनि कौ मेल, याही मांहि जु देखिए।।148।।
दार मांहि हुतभोज, पुष्प मांहि जिम वास है।
त्यौ निज मांहै खोज, चोज न या सम दूसरौ।।149।।
दुग्ध मांहि घ्रित जेमि, पाषाणे वह्नि जु वसै।
घट मांह प्रभु तेमि, लखि रे जन निज ईस कौं।।150।।
इह आतम विज्ञान, तू हि बतावै जोगिया।
तो बिनु नांही ध्यान, ध्याता ध्यांन जु ध्येय तू।।151।।
तेह रह्यौ नहिं नाथ, मोमैं कछु वाकी नहीं।
देहु आपनौं साथ, ज्यौं निज पूंजी हाथ ल्यौं।।152।।
तेरै राग न दोष, मोहादिक तेरै नहीं।
तेरै वंध न मोष, तू शुद्धातम रूप है।।153।।
तैलादिक कौ लेप, तेरै नांहीं जोगिया।
तू है देव अलेप, स्नानादिक तेरै नहीं।।154।।
नाम तैल कौ नेह, प्रगट कह्यौ ग्रन्थनि विषै।
नेह जुक्त तिल जेह, पीडे जांहि जु यंत्र मैं।।155।।
जग सौ करि हैं नेह, तिल समान ते नर सही।
दुख जंत्रनि मैं देह, ते हन रहिहै तिन विषै।।156।।
तजि कै जगत सनेह, जै तौसौ लव लाय है।
वरसै अनहठ मेह, तिनके घट भीतरि सही।।157।।

(भुजंगप्रयात)

तुही देव त्रैलोकि ईसौ मुनीशा। तुही ईश त्रैकालिधीशो अधीशा।।
तु ही है जु त्रैलोकि राजा गुसांई। सही है जु त्रैलोक्य सारो सु सांई।।158।।
वही तु जु त्रैलोकि सीसो जिनिंदा। सही नाथ त्रैकालिदर्शी मुनिंदा।।
सदा एक त्रैगुण्यरूपो तुही जो। तुही निर्गुणो नंतरूपो सही जो।159।।

जिनो तू जु त्रै सप्तधा द्वादशांगी। सुभाषा तिहारी उभै नै इकांगी।।
तुही एक त्रैलोकि नाथो प्रभू जी। अनंतोपदेशी तुही है विभु जी।।160।।
नहीं तैजसाधार कार्माण तू नां। अनंत प्रपूरा नहीं तू ज ऊनां।।
इहै तैजसा और कार्माण देहा। अनादि प्रवंधा लगे जीव गेहा।।161।।
इनू तैं छूटै मोख पावै सु जीवा। तुही जौ छुडावै इनू तैं सदीवा।।
नहीं तोल तेरा नहीं मोल तेरा। घट्या तोल मेरा करै तू घनेरा।।162।।
सुत्वं शष्टमो नाथ सिद्धि प्रदाई। तु ही मोख राखै न औरै उपाई।।
नहीं रोष तोषा न दोषा न तेरै। सदा तोष तेरै स्वसंतोष नेरौ।।163।।
तिहारा जु तोरा सबौ के जु माथे। नहीं तोड जोडा तिहारै जु साथै।।
नहीं कोय तो दान हीं कोय तोला। नहीं कोय तोफां न तोला न मोला।।164।।
कहैं लोक भाषा जु तोटा सु तोडा। न तोडा पडै देव तेरै न जोडा।।
नहीं तोड जोडा तिहारै कदापी। तुही कर्म तोडा जिनादीश थापी।।165।।
नहीं तो परैं एक तू ही सबौं पैं। सदा तू विराजै सही जो सचौपै।।
सचे तो हि पाँवै न पावैं जु झूठे। रचे तो महैं ह्वै जगत्सौ अपूठे।।166।।
त्रिकातौर्य तेरै जु होवै सबै ही। गयौ सिद्धलोकै तजे तैं जवै ही।।
सु तौर्यत्रिकेणापि तोकौं सु गांवें। जु तौर्यत्रिका त्यागि तो ही सुध्यावैं।।167।।
सु गीतं सु नृत्यं सु वादित्र बाजा। सु तौर्यत्रिका ए कहावैं सु साजा।।
सु चक्री सु वज्री इनौ थी जु गांवै। मुनिंदा सबै त्यागि लौ ही लगांवै।।168।।

(सोरठा)

तौर तिहारौ नाथ, लोकरीति तैं और है।
तू तौ अति बडहाथ, यहै तौर तोही कनै।।69।।
तेरौ सौ नहिं तौर, सुर नर मुनिजन सबनि मैं।
तू है सबकौ मौर, इहै तौर नहिं आन पै।।170।।
मुझ गलि दाल्यौ तौष, मोहकर्म नैं भ्रममई।
करि जु तौष तैं मोष, तौ न संग तेरौ तजौं।।171।।

(भुजंगप्रयात)

सु तंत्रो तुही तंत्रकृत्तंत्रधारी। सु तंत्राधिपो तू जु तंत्रोपकारी।।
नहीं तंत्र तेरा बिना एक ज्ञान। न तंत्रा न मंत्रा न यंत्रा न ध्यानं।।172।।
तूही तंत्रपारी सही है अकर्ता। तुही तंत्रहारी निजाधीन भर्ता।।
सु तुंगा उतुंगा तुही त्यंत तुंगा। नहीं तंत्र मंत्रा नहीं तू जु तंगा।।173।।
कभी तंग हाथा नहीं तूल हाथा। तुही तंत्र मंत्रेश ईशो सु साथा।।
करैं ताडवारंभ इंद्रा सु सेवा। तुही वासवाधार सर्वज्ञ देवा।।174।।
सही तंत्र तेरा सबै जीव रक्षा। वही मंत्र तेरा न औरै जु पक्षा।।
नहीं कोय मंत्रा बिना नाम तेरै। नहीं कोय हंता बिना मोह मैरे।।175।।

(सोरठा)

तं न गुणं जगनाथ, जं नहिं पावैं दास ते।
सर्व गुणो जिननाथ, तू निर्गुण निरदूषणां।।176।।
गुण बंधन कौ नाम, गुण ज्ञानादिक नंत हू।
तू बंधनहर रांम, ज्ञान गुणातम तू सही।।177।।
तत्ता आगलि दोय, शून्य विसर्गा जे कही।
बारम मात्रा होय, सब मात्रा मैं एक तू।।178।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया)

तप कौ जु पुंज तू ही तम कौ हरनहार,
ताप नांहि तेरै कोऊ त्रिश्ना कौ न नांम है।
तीर भवसिंधु की जु तू ही बैठौ देवदेव,
तुष को न लेस तेरै तुज कन काम है।
तूर तेरै बाजैं नंत तेज कौ निवास कंत,
तैजस औ कारमांण नांहि तेरे धाम है।
तोसौ तू न दूसरौ जू तोर तेरौ तोहि मांहि,
तंत मंत आपुही स्वत:प्रकास राम है।।179।।

(दोहा)

तेरी नाथ जु तत्त्वता, परम शुद्धता सोय।
पदमा कमला लक्ष्मी, और न 'दौलति' होय।।180।।

इति तकार संपूर्णम्।

थ

आगैं थकार कौ कथन करै छै—

(श्लोक)

थकाराक्षरधातारं, स्थिरं शिवकरं हरं।
वंदे लोकाधिपं देवं, जिनेशं निजरूपिणम्।।1।।

(सोरठा)

थ कहिए श्रुति मांहि, भयरक्षण कौ नाम है।
तो विन दूजौ नांहि, तू रक्षक है भय थकी।।2।।
होय सप्तभय दूरि, जब तू आवै घट विषै।
तू है अति भर पूरि, भय कौं तू जु भयंकरा।।3।।
उच्च सिलोच्चय नाम, थकारांक आगम विषै।
मोखसिला है राम, कै दूजी पाँडुकसिला।।4।।
मोख सिला पर तू जु, तातैं मोख सिला बडी।
तू ही न्हायौ पूज, तातैं पाँडुक सिल भली।।5।।
कोडि सिला है एक, कोडि साध मोक्ष जु हुवा।
अर्द्धसु चक्री नेक, नव ही जाहि उचांवहीं।।6।।
थकित रहैं सुरराय, तेरौ थल देखें प्रभू।
थके कर्म दुखदाय, तोसौं लरि जीते नहीं।।7।।
थलचर जलचर और, नभचर जीव जिते प्रभू।
तिन सबकौ तू मौर, दयापाल तू ही सही।।8।।

थक्यौ बहुत हूं नाथ, भटकत भटकत जगत मैं।
अब तू लै बड हाथ, खैंचि र अपने नगर मैं।।9।।
थकै जीव जौ कोय, तेरे रस मैं सांइयां।
सब सुख पावैं सोय, थरकि रहै तोही विषै।।10।।
थलरूपी तू देव, थलबंधक सब धर्म कौ।
थल मूल जु तुव सेव, और सबै निथली दसा।।11।।
थल मैं जल मै तू जु, करै सहाय न और को।
मोहि सु थल दै पूज, भवजल तैं तारक तुही।।12।।
थट्ट तिहारै पासि, सदा एकले तुम प्रभू।
हरौ हमारी पासि, जब हरि जांनैं हम तुमैं।।13।।
जड जुर पीड्यो हौं जु, चढी थरहरी मोहि जी।
तू निरजुर मोकौं तू, करि जु वेगि दे सांइयां।।14।।
थण मातनि के मैं जु, पीए गर्भज जन्म मैं।
पाँचौं प्राव्रत तैं जु, भाषै ते नंते किए।।15।।
थाघ लही नहिं स्वामि, काल अनंतौ हूं रुल्यौं।
जांनैं अंतरजांमि, मेरो दुख जे मैं सह्यौ।।16।।
थाघ न आवै नाथ, तू अथग्ग जिनपति सही।
थाह लहैं जति साथ, केवल पाय जु रावरौ।।17।।
थांन मांन धन धांन, तेरै एक नं जोगिया।
कैंसौ है वह थांन, जहां तोहि मुनि नां लखैं।।18।।
सर्वग व्यापक तू ज, थांन लोक कैं सिखर है।
थांन वस्त्र नहिं पूज, तेरै तू जु दिगंबरा।।19।।
थाती तेरै पासि, और दरिद्री सब जिके।
तू है केवल रासि, पासि हरण जिन पासि तू।।20।।
थार कटोरा त्यागि, करि करपात्र जु अशन जे।
रहैं सु तोमैं लागि, थाघ लहैं तुव थांघ तैं।।21।।
तेरी थांघ बिनां जु, थाघ न आवै जगत कौ।
तो बिनु जांहि दिनां जु, ते विरथा भाषैं सुधी।।22।।

(सवैया इकतीसा)

थाप और उथाप एक तेरी ही जु लोक मांहि,
तेरी थापी रीति कौ उथापक न कोय है।
थाट कौ धणी जु तू ज पाटधारी देव पूज,
थाह न लहंत कोऊ तू जु एक दोय है।।
थाक्यौ अति हौं जु नाथ थाक तू उतारि मेरी,
थालि तूही घालि थांन तो विना न होय है।
थांणे मोहकर्म के उठावै तू ही और कौंन,
तो विना न दीखै दूज तूही भव खोय है।।23।।
थिररूप थिरदेव थिरचर नाथ तू ही,
थिरचर जीवनि कौ पालक गुरू तु ही।
थिर थांन थिरथाम थिर जोति थिरनांम,
थिररांम नंत भाव तू ही एक है वही।।
थिर थिरता कौ मूल थिरता अपार जाकै,
थिरीभूत भाव एक तू ही जौ धरै सही।
थिति अष्टकर्मनि की तैं ही सब भाषी देव,
सबै थिति हरी तैं ही जगथिति तैं दही।।24।।
थिर मांन पामडी जो वस्त्र नांहि शस्त्र जाकै,
भूषन न एक कोऊ दूषन न लीजही।
थिरी है करण जोई थीजै नांहि भीजै कोई,
पधरै न छीजै काल नांहि खीजही।
तोकौं जो बिसारि देव इंद्रिनि के विषै सेवै,
ता समान मूढ़ नांहि गहै जो निवीज ही।
परद्रोह परद्रव्य परदारा रत्त रहै,
थुक थुक जनम कहावत वही जही।।25।।
थुति जो तिहारी देव करण समत्थ नांहि,
सुर नर मुनि जन गणधर देव हू।
हौं जु थुति करौं तुछमति मूढ़ डेडर ज्यौं,

विंधि न निषेध नांहि जानौं कोऊ भव हू।।
थूलरूप देव तू ही थूंणी सब लोक की जु,
व्यापि रह्यौ लोक मांहि नांहि कोऊ लेव हू।
हूं तौ सठबुद्धि महा तोहि भूलि भ्रम गहा,
लोकरीति राचि नाथ नांहि करी सेव हू।।26।।
तू ही निजभक्ति देय कर मौकौं सुद्धरूप,
और तौ उपाय नांहि तू ही एक है वही।
थाती कौ ज थूणी नाम तूही थाती थूणी राम,
निजथाती पासि तेरै तोही तैं मुन्यौं लही।।
पर की न थूणी राखै परद्रव्य प्रीति नाखै,
निजरस चाखै तव सुखी होय तैं कही।
परधन धूरि देखै परतिय मात पेखै,
जीव सब आप लेखै तबै तू गहै सही।।27।।
थूलता कौ पुंज तू जु सूक्षम अपार देव,
च्यारि ज्ञान धारी साधु जाहि नांहि लेख ही।
परमाणु देखै अरु देखै मूरतीक सब,
तीनि लोक देखैं तऊ तोहि नांहि पेखहीं।
मन की जु पावैं अर जानैं जु असंख जन्म,
तोही सौं लगावैं लव तऊ नांहि देखहीं।
ऐसौ तू जु सूक्षम है केवली ही देखि सकै,
थूल ऐसौ नाथ जामैं लोकालोक रेखहीं।।28।।
थेई थेई तत्करि नाचैं इंद चंद तेरै,
ताल लय नाद करि तोही कौं जु गांवही।
नारद हू कंधे धरि वान अति सुंदर जो,
अति ही उछाह करि तोही कौं जु ध्यावही।।
शची आदि देवी सब तोहीकौं अलापै नाथ,
अहमिंद्र लोक के निवासी तोहि भावही।

चक्री अधचक्री आदि सुर नर नाग सब,
गणी गुण मणी साध तोसौं लव लावही।।29।।
थेथी वात करैं ते न पाँवैं तोकौं काहू काल,
तेरै कोऊ थेथी वात हेरे हूं न पाइए।
तोहि लहैं ठीभर विवेकी निजरस स्वादी,
थेथी दसा त्यागि एक तोही कौं जु गाइए।।
थैक रूप देव तू ही भय के निवारवे तैं,
भवभय टारिवे कौं तू ही एक ध्याइए।
थोक तेरै नंतज्ञान आदिक अनंत गुणे,
नंत भाव नंत शान्ति परणति नंत ही।।30।।
थैक भाव तू ही सिद्धसिला पै विराजि रह्यौ,
थोक के धरणहार तोकौं सिर नाइए।
थोक तोमैं माय रहे लोकालोक ज्ञेय सब,
तू ही एक सुन्यौ देव अंतक कौ अंत ही।।
थोथी पोल वातनितैं तू जु नहिं आवै हाथ,
थोथी जगभूति त्यागि ध्यांवै तोहि संत ही।
थोथी वात एक कोऊ तेरै नांहि देखिए जु,
भुकति मुकति दाता तू ही एक तंत ही।।31।।

(सोरठा)

थोरी बहुत कछूक, तेरी भक्ति विषै प्रभू।
परी होय जौ चूक, क्षमैं तू जु साधूनि की।।32।।
थोरी बहुत कछू न, मैं मूढहि भक्ति न करी।
थोरी सम अति न्यून, सो तन पोष्यो अघमई।।33।।
थोरी कुल हू तोहि, भजैं कदापि निपाप ह्वै।
देखैं सब मैं टोहि, जनमांतरि सोऊ तिरैं।।34।।
थौ तू ही जगनाथ, नंत काल पहली प्रभू।
है रहसी जिननाथ, एकरूप त्रयकालि तू।।35।।

(सवैया इकतीसा)

थंभ एक लोक कौ जु तू ही त्रिभुवन नाथ,
थंभे तैं अनंतभाव थंभै तू उपाधि तैं।
तैं ही थंभे दुष्ट अष्ट जिहां के तिहां ही नाथ,
तू ही एक टारै देव सबै आधि व्याधि तैं।
तू ही एक थाघ और थाघ नांहि दीसै कोऊ,
तू ही थिर थापै और तारै जो असाधि तैं।
जल थल नभ मांहि तेरौ ई अधार देव,
और कोक थंभै नांहि भव असमाधि तैं।।36।।

(सोरठा)

थथा पासि उभै जु, शून्य पारमी मात्रिका।
तेरे पासि अभै जु, शून्य त्यागि तोकौ भजै।।37।।
द्वादस तप उर घारि, शून्य जु रूपातीत गहि।
तोहि भजैं अघ डारि, पावैं तैरौ तब पुरा।।38।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

थलरूप देव तू ही थाघ तेरी लहै तू जु,
थिरता अपार नाथ थीजै न पघ रही।
थुति तेरी करैं देव थूणी लोक की सु तू जु,
थेई तत्त करि थेई नांचैं सुर नर ही।।
थैक रूप तू ही ईश देव भयकौ हरनहार,
थोथी बात नांहि तेरे सर्व थोक धर ही।
थौ तू ही जु है जु तू जु थंभ सब लोक कौ जु,
होसी सदा काल एक शून्यता न कर ही।।39।।

(दोहा)

थोथी जग की भूति जो, सो नहिं संपति होय।
शक्ति रावरी जो रमा, पद्मा 'दौलति' जोय।।40।।

इति थकाराक्षर संपूर्णम्।

द

आगैं दकाराक्षर कौ व्याख्यान करे छै—

(श्लोक)

दयामयं दमाधारं, दानतीर्थप्रर्वतकम्।
दिनाधीशं महाबोधं, दीनबन्धुमतीश्वरम्।।1।।
दुष्टाष्टकर्मजेतारं, दूषकं पापपुण्ययोः।
पुण्यं पुण्यगुणापेतं, देहगेहादिवर्जितम्।।2।।
देहिनां रक्षकं वीरं, द्वैताद्वैतविवर्जितम्।
दैन्यं नाद्रियते यं क्वापि काले दोषदूरगम्।।3।।
दौर्जन्यरहितं शुद्धं, दंभपाखण्डनाशकम्।
दंडत्रयनिहंतारं, वंदे शून्यप्रकाशनम्।।4।।
शून्यं च रूपरहितं, ध्यानं शुक्लमखण्डितं।
प्राप्यते यत् प्रसादेन, वन्दे तं जगदीश्वरम्।।5।।

(सोरठा)

दर्भासन जु विछाय, चक्री अधचक्की जपैं।
नाहीं तेरे छाय, तू छायाकर सबनि कौ।।6।।
दट्यौ न मोपैं काम, दले न मैं कोपादि जे।
तज्यौ न मैं धन धाम, राम नाम जान्यौं नहीं।।7।।
दझ्यौ लोभ की लाय, दल्यो जु मोकौं मोह नैं।
धरि धरि राली काय, अब जिनराय स्वबोध दै।।8।।

(दोहा)

द्रव्य प्रकासक देव तू, षटद्रव्यनि मैं सार।
द्रव्य सु गुण पर्जाय सब, ध्रुव उतपाद विचार।।9।।
द्रव्य क्षेत्र अर काल भव, भाव पराव्रत पंच।
करत करत मौकौं प्रभू, बीत्यौ काल अरंच।।10।।
अब तू प्राव्रत मेटि हरि, ले निज मांहि उचाय।
द्रव्य सु क्षेत्र सु काल जो, दै सुभाव जिनराय।।11।।
स्वचतुष्टै तू मोहि दै, और न जाचौं देव।
जनमि जनमि दै रावरी, भवहर भगति अछेव।।12।।
द्रव्य क्षेत्र अर काल जो, भवभावनि करि तू जु।
पइए वै मोकौं वितरि, और न मांगौं दूज।।13।।
द्रव्य निजातम देहु तू, क्षेत्र असंख्य प्रदेस।
काल समीक जु परणती, भव निज भवन विसेस।।14।।
भाव अनंत स्वभाव जो, ए निजकारण पंच।
तो बिनु कौन दयाल जी, दे हमकौं शिव संच।।15।।
तन धरिवौ मुझ दूरि करि, तनु दै विभु चरमंग।
वज्र वृषभ नाराच जो, संहनन दे शिवसंग।।16।।
क्षेत्र सु आरज देहु तू, जो शिवदायक ईश।
काल चतुर्थम अतिभलौ, नरदेही दै धीश।।17।।
भवहर मेरौ भवहरी, भाव सु देहु विराग।
इन विनु और न चाहिए, ए कारण शिवभाग।।18।।
पंचवि कारण जब मिलैं, तब जन मुक्त जु होय।
पंच सु कारण कारणो, तू इक दरसै कोय।।19।।

(चौपई)

दमधर दमप्रभु दमतीर्थेश। तू जु दमेश्वर दमपति भेस।।
दम कहिए मन इंद्री रोध। तू दमकर दमपर निजबोध।।20।।

दत्त दयाभर दक्षदयाल। दरसन जोगि अखिल प्रतिपाल।।
दवीयान कहिए दूरस्थ। दयायाग तू जगमूरधस्थ।।21।।
दृढीयान अतिदृढ तू देव। दमी दम्याधिप दृढव्रत सेव।।
तू जु दयानिधि दमिवर गुरू। दयावांन दय पाल जु धुरू।।22।।
दयानाथ तू ही जगजीव। दयासिंधु सबकौ सुखदीव।।
दयाकेतु तू ही जगजीत। दसातीत जगजाल वितीत।।23।।
दशलक्षण पालक मुनिपाल। दशधा परिग्रह तू अतिटाल।।
दश सागर चौथै नरकैं जु। तो विनु भुगती आव जु मैं जु।।24।।
पंचैं छठैं सुर्गि जु आय। दस सागर भुगती अतिकाय।।
तो बिनु सुर्ग नरक मैं रुल्यो। नहिं निर्वाणपुरी पथ मिल्यो।।25।।
दह दह पुग्गल रहित जु तू जु। दशमूल जु भव ज्वरहर पूज।।
भरतैरावत दश ही क्षेत। इनमैं एक दसा नहिं लेत।।26।।
और क्षेत्र मैं एक जु दसा। काल होय पै कलपन धसा।।
कालचक्र कलपाँत प्रलै जु। दश क्षेत्रनि मैं तू जु कहै जु।।27।।
दश सहस्र वरषैं तुछ आय। सुर नारक की तू सु कहाय।।
उतकिष्टी थिति फुनि वनकी जु। सागर तेतीसा जु कही जु।।28।।
नर तिर कौ तुछ आयु महूर्त्त। अंतर तू हि जु कहइ अमूर्त।।
उतकिष्टौ वनकौ प्रभु आयु। तीन पल्य तू ही जु कहाय।।29।।
दश लख जाति वनस्पति जेह। प्रत्येका तरु कहियत एह।।
तिनकौ आयु जु उतकिष्टौ जु। भासै दस सहस्र वरषौ जु।।30।।
जघनि जु अंतर एक महूर्त। तू हि प्रकासै देव अधूर्त।।
सर्वभेद तू ही इक कहै। सर्व जीव की रक्षा गहै।।31।।
दश विधि भवनपती जे देव। तेरी वसुविधि करहीं सेव।।
वसुविधि विंतर वसुविधि पूंज। पंच ज्योतिसी भजहि सु तू जु।।32।।
कलपनिवासी कलपातीत। तोहि भजैं तू एक अजीत।।
इद्रांदिक दश भेद जु सबैं। देवा तोहि जपैं अघ दवैं।।33।।
सुरग मांहि अर भवन जु मांहि। इद्रांदिक दस भेद वतांहि।।
योतिष विंतर मैं वसुभेद। इंद्रादिक देवा जु विवेद।।34।।

चव मैं द्वै कै द्वय पद नांहि। लोकपाल अर सचि वन पाँहि।।
चउविधि देवा दशवसु विधी। तोहि जु ध्यांवहि ते हि जु सुधी।।35।।
षोडशमा सुर्ग जु लौं दशा। आगैं अहमिंद्रा इक रसा।।
ऐसे भेद जु तू ही कहै। तो बिनु कौन भवस्थित दहै।।36।।
दश धनुषा काया जसु कही। सो गिरिनारि पती प्रभु सही।।
नेमनाथ जो नियम जु नाथ। यम नियमाशन ध्यान सुसाथ।।37।।
दश अध्याय जु सूत्र तणी जु। तिनमैं चरचा अति हि घणी जु।।
दशविधि साधू आचारा जु। तू जु प्रकासै त्रिभुवनराज।।38।।
जबै जीव की आवै दसा। जिनमत राच करै मन वसा।।
तुव पद कमल तणौं अलि होय। पावै मधु माधुर्य जु सोय।।39।।
दसा अवस्था कौ है नाम। तेरी एक दसा शिव धाम।।
दसा जु कहिये आधी जाति। ते हू तुव भजि पाँवहि जाति।।40।।
तोहि न भंजहि सु वीसा किसे। वीसा ते हि जु तो महि फसे।।
वीसा अणुव्रत महाव्रत उभै। धारहि तू जु कहै इक अभै।।41।।
दसा अणुव्रतधर ही होय। शूद्र समाना कहियत लोय।।
धन्यदसा जे तोहि जु भजैं। धृग वीसा जे तोहि जु तजै।।42।।
दशप्राणा संसारिनि के जु। इंद्री पंच बल त्रय जे जु।।
आउ सासोसास जु दसा। इनतैं रहित करे निजरसा।।43।।
दसधा सम्यक भाषै तू जु। दसधा जीव दयाधर पूज।।
पंचवि थावर त्रय विकलिंदि। समनां अमनां जे पंचिंदि।।44।।
दस कौ पालक तू इक होय। विभु समनां तुव गहइ न कोय।।
एकेंद्री विकलिंद्री सबै। पंचिंद्री अमनां लौ कबै।।45।।
नहिं पाँवहि समकित दसधा जु। समनां कबहु क पाँवहि साज।।
सब ही समनां तोहि न लहै। सुमनां होय र समनां गहै।।46।।
दशविधि ब्रह्मचर्य परकास। दशविधि अब्रह्म कौं तू नास।।
सील बिना नहि पाँवहि तोहि। सील देहु तू जिनवर मोहि।।47।।
दस आकंपन आदिक दोष। तू जु उछेदै राग र रोष।।
दशविधि आलोचन तू कहै। दशविधि मुनिवर तू ही गहै।।48।।

दशलक्षणधारी इक तू जु। दशरथ पूजित जगपति पूज।।
नवद्वार जे रोध करंत। दशम काढि सु तोहि रटत।।49।।
ते साधू पाँवहि तुव वास। वंधन रहित हौंहि अतिभास।।
दसरथ सुत अर तसु पतनी जु। तोहि निहारै लोकधनी जु।।50।।
दशमुख तैं सीता की कला। तू ही राखै रहित जु मला।।
दसावतार दसा तें दूरि। दरसन जोगि अखिल भरपूरि।।51।।
तुव रस रसिया क्षपक जु मुनी। दसमां गुण थी वारम भनी।।
तेरम फरसि हौंहि तुव समा। तू सम करण जु धरण जु रमा।।52।।
दक्ष विचक्षन कौ तू नाथ। दमिपति दमिगति दमक जु साथ।।
तू जु दयाघर देव जिनिंद। तू जु दयाकर राव मुनिंद।।53।।
दक्षन उत्तर पूरब दिशा। पश्चिम ए चउ और विदिशा।।
ए चउ चउ अर ऊरध अधा। दह दिसि माहि तुही इक सुधा।।54।।
दक्षपती दक्षाधिप मित्त। दषिणा दायक सिवसुख वित्त।।
ददा सबौं का एक अनादि। तू ही और सु दीसैं वादि।।55।।
दगावाजि तौकौ नहि लहै। दगडा लूटि न तोकौं गहैं।।
दगा दगी नहिं तेरैं कोय। दत्तव तेरौ सौ नहिं होय।।56।।
दगा विनां सब जीते कर्म। चौड चपाट करै सब भर्म।।
दब तेरै काहू की नांहि। तेरी दव करि कर्म नसांहि।।57।।
दव्यौ जु कर्मनि कै तलि जीव। तूही काढै जगपति पीव।।
दरजन ही अर गरजन कोय। दड़क दड़का तोहि न होय।।58।।
तेरौ सौ दरबार न और। तेरै द्वारि जु दीखैं दौर।।
तो सौ तू ही जु और न पती। दया धुरंधर तू अति जती।।59।।
दणहल लहालर अर वाथोव। चौंलाई गांदल दल जोव।।
सरसौं मेथी आदि अनेक। शाकपत्र खावो नहिं नेक।।60।।
दया नांहि इनके भख मांहि। तू दयाल वरजै सक नांहि।।
हरितकाय तुव दास न खांहि। कंद शाक दल निकट न जाहि।।61।।
दल कहिए पत्र जु कौ नाम। तेरै मत नहिं पत्र जु काम।।
फु नि दल कहिए कटक जु कौं जु। तू जु रहित दल बल छलसौं जु।।62।।

दल तेरै ज्ञांनादिक नंत। दर तोकौं न किसी कौं संत।।
दहे कर्म तैं अष्ट जु स्वांमि। दवे कर्म तोपैं अघकामि।।63।।
दही अष्ट ही पहर जु लीज। दधि तक्रादिक परन गृहीज।।
वसु जामु जु वीतें दधि तक्र। तू जु निषेधौ कर्म जु वक्र।।64।।
दव सम त्रिश्ना भववनि लगी। सर्व जंतु जालन अतिजगी।।
तू जु बुझावै निजरस लाय। तो विनु और न कोय उपाय।।65।।
तू जु दया पर शिव पुर प्रभू। तू जु दमीश्वर अखलित विभू।
दृष्ट सु परमारथ द्वयरूप। निश्चय अर व्यवहार स्वरूप।।66।।
दांन धर्म अधिकारी तू ज। दानव देव करैं तुव पूज।।
दानव पीडि सकै नहिं कभी। जगदीश्वर घटि आवै जभी।।67।।
द्वादस भावन तेरै कोय। द्वादश भावन भावक होय।।
द्वादश भावन अनुप्रेक्षा जु। तिनकौ भावक तू जिनराज।।68।।
द्वादस भाव जु कहिए वैर। तेरे वैर नहीं सब खैर।
निरवैरी तू सबकौ मित्र। पिता पितामह सबकौ पित्र।।69।।
द्वादश तप अर द्वादश व्रत्त। तिनकौ व्यापक तू अति व्रत्त।।
द्वादश संयम नायक पूज। द्वादश अव्रत निंदक तू ज।।70।।
विनु व्रत अव्रत सम्यक्ती जु। पहुचैं द्वादश सुर्ग भकी जु।।
अणुव्रतधारी षोडश लों जु। महव्रत ज्ञानी मुक्ति जु लौंजु।।71।।
नव ग्रीवक लौं विनु निज ज्ञान। जाय कदापि मुनी तपवान।।
अन्य तपी मिथ्या तपधार। द्वादश नाक लगैं निरधार।।72।।
आगैं जब पहुचैं तुव रटैं। तो विनु नाथ न बंधन कटै।।
बंधविडारी तू शिवमूल। निजरस रसिया तू जगचूल।।73।।
द्वादश अर द्वावीस हजार। वरष जु थिति भूकाया धार।।
कोमल पृथ्वी काया जीव। द्वादश वरष हजार जु लीव।।74।।
कठिन धरा के द्वावीसी जु। वरष हजार न बधि जीसी जु।।
इह उतकिष्ट जघनि है महूर्त। अंतर तू हि जु कहइ अमूर्त।।75।।
जघनि थिती वेदनि जो कर्म। द्वादस माहूर्ता विनु भर्म।।
उतकिष्टी थिति वेदनि तनी। तीस जु कोडाकोडि हि भनी।।76।।

सागर मान तुही जो कहै। तो बिनु कौन भवस्थिति दहै।
उतसर्पिणि अवसर्पिण के जु। षट षट काला द्वादश ले जु।।77।।
तिनकी सकल रीति तू कहै। तू ही एक काल विनु रहै।
द्वादश चक्री तेरे दास। द्वादश दोष प्रकृति अति नास।।78।।
राग दोष कौ दूषक तुही। द्वादश चक्री तारक सही।
द्वादश दिन मृत सूतिग होय। विनु अनशन जन मूवौं कोय।।79।।
तुव पद जपि अनशन तैं मुवो। वाकौ सूतिग नांहि जु हुवो।
द्वादश मात्रा बावंन अंक। तू जु प्रकासै देव असंक।।80।।
द्वादश रासि नवग्रह सही। सर्व प्रकासै सर्वज्ञ तुही।
द्वादशांग भासक तू देव। द्वादश भाव हरै तुव सेव।।81।।
द्वादश मास इती संक्रांति। सब खोई तो बिनु धारि भ्रांति।
द्वादशांत है पवन विचार। मंडल मुद्रा गगन विहार।।82।।
योगाभ्यासी तो सम और। दूजौ नांहि जु त्रिभुवन मौर।
द्वादश भानु समा तनु तेज। दीपत तपधारी मुनि जे जु।।83।।
दयापाल मुनि तप जु तपंत। तुव पावे कौं तोहि जपंत।
सब ऊरध लोकहि के सीस। सरवारथ सिधि है जु गरीस।।84।।
तातैं द्वादश योजन मुक्ति। ताकौ नायक तु अति शक्ति।
जगनायक तू शिव कौ नाथ। लोकनाथ तू है बडहाथ।।85।।
लोक मांहि मोक्ष जु सौ थान। नहिं हूवो ह्वै है नहिं आन।
तहां तू जु निति राजै सही। व्यापि रह्यो घटि घटि प्रभु तुही।।86।।
तेरे भक्त जु तोमय हौंहि। लोक छांडि मिलि हैं तोसौं हि।
द्वादश मिथ्यावाद जु जिके। तेरे भक्त न पाँवहि तिके।।87।।
पंचवि थावर त्रय विकलिंदि। फुनि जु निगोद सबै दुखदिंद।।
अमनां पंचिंदी पशु जेहु। बहुरि मलेछ जु खंड गनेहु।।88।।
कुत्सित भोग कुभोग जु बास। ए द्वादश पाँवै नहिं दास।।
द्वादश वाट हुवो हूं देव। तेरौ पथ दे शिव पुरि लेव।।89।।
शिवपुर मोक्ष तणौ है नाम। तू जिन हरि ब्रह्मा शिव राम।।
तू जतिवर है अमित जु धाम। नमो नमो तोकौ निरनाम।।90।।

दाडिम दाख सबै रस त्यागि। तोही मांहि रहै बुध लागि।।
.....।।91।।
दासी दास न तेरै कोय। तेरे दासा सब जग होय।
दांत प्रशांत जु दायक तू जु। दानेश्वर दाता जगपूज।।92।।
दानपती दातार दयाल। तू चउ दान प्रकाश विशाल।।
अन्नदान अर औषधदान। शस्त्र जु दान महासुख थान।।93।।
अभैदान सब जीवनि कौ जु। ए चउ दान भली विधि सों जु।
देवौ भाषै तू जगदीस। कृपण न पावही तोही अधीश।।94।।
मुनि अर श्रावक फुनि अव्रती जु। सम्यदृष्टि त्रिविधि कही जु।।
इनकौं दान भगति तैं करौ। इह जिनआज्ञा निश्चय धरौ।।95।।
अवर दुखित जन कौं करि दया। देवौ दान निरंतर भया।।
ऐसी तू जु कहै जगदेव। तेरी हमकौं दै हरि सेब।।96।।
पात्रदान अर है समदान। करुणादान सकल परवान।।
सब तजिवौ फुनि है बडदान। तू जु प्रकासै परम प्रधान।।97।।
तो सम दाता अवर न ईष। ईश्वर बडदानी जगदीश।।
दाता पात्र के तैं ही भेद। भाषैं श्री जिन भरम उछेद।।98।।
दाता के सपत जु शुभ गुणा। दान विधि नव भेद जु मुणा।।
सब विधि तेरौ आगम कहै। तू विधि भासक कुविधि जु दहै।।99।।
दाग लग्यो मेरे प्रभु एह। विषयनि राचि जु तोसौ नेह।।
दाघ ऊपनौ अति सु प्रचंड। त्रिश्ना कौ हूवो न विहंड।।100।।
मेरौ दाह निवारै तुही। और न दाह निवारक सही।।
द्वारौ तेरौ सौ नहिं और। द्वारै तेरै दीखै दौर।।101।।
द्वारै तेरै सुरपति खरे। द्वारै तेरै फणपति परे।।
द्वारौ तेरौ नरपति भजैं। द्वारौ तेरौ मुनि नहिं तजै।।102।।
द्वारै तेरे नौनिधि परी। द्वारै तेरे संपति खरी।।
द्वारपाल तेरै बहु देव। अरहंत पद मैं सब ही भेव।।103।।
सिद्ध दसा मैं एक जु आप। तू जु एकलौ नंत प्रताप।।
तू साकृति नाकृति द्वै रूप। उभयातम ज्ञानी अतिभूप।।104।।

दाडिम दाख सबै रस त्यागि। तोही मांहि रहैं बुध लागि।।
तामैं दाखिल हौंहि जु वुधा। शुद्ध बुद्ध तू दायक सुधा।।105।।
चउविधि पुरिषा हैं जग मांहि। उत्तम मध्य अधम सक नांहि।।
अधमाधम हैं अति हि निकृष्ट। सब के लक्षण कहहु स्पष्ट।।106।।
दाख समान जिके नर ऊंच। अंतर बाहिज मृदुता सोच।।
ते सरलातम पाँवैं तोहि। तू ही सरल करै प्रभु मोहि।।107।।
नालिकेर सम मध्य प्रवान। ऊपरि कठिन महीं मृदुवान।।
भव अंतरि वैऊ शिव लहैं। बोर सुपारी सम नहिं गहैं।।108।।
वोर समान तिके जगजीव। ऊपरि म्रिदुता मांहि न लीव।।
फु नि जु सुपारी सम अतिदृष्ट। ऊपरि मांहैं कठिन अनिष्ट।।109।।
वोर सुपारी कौ तजि भाव। द्राष होय तोस्यौं लव लाव।।
नालिकेरता हू जब तजै। तब जगजीवन तोकौं भजै।।110।।
अंतर बाहिज शुद्धा मुनी। तै दाख जु सम भाषे धनी।।
दरशन चारित दुहु गुण भरे। वेगि जु तोसौ मिलहि जु हरे।।111।।
अणुव्रतधारी घरबारी जु। अथवा अव्रत समधारी जु।।
तै नालेर समाना सही। अंतर शुद्धा वाहिज नहीं।।112।।
तेऊ मुनि ह्वै जब तुव लहैं। भोग रोग तजि तोहि जु गहै।।
वोर समाना समकित हीन। बहिरंगा व्रत धारहि दीन।।113।।
विनु समकित पाँवै नहिं तोहि। तव परसाद सुरग फल होहि।।
पुंगीफल सम अति ही हीन। नहिं व्रत समकित दोय न चीन।।114।।
ते चउगति संसार जु भमैं। तो बिनु परम धरम नहिं रमैं।।
दाख समान सरल करि मुझैं। बार बार विनऊं कह तुझैं।।115।।
दाज्यो हौं माया की लाय। सीतल तू जु करै सम भाय।।
दाव्यो हौं करमनि नैं घणौ। तू सु छुडाय बहुत कामणौ।।116।।
द्वाविंसति जु परीषह सहैं। ते साधू तोकौ उर वहैं।।
तुव परसाद क्षपक लहि क्षेणि। पाँवहि केवल जो शिव श्रेणि।।117।।
दशमांथी द्वादशमौ थान। लहही केवलदायक भान।।
लंघि जु गुणठाणा सब प्रभू। पाँवहि मुनिवर तोहि जु विभू।।118।।

तोहि ध्याय त्रस थावर मांहि। रुलहि न कबहू संसय नांहि।।
द्वाविंसति सागर छठै जु। नरक आय पावै न जपै जु।।119।।
घम्मादिक सातौं नरका जु। तोहि ध्याय पावैं न विथा जु।।
द्वाविंसति सागर सो लहैं। सुरगि पाय थिति फुनि भव गहै।।120।।
तो विनु नव ग्रीवां लौं गयो। तप करि सुरग गती लहि चयो।।
द्वात्रिंसत लक्षण के धनी। तोहि जु ध्यांवहि हर हरि मुनी।।121।।
द्वात्रिंसत दंता किह कांम। रसनां सफल भजै जो राम।।
द्वात्रिंसत लख जंगम जाति। द्वापंचासत थावर भाति।।122।।
इहु चौरासी लख तैं काढि। निजगुण भाव सु देहु गुणाढि।।
तो विनु कोंन उतारै पार। तू ही जिनवर है जगतार।।123।।
नवहि अनुत्तर पंचानुत्त। चौदा सरवारथ सिधि जुत्त।
नौमैं बत्तीसा उदधी जु। आयु जु भाषै तू जु सुधी जु।।124।।
पाँच मांहि इक मैं तैतीस। सरवारथ सिधि है जु गरीस।।
विजयादिक नैं जघनि बतीस। उतकिष्टी इनमैं तैतीस ।।125।।
ऐसे भेद जु तू ही कहै। सर्वरीति तू ही सरदहै।।
द्वाचत्वारिंसत प्रकृती जु। नामकर्म की तैं जु हती जु।।126।।
चौदह पिंड द्विगुण विनु पिंड। ए सब बैयालीस प्रचंड।।
तू जु विहंडै देव अखंड। तोसौ और न जगि परचंड।।127।।
तेरे मंदिर द्वापंचास। नंदीश्वर में अदभुत भास।।
तिनमैं नादि अकतृम बिंब। परम पुनीत ऋषभ सम लंब।।128।।
द्वापंचासत लाख जु जाति। थावर काया अतिदुख ताति।।
ते नहिं पाँवहि तेरे दास। तू परमेश्वर परम प्रकास।।129।।
द्वाषष्टि जु मारगणा भेद। चौदह मूल विभेद अछेद।।
तू जु प्रकासै गुणठाणा जु। मारगणा सब तैं जु भणा जु।।130।।
द्वासप्तति जे हौंहि जु कला। सर्व विभासै तु बिनु छला।
सर्व कला तैं न्यारौ देव। कलातीत जगजीत अछेव।।131।।
द्वासप्तति लख पूरब आय। अजितनाथ की वहुरि न काय।।
मोकौं अजित करौ अजितेश। हरहु हमारे दु:ख कलेस।।132।।

दाट्यो मोकौं मोहैं अती। तू अब वाकौ दाटै पती।।
तव जानौं तेरे घरि न्याव। नांतरि तू कहिवै कौ राव।।133।।
दारु मांहि हुतभुज ज्यौं सही। देह मांहि चेतन त्यौं रही।
जड़ चेतन कौ भासक तू जु। दारुण कर्म विदारक पूज ।।134।।
दारा पुत्र न भ्राता कोय। मात तात तेरै नहि होय।।
तू एकाकी वीर अनादि। तो बिनु सकल सु दीसै वादि।।135।।
दास उधारक तू जु उदास। तेरे दास लहैं सुख रास।।
शांत दांत तू प्रभु उपशांत। दानी तो सम और न कांत।।136।।
दाढ़ मांहि यम की हूँ रहूँ। तूं ही काढ़ै अति क्या कहूँ।।
दाण न मापा तैरै कोय। राह चलावा तू ही होय।।137।।
दात उदात तू ही परचंड। कृपण नहीं तू अचल अखंड।।
दादि देणहारौ इक तू ज। दाखिल तो मां है सब पूज।।138।।
दास तिहारौ होवै जिको। जगत पासि काटै ही तिको।।
मोकौं करि निज दास जिनिंद। मेटि कल्पना सकल मुनिंद।।139।।
तू दारिद्र हरण भगवंत। संपतिदायक परम प्रसंत।।
बहुतनि कौ दारिद्र तैं हर्‌यो। मैं जु दरिद्री उर नहिं धर्यो।।140।।
डाक सपदि ततकाल जु सही। झिगति झिटिति एकारथ लही।।
वेगि सीघ्र ए नाम प्रसिद्ध। तू ही वेगि उधारै सिद्ध।।141।।

(सोरठा)

दिग्वासा तू देव, तू जु दिगंबर है सही।
करैं भव्य तुव सेव, जोगरूप तू जगप्रभु।।142।।
तू डिग पल सु जान, डिगाधीस द्विगमय विभू।
जगत जेष्ट भगवान, तू ही एक दसौं दिसा।।143।।
दिन दिन तेरौ ध्यान, छिन छिन तोहि न वीसरैं।
तव पावैं तुव ज्ञान, और उपाय न दूसरौ।।144।।
दिन ढूलह तु देव, सदा जु कमलापति तु ही।
दै हमकौं निज सेव, करिजु आपनौं जिनवरा।।145।।

द्विज है तोहि जु स्वामि, जिन मूढ़नि ध्यायौ नहीं।
कहिवे के द्विज नाम, द्विजता उनमें नांहि कहुँ।।146।।
द्विज पंछिनु कौ नाम, साधुनि हूँ कौ द्विज कहौ।
त्रयी वर्ण द्विज धाम, तोहि जपैं ते ही द्विजा।।147।।
द्विविधा दूरि वहाय, जे तोसौ लव लावहीं।
ते हौंही शिवराय, द्विविधा तैं तू दूरि है।।148।।
तू द्विरुक्त नहि तात, जब देखें तुव ही नवो।
द्विणुकादिक जड़ जात, तोमैं कबहू नां मिलै।।149।।

(भुजंगी)

सु दिव्य ध्वनि दिव्य रूपा जु तेरै। तू ही दिव्य भाषापती धर्म प्रेरै।।
तु दिव्य औषधी दिव्य दिग्वस्त्र तू ही। तू ही दिग्गजो है दिनेशो प्रभु ही।।150।।

(अरिल्ल)

द्विप हस्ती कौ नाव तु ही द्विप दाय है।
ऐरावत द्विप आदि तोहि भजि पाइ है।।
द्विरद कहौ द्विप कहौ हस्ति हू भल कहौ।
एक जिनिंद हि ध्याय सर्व वस्तु हि गहौ।।151।।
त्रिभुवन मंडन द्विरद दास तव जो भयौ।
सुरगलोक सौ गयौ मनुज ह्वै सीझयो।।
नर ह्वै जासी मुक्ति नहीं फुनि जन्म ले।
तेरे ही परसाद जन्म जुर जल जु दै।।152।।
मरुभूति द्विज एक मरि जु हस्ती हुवो।
हस्ती होय जु व्रत्त धारि वह फुनि मुवो।।
वारम कलप सु गयौ तत्त्वमय हौ जिको।
चयो तहां थैं देव मनुज हूवो तिको।।153।।
क्षेत्र विदेह मंझार नृपति कुल उपजियो।
सहस रश्मि तसु नाम मात पितृ हि दियौ।।

राज करै मुनि होय सुर्ग सोलम लयो।
चयौ तहां थी बहुरि मनुजपति सो भयौ।।154।।
पश्चिम क्षेत्र विदेह चक्री पद पाइयौ।
वज्रनाभ तसु नाम जननि उर लाइयौ।।
छहौं खंड प्रतिपालि राज त्याग्यौ सही।
चौथी ग्रीव सुगयौ सौख्यगति जिह लही।।155।।
षटविंसति उदधी जु भोगि सुखसों चयौ।
क्षेत्र विदेह जु पाय फुनि जु नरपति भयौ।।
तजिकैं राज सु भार फुनि जु मुनि होयकैं।
लांतव सुर्गि सु इंद हुयो निज टोहिकैं।।156।।
चय कें पारस भयौ नाथ सब लोक कौ।
तारे जीव अपार राव सब थोक कौ।।
गयो लोककै शिखरि बहुरि नहिं आवहीं।
कहां हस्ती कहं नाथ दसा यह पावही।।157।।
तू जिनवर समरच्छ अणूतें गिर करै।
तेरी महिमा नाथ भविक निज उर धरै।।
तू गजकुवर उद्धार करण जगदीस है।
गय सु कुमार उतार तु ही जो ईस है।।158।।
चंद्रतणौं द्विजराज नांव आगम कहै।
तू द्विजराजपति सु तोहि मुनि सरदहै।।
दिक्क भयौ हूं नाथ जगत के भ्रमण तैं।
तू ही तारै पार जनम जर मरण तैं।।159।।
दिल की सब ही बात तू जु जान्यां सही।
कहूं कहा हूं तोहि तू जु तारण मही।।
दृष्टा तेरौ नाम प्रमाणाधीश तू।
नय परमाण प्रकास एक जगदीश तू।।160।।
सब दृष्टांत बताय गुरु इक तोहि जी।
गावैं तन्मय होंहि सु सबमैं टोहि जी।।

तू ही दृष्टा दिष्टांत जु द्रष्टांतो विभू।
सब उपमा तौकौ जु अनूपम तू प्रभु।।161।।
दीनानाथ अनाथ दीनबंधु तु ही।
दीनपती दातार दानपति तू जु ही।।
दीरघ दरसी और तू ही दीरघ दमी।
दीप्तो दीपतिवंत तू जु अद्‌भुत शमी।।162।।

(चौपई)

दीप्त सु जांवूनद द्युति तू जु। दीप्तीवान दीपक जग पूज।।
दीप्त सुतप धारी ध्यावंत। तोही कौं भजि शिव पावंत।।163।।
द्वीपायन मुनि तुव मत भूलि। क्रोध करै द्वारावति धूलि।।
करी परम नगरी ही जिको। क्रोध थकी सीज्यौं नहि तिको।।164।।
द्वारावति पति तोकौं ध्याय। तो सम नाथ होयगौ राय।।
दीत तिहारौ सेवग सही। चंद दीत सम योतिष नहीं।।165।।
दीनारादिक सब ही त्यागि। तोही मांहि रहै बुध पागि।।
दीसै तू इक लक्ष्मीवान। अवर सबै निरधन परवान।।166।।
दीनैं तैं रतनत्रय देव। साधुनि कौ तारक तुव सेव।।
दीब नांम हैं धीज विख्यात। तुव नामैं अगनी बुझि जात।।167।।
तुव परसाद सरप ह्वै माल। नीली कौं हूवो ततकाल।।
सिंह जु स्याल समानां होय। तेरे भगत न पीड़ैं कोय।।168।।
हाथी मारत आवै जहां। तुव जन कौं पीड़ै नहि तहां।।
विष निरविष ह्वै तहँ संचरै। अमृत रूप जहां तू धरै।।169।।
राव न पीड़ै चोर न पीड़। राक्षस साझिनि एक न नीड़।।
जगजीवन तू जिनि घटि बसै। एक न आपद तिन कौ कसै।।170।।
दीजे दान र लीजे नाम। दीठि राखि जे सकल विराम।।
लेवौ नाम जिणिंद तणों जु। देवौ दान भली विधि सौं जु।।171।।
करिवो योगाभ्यास अभ्यास। तजिवौ मायाजाल विलास।।
हृदय कमल मैं चेतनि दीप। पिंड जु मांहि उदधि अर दीप।।172।।

इह तेरी आज्ञा जिन सुनी। निज अनुभूति परम तिन मुनी।।
दीयौ दान जपे जिन नाथ। तिन ही पायो शिवपुर साथ।।173।।
दीरघ सोच न तेरे कोय। सब तौकौ भासी जो होय।।
दुरगति हरण एक तू देव। दु:खहर सुखकर तेरी सेव।।174।।

(सोरठा)

दुरगति तैं तू ही जु, काढै मोकौ और को।
तू शिवपुर कौ बीज, भुक्ति मुक्ति दायक तु ही।।175।।
मोहि दुनोति जु मोह, अर्थ दुनोति जु दुख करै।
काम लोभ छल कोह, मांन र मतसर सब बुरे।।176।।
मोही न लहैं तोहि, लोभी कामी ना लहैं।
इनतैं रहित जु मोहि, करहु जिनिंद दयाल जी।।177।।
दुर्योधन कुर राव, दुस्सासन इत्यादि सौं।
चूके अति ही दाव, तोहि न ध्यायौ सांइया।।178।।
दुर्जनता कछु नाहिं, दुर्जन तोहि न पावही।
दुविधा नहिं तो मांहि, नांहि दुभांति न तो विषै।।189।।

(सवैया)

दुघण समान तू जु कर्मगिर दाहिवै कौ,
दुघण कहावै वज्र गिर कौ विनास जो।।
दुराघर्ष देव तू ही नाव इहै धीठ कौ जु,
तौ समान धीठ कौं न कांटै जमपास जो।।
दुदंभी सबद तेरै वाजै वाजै नेक कोटि,
तू है दिव्य भाषापति सार वलरास जो।।
द्युति कौ प्रकास तू ही द्युति कौ धरनहार,
दुरति कौ लोपन दुरतिहर पास जो।।180।।
दुरति नहीं जु तू जु दुर्यौ नांहि कभी पूज,
दुरक कौ हरनहार दुष्टनि तैं दूर जो।।

दुष्ट नांहि पावैं जाकौ दुष्टता न जाकै मांहि,
दुरितारिहर देव गुणनि कौं पूर जो।।
द्युतिवान जाके आगे अद्युति से लागै सब,
देवनि कौ देव है सकल अघ चूर जो।।
अैसो तू अनंत दुति द्युमनाभ द्युमजीत,
द्युम कहै कंचन कौं तेरै धन भूर जो।।181।।
द्युम्न मैं न द्युति अैसी जैसी द्युति तू जु धरै,
प्रद्युमन नाथ तू न द्विणुकादि रूप है।
तेरै नांहि अणुमात्र परद्रव्य लेस कभी,
तू है चिदघन ज्ञान सुखनि कौ भूप है।।
दुग्धोदधि जल तैं जु न्हायो तू अनादि शुद्ध,
दुग्ध दधि घृत रस त्याग कौ निरूप है।
अमृतश्रवण क्षीरश्रवण सु ऋद्धिधार,
मुनी तोहि ध्यावैं नाथ तूही जो अरूप है।।182।।

(सोरठा)

दूठ न तोसौं कोय, दूठ करम तैं दंडिया।
तू एकाकी होय, सकल वर्गणा दलमली।।183।।

(सवैया)

दूरि नांहि पासि सदा दूर दरसन देव,
दूर रहै सबसौ न दूरस्थ है कभी।
दूरगम्य दुराराधि नांहि भव्यजीवनिकौं,
अभव्यनिकौं दूर है न पावैं वै जभी तभी।।
दून दून तेज जाकौ देखिये जू निति निति,
नंत काल बीते तौऊ जरा की न बात भी।
द्यूत मांस मद्य वेस्या चोरी औ सिकार नारी,
इनकौ विहंडक हौ होहिगौ रहै अभी।।184।।

दूत नांहि जाकै अर दूत पण एक नांहि,
काहू सौं न संधि युद्ध एकलौ अनंत सो।
दूख कहै पापकौ न दूती पाँवै जाकौं कभी,
दूजि नांहि जाकै मुनिराजनि सौं संत सो।।
दुर्जोधन दुस्सासन जाकौ भूलि सठ भये,
भारत में पायौ नास ध्यायो नंहि कंत सो।
पंडु के जु पुत्र धीर जाहि जपि पार भये,
दूरदरसी जु देव अंतक कौ अंत सो।।185।।

(सोरठा)

द्यूत समान न पाप, तीन लोक में दूसरौ।
द्यूत दियो संताप, धर्मपूत हू कौ महा।।186।।
द्यूत जु द्रव्य विनास, धर्मनास सुखनास इह।
द्यूत जु झूठ प्रकास, यातैं रहित करौ प्रभू।।187।।
छंडो द्यूत जु दोष, इह तेरी आज्ञा कहै।
तबहि होहुगे मोख, हिंसा चोरी झूठ सौं।।188।।
दूजौ तू जु सदा जु, माया जाल प्रंपच तैं।
नहि दूजौ जिनराज, दरसन ज्ञान जु चरन तैं।।189।।
देवल तेरौ देव, प्रतिमा तेरी जहं थपी।
निति प्रति जे नर सेव, करहि धन्य ते जगत मैं।।190।।
देवल देव अधार, एक देव तू ही सही।
पावैं मोख दुवार, द्वारो तेरौ जे नमै।।191।।
देव न वीजौ और, और न वीजौ देवला।
तू त्रिभुवन कौ मौर, सर्वेश्वर जगराय तू।।192।।
अवर देव किस कांमि, कौन कांमि पर देवला।
तेरौ देवल नांमि, धोकै सुर नर मुनिवरा।।193।।
देस कोस धन धाम, नांम गांम सब त्यागि कै।
एक धरैं उर राम, रमि जु रह्यो जो सबनि मै।।194।।

देनहार जिन सौ न, और सु दीसै दूसरौ।
जा पद में अघ कौ न, लेश जु दीसै क्वापि हू।।195।।
देहु देहुरा ऐहु, देव जु आतम राम है।
तातैं योगी नेह, करैं तवै निज पद लहै।।196।।
देह देहुरा नाथ, देव जु चेतन चिन्ह कौं।
तव पाँवै वडहाथ, तेरौ दिढ शरणौं गहैं।।197।।
देवल प्रतिमा ध्याय, प्रतिमा तेरी तो समा।
गनै जवै मुनिराय, तव पावै निज देहुरा।।198।।
जे अज्ञानी जीव, देवल प्रतिमा नहिं नमैं।
ते पावैं नहिं पीव, निज देवल निज देव कौ।।199।।

(सवैया)

देवनि कौ देव अर देव है नरनि कौ जु,
थिरचर जीवनि कौ देव है वहै प्रभू।
देवनाथ देवराय देवपति नांम जाकौ,
मुनिनि कौ नाथ वहै अणू मांहि है विभू।।
देवाधिदेव देव देशना अधार जाकी,
देशनां उलंघि दुख लहैं सुख नां कभू।
छांडि जिनदेव जे भजैं जु सठ आनंदेव,
पाँवै नाहि मोखद्वार पाँवै अतिनाश भू।।200।।
देहो जिनराय मुझैं आपुनौं जु पंथ महा,
और नांहि जाचौं देव छांडि इक तोहि जी।
वोकौ देहुरौ जु नाथ तेरौ ही जिनिंद देव,
प्रतिमा निहार तेरी तो समान सोहि जी।।
देखूं आप मांहि तुझैं देखूं सब लोक मांहि,
मोखमैं विलोकूं तोहि अैसी दृष्टि मोहि जी।
दे जु निजरूप लेखूं सबै ठौर तोहि देखूं,
तो विनां न आंन पेखूं आपुमांहि येहि जी।।201।।

देस त्यागि कोस त्यागि रोस त्यागि दोस त्यागि,
तोही मैं रहूं जु लागि तेरौ ही जु होइ जी।
छांडौ माया मोह सब छांडू काम लोभ तव,
शुद्ध रूप देखूं तेरौ ध्यान मांहि जोइ जी।।
देहतै जु नेह छांडि कुटम सनेह छांडि,
तोहीतैं सनेह करि तजौं दोष दोय जी।
हरख विषाद त्यागि शुभाशुभ सवै त्यागि,
तोहीकौ अराधूं नाथ तू है एक कोय जी।।202।।
देह नांहि जीव कभी जीव नांहि देह होत,
अैसौ भेदज्ञान एक तू कहै महाप्रभु।
तू जु है विदेह देह देह नांहि पंच जाकै,
भयो नांहि काहू तै अनादि कौ जु है स्वभू।।
देशपती देवपती लोकपती सर्वपती,
देशव्रत महाव्रत भासक वहै अभू।
देशकालक्षेत्रनि कौ देसक है वही देव,
द्रव्य षट्भेद कौ प्रकासक सही विभू।।203।।
देखिवौ तिहारौ एक और देखें कौन कामि,
देनहार मोक्ष कौन और दीषै कोय है।
देह इहै झूठी नाथ तेरै नांहि देह कभी,
पंच देह मांहि कोऊ कहू न सोय है।।
देहधारी हौ जु पूज देहतैं रहित तू ज,
करि जु विदेह मोकौं तोतैं सब होय है।
देणदार पुग्गलकौ हूवो हूं अनंत नाथ,
तूही ऋण खोवै मेरौ तेरी वड खोय है।।204।।

(सोरठा)

देवर सुत सम होय, भावज जननी सम गनी।
तनुजा तुल्य जु सोय, अनुजवधू जैठानि कै।।205।।

इह तेरौ श्रुति नाथ, भाषै धर्म विचार सहु।
तू तारै वड हाथ, पर दारा पर धन तजै।206।।
द्वैताद्वैत न कोय, तेरे एक न कल्पना।
तू उभयातम होय, द्वैताद्वैत सवै तु ही।।207।।

(सवैया)

दैव एक तू ही और दैव नाहि दूजौ कोऊ,
देव बिनु और कोय जग में न आसिरौ।
दैव कहैं पूरव उपारजित कर्मनि कौं,
तोही तैं कटै जु कर्म और कौऊ ना सिरौ।।
दैत्य नांहि पीड़ै अर नाहीं पीड़ै देव कभी,
दैन्यता न पीड़ै जिने जिनके तू है थिरौ।
दैव दैव किए कहा सूर होय तोहि जपै,
तबै मोक्ष पावै और नाही ह्वै जु भौ फिरौ।।208।।
दोषहर दुरकहर दारिदहरण तू ही,
दोघांचीत नांहि जाकै शुद्ध रूप भाव है।
दोषाकर चंद नाम चंद तेरौ है गुलाम,
द्योति कौ निवास तू भवोदधि की नाव है।।
छोड़ दिन जगत की साहिबी है लोकनि को,
तेरी साहिबी जु नाथ अटल अदाव है।
दोषानाम रात्रि कौ है निशाकौ निवारक तू,
मायानिशि नंत हरी अैसो दिनराव है।।209।।
दोहरौ अनंत काल कीयौ मोहि कर्मनि तैं,
ताकौ निरधार तू जु जानैं हौं कहा कहूँ।
दोय अति दीये मोकौ रुल्यौ हौं जगत मांहि,
आपनौ सुभाव भूलि पर में धरी अहूँ।।
दोबसम मैं जु नाथ खुर पाछै लागे विधि,
तो ही तैं वचाव मेरौ और कौन कौ गहूं।

अब तौ छुड़ाय हरि करुणाकौं पुंज तू ही,
एक निजभक्ति देहु और कछू ना चहूँ।।210।।

(सोरठा)

दोय परिग्रह भेद, बाह्याभ्यंतर दुखमई।
त्यागै मुनि सब खेद, दस चौदस सब भेद जे।।211।।

(सवैया)

दोय रूप एक तू ही ज्ञान दरसन रूप,
दोय नै प्रकास देव निश्चै व्यवहार है।
दोय पद लिए तू ही अरहंत सिद्ध नाम,
आकृति निराकृति अनादि अविकार है।।
दरसन मोह अर चारित विमोह दोऊ तेरै
नांहि साता औ असाता निरधार है।
तैजस र कारमाण दोऊ नांहि तेरै नाथ,
भेदाभेद रत्नत्रय तेरैं ही अधार है।।212।।
निश्चय और विवहार दोय समकित भेद,
तैं ही जो प्रकासे और भासक न दूसरौ।
उपशम समकित उपसम चारित है,
दोय उपसम भाव भेद ए तु मे हरौ।।
द्रव्य भाव चारित कौ भेद तैं विभास्यौ देव,
द्रव्य भाव आस्रव र बंधन तैं तू परौ।
द्रव्य भाव संवर औ निर्जर सु मोख तूही,
दोयरूप देव तूही एक है अभै करौ।।213।।
प्रथमोपशम और द्वितीयोपशम भेद,
दोय ही जु श्रेणि फुनि क्षपकोपसम है।
क्षपक धरैया मुनि वाही भव लेहि मोख,
उपसम वारे साधु नुत्तर पदी गहैं।।

दोय बार करण हैं दरसन चारित के तीन,
तीन भेद ताके तू ही एक एक है।
मिथ्यात के अंत नादि मिथ्याती मिथ्यात छांडि,
करि करणत्रयी कै अंत तोहीकौं सरदहै।।214।।
सप्तम के अंत फुनि श्रेणि कौं सुमुख होय,
अधोकर्ण करि और अष्टमें जु जाय है।
तहां जाय दूजौ करणादरै अपूरब जो ति,
हां निज रूप ध्याय शुद्ध रूप पाय हैं।।
नौंमी भूंमि जाय फुनि तीजौ अनिवृति कर,
तहां एक परम दसा मैं लव लाय है।
तीन कर्ण चारित्रके दूजें तैं बखाने नाथ,
एइ तीन नाम आदि समकितके गाय है।।215।।
प्रथमांत सम्यक के सप्तमांत चारित के,
दोय चार करणत्रयी कौ भेद तैं कह्यौ।
दोय रूप धर्म भेद मुनि अर श्रावक को,
तेरह प्रकार वारा व्रत तोही तैं गह्यौ।।
त्रेपन क्रिया कौ भेद श्रावक की रीति सब,
जलगालणादि भेद तोही तैं सरदह्यौ।
अठबीस मूलगुण उत्तर चौरासी लाख,
दस मूल धर्म जोगीश्वरनि कौं तैं चह्यौ।।216।।
दोय परमाण के जु भेद तैं बखानै नाथ,
प्रतखि परोखि ज्ञान सोइ परमाण है।
ज्ञान प्रमाण तीन अवधि मनपर्जै जो,
केवल अंनतू ज्ञान सोई जग भाण है।।
अवधि मनपर्जै ए दोऊ विकलप सिद्धि,
मूरतीक जांनैं सोई सोचिकै जु जाण है।
केवल अनंत भास ता समान नांहि कौऊ,
जाके आगैं और ज्ञांन गौण ही बखान है।।217।।

अवधि के भेद दोय भवप्रति गुणप्रति,
भवप्रति देव अर नारकीनि कै सही।
गुणप्रति गुण तैं प्रगट ह्वै जु नर तिर,
जनम के मांहि इह आज्ञा सब तैं कही।।
अनुगामिनी जु आदि षट् भेद तैं ही भाषे,
अवधि के तीन फुनि नादि श्रुति तैं गही।
देसावधि सर्वावधि परम अवधि तीन,
दोय षट् तीन हद तोहीतैं सरदही।।218।।
मनपरजै जु ज्ञान दोय भेद ताके तैं ही,
भाखे ऋजुमति औ विपुलमति नाथ जी।
केवल कौ एक भेद नांहि जामैं दूजो भेद,
हैं सब रीति भांति कहै तू अनाथ जी।
परतक्षि ज्ञान के कहे जु एइ भेद तैं ही,
तू ही मति श्रुति दोय भाषक सु साथ जी।
इनकौं परोक्ष कहै वनकौं प्रतछि कहै,
तीन सै र षटंतीस मति तेरै हाथ जी।।219।।
दोय भेद श्रुति के जु द्रव्यश्रुति भावश्रुति,
द्रव्यश्रुति द्वादशांग आगम विचार है।
भावश्रुति ब्रह्मरूप आतम अनंत धांम,
भावश्रुति देखि मुनि हौंहि भव पार है।
द्रव्य सूत्र श्रद्धा करि भावसूत्र हिएं धरि,
इहै तेरी देसना सकल श्रुति सार है।
दोय भेद द्रव्यसूत्र वाहिज प्रविष्ट अंग,
सबै श्रुति सार कौ विचार तू अधार है।।220।।
दोय दोष नांहि तेरै राग दोष क्कापि काल,
इष्टानिष्ट दोऊ भेद नाहिं तो मैं देखिए।
हरष विषाद नांहि शुभाशुभ नांहि कहूँ,
जनम मरण नांहि पुग्गल न पेषिए।।

अणूं खंध दोऊ नांहि सुर्ग मोक्ष दायक तू,
भुकति मुकति मूल अत्रामुत्र लेषिए।।
विषै औ कषाय दोऊ ए अनर्थ पुंज नाथ,
इनतैं छुड़ाय मोकौं तू ही जो विसेषिए।।221।।
कल्प और कल्पातीत दोऊ भेद तैं ही भाषे,
कलप कहांवैं सुर्ग कल्पातीत ऊपरा।
षोडस कलप नाम आगैं कल्पातीत धाम,
नव ग्रीवक पंच नुत्तर शिवंकरा।।
इंद अर प्रतिइंद चऊ काय देवनि मैं,
तू ही जोबखानै दोय रावल सुरासुरा।
सुर औ असुर के बखानै सब भेद तू ही,
एक देखिए जु गल रूप वे धरा।।222।।

(चौपई)

पयपित औ इतर सु भेव। दोऊ तू ही भाखे देव।।
कर्म भूमि अर भोग सु भूमि। तू ही प्रगट कहै सब भूमि।।223।।
थावर जंगम दोउ भेद। तिनकौ रक्षक तू बिनु खेद।।
सूषिम बादर जीव अनेक। सैनी और असैनी केक।।224।।
नित्येतर द्वै भेद निगोद। तू ही प्रगट कहै जिन मोद।।
साधारण प्रत्येक विभेद। सुप्रतिष्ट अप्रतिष्टक भेद।।225।।
भोग कुभोग भूंमि के भेद। आरज म्लेच्छादिक वे छेद।।
सम्यक मिथ्या हेय अहेय। तू ही प्रगट करे सब ज्ञेय।।226।।
धर्म अधर्म जीव जड़ भेद। भव्य अभव्य जु दोय विभेद।।
जंगम थाबर दोय स्वरूप। तू सब नायक है जु अरूप।।227।।
जगथिति शिवथिति सब तू कहै। तू जु अवेदो प्रगट सु वहै।।
भववासी शिववासी दोय। भव्याभव्य सु भेद जु होय।।218।।
शिववासी मैं कोइ न भेद। भववासी नैं है बहु खेद।।
ग्राह्याग्राह्य सु होय मिथ्यात। तैं ही निंदे अविधि विख्यात।।229।।

एकेंद्री लैं अमनां लगैं। एक अग्राह्य मिथ्यात ही जगैं।।
ग्राह्य तणे जे पाँचों भेद। तैं ही निंदे जगत निषेद।।230।।
सादि अनादि मिथ्याती दोय। तैं ही प्रगट कहे जगि सोय।।
नादि काल लौं अब तक जिनैं। समकित परस्यौं नहि हैं तिनैं।।231।।
नादि मिथ्याती तिनि तू भनैं। तो बिनु कौंन मिथ्यात जु हनैं।।
समकित उपसम फरसि र गिरै। चढ़ि सिवान धरती में परै।।232।।
सादि मिथ्याती कहिए बनैं। समकित पाय कर्म जे हनैं।।
ए सब सम्यक मिथ्या भेद। अर मिश्र जु मैं द्वै रस वेद।।233।।
तू ही सब कौ प्रगटक प्रभू। साधु तुझी तैं जानैं विभू।।
दोय श्रेणि विजयारध तणी। दक्षण उत्तर तैं ही भणी।।234।।
चेतन और अचेतन रत्न। तैं ही भाषे जिन सब यत्न।।
चक्री अर्धचक्री द्वै भेद। तैं ही भाषे सब जग वेद।।235।।
हलि नारायण दोन्यौं हि तू। अैसौ जग मैं नांहि जु मितू।।
शुद्धाशुद्ध विभेद विचार। तू ही सकल करे निरधार।।236।।
नित्यानित्य विभेद जु सबै। तू ही प्रगटा सब तुव फवै।।
द्वैताद्वैत जु भेदाभेद। एकानेक अछेद अभेद।।237।।
अस्ति नास्ति प्रकासक तू ज। लीनालीन विभासक पूज।।
रूप अरूप तु ही सब रूप। तेरी तू ही जु जांनैं भूप।।238।।
दोय उभै जुग जुगल द्वि कहौ। द्वौ दै वे वि युगम सरदहौ।
द्वंद द्वैत एकार्थ जु सही। इनकौ प्रथक जिनिंद जु लही।।239।।

(अरिल्ल)

दौर्जन्यादि विभेद नांहि तोमैं कहूं।
दौस्थित्यादिक नांहि नांहि तोमैं अहूं।।
दौर्गत्यादिक डरक एक टारक तु ही।
दौवारिक दरवान नांहि तैरै सही।।240।।
द्वौ भेदौ तुव मांहि दौर तेरौ घणौ।
दौलति कौ तू नाथ नाभिराजा तणौं।।

द्वौ लोकौ जु सुधार तुही जो एक है।
अद्‌भुत अतिगति नाथ तुही विनु टेक है।।241।।

(सोरठा)

दंभ विवर्जित देव, द्वंद रहित भासै प्रभु।
दंभ त्यागि तुव सेव, करैं तिके नर पार ह्वैं।।242।।
दुंदुभि वाजे वाजि, ध्वनि जु ह्वै रही जासु के।
तू ही एक सु गाजि, वैठौ सब के ऊपर।।243।।
दंपति कौ नहि भेद, तू एकाकी रमि रह्यो।
तू वेदनि कौ वेद, स्त्री की तेरे बात नां।।244।।
दंभ नाव पाखंड, छंद नाव विकलप तणौं।
तेरे नांहिं अखंड, ए कोऊ विपरीतता।।245।।
दंपति नर नारी जु, जोड़ौ कहिए दोय कौ।
तू दंपति नारी जु, सेठ सेठणी तारिया।।246।।
दंपति सील निधान, कृश्न शुकुल दोऊ पखा।
तैं तारे भगवांन, तू दंपति तारक सही।।247।।
दंती दायक तू जु, दंति रहित तू ही प्रभु।
दंत तिहारे पूज, सरद चांदिनी तैं भलैं।।248।।
दंगल वासी साधु, सब तजि तोही मैं लगे।
तेरी करै अराध, तन मन धन सब वीसरे।।249।।
दंत जु धांवन जोगि, दोय महूरत दिन चढ़ें।
मुनिकौं होय अजोगि, श्रावक कौं करिवौ सही।।250।।
द कहिए श्रुति मांहि, नांव कलत्र विख्यात है।
तैरे नारी नांहि, नांहि सु कोऊ कल्पना।।251।।
द आगम मैं ठीक, छेद विषै कहिए प्रभू।
तू छेदै जु अलीक, छेदन तेरै एक नां।।252।।
दान तणौ है नाम, द कहिए आगम विषै।
तू दानेसुर राम, दान प्रसंसक तू सही।।253।।

दान च दाता कौं जु, द कहिए पुस्तक विषै।
तेरै एक न सौं ज, अर दाता सब लोक कौ।।254।।
तेरी सी नहि सौंज, तो सौ दाता नांहि को।
तू ही दे हमकौं जु, रतनत्रय की गांठड़ी।।255।।
दंग नगर को नांम, नगर तिहारौ सब सिरै।
तू नागर शिव धाम, तू है एक शिवंकरा।।256।।
दद्दा पासि दु शून्य, अंतिम मात्रा वारमी।
तू सब मांहि सु पुन्य, सब मात्रा तो ही नषैं।।257।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

दया कौ निधान देव दानपति दाता एक,
दिन दिन तेरौ जस अधिकौ गुरु कहैं।
दीनानाथ दीनबंधु दुष्टनि तैं दूर तू जु,
देशव्रत महाव्रत तोही तैं व्रती गहैं।।
देस देस कीरति सु छाय रही तेरी नाथ,
दैव दैन्यता वितीत तोहीकौ यती चहैं।
दोषहर दुरकहर दौलतिकौ दायक तू,
दंभ बिनु ध्यान तेरौ शून्य बिनु को लहैं।।249।।

(दोहा)

दौलति तेरी शास्वती, और न दौलति कोय।
निज सत्ता कमला रमा, पद्मा लक्ष्मी सोय।।260।।

इति श्री दकार संपूर्णम्।



आगे धकार कौ व्याख्यान करे छै—

(श्लोक)

धर्मारामं धराधीशं, ध्यानविज्ञानभूषितं।
ध्यातारं योगमार्गस्य, धिषणा धरमीश्वरं।।1।।
धीश्वरं धीरशमीशानं धीरं गंभीर शासनं।
धुरंधरं विधूतारिं, धूम्रमार्गादिदूरगं।।2।।
ध्येयं मुनिगणैर्वीरं धैवंतांदिप्रकाशनं।
अधोमध्यलोकेशं धीरधौरेयगोचरं।।3।।
धौतरागादिदोषौघं ध्वसकं मोहमानयोः।
ध्वस्तहिंसादिकं देवं, वंदे शून्यमशून्यकं।।4।।

(दोहा)

धर्मपति धर्मातमा, धर्मतीर्थकृत देव।
धर्मप्रभू धर्म्यो धनी, धनधारी सुखदेव।।5।।
धनदेव जु धनपति धरा, पालक धर्माराम।
ध्वस्त जु कर्मा नाथ तू, धर्मनेमि शिवधाम।।6।।
धर्म सु चक्रायुध धरैं, धर्माचारिज धर्म।
धर्मनिदेसक धर्मधी, धर्मकाज जितकर्म।।7।।
धर्मपाल धनवंत विभु, धर्म सु घोषक धीर।
धर्मराज्य नायक शमी, धर्मरूप जिन वीर।।8।।
धर्म एव साम्राज्य है, ताकौ नायक नाथ।
धनपति पति धनदो प्रभू, धव माधव शिव साथ।।9।।
धरै न कबहूँ दुष्टता, धरै न कबहूं प्रीति।
हरै जु सर्व विभावता, इह जाकी है रीति।।10।।

धर्म सु धारी हैं सही, धर्मधार धननाथ।
तू ज धरापति देव है, धनवर्जित धनसाथ।।11।।
धर्मनाथ तू देव है, धनत्यागी धनखानि।
धनदाता धननिंदको, तू धनाढ्य अघहानि।।12।।
तू धरमज्ञ सु धवल है, धक धक अग्नि स्वरूप।
कर्म जु इंधन पकड़हु, अचलित ज्ञान अनूप।।13।।
धर्माध्यक्ष तु ही प्रभू, धर्म तणौ अधिकार।
धर्मचक्री चक्रीपती, परमातम अविकार।।14।।

(चौपई)

तू जु धनुंजय तारक ईश। नाम धनुंजय अर्जन धीश।।
बहुरि धनंजय पवनु जु सोय। पवनजीत तुव वीरज होय।।15।।
धनुषधार तू ही परचंड। ज्ञानचाप व्रतरोप अखंड।।
धनुरद्रुर तूही इक ल्हसै। जाकौं देखि सकल अघ नसैं।।16।।
धन्वंतरि तो बिनु नहिं और। सर्व रोगहर अद्‌भुत दौर।।
भिषज अपार तु ही परसिद्ध। तू परमातम है अति शुद्ध।।17।।
धज नांही मो मैं कछु नाथ। लूद्‌यो मो हैं जानि अनाथ।।
धस्यो मोह मेरै घटि चोर। करहु सहाय करै इह भोर।।18।।
धप्यो न पापी इह अवहू ज। काठ जु जारत ज्यौं हुतभूज।।
लीनौ सरवस पिंड न तजै। निति निति दुःख देवे कौं सजै।।19।।
मेरी धड़क मिटै नहिं मूर। धमक लंगावै इह सुख चूर।।
इह जु अविद्या नींव विशाल। धसकै सो करि दीन दयाल।।20।।
धाहा देर पुकारूं नाथ। मोतैं दूरि करहु जड़ साथ।।
साथ देहु अपनौं जिनराय। धाजै तोहि जु सेऊं पाय।।21।।

(दोहा)

ध्याता ध्येय सु ध्यान है, ध्यांनगम्य जगदीस।
धारण रूप तु ही प्रभू, धातुः धाम अधीस।।22।।

धातुः कहिए शब्दमय, धात विधाता तू ज।
धाम्नां पति धामेस तू, धारण जोगि सु पूज।।23।।
धारावाही सर्वमय, तू ज रह्यौ भरपूर।
धामरूप ध्यानी तु ही, धामेसुर अघचूर।।24।।
धा कहिए श्री कौं सही, धी है बुद्धि सु नाम।
बुद्धि ऋधि मैं प्रथम ही, केवल आतम धाम।।25।।
ध्यान सु दुर्धण रूप है, तू है ताकौ धार।
घनघाती विधि व्रिक्ष जे, तैं काटे निरधार।।26।।
धातु च मल तेरैं नहीं, धका धूक कछू नांहि।
धान पान मिष्टान कौ, विनज न तुव मत मांहि।।27।।

(सोरठा)

धारा सम जग धार, तामैं हूं बूड़ौं प्रभू।
तू खेवट भव पार, तू ही पार उतारिहै।।28।।

(दोहा)

धावत धावत भव विषै, दुखी हुवो हूँ ईस।
अब तौ भ्रमण निवारि हरि, तू साहिब जगदीस।।29।।
धिषणा कहिए बुद्धि कौं, तू धिषणा कौ पुंज।
तो सम धिषणाधर नहीं, तू श्री जिन सुख कुंज।।30।।
धिग धिग जीवौ जास कौ, जो ध्यावै नहि तोहिं।
तोहि तजै विषयनि भजै, इहै अचंभौं मोहि।।31।।

(चौपई)

धीरां धीरां तारै तू जु। अव्रत देशव्रतनि कौ पूज।।
मुनिगण कौं तारै ततकाल। सब आधीन जु तेरे लाल।।32।।
धीत अधीत जिके मुनि धीर। तेरौं सूत्र जु गहर गंभीर।।
धीजैं तोहिं सबै तजि संग। ते तोसौं हौंही इक रंग।।33।।

धीमा धीमा गमन करंत। पालहिं इरिया समिति महंत।।
ते पावहि सीघ्र जु तुव वास। तजहि धीठता हौहि जु दास।।34।।
तेरे दास लहैं निज रूप। तू जिनवर जगज्योति अनूप।।
तोहि न पावै धी हू कभी। धी तैं परै सु तू निज अभी।।35।।
धी कहिए प्रज्ञा कौ नांम। तू बुधिवांन सकल विश्राम।।
धी पुत्री कौ नाव जु कहै। तेरै पुत्र न पुत्री लहैं।।36।।
धीवर कन्या दुरंगंधा जु। सोऊ तुव भजि शुभगंधा जु।।
भई बहुरि पायो शुभ लोक। तू जिनवर है शिवसुख थोक।।37।।
धीवर सम हैं ते नर नीच। हिंसा रूप लगावें कीच।।
जल छांनै नहिं अन्न न वीन। उत्तम वंस कहा कौ चीन।।38।।
धीवर कुल हू तोहि जु ध्याय। जन्मांतर पावै शिवराय।।
द्विज कुल ह्वै तोहि न भजैं। तिनकौं निंदि जानि भवि तजैं।।39।।
धीज पतीज जु तेरि सवैं। और न धीज कहूं की अवै।।
जब लग तोहि न झायौ प्रभू। तब लग सुख नहिं पायौ कभू।।40।।
धींद्र सुधीसुर धीर सुजान। धीर वीर तू है धीमान।।
धीर नहीं तौसौ जगि कोय। तू जु धीर धी उत्तम होय।।41।।
धीरजवंत तू ही जगपाल। धीरजधारी परम दयाल।।
धीस अधीस र ईस्वर प्रभू। धीर सही तू धीठ न विभू।।42।।
धीठ करम जीते सक नांहि। तू ही धीग त्रिलोकी मांहि।।
धाम धूम तेरै कहु कहां। तू नायक षट्द्रव्य जु महां।।43।।
ध्रुव उतपाद व्ययातम वस्तु। तू जु प्रकासै देव प्रशस्त।।
द्रव्य देखतां सबहीं ध्रुवा। पर्जय नय करि सब अध्रुवा।।44।।
सुर नर नारक पशुगन सबै। चऊ गति मांहि काल तैं दवै।।
काल जीत तू देव अजीत। ध्रुव तू ही जो कबहुं न नीत।।45।।
धुर्योधर च धुरंधर तू ज। धुतकर्मा तू त्रिभुवन पूज।।
ध्वजा वंध तू धुजपति जती। धुणें कर्म जानै अघतती।।46।।
धू कहिए श्रुति मांहि विख्यात। अंग कंप कौ नांव जु तात।।
तेरै कंप नहिं जगदेव। तैं कंपाए विधि दुख देव।।47।।

धूजै कंपै भय करि मोह। राग रोस मद लोभ जु द्रोह।।
तू जब जन घटि राजै जिना। तिमर हरन तू अद्‌भुत दिना।।48।।
धूरि धूसरे अंग जु साधु। तौकौं ध्यावैं होय अबाध।।
तजैं धूरि सम सब जग भूति। तव पावैं तेरी सुविभूति।।49।।
फुनि धू भाष्यौ आगम मांहि। धौंत वस्तु यामैं सक नांहि।।
तू है धौत सु उज्जल सही। धौत उपाधि सकल मल जही।।50।।
धू कहिए पुस्तक कै मांहि। धूम नाम यामैं सक नांहि।।
तेरै धूम जु कालिम नहीं। तू निरधूम निरालस सही।।51।।
धू एकाक्षिर माला विषै। नाव भार को परगट लिखे।।
तेरै भार न कर्म तणौं जु। नंत गुणातम भार घणौं जु।।52।।
तेरै कंधे जिन मत भार। मोहू जिनवर पार उतार।।
धू कहि चित्त कौ नाम। तेरै चित्त न तन वच कांम।।53।।
धूत न पावैं तोकौं कभी। धूत करम ते जीते अभी।।
धूणैं सिर जो आठौं कर्म। तैं जब चूर किए प्रभु भर्म।।54।।
धूप न छांह न तेरै कोय। एक रूप तू निरमल होय।।
धूप कलंक न तेरै कभू। ध्यांन नाथ ध्यानातम प्रभू।।55।।
धूरि समान जगत की भूति। त्यागि उपाधि अपावन पूति।।
जे तौंको ध्यावैं चित लाय। ते निज रसमय हौंहि सुभाय।।56।।
ध्येय रूप तू ही प्रभु एक। धेठि नहिं तेरैं कछु टेक।।
धेनु काम अरु कल्प सु वृक्ष। चिंतामणि तू ही परतक्ष।।57।।
धेनु पुत्र सम मैं मति मूढ़। तू ही सुबुधि करै जिन गूढ़।।
धैंवतादिक सप्त जु सुरा। तू ही भासै सुर गुर धुरा।।58।।
धोटा काहू कौ तू नांहि। सब धोटा तेरे जग मांहि।।
धोवा सब कर्मनि कौ तुही। धोक धोक तोकौं प्रभु सही।।59।।
धोरी तू इक और न कोय। धुर षैचे जु धर्म की सोय।।
धोर न बाजैं तुव पुर मोंहि। सीत न घाम न वृष्टि न पाहि।।60।।
धोबी सम तेरे निज दास। धोवैं निज गुन चीर विभास।।
साबुन ज्ञान र सम रस नीर। लैं करि धोवैं भाव सु धीर।।61।।

धोबी कुल हू जौ तुहि जपैं। धरि कैं अणुव्रत तप जौ तपैं।।
जनमांतरि तेऊ तुव वास। पाँवहि जौ ह्वै तेरे दास ।।62।।
धोखा नहिं तेरे मत मांहि। तो बिनु संसय रहित जु नांहि।।
हमरौ धोखा मेटि दयाल। देहु आपुनी भक्ति विशाल।।63।।
धोप न खड्ग न चाप न रोप। काम न लोभ न क्षोभ न कोप।।
धोरी लावैं तुझ सौं जिके। शिवपुर धोरी हौंहि जु तिके।।64।।
धोती नेती अवर क्रिया जु। तू अक्रिय वर्जित तिरिया जु।।
सब किरिया कौ सागर तू ही। एक परापर देव जु सही।।65।।
धौत वस्त्र धोती बिनु ग्रही। भोजन करहीं मूढ़ जु वही।।
दया क्रिया मय तेरौ धर्म। तू जिनपति उभयातम मर्म।।66।।
धौ कहिए बंधन कौ नांम। धौं नाहीं तेरै श्री राम।।
तू बंधन तैं अति ही दूर। निजरस पूर रह्यौ भरपूर।।67।।
धौत मल जु तू है धौंतीत। तौ सम धौत न कोय अतीत।।
मोकौं धौंत सु निर्मल तु ही। करै और को दीखै नहीं।।68।।
धौंस मोह की मोहि जु लगी। रोकि लिये सब भाव विपगी।।
छांडै नांहि जु मेरौ पिंड। पिंड धरावै हौं जु अपिंड।।69।।
ए जु अनंत विभाव जु जिके। महा मौंह के पायक तिकैं।।
धौल लगाय जु मेरै जोर। खोसि लियो निज धन प्रभु मोर।।70।।
तेरी मददि होय जौ नाथ। मैं हू अपनौं जोरूंसाथ।।
तुव परसाद मोह की धौंस। मारुं जिनवर तेरी सौंस।।71।।
जीव तनौं अरि इह सठमोह। जीव अनंत जु खोसे लोह।।
तदपि न छांडै लोभी घनौं। निति प्रति वोध हरै मुझ तनौं।।72।।
धौ न जीरवै जैसे नीच। संपति पाय लगावै कीच।।
तैसे मोह बड़ाई पाम। त्रिभुवन पीडै अति अधिकाय।।73।।
जे तेरौ सरनौं दिढ गहै। निरलोभी है तोहि जु चहैं।।
तिनहि जीतिवे सक नहि मोह। तेरै मोह न राग न द्रोह।।74।।
धंधै पडियौ जीव अयांन। तोहे न जपिही श्री भगवान।।
ध्वांत विध्वंसी तू जग भानु। तू ही तिमर हरैं दे ज्ञान।।75।।

ध्वंसकरण तू ध्वांत तणौं जु। जीव ध्वंस कौ त्याग घणौं जु।।
धंधौ तेरै कोऊ नांहि। धंधा मैं हिंसा सक नांहि।।76।।
धु: कहिए बंधन कौ नांम। तोमैं बंधन ही विश्राम।।
बंधन तुरत कटै जव दुष्ट। तू घटि आवै तव अति पुष्ट।।77।।
ध: कहिए धन और जु धान। तू दोउ वर्जित तजु गमांन।।
धन धान्यादिक दाता एक। तू ही दीखै परम विवेक।।78।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

धरम कौं नायक है धाम कौ निवास देव,
धांम तै वितीत एक धिषणापरो तु ही।
धीर वीर धुरकौ जु धूसरौ न होत कभी,
धूत नांहि पावै जाहि ध्येय रूप है सही।।
धेठि हरै जीवकी सु धेठि नांहि जाकै कछु,
धैंवत प्रमुख स्वर भासक प्रभू वही।
धोरी सब लोककौ जु धौत अतिउज्जल है,
धंधा नांहि जाकै कोऊ शून्यताजु है नहीं।।79।।

(दोहा)

अंध धंध सब लोक है, एक सचक्षु जिनिंद।
तू जानै देखे सबै, हरै सकल दु:ख द्वंद।।80।।
धर्म स्वभाव जु वस्तु कौ, धर्मी तू निज वस्तु।
तेरी जिनवर वस्तुता, सो कमला परशस्त।।81।।
धा कहिए श्री हू कहैं, मा पद्मा जु रमा जु।
लक्ष्मी निज सत्ता जिको, चिद्परणति राधा जु।।82।।
और न राधा शंकरी, शक्ति भवांनी लछि।
सो चंडी परमेश्वरी, गौरी है परतच्छि।।83।।

सो जैनी जिन भावनां, शिवा अंबिका मात।
जिन जू सौं न्यारी नहीं, जिन अनुभूति विख्यात।।84।।
निज विभूति संपति सदा, परमा शास्वती होय।
सो दौलति कहिये भया, और न दौलति कोय।।85।।

इति श्री धकार संपूर्णम्।

न

आगे ननना कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

नत्वा नाभिभवं धीरं, ऋषभं ऋषिपूजितं।
नित्यं निरंजनं नि:स्वं, नीतिमार्गप्रकाशकं।।1।।
नुस्ताशेषकर्मारिं, नूनं निर्वाणनायकं।
नेतारं मोक्षमार्गस्य, नैकरूपं यतीश्वरं।।2।।
नोकर्मरहितं शुद्धं, द्रव्यभावविवर्जितं।
नौकानिभं भवांभोधौ, दीनं दितं न:प्रियं परं।।3।।
वक्ष्ये नामावलीं तस्य, पापकर्मविनाशिनीं।
निर्वाणप्राप्तये भव्या, शृण्वंतु श्रद्धयान्विता।।4।।

(दोहा)

नवग्रह पीड़ा होय नहिं, जाके दासनि कौं जु।
नवनिधि दायक देव है, जापैं सर्व जु सौंज।।5।।
नमो नमो वा देव कौं, चिदघन अमित अरूप।
जाकौ चितवन छिनक हूं, मेटे भव थति धूप।।6।।
नकारांक आगम विषै, ज्ञान नाम विख्यात।
ज्ञान रूप ज्ञानेस तू, ज्ञान मूल जग तात।।7।।

नकारांक फुनि श्रुति कहै, निषेधार्थ परसिद्ध।
तू निषेध सब पाप कौ, परम प्रकास विसुद्ध।।8।।
विधि निषेध दोऊ तुही, तू निषेध विधि नांहि।
विधि निषेध भासक सदा, विधि निषेध तो माहि।।9।।
नयोत्तुंग नयरूप तू, नयाधीन उपदेस।
निश्चय अर विवहार नय, दोऊ प्रगट अलेस।।10।।
नय उपनय के भेद सब, तू ही भाषै देव।
नैगम संग्रह आदि सब, संख्य असंख्य जु भेव।।11।।

(चौपई)

नैगम संग्रह अरू व्यौहार। ऋजुसूत्र अर शब्द विचार।।
समभिरूढ़ सु एवंभूत। द्रव्य सु पर्यय मिलि नव सूत।।12।।
अठवीसा इन ही के भेद। संख्य असंख्य सु इनके वेद।।
उपनय तीनि प्रकार जु कहे। सद्भूतेतर उपचर गहे।।13।।
नव नय अर नव तत्त्व प्रकास। नव विधि ब्रम्ह सु चर्य विलास।।
नव पदार्थ अर नव ग्रीवा जु। नव नुत्तर दाता जिनराज।।14।।
नव नारायण नव बलदेव। नव प्रतिहरि नव नारद देव।।
सब तेरे हैं दास जिनिंद। नव हि द्वार के रोध मुनिंद।।15।।
नवधा भक्ति सु नव रस सही। सर्व प्रकासक नरहरि तु ही।।
नर नारायण पूजि दयाल। नष्ट किए जानैं जगजाल।।16।।
नव क्षायक लबधी का मूल। नव विधि दरसन आवर्ण चूर।।
नव प्रांणनि कैं धारी लगै। सम्यक बिनु तोमैं नहि पगैं।।17।।
पंच वि थावर जंगम वारि। ए सब मिलि ह्वै नव सु प्रकार।।
इन तैं रहित करौ हरि सोहि। हरहु अविद्या बिनऊ तोहि।।18।।
नव विधि वाडि सुशील जु तनी। नव रतनादिक तैं हि जु भनी।।
नव गोप्या आयु जु वित्तादि। नव विधि दान तणी जु अनादि।।19।।

(सोरठा)

नवधा समकित जो हु, सौ दै जिनवर करि दया।
नवमैं क्षायक सोहु, सो सबकौं सिरताज है।।20।।
क्षायक दाता तू जु, तो तैं क्षायक पाइए।
सो तोतैं जु अदूज, करै वेगि ही भविनि कौं।।21।।
वेदक च्यारि प्रकार, क्षय उपसम वर तैं त्रिविधि।
नवधा समकित धार, क्षायक उपसम मेलिकैं।।22।।
मन वच तन ए तीन, कृत कारित अनुमोद तैं।
गुणें जु नव विधि कीन, सब बातनि तोही जपैं।।23।।
नव कोडी तिहु ऊंण, उतकृष्टा एते मुनी।
दिन दिन जिनमत दूण, हौ है रहिहै इह सही।।24।।
नव सत उर पचवीस, इतनी तौ कोटि जु गिनौ।
त्रैपन लख सतबीस, सहस र नवसत छह अंठा।।25।।
छह ऊठां कहता अड़तालीस।
एती जिन प्रतिमा जु, नादि अनंत अकर्तृमा।
और जिके कृतिमा जु, सबकौं मेरी वंदना।।26।।
नव बारी नवकार, सामायक मैं जहं जहां।
भाष्यो जिनवर सार, जपैं जे सु नर शिव लहैं।।27।।
नवकर तन धर जोहु, तेवीसम जिन पास जो।
करहु आप सम मोहु, नाग नागिनी तार जो।।28।।
नवदस जीव समास, नवविंसति रतनत्रयी।
पालक धारक दास, जिनके तिनकौ बंदना।।29।।
नवत्रिंसत सुर लोक, सोलह नव नव पंच जो।
जो भासक सब थोक, सो हरि हमरौ भव हरौ।।30।।
नवचालीसी होय, सात नरक के पाथड़ा।
इनतैं टारक कोय, सो जिन मेरौ जग हरौ।।31।।
नवपंचास महंत, पदवीधर त्रेसठि भये।
तू भासै भगवंत, हुंडा तैं चउ जन घटे।।32।।

तीन तीर्थधर चक्रि, भये जु तातैं जन त्रया।
फुनि जु प्रथम अध चक्रि, सोई चौबीसम जिनो।।33।।
या विधि चउ घटिया जु, पर तौं त्रेसठि ही भये।
गुणसठि प्रांणि गिना जु, तेरे ही आगम थकी।।34।।
त्रिसठि सलाका संत, अर नारद रुद्रादिका।
सब भाषै भगवंत, इक सौ परि गुणहत्तरी।।35।।
ए पद जीव जु पाय, शिव अधिकारी ह्वै सही।
कैयक तदभव जाय, कैयक कछु इक अंतिरै।।36।।
निन्यांणवै कोड़ी जु, तुंगी गिर परि मुनिवरा।
जिनसौं मन जोड़ी जु, सालै सो जिन नव हरी।।37।।

(दोहा)

सत्तरि ऊपरि नव अधिक, तिनके दूणे नाथ।
इक सौ परि अट्ठावनां, प्रकृति न तेरै साथ।।38।।
अस्सी परि नव आगले, कहैं निवासी लोक।
तू जु निवासी मोक्ष कौ, तो मैं अमित जु थोक।।39।।
नवति जु नांम निवै तनौं, निवै जु सहस र कोडि।
सागर जब बीते प्रभू, सुमति पछै अघ मोडि।।40।।
प्रगटै पद्मप्रभू प्रभू, भाषै तेरौ वेद।
तेरी जिनवर टहल जो, दै हमको निरखेद।।41।।

(सोरठा)

सौ निन्याणवै आध, लाख कोडिकुल पाल जो।
जो भाषै सब भाष, वह कुलधर भवकुल हरो।।42।।
नवसैं विंजन और, सत अष्टोत्तर लक्षणा।
ए धारैं जग मौर, जो जगपति मुझ जग हरौ।।43।।
नमोकार सम मंत्र, नहिं जिनवर सौं देव कौ।
अजपा सौ नहि तंत्र, सिद्धयंत्र सौ जंत्र नां।।44।।

सकल तत्त्व कौ मूल, एक थूल सूक्ष्म तुही।
जे तोसौं अनुकूल, ह्वै प्रतिकूलो जगत सौं।।45।।

(चौपई)

नवल रूप तूं नंत सु वृद्ध। नगन रूप तू जिन परसिद्ध।।
नष केसादिक वृद्धि न होय। नगपति ऊपरि न्हायौ सोय।।46।।
नग परवत रतनादिक नगा। नग फुनि वृक्षादिक जे अगा।।
तो सम नग और न जग मांहि। तू ही नगन जु नग सक नांहि।।47।।
नरपति तू नरपाल नरेश। तू नरसिंह महामुनि भेस।।
सुरपति नरपति फणिपति जिकै। तोहि नरोत्तम ध्यांवहि तिके।।48।।
तू नग दायक नग सम थिरो। नग सम सीतल छाया करो।।
नक्षत्रादिक योतिस देव। तेरी सब सुर करही सेव।।49।।
नट नाटक अर नृत्य जु कला। तेरै एक न दीषै मला।।
नद नाद्यादिक तैं ही सबै। भाषे सब गुण तोहि जु फबै।।50।।
नभ प्रमांण तू नभवत सार। चेतनता कौ पुंज अधार।।
नत कहिए नम्री जो भूत। तेरे द्वारै सुर नर पूत।।51।।
तू जु नवीन पुरातन तू जु। पूरण ब्रह्म सनातन पूज।।
नहि नहि तू जु नवीन पुरान। सर्व रूप तू श्री भगवान।।52।।
नमस्कार तोकौ जगदेव। नमि नमि मस्तक करिहौं सेव।।
नय नय मोकौ निजपुर विभू। नहि नहि मरैं और जु प्रभू।।53।।
नलिनी नलिन न तो सम गंध। नलिनी पत्र समान अबंध।।
नगर अजोध्या कौ तू नाथ। नगर निराव्रिति तेरै हाथ।।54।।
नव कोड़ी तिहु ऊण मुनिंद। तिनमैं मोहि करे जिनचंद।।
नरक निगोद न पाँवै भक्त। जे अनन्य ह्वै तोसौं रक्त।।55।।
नागपती ध्यावैं प्रभु तोहि। नाकपती तुव दास जु होहि।।
नागपती कहिए नागिंद। नाकपती जु कहावै इंद।।56।।
नाग जु हस्ती नाग जु इही। तैं दोऊ तारे तू वही।।
हस्ती तार्‌यो त्रिजगत भूष। अवर हु गज तारे निरदूष।।57।।

सर्प जु तार्‌यो करि नागेस। जे जरतौ हौ अगनि जिनेश।।
अवर हु अहि केई सुर किया। नागतार तू रक्षक जिया।।58।।
नाग दाय तू नाट्य उदास। नाटक भासक तू ज विलास।।
नाग न मारै नाग न डसै। जिनकै घटि तू जिनवर वसै।।59।।
नाना दुख मिटि होय अनंद। जब तोकौं ध्यावै शिवकंद।।
तू नागेंद्र नाथ हरि देव। नारायण नारद जस सेव।।60।।
करैं भगति वस अति हि उछाह। तू जु अषंडानंद प्रवाह।।
नाभेयो नाभिज नाभेस। नाभिराय तार्‌यौ जु नरेस।।61।।
नाना तत्त्व प्रकासक एक। वह नानैक तत्त्व द्रिक नेक।।
नाभि तणौ वह नाभि सु भूति। नाभि प्रख्यापक आप प्रसूति।।62।।
न्यायशास्त्र जो जुक्ति प्रकास। नय परमांण निखेप विभास।।
ताकौ प्रगट करैया वहै। न्यायशास्त्र कृत आगम कहैं।।63।।
नाक लोक दायक जगदीस। नाकपती नावैं तहां सीस।।
नागकुमारादिक जे देव। भवनपती दस विधि जसु सेव।।64।।
करहि सवै सुर जाकी पूज। सो जिनराय जगत तैं दूज।।
नाना एक वही भगवान। नाच कूद नहिं जाकै थांन।।65।।
नाटक चेटक एक जु नांहि। नाटशाल जाकै न रहांहि।।
न्याति पाँति जाकै नहिं कोय। नाता काहू सौं नहि होय।।66।।
नाद वेद कौ रूप जु कहै। नाद विंद कौ भेद सु लहै।।
नाम अनंत अनंत सु ज्ञांन। नायक नारक दुखहर जान।।67।।
नास्तिक जाहि न पावैं मूढ। वह हरि अस्ति र नास्ति सु गूढ़।।
नाना विकल्प तजि करि एक। जाहि सु भजि करि लहहि विवेक।।68।।
नाली मूल उठि सु लसणादि। तुंवउ करड़ कलिंद अखादि।।
इनहि खाय सो जन्म गुमाय। इनकौ त्याग कहै जिनराय।।69।।
नाल लगै प्रभु कै जो जीव। ताकौं तारै सो जगपीव।।
नाव समान भवोदधि मांहि। तो बिनु और सु दूजौ नांहि।।70।।
नाहर सम जो कर्म गजारि। नाहर उधरे जाहि चितारि।।
नाहर हू जिह श्रावक किए। दै निज धर्म सु निज मैं लिए।।71।।

निराबाध नि:कल निरदुंद। निरुकति उक्ति निरामय इंद।।
देव निरंजन उर निवसौ जु। निर्वाणी करिहौ अपनौ जु।।72।।
हौं जु निकृष्ट दुष्ट पापिष्ट। तोहि जु भूलौ तू जग इष्ट।।
निर्मुक्तो प्रभु निर्निमितो जु। तू निमितो च उपादानो जु।।73।।
तू अष्टांग निमित्त विभास। तो सौ निमती और न आस।।
निरघो निरजो तू निरलेप। निर्मल नित्य वितीत विछेप।।74।।
निर्गुण नंत गुणातम तु ही। निरमोही निरुपद्रव सही।।
निर्निमिषो च निराश्रव तू ज। निराहार नि:क्रिय जगपूज।।75।।
निरुपप्लव निर्धूत जु बंध। निर्धूतागा तू अतिगंध।।
निहकलंक निरमद जु निरक्ष। तू जु निरुत्सुक देव अलक्ष।।76।।
तू जु निरुत्तर निरधन धनी। तू जु निरुद्धव जाहि न मनी।।
नि:कल कलहहरो तू देव। नि:सपत्न अद्‌भुत निरभेव।।77।।
तू निष्टप्त कनक सम छाय। निरग्रन्थो सो निर्मल काय।।
नि:किंचन तू एक निरंश। निराशंस निरविघ्न निवंस।।78।।
तू निरुक्ति वाचक सुभ वाक। नियमित इंद्री मन अविपाक।।
निराकार निरनाम अरूप। निराधार निरहार स्वरूप।।79।।
निर्जर निर्ज्वर तू भगवान। निर्जर पति पूजित जगभांनु।।
संवर निर्जर मोक्ष प्रकास। निर्जर गण जाके सब दास।।80।।
देवनि कौं कहिए निरजरा। बहुरि निलिपि हु भाषे सुरा।।
अमरा कहिये परि सब मरैं। निश्चल तनु कोई नहि धरे।।81।।
तेरौ निलय जु अविलय नाथ। प्रलय वितीतो देव अनाथ।।
निलय नाम है घर कौ सही। तेरै देह न गेह न कही।।82।।
निरषैं तेरौ वदन जु मुनी। तोहि निहारैं सुर नर फनी।।
निधरक तू इक ओर न कोय। निजरि तिहारी मैं सब होय।।83।।
नृप तू ही प्रभु अवर प्रजा जु। तू राजनि कौ पति महाराजु।।
निपट कपटहर तू अति जती। निशिभोजन निंदै जगपती।।84।।
निश्शेषामल शील स्वरूप। परब्रह्म परमातम भूप।।
नि:पापा निर्जन वनवास। करहि मुनि तुव अर्थि उदास।।85।।

तू निरशेष जु कल्मष वीत। वीतराग जिनवर जगजीत।।
तू जु निराग सराग अतीत। तूज निरालस निस्व अभीत।।86।।
निः कहिए नेता कौ नांम। तू जु नियंता नेता राम।।
नेता कहिए जाकौ प्रभु। जो ले जाए परम पद विभू।।87।।
निर्नीहार निराकुल गुरु। निर्विकार निर्बैर जु धुरु।।
निरद्वंदी निसप्रेही तुही। निर्विकल्प निरमोही सही।।88।।
तू जु निरंबर अंवर वीत। नित्यानंद निकूप अभीत।।
निराभर्ण भासुर सुर लाज। तू जु निरायुध भवजल पाज।।89।।
निःकांक्षी जु निरीह निरास। निरारंभ निःकर्म उदास।।
निरहिंसिक निःकंप मुनीश। निर्भय और निराग निरीस।।90।।
तू निहकोप निकांम जिनिंद। निरदोषी निरबांण मुनिंद।।
निर्मानी निरमायक तू ज। निरमायल निंदक तू पूज।।91।।
निरलोभी निसरीर निलीन। निकट भव्य तारक निज चीन।।
निजरूपी निजभाव दयाल। निकष ग्राव समांन क्रिपाल।।92।।
निर्णीताखिल वस्तु स्वरूप। निर्णय करई जु रूप अरूप।।
तेरौ निरनय तू ही करै। कवन निरूपन तेरौ धरै।।93।।
निश्चय अर व्यवहार जु होय। तू जु प्रकासक है नय दोय।।
निसि दिन तेरौ ध्यान धरै जु। तिहि निशाचर दूष न करैं जु।।94।।
तू निरषै सब लोक अलोक। तोहि निहारे होहिं अशोक।।
तू निरषी निरषै निज भाव। निश्शल्यो निगमो निरदाव।।95।।
निखिल उपाधि रहित जगनाथ। अखिल प्रताप प्रभाव सु साथ।।
निगड़ करम की जीव हि लगी। बहु जु निवारै जिन अति पगी।।96।।
निगम प्रकास जु निंदक नांहि। निज सुरूप जो निज कै मांहि।।
निष्ठुर निठुर न जाकौं लहैं। निभरम जीव जु वाकौं गहैं।।97।।
निवलतणौं भीडी वह प्रभु। निहपरमाद निरासय विभू।।
निभ कहिए सादृसि कौ नाम। तेरी सादृसि कोय न राम।।98।।
नित्यानित्य प्रकासक तु ही। नित्य निगोदि सुभाषक सही।।
निरव्रति मारग कौं तू नाथ। निरव्रति परव्रति तेरैं हाथ।।99।।

(दोहा)

तू निधान सब लोक कौ, तेरै नाहिं निदांन।
है निवास सबकौ तुही, श्री निवास भगवान।।100।।
निधि दाता निधि मूल तू, नव निधि तेरैं द्वार।
सब निर्द्वारि जु तो नषैं, तू निर्वाहै भार।।101।।
नीरा दूरा तू सही, नारा दूरा नांहि।
नीका तू औरेन को, तो घट घट के मांहि।।102।।
नीरागो निरमोह तू, हैं न लगार विरोध।
नीलि वस्त्र धरहिं जिके, तिनकै घर नहिं सौध।।103।।
अैसी तू भाषै प्रभू, निंदे कुवणिज नीलि।
नीलपटा नास्तिक्य जे, तै काढ़ै अबहीलि।।104।।

(भुजंगी)

तु ही नीरजो नाथ नीरोपमांनो। नहीं नीर साम्यो जु तू ज्ञानवांनो।।
जितैं नीरजं देव तेरे वि पादा। तु ही नीरजस्को जु तेरै न कादा।।105।।
कहा नीरजो तुल्यता अह्रि केरी। लभै नाथ तेरे हरौ ताप मेरी।।
कभी नीच पावैं न तेरी सु सेवा। कुले नीच भक्ती लहैं धाम देवा।।106।।
नहीं नीड़ तेरै सदा तू ज नीड़ा। तुही नींठि पइए नहीं जाहि पीड़ा।।
तु नीका गुरू और नीका न कोई। करै नीक सारी तु ही देव सोई।।107।।
सु नीसांन तेरौ जु स्याद्वाद जैना। तु ही है शिवाधीश निर्दोष नैना।।
सुनीति प्रमूला अनीति प्रहारा। तु ही नीतिबांनो निरातक भारा।।108।।
नहीं नींद तेरै तु ही बीतनिद्रा। तु ही नीव धर्मा सही है निछिद्रा।।
तु ही नीवणो जाहि रोगा न वैद्या। तु ही है जु नीरोस पापोपछेद्या।।109।।
जिके बोध धारैं तिके तोहि पावैं। बिना बोध तोकौं कभी नाहिं ध्यांवैं।।
तु ही नीलि निंदा सु नीली उधारा। तु नीली हरी निंदको है अपारा।।110।।
न नीहार तैरै जु होइ कदापी। तु ही हार नीहार गौरौ उदापी।।
तु नीलांवराराध्य है देव देवा। सु नीलांवरो द्वार तेरी जु सेवा।।111।।

नीलांवरो नाथ कहिए हली सों। सु पीतांवरो यस्य भ्राता वली सों।।
तु ही देव नीलांजना नृत्य त्यागी। भजैं जाहि नीलांवरो ज्ञान भागी।।112।।

(सोरठा)

तू नल नील उधार, सुग्रीवादि उधार तू।
तू हणवंत सुधार, राम भरत तारक तु ही।।113।।
नीम जु बोयें नाथ, नही आंम फल पाइये।
किये कांम कौ साथ, तेरौ पुर कवहु न मिलै।।114।।

(चौपई)

नुद नुद नुद मेरौ उर ध्वांत। तू जिनतत्त्व प्रकाशक शांत।।
नुति नति इंद्रादिक सब करैं। तेरी नुति नति सुर नर धरैं।।115।।
नुद कहिए दूरे करि नांम। दूरि करौ भव थिति मुझ राम।।
नुकतौं तेरौ जब ही सधै। दया पालि काहू नहि वधै।।116।।
नूतन तू नहि तू जु पुरान। नूनं कहिए निश्चै जान।।
नूपर सम हौं सठ बाचाल। तू ही हार करै उर थाल।।117।।
नेता तू ही और न कोय। ले पहुंचावै सिद्ध जु लोय।।
नेदीयांन जु नीडै तु ही। दूरी नांही तू पास जु सही।।118।।
नेक न वद तैरै कछु कर्म। नेक नाम तू प्रगट जु धर्म।।
नेगी जोगी तेरैं नाहिं। योगी ही नेगी तुझ मांहि।।119।।
नेज तिहारी वांणी नाथ। काढै कूप थकी गहि हाथ।।
नेमनाथ तू है नमिनाथ। नियम नाथ तू अति बड़ हाथ।।120।।
नेमि नांम धुर कौ प्रभु सही। तू ही धुरंधर नेमि जु गही।।
नेमनाथ तू पति गिरनारि। नारि तजक तू शिवपुर धारि।।121।।
नेम नियम यम तैं सब कहैं। आप धारि गाढ़े करि गहैं।।
नेवर आदि जु सब आभर्ण। सब त्यागे तैं तू निरवर्ण।।122।।
नेत्र त्रिलोकी कौ तू एक। नैक रूप तू परम विवेक।।
नैकात्मा नैकांत स्वरूप। नैक धर्मकृत अखलित भूप।।123।।

नैन जगत कौ है तू देव। नैव नैव रागादि विभेद।।
नेति नेति अर अस्ति स्वरूप। परब्रह्म परमातम भूप।।124।।
नैक नांम तू नैक जु इष्ट। नैक तत्त्व तू एक प्रकृष्ट।।
नो इंदी मन बुद्धि विचार। तेरौ श्रुति हु न पावै पार।।125।।
नोंक नहीं एको प्रभु कोय। तेंरै सरलाई अति होय।।
नकुलादिक तोकौं जपि तरे। तोकौं भजि नो भव विसतरे।।126।
नोकर्मा अर द्रव्य जु कर्म। भावकर्म तेंरै न विभर्म।।
किये नेसनाबूत जु तैं जु। अखिल विभाव नहीं तोमैं जु।।127।।
नो हरि नो हर नो विधि तीन। एक रूप तू निज रस लीन।।
नो परद्रव्य तणौ विभचार। तू माया तैं दूरि अपार।।128।।
नौं पूरण को नांव जिनेस। तू ही पूरण नौ सम भेस।।
नौका सम तू ही निरधार। नंत भव्य तै कीनै पार।।129।।
नौपाधिक प्रभु तेरौ रूप। तू उपाधि तैं रहित अनूप।।
नौनाधिक तेंरै कछु नांहि। तू नहिं नून अधिक सब पाँहि।।130।।

(दोहा)

त्यागि हवैली नौहरा, त्यागि सकल परिवार।
त्यागि जु हाट बाजार सब, तोहि जपै ते सार।।131।।

(सवैया तेईसा)

नंदण तू जिन आनंद कारन, नंदनरण्य महैं तुव मंदिर।
नंदन आदि सुभद्रिकसालिक, सौमनसा अर पाँडुक अंदर।।
च्यारिहि ठौर जु सोडस मंदिर, चौ चउ चौ अर चौ सुभ कंदर।
एकक मेर जु मैं प्रभु षोडस, पंचनि मेरनि सौध असी थिर।।132।।
तीन हू लोक महै तुव मंदिर, नादि अनंत अकारिम देवा।
आठ सु कोडि र छप्पन लाख, सत्यावण सौ दस चौ सत भेवा।।
आगलि एक असी ऊपरि गनि, जोतिष व्यंतर जौ नहि लेवा।
जोतिष व्यंतर के धरि सौध जु संखि वितीत कहे जु अछेवा।।133।।

ए सब नादि अकर्तृम मंदिर, और अढाई जु दीपनि मांहि।
कर्तृम मंदिर जे जिनजी के, ते सब पूजि कछू सक नांहि।।
जे जु अकर्तृम मंदिर राचत, सौ अर आठ जु बिंब तहां ही।
नौ सत और पचवीस जु कोडि, तरेपन लाष जु चैत्य धराहीं।।134।।
और सताइस सौ दस भी गनि, नौ सत आठ छंका विभु अरचा।
नादि अनंत जिके जिन मूरति, आगम धारहि ए सव चरचा।।
नंदन कौन हि को तू प्रभु जी, नाभि सुनंदन देवनि अरचा।
नंद अनंद अनंत तु ही, शिव तैं सब कीयइ कर्म जु किरचा।।135।।
नंग अनंग कुमार उधारक, नंग न जाहि न क्वापि न पावै।
मारि अनंग कियौ चकचूर जु, जामहि मूढ़ न भूलि न जावै।।
एक अनेक जु नाथ वहै प्रभु, अंतर वाहिजि जो दरसावै।
भेद अभेद अनंतर अंतर, जा बिनु और न ताप बुझावै।।136।।

(सवैया इकतीसा)

नंद और नंदकौ सु नन्दन जु जाहि ध्यावै,
देवकी यशोमति सवै जु जाहि ध्यावही।
वसुदेव प्रद्युमन शंबु अनिरुद्ध सब,
यादव सकल गण जासै लव लांवही।।
रोहणि कौ पूत और रोहणी जु जाहि ध्यावैं,
नंदा औ सुनंदा सब जाहि कौ जु गांवही।
सुर नर मुनिजन जाहि कौं अलापैं एक,
जामैं थिर भूत हौंहि तेई सुख पाँवही।।137।।

(छप्पय)

नः अस्माकं देव देहु तू निज पद भक्ती।
नः अस्माकं नाथ वितर तू बंध विमुक्ती।।
अस्माकं कौ अर्थ तारि तू हमहि जिनेशा।
मति राषे भव मांहि तू ज हरि तिमर दिनेशा।।

भव हरि भय हरि भ्रांति हरि, हरि जु अंधता नादि की।
दै स्वचक्षु जिन जोगिया, पर परणति हरि वादि की।।138।।

अथ बारा मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

नमोकार मंत्र देहु और नांहि जाचै नाथ,
तैरौ जु नाम सार नित्य ही जपैं प्रभु।
निपट निरंजन तू नीति कौ निवास देव,
नींद भूष नांहि तेंरै रोग-दोष नां कभू।।
नुद नुद ध्वांत मेरौ नूनता मिटाय सब,
नेह छांडि देहतैं सु तौंहीकौं भजैं विभू।
नैकरूप एकरूप नो विभाव भाव देव,
नौपाधिक नंदन तू नः प्रभो महाप्रभू।।139।।

(दोहा)

तेरी नित्य स्वभावता, निज निधि अनुभूती जु।
सोई कमला लक्ष्मी, दौलति शिव भूती जु।।140।।
और न दौलति जगत मैं, बिनु जिन सत्ता कोइ।
निज सत्ता संपति सही, अपर आपदा होय।।141।।

इति नकार संपूर्णम्।

इति भक्त्यक्षरमालिकावावनीस्तवन अध्यात्मबारहखड़ी नामधेये
जिनसहस्रनाम एकाक्षरीनाममालाद्यनेकग्रंथानुसारेण
भगवद्भजनानंदाधिकारे आनंदरामसुत दौलतिरामेन अल्पबुद्धिना
उपायनीकृतें तकारादिनकारांत
पंचाक्षरप्ररूपको नाम षष्ठपरिच्छेदः।

सप्तम परिच्छेद



आगैं पकार अक्षर को व्याख्यान करै है—

(श्लोक)

परमानंदसंयुक्तं, पापापेतं महेश्वरं।
प्रियं प्रियाविहीनं च, प्रीत्यप्रीतिविवर्जितं।।1।।
पुण्यं पुण्यगुणोपेतं, पूतदेहं प्रभाश्वरं।
प्रेक्षणं सर्वलोकस्य, पैशून्यादिनिषेधकं।।2।।
पोततुल्यं भवांभोधौ, पौरुषान्वितमीश्वरं।
पंडितं पंडितैर्वंद्यं, पंचभेदं जगद्गुरं।।3।।
वंदे शून्यमशून्यं च, शून्याशून्यप्रकाशनं।
सर्वाक्षरमयं धीरं, मानमायाविदूरगं।।4।।

(दोहा)

पण्य नांम है हाट कौ, तैरै हाट न वाट।
पाठ धार तू है सही, नाथ जु सर्व विराट।।5।।
हाट जु तेरौ श्रुति इहैं, जामैं सवे जु वस्तु।
इहै हाट सेवहि जिके, पावहि अर्थ प्रशस्त।।6।।

वेश्या को पण्यांगना, कहैं जु बुधजन ठीक।
वेश्या नर्क पुरी प्रभू, भाषैं सदा अलीक।।7।।
पकारांक आगम विषै, पवन तनौं है नाम।
पवन रोकि योगीश्वरा, तोहि भजैं शिवधाम।।8।।
पवन वात मारुत अनिल, वायु समीर जु नाम।
तरुभंजन हुतभुज सषा, महावली अविश्रांम।।9।।
नभ मारग जाकौ सदा, शीघ्र जु गामी अपार।
रोकी रुकै न क्वापि हू, लोकाकाश मझार।।10।।
लोक समान जु पिंड इह, मढ्यो पवन करि होइ।
ज्ञानी पवन निरोध करि, रोकैं मन तन दोय।।11।।
प्राणापाँन निरोध तैं, रुकहि जु नवही द्वार।
दशम द्वार सुर नीसरें, मंद मंद अविकार।।12।।
पवनागम मैं भेद सहु, मंडल मुद्रा मंत्र।
सुरनाड़ी तत्त्वादि जे, बीज सहित शिवतंत्र।।13।।
इनकौ भासक प्रभु जिको, जिन गुरुदेव दयाल।
ताहि लषैं मुनिवर महा, तजि माया जंजाल।।14।।
रेचक पूरक कुंभका, त्रिविधि नु पवन विचार।
प्राणायाम करै बुधा, मन जीतन कौं सार।।15।।
करहि जु स्वास निरोध जे, सर्व द्वार ले रुंधि।
ब्रह्म द्वार काढहि अनिल, मन मरकट कौं बंधि।।16।।
ध्यावैं जगपति देव कौ, आतम मैं अवलोकि।
लहँहि परम समाधि ते, मद मच्छर कौं रोकि।।17।।
जिन सम आपा लखि मुनि, तजही सर्व उपाधि।
ताकौ नाम समाधि है, अवर सवै असमाधि।।18।।
एक घनोदधि है सही, दूजो है घनवात।
तीजौ तनुवात जु कह्यो, ए त्रय वायु विख्यात।।19।।
लोक शिखरि राजै विभू, जहं तनुवात वलै जु।
सबतै ऊँचौ देव जो, जाकौं नांहि विलै जु।।20।।

ताकौ मेरी वंदना, द्रव्य भाव मन लाय।
जाकी भक्ति प्रसाद तैं, मिटैं जु धरिबौ काय।।21।।
बहुरि प्रगट रण रंग जो, ताकौ नाम पकार।
कहैं विबुध ग्रन्थनि विषै, लखि जिन आगम सार।।22।।
तू रण ऋण तैं रहित हैं, रणजीतक रणसिंह।
नरसिंहो अति सबल तू, पालै चउ विधि संघ।।23।।
रण मैं हारे तो नषैं, अष्ट करम अरि दुष्ट।
शक्ति नाही वनपै प्रभु, तो तैं करहि अनिष्ट।।24।।
तेरे दास कनिष्ट जे, तेऊ जीतैं कर्म।
तू जिन परम प्रभाव है, तेरे नांहि विभर्म।।25।।
तुव दासनि बिनु सर्व सौं, जीतैं अष्ट बलिष्ट।
दासनि पै हारैं सही, तुव महिमा अति पुष्ट।।26।।
फुनि पकार ताकौं कहैं, वन मैं सूतौं जोहु।
वन मैं सूतौं छांडियो, बंधुदत्त करि द्रोहु।।27।।
भवसदत्त कौं एकलौ, सो जैनी जिनदास।
आयों कुशल जु क्षेम तैं, अपुनै घरि सुखरास।।28।।
परनी राजकुमारिका, सती सुशील निधान।
भविष्यानुरूपा जिको, पायो पद परधान।।29।।
इह भव परभव सुख लहे, तुव पद कमल जु ध्याय।
तूं भगवंत महंत है, सकल त्रिलोकी राय।।30।।

(चौपई)

प्रजापती प्रभवो परवीन। प्रणय प्रणेता प्रणव सुलीन।।
प्रष्टः प्रेष्टः अग्र जु गांमि। प्रभूतातमा निज विसरामि।।31।।
भूति प्रभूति विभव कौ पुंज। नांहि प्रसूति धरै सुख कुंज।।
परिमल अति अर रज नहि धरै। इह अदभुत गति और न करै।।32।।
परम विष्णु जो परम जिनिंद। प्रश्नातम प्रशमातम कंद।।
प्रसन्नात्मा नित्य प्रसन्न। प्रशांतात्मा क्वापि न खिन्न।।33।।

पद्म जु विष्टर धर पदमेश। पद्मप्रभु पदमापति भेस।
पद्मनाथ परिवृढ़ दृढ़ पद्म। पद्म सु संभूती विनु छद्म।।34।।
पठित विना विद्या कौ रूप। परम पवित्र स्वभाव स्वरूप।।
पद्मयोनि पद्मा वर दक्ष। परम प्रवाह सु केवल चक्षु।।35।।
परम प्रतिष्ठा प्रसवो हेत। जीवनि कौं शिव पद ई देत।।
प्रथु प्रथितो प्रथवीपति देव। परम प्रमामय है जु अछेव।।36।।
प्रभा ज्योति कांति जु कौ नांम। प्रथु प्रथितो विसतीरण रांम।।
प्रजा विना अर प्रजापती। प्रजा हितू अति अद्भुत जती।।37।।
प्रशम प्रशांत रस जु है नाट्य। ताकौ वह शैलूष अनाट्य।।
नृत्य करैया कौ शैलूष। कहिये ग्रन्थनि मांहि अदूष।।38।।
प्रभु सौ नटवा और न कोय। हेय उपादेय प्रगटा सोय।।
अनुभव रस कौ दायक इष्ट। परम प्रकृष्ट रहित सब कष्ट।।39।।
प्रज्ञा श्रवणी आदि जु ऋद्धि। सर्व ऋद्धि दाता सु समृद्धि।।
प्रज्ञा पार करो भगवान। प्रत्यय परचय रूप सु जान।।40।।
परम प्रभाश्वर अति दैदीप। पद्म गर्भ स्वामी अवनीप।।
प्रकाशातमा सर्व प्रकाश। परम प्रशास्ता शासन भास।।41।।
परम प्रदीप्त सु हटिक द्युती। परम परापर अगणित दुती।।
परम प्रचार विचार वितीत। परम प्रंशातोत्तम अघ जीत।।42।।
परमेश्वर परमात्मा प्रभू। परम तत्त्व परमर्षी विभू।।
परम पूत परमारथ दृष्ट। परमेष्टी परतर पर इष्ट।।43।।
परम प्रभू परतम आतमां। परम विज्ञान प्रगट स्वातमां।।
परम धाम भेजुषे नमो। परम ज्योति रूपी तम दमो।।44।।
परम यतिंद्र वंद्य द्वय पाद। परमविज्ञान करण अविवाद।।
परम पुनीत सु संयमधार। परम रूप पद भागी सार।।45।।
परम योग पर मत छेदी जु। परम विद्य पर गण भेदी जु।।
प्रभविष्णु कहिये भगवान। भवनशील उत्कर्ष प्रधान।।46।।
प्रवुधातम वह देव प्रभूष्णु। परमभाव प्रगटा प्रभु तूष्टणु।।
परम दृगातम परम जु परो। परं ज्योति परभाव जु हरो।।47।।

परम इष्ट जो पथ्य स्वरूप। परम सु भेषज परम अनूप।।
परम मार्ग प्रथितो जिन भूप। परम तेजसी प्रगट अरूप।।48।।
परम हंस प्रल्हादन प्रज्ञ। प्रज्ञापारमितो सरवज्ञ।।
सर्व परूवण निरूपक नाथ। परम परापर अति बड़ हाथ।।49।।
परमारथ परषैया शिवो। प्रजापाल दुखटाल सु धवो।।
प्रगटातम परमानन्दो जु। परम देव अति निरदुंदो जु।।50।।
प्रभू परायण सो परमेश। परम पवित्रातम यति भेस।।
परम जु जान प्रधान प्रसिद्ध। परम धाम पर रहित सु सिद्ध।।51।।
परमानंद करण इक तू ही। देव परात्पर तू ही जु सही।।
प्रगट किये सब धर्म विचार। प्रचुरातम प्रज्ञाधिप सार।।52।।
परम प्रतापी परम प्रताप। परिग्रह त्यागी है जिन आप।।
परम चरित्री परम सुज्ञान। करण पवित्री तू भगवान।।53।।
परदह्य जु परपंच विदीत। परम प्रभावी अविधि विजीत।।
कबहु अपावन तनु नहि धरै। परम सु पावन वह जिन करै।।54।।
परातीत स्वामी प्रचंड। परम गुरू जिननाथ अखंड।।
परम पराक्रम धारी राय। परम प्रधान सुखातम काय।।55।।
परमातम दरसी परदेव। पर देवी नहि है निजदेव।।
परणमि आयो अब परणमैं। परणति बिनु नहि रहिहै किमैं।।56।।
परिणामी परिणांम स्वरूप। परणति जाकी है जु अनूप।।
पक्षपात नहि जाकै कोई। पक्ष जिनागम धारै सोय।।57।।
पक्षांतर ले कथन जु करै। दोय पक्ष बिनु वचन न धरै।।
निश्चय अर व्यवहार जु पक्ष। ज्ञांन क्रिया एइ परतक्ष।।58।।
परणति परिणामनि तैं आय। न्यारौ नाही अतुल प्रताप।।
प्रणमैं विनमैं जाकौं मुनी। सुर नर प्रणमैं करि अति धुनी।।59।।
परम परात्मज्ञो प्रथमेश। परम प्रशम दाता प्रशमेश।।
प्रथमादिक सातों जु विभक्ति। वह जु प्रकासै परम स्वशक्ति।।60।।
परमानंदी परम स्वछंद। परम प्रतिष्ठित है जु अफंद।।
नित्य प्रतिष्ठ प्रथीयानो जु। प्रथितो जिह अति निज ज्ञानो जु।।61।।

प्रत्यग्रो निति नवल नवीन। परम परापति रूप प्रवीन।।
सहज परार्दी ऋद्धि प्रधांन। परमेश्वर ईश्वर परबांन।।62।।
प्रशमाकर परमोदय धीश। प्रक्षीण जु बंधो जगदीस।।
तू जु प्रधान प्रकृति कृतशर्म। प्रकृति विनासी तू इक धर्म।।63।।
प्रणव जु तेरौ रूप दयाल। ऊँ जाहि कहत सुविशाल।।
प्रणयमूल तेरौ जिनधर्म। अर्थ प्रणय कौ विनय जु पर्म।।64।।
प्रणिधि चार तणौं है नांम। तैरै चार न तू शिवधाम।।
परमानंद तु ही तैं मुनी। लहहिं उदासा त्यागि जु दुनी।।65।।
तू जु प्रवक्ता परिमित वस्तु। तू जु प्रमाण नयो परशस्त।।
नय परमाण निक्षेप सवै जु। तू ही प्रकाशै नाहि दवै जु।।66।।
तू ही प्रशस्त न औरे कोइ। तौ सौ तू जिन और न होय।।
पगि पगि निधि तुव दासनि कै जु। तेरे दास न कछु मांगै जु।।67।।
पष तेरी विनु और न पक्ष। तू हि सपक्षी है जु अपक्ष।।
पष मासा ऋतु अयन जु वर्ष। तू हि प्रकासै निसि दिन हर्ष।।68।।
पष पष वास मास उपवास। तेरे दास धरैं जु उदास।।
पगैं नंही दासा जग मांहि। पगे जु तोमैं लखि निज पाँहि।।69।।
पग्यो नहीं तू कितहू देव। लग्यो स्व रस रस मैं अति भेव।।
पगरी वागा तैरै नांहि। तू निरग्रन्थी ग्रंथनि मांहि।।70।।
पणधारी तू पन निरवहै। पचि पचि तो विनु जग जन बहै।।
तेरी पण राखै ते तिरैं। तो विनु मूढा भवबनि फिरैं।।71।।
पण जु नांम परतज्ञा कौ जु। जाहि आखडी हू भाषौ जु।।
नेम हु कहिये व्रत हू कहैं। तोही तैं दिढ नेम जु रहैं।।72।।
पछिवारै तैरै सब लोक। तू अग्रेश्वर अति गुण थोक।।
घटपटादि भासक तू देव। अपठित पाठ सु तत्त्व लखेव।।73।।
पठन विना इक तू बुधिमांन। पडिकमणा भासक तू जांन
पड पडिहार न पटह जु कोय। तेरौ रावल अद्भुत होय।।74।।
अगनि पजावे की सम कांम। तेरी भगति बुझावै रांम।।
तपति हरन तू है सुखधांम। जगजीवन जग कौ विसराम।।75।।

पढो गुन्यो नहि तू जु परंतु। है विद्या कौ पुंज अनंत।।
मैं भवमांहि जनम बहु लहे। परि तेरे चरन जु नहि गहे।।76।।
परचा तेरे परगट प्रभू। पति राखन तू जति पति विभू।।
पथ मांहै पथिकनि कौं सही। पाथेयो जिनवर इक तु ही।।77।।
पद पद कमल क्षपैं जु सुरेश। पदवीधर तू ही सु जिनेश।।
पद्धडि छंदादिक जे छंद। तू हि प्रकाशै देव स्वछंद।।78।।
पवि कहिये वज्र जु कौ नांम। वज्री तेरौ है जु गुलांम।।
तेरे भक्त पपीहा प्रभू। तो अंबुद बिनु याचन कभू।।79।।
परतषि देव तू जु इक होय। तू ही पयोदि कहै सब लोय।।
दोय प्रमाण प्रतक्ष परोषि। तेरौ आगम भासै मोषि।।80।।
तू जु पयोधि गुननि कौ नाथ। पयवर्जित अति गहर अनाथ।।
प्रमया भूषित अप्रमितो जु। तोहि जपै प्रभु जग सकलो जु।।81।।
प्रतिमा तेरी पूजहि सुरा। सुर नर पूजित तू जग धुरा।।
पल पल तेरौ ध्यान जु मुनी। करहि तपोधन त्यागहि दुनी।।82।।
पलक घरी पहर जु पर बंध। तू हि जु भासै तू जु अबंध।।
पल कहिये फुनि आंमिष नांम। आंमिष अभष कहै तू राम।।83।।
मांसाहारी तोहि न लहैं। पल भोजन करि नरक जु गहैं।।
पल मधु मन्दिरा निंदै तू जु। इनके भक्षक तो तैं दूज।।84।।
पष्ट किये तैं निखिल जु कर्म। पुष्ट कियो करुणामय धर्म।।
पक्वान्नादिक स्वाद जु त्यागि। तुच्छ ग्रास ले मुनि व्रत लागि।।85।।
तौ कौ ध्याय प्रफु ल्लित रहैं। कबहूँ चिंता सोक न गहैं।।
तेरी प्रति नहि दूजौ देव। तेरी प्रतिनिधि तू जु अछेव।।86।।
प्रतिमा तेरी ही प्रभू पूति। और न पूजित प्रतिमा दूजी।।
कतृम और अकर्तृम कही। तेरी अरचा अरचित सही।।87।।
प्रतिबिंबित तोमैं सब थोक। तुव प्रतिबिंबनमैं सब लोक।।
पडिमा ग्यारह कौ उपदेस। अणुव्रत धारिन कौं सु जिनेश।।88।।
देय तु ही भाषै सब रीति। तोसौं करहिं महामुनि प्रीति।।
पडिमा नांव प्रतज्ञा कहैं। तोहि प्रतज्ञा पूरण गहैं।।89।।

चर प्रतिबिंब जु तेरे मुनी। थिर प्रतिबिंब जु प्रतिमा गुनी।।
महव्रत अणुव्रत कौ उपदेश। तू ही कहइ जिनिंद अशेष।।90।।
तेरे प्रवचन की श्रद्धा जु। करहि मुनीश्वर तप वृद्धा जु।।
प्रवचनसार तु ही ततसार। समयसार तू है अविकार।।91।।
नियमसार पंचास्ति सु सार। सर्व सार कौ तू इक सार।।
तेरौ प्रवचन जे नर सुनै। परम तत्त्व परमारथ मुनैं।।92।।
पा: कहिये आगम मैं ठीक। पान वस्तु यामैं न अलीक।।
तू सब खान पान तैं दूर। त्रिभुवन मांहि रह्यो भरपूर।।93।।
पा: कहिये फुनि ग्रन्थनि मांहि। पाबावाले कौं सक नांहि।।
जिनमत अमृत पावै तु ही। पा: कहिये तोही कौं सही।।94।।
पाता त्राता तात जु तुही। पालक पाप विनासी सही।।
सुर्ग मर्त्य पाताल जु मांहि। तेरौ ई शरणौं सक नांहि।।95।।
पारस पास सु पास जु तूही। पावन तू ही पातिगि दहि।।
पात्र न तो सम जग मैं कोय। सब कौ पात्र सु तू इक होय।।96।।
पात्रापात्र जु भेद समस्त। तू हि प्रकासै दांन प्रशस्त।।
पात्र जु भाजन हूं कौ नाम। तेरे भाजन अखिल सु रांम।।97।।
सब कौ वासन तू जु दयाल। तौ मैं माय रहे सब माल।।
तू सबमैं व्याप्यो सरवज्ञ। तोसौ पात्र न और सुविज्ञ।।98।।
दान पात्र तो सौ नहिं देव। तन मन दै मुनि धारैं सेव।।
तू पात्रो पात्रनि तैं दूर। करपात्रा ध्यावैं मुनि शूर।।99।।
पात्र जु केसरी द्विजवर एक। तुव मत पाय लह्यो सु विवेक।।
अहिछतपुर कौ वासी जिको। महा सु पंडित पूजित तिको।।100।।
तू ही दाता तू ही पात्र। पारे तम तू है बिनु गात्र।।
तम अज्ञान तनौं हैं नाम। ताकै पार जु तू निज धाम।।101।।
परम भाजुषो त्रिभुवन सार। प्राप्त धाम तू है अविकार।।
प्राप्त स्वरूप जु तू ही भूप। प्राप्तये प्रशमातम रूप।।102।।
पारषीक जग मैं तू एक। परषइया सवकौ स्व विवेक।।
पारंगत पारंकर तू ही। पाप रहित नाशन अघ सही।।103।।

पाठीनो कहिये मच्छो जु। जल मैं वसइ जु नहि स्वच्छो जु।।
पींरै जीवनि कौं अति दुष्ट। तुझ दासनि को न करै कष्ट।।104।।
पाठक परम गुह्य प्राणेश। प्राणनाथ तू एक जिनेश।।
प्राणेश्वर प्रांणनि तैं दूर। शुद्ध स्वभाव प्रांण भरपूर।।105।।
प्राणिनि कौ रक्षक तू देव। प्रांणी तेरौ लहहि न भेव।।
पारिणांम भावातम तु ही। परिणांमी परिणांम जु गही।।106।।
पारिणामिको परम स्वरूप। प्राज्ञ: प्रज्ञाधर जिनभूप।।
पापापेत अपाप जु आप। पाषंडा न लहैं जसु जाप।।107।।
पाज भवोदधि की तु ही सु। पालि जु बांधै धर्म सही सु।।
प्रांणिगणनि कौ नाथ जु धुरू। पारग प्रांणद प्रांणि सु गुरू।।108।।
दश प्रांणनि कौ नांम न नाथ। तैरै तू जु अतुल गुण साथ।।
सुष सत्ता अवबोध जु प्रांण। चेतनिता कौ तू जु निसांन।।109।।
प्रागग्र: कहिये तू हि जिनेश। याकौ अर्थ जु दु:परवेश।।
प्राग्रहरो तू ही परवान। ताकौ अर्थ जु रहसि बखान।।110।।
पारमेष्टि परमेष्टि जु गुरा। प्राणत ईश्वर पाप जु हरा।।
प्राप्त महाकल्याणक पंच। तू जिनवर है शिव सुख संच।।111।।
पाशुपता न लहैं तुव ज्ञांन। पशुपति तेरौ धारहिं ध्यान।।
पारवती तोही कौं जपै। तन मन दिढ करि तुव मत थपै।।112।।
पारवती प्राणेश्वर तोहि। ध्यावै तेरौ दास जु होहि।।
पाशुपता जे रुद्रहि जपैं। रुद्रहि ईश्वर करि कै लपैं।।113।।
पशुपति रूद्र तनौ है नाम। रूद्र जु तोहि भजै शिवधाम।।
पशु सम तेई तोहि न जपैं। त्यागि उपाधि र तप नहि तपैं।।114।।
पशु तेई जे पशु कौ हनैं। नर जेई जु जिनागम भनैं।।
पशुघाती नारक गति गहैं। हिसा करि दुरगति भव लहैं।।115।।
पशु कर्म जु मैथुन कहिये जु। पशु तुल्या पशु कर्मी ए जु।।
पशु कर्म जु ज्ञानी परहरैं। ब्रह्मचर्य धरि शिवगति वरैं।।116।।
पशु हू तोहि जु ध्याय र तिरैं। नर हू तो विनु भव वन फिरैं।।
नर तू ही जु नरोतम देव। कै नर जे तुव धारहि सेव।।117।।

पागि रहै मुनि तोमहि देव। लागे तुझस्यौं तजि जग सेव।।
पागि रह्यो तू निज मैं सदा। लग्यो न विषयनि मांहि जु कदा।।118।।
पाख मास उपवास जु करैं। तौऊ तो विनु भव नहि तरैं।।
पाक विपाक न तैरै कछु। पाक रूप तू साहिब अछू।।119।।
पाघ न तुररा नहि सिरपेच। पेच कुपेच न तू जु अपेच।।
पान न खान न रेच विरेच। पाचक पचक न तू जु अरेच।।120।।
पाछौ काहू तैं नहि होय। पाट धार तू रावल सोय।।
पाठ विना पाठिक तू गुरू। अति परवीन महारस धुरू।।121।।
पार्यो परइ न निश्चल तू जु। प्रांण जु तेरौ है अति पूज।।
पाढ पढंतर सब कौं जान। तू ही एक महा भगवान।।122।।
पात फूल फल हरित जु काय। कंदादिक निंदै तू राय।।
पात फू ल फल सव तौ मैं जु। तू जु महातरु ता पद मैं जु।।123।।
पैड़ तु ही अति भावणु डाल। अति शाखो शाखा जु विशाल।।
पाथ वारि कौ नाम जु सही। तेरी समता जल जो नही।।124।।
पार्थ जु अर्जुन कौ है नाम। अर्जुन तैरो दास सु राम।।
तैं ही पार्थ उधार्यो देव। कियो आप मय अमर अछेव।।125।।
पार्थिव नाव रावको सही। सर्वलोक कौ पार्थिव तु ही।।
तौ सौ राजा और न राज्य। तू जिनवर है अति महराज्य।।126।।
पाकशासनो इंद्र जु नांम। इंद्र जु तेरौ है जु गुलाम।।
तेरौ जिनशासन दिढ धरी। सो पावै भव ले तुव पुरी।।127।।
पाद न हस्त न तेंरै अंग। पादमूल के दास अभंग।।
तेरे पाव हिये मैं मुनी। धारहि दिढ करि त्यागहि दुनी।।128।।
वात पाधरी तेंरै सही। कपट कूड कौ नाम हु नही।।
पाप प्रहारी तू भगवान। पावनकारी तू जु प्रवांन।।129।।
चंपापुर पावापुर सवै। तुव परसाद भजैं जन अवै।।
सव तीरथ तोही तैं भये। तीरथ कर तू वसि मुझ हिये।।130।।
पातक नांव पाप कौ कह्यो। तुव नामैं पातक सब दह्यो।।
मैं जु पातकी पापी प्रभू। तोहि सु भूलि न ध्यायो कभू।।131।।

पामर जीव न तोकौं लहैं। पाँवनता धरि तोहि जु गहैं।।
पार हौंहि तोकौं भजि जीव। तू जगजीवन सबकौ पीव।।132।।
प्रायश्चित्तादिक तप सर्व। तू हि प्रकासै देव अगर्व।।
पालक सबकौ तू इक कोय। पाँलि भवोदधि की तू होय।।133।।
पाणीपात न तिरषा तुझैं। तेरे पुर मैं दाह जु बुझैं।।
तेरौ सौ पाँणिप तुझ मांहि। और ठौर कहुं पाँणी नांहि।।134।।
वज्रपाँणि अर चक्र जु पाँणि। सारंग पाँणि बहुरि हलपाँणि।।
सव तोही कौं ध्यावैं प्रभू। तेरे पाँणि मांहि सहु विभू।।135।।
पाँणि नाम है हाथ तनों जु। तू बड़ हाथ जिनिंद घनौं जु।।
पाभूल्याके पुहप समांन। भव्य जीव तू चंद प्रमांन।।
करै प्रफुल्लित भव्यनि कौं तु। नहि उरझैं मुनि जगि तुझ हौंत।।136।।
पायो तेरौ मर्म जु जिनी। जनम मरण भय त्याग्यो तिनी।।
पासि हरन तू है सब पासि। पासि न तेरे तू सुख रासि।।137।।
तू जु पाहरू तोहि न चोर। लहही क्वापि जु तू मद मोर।।
चौर जु विषै कषायादी जु। तैं सब नासे उनमादी जु।।138।।
तू न प्रमादी जाग्रत सदा। तेरे पुर मैं चोर न कदा।।
पाँशु नांम अति उच्च तु ही सु। तो सौं प्रांशु न ओर मुनीश।।139।।
चौदह राजू ऊँचौ तु ही। त्रिक सौ तियांला घण सही।।
पाषी आदि व्रत्त विधि तू हि। भाषै श्री जिन सर्व समूहि।।140।।
प्राणायाम जु प्रत्याहार। यम नियमासन धारण धार।।
ध्यान समाधि अष्ट विधि जोग। तू हि प्रकासै देव सजोग।।141।।

(सवैया इकतीसा)

कैंसे तोरूं पात पात तोरे होत उतपात,
पातनि कौ पालक तू पात पात देखिये।
ठौर अैसी नांहि कोऊ देव तू जहां न होऊ,
सवै ठौर व्यापक तू आपरूप लेखिये।।
जेते हैं सचित जात और जे अचित जात,
तेरे ज्ञान मांह सब द्रव्य जात पेखिये।

लोक कौ अधीसुर तू जीवनि कौ पीहर है,
तेरी महिमा जो नाथ तो ही मैं विशेषिये।।144।।

(चौपई)

प्रिय: प्रियंकर पिकजित वैंनां। तू पिनाकि पूजित जग नैंना।।
नांव पिनाकी शंभू कहिये। शंभू तेरौ दास जु गहिये।।145।।
पिक जु कहावै कोइल स्वांमी। पिकजित मिष्ट शब्द अभिरामी।।
तोसौं मिष्ट वाक्य नहि कोऊ। तुव बानी अति मधुर जु होऊ।।146।।
पिडच न रोप न तेरै चापा। धनुरद्धर तू अद्भुत आपा।।
पिचके तो आगलि अठ कर्मा। पिछवारे तेरे सब धर्मा।।147।।
पित्त वाय कफ एक न रोगी। तू जोगेश्वर अद्भुत भोगी।।
पिठर न रंधन अशन न कोई। निरहारी तू त्रिप्त जु होई।।148।।
जामैं अन्न पकै सो पिठरा। तेंरै अन्न न पान न जठरा।।
तू पिधांन तैं दूरि जु देवा। आवरणी रहितो अति भेवा।।149।।
नांव पिधांन ढांकने कौ जी। तू जु टक्यों नहि परगट मौजी।।
पिलैं ज्ञान यंत्र जु मैं अविधी। तू जब भवि घटि आवै सुविधी।।150।।
पिता पितामह पितृ पितामह। पितृव्यो तू ही जु महामह।।
मन तेरी परजा जगपति जी। तू सबकौ पालक अति छति जी।।151।।
प्रियवादी तू हित मित वाचा। प्रिया तजक तू प्रियतम साचा।।
असंदिग्धतेरी मधुबांनी। पिवहि जिके पाँवै निज षानी।।152।।
पिव पिव लोका निज रस सुख जो। छंडहु छंडहु मोह जु विष जो।।
अैसे सबद कहै तू नाथा। तू ही एक परम सुख साथा।।153।।
पिसैं कर्म सब तुव यंत्रैं जू । षिसैं पाप सव तुव मंत्रैं जू।।
प्रीतम तो सौ और न कोई। प्रीति निबाहै धुर लौं सोई।।154।।
प्रीति जु तोसौं जे नर करही । भवसागर कों लीलैं तिरही।।
पीक समान जगत की भूती। पीप भर्यो इह देह जु पूती।।155।।
इन तैं प्रीति तजैं जे जीवा। ते तोकौं पावैं जग पीवा।।
प्रीत्यंकर मुनि ताकौ ध्याया। भया तोमई सहज स्वभाया।।156।।

पीरि न सकही ताकौ कोई। जाके सिर परि तू प्रभु होई।।
पीरा सब तोही तैं मिटई। पीनस आदि रोग सहु कटई।।157।।
पीर्‌यो मोकौं कर्मनि अति ही। अव तू इनकौं नाथ जु हति ही।।
पीठि देय सव जग सौं नाथा। तोहि जु ध्याऊं होय अनाथा।।158।।
अैसो करि जिनवर तू मुझकौं। सकल त्यागि ध्याऊं इक तुझकौं।।
कबहू पीठि देहुं नहि तोही। मोह हरे अपनौं करि मोहि।।159।।
पीठ नांव सिंघासन कौ जी। सिंह पीठधर तू अति मौजी।।
पीठ धरम कौ तू इक होई। तेरौ पीठ न बांधै कोई।।160।।
त्वया प्रीणिता भव्य जु लोका। अभवि न पाँवहि तेरा थोका।।
प्रीणयता तू ही जग मांही। तो सौ लोक मध्य को नांही।।161।।
पीतांबर तू ही इक देव। पीयो सब आकाश अछेव।।
नीलांबर तो ही सौं लीनो। पीव जगत कौ तू न अधीनो।।162।।
पीहर षट कायनि कौ तू ही। पीरे मद मछर जु समूही।।
करन हरन पद तौकौ फवई। तो आगैं अघ सेना दवई।।163।।
पीसि जु मोकौं चून कियो अति। यंत्र देह मैं धारि जु हत मति।।
सकल विभाव दुष्ट अति मिलिया। तिन आगैं मेरे गुन ठिलिया।।164।।
अब तू मेरी मदति जु करिहो। अंस बंस सब पर कौ हरिहौ।।
तव जांनू तू जगपति रावा। विसवा वीस जु तेरै न्याव।।165।।
पीत न स्वेत न रक्त न स्यामां। हरित नही तू अवरण रांमां।।
वरण पंच रस पंच द्वि गंधा। सपरस आठ न तू निरबंधा।।166।।
पीतामृत तू ही इक देवा। और देव नहि अमृत सेवा।।
अमृत पीय कदापि न मरई। अमरा मरण करैं गति धरई।।167।।
कहवति के अमरा सब देवा। सत्य जु अमरो तू जु अछेवा।।
देवनि कौ अमृत जो पाँनं। सो अमृत नहि मधु सम मांनं।।168।।
पीतामृत तो बिनु नहि और जु। पीतांबर पूजित जग मौर जु।।
देह पींजरा मांहि जु हंसा। तू जु बतावै देव निरंसा।।169।।
पीठी मुरग विनास्यो ज्यां ही। सप्त जनम दुःख पाये त्यांही।।
जीवित मुरगा जे सठ हतही। जांहि नरक गति तू यों कथही।।170।।

पीलू पाकरि आदि अभक्षा। तू हि निषेधै देव विपक्षा।।
पीहू रंग संमानो जु भवो। तोमैं रंग न कहिये जु लवो।।171।।
जेठा रंग समांन जु तू है। रंग रंगीलौ नाथ प्रभू है।।
पीव जगत कौ तो बिनु कोई। ओर न होई तू पिव सोई।।172।।

(मोतीदाम)

तु ही जु पुरांण पुनीत सुदेव। सही पुरिसोत्तम तू जु अछेव।।
महा सु पुरांण जु कारक तू जु। नही जग मांहि सु तो सम दूज।।173।।
तु ही पुरषत्व पुराधिप राज। सु पुण्य अपुण्य वितीत महा जु।।
तु ही पुरदेव पुरुत्तम नाथ। सदा पुर मैं जु बसै बड़ हाथ।।174।।
सवै पुर तेरी हि आंण जु मांहि। सवै सुर तोहि जपै सक नांहि।।
तू पुष्कल लक्षण दक्ष दयाल। सु पुष्कल रूप जु तू हि विशाल।।175।।
तु ही जु पुरातन पुष्टिद पुष्ट। सदा जु सनातन सर्व जु इष्ट।।
पुलाक जु आदि मुनिश्वर जेह। सु तेरी हि सेव करैं ऋषि तेह।।176।।
जु तोहि भजैं पुरहूत सदा जु। सवै पुरहूत सु सौंजु गिना जु।।
तु ही सु उधार करै पुरहूत। सही निरवान किये पुर पूत।।177।।
कहै पुर नांम जु आदि जिनेश। सुता सुत ने सुत भर्त महेश।।
सवै पर हूत सु सौंजु गिना जु। जपे सब तोहि जु तोहि सनें जु ।।178।।
कहैं पुरहूत जु नाम सुरेश। सु तोहि न मैं पुरहूत अशेस।।
करे जु पुलक्कित आनंन नैंन। करे जु पुलक्कित चित्त सु वैंन।।179।।
सवै जु पुलक्कित होय शरीर। सु तोहि जपैं मुनि होय अभीर।।
सु पुष्कर गंग हु आदि सवै जु। नहि तुव बाहरि पाप दवै जु।।180।।

(सवैया इकतीसा)

पुण्य रासि तू ही अर पुण्यगी पवित्र देव,
मोहि तू पुनीत करि लेहु सिद्धपुर मैं।
पुर अैसो नाम नाथ अग्रे कौ कहावै तात,
तेरे पुर नाचैं इंद्रनायक जे सुर मैं।।

पुर नांव नग्र कौ जु नागर जिनिंद तू जु,
पुर नांव कायकौ हू तेरे नांहि धुर मैं।
पुर अति हू कौ नाम तू ही परगुणराम,
पुरहूत दास तेरे तू न लघु गुर में।।181।।
मोहू कौं पुनीहि देव पावन तू दै स्व सेव,
तू ही पुरुषारथ जो भाषै च्यारि श्रुति मैं।
धरम अरथ काम मोष ए नरा रथ जे,
तो ही तैं महामती जु धारै निजमति मैं।।
तू ही पुरुषत्व धार पुरिषा जगत कौ जु,
तू ही जो पुराण पुरुषोत्तम न गति मैं
पुर नांम तेरौ ई जु दुरै तू न काहू काल,
तू ही जो पुराण सार पूरण सु छति मैं।।182।।
पुरुषत्व भाग तू ही पुर देव अतिभेव,
पुण्य कौ निरूपक तू पाप तैं वितीत हैं।
तू ही है पुराणाधिप आदि जो पुरांननि की,
पुर ग्राम वन मांहि एक तू अभीत है।।
बिना ही पुकार तू जु जानै सब दुख पीर,
नासक तु दुरक कौ जु नायक अजीत है।
पुलिनि मैं बैठे साधु होय कैं जु निराबाध,
तोही कौ चितारैं एक तू ही जगजीत है।।183।।
तू ही है सुपूज्यनाथ तो बिनां न पूज्य कोइ,
पुर अर अैस सदा ठाकुर तू जग कौ।
सर्व पूज्य वासुपुज्य पुलकित भाव सदा,
पुरानौ न होत कभी नायक तू मग कौ।
पुष्टता जु तेरे मांहि दुष्टता न देखिये जू,
शिष्टता कौ आगर तू दायक त्रिनग कौ।।
पुष्यादिक आदि जे नक्षत्र सप्तविंशति हैं,
तो ही कौ जु सेवै नाथ तारक तू खग कौ।।184।।

(सोरठा)

पूंछ बिना तिरजंच, नर ह्वै तोहि न जे जपैं।
ते सठ करि परपंच, नरभव षौवें दुलभ जै।।185।।
सींग पूंछ रहिता जु, नराकार तिरजंच ते।
जे नहि तुव भक्ता जु, कहिवे के मनुजा तिके।।186।।
तोहि भजें नर देह, होय जु सफल दयाल जी।
जे तोसौं नहि नेह, करैं तिके नर खर समा।।187।।
जा देही कौं देब, लोचैं तेरी सेव कौं।
सो तनु लहि तुव सेव, करहिं न मूढ़ा अति तिके।।188।।
सर्व पुरंदर दास, तेरे जिनवर देव जी।
अर्थ पुरंदर भास, इंद्र तनौ इह नाम है।।189।।
इंद्र र पत्नी तोहि, ध्याय जु भव के आंतिरै।
पाँवै शिवपुर सोहि, मोहि जु तेरी सेव दै।।190।।
अखिल सु पुस्तक मांहि, तरौं ई जस नाथ जी।
तो विनु निजपुर नांहि, तू निज रूप अरूप है।।191।।
तेंरै पुत्र न पौत्र, जाया माया कछु नहीं।
तोहि न लहैं अपोत्र, श्रुति मूल जु तू देव है।।192।।
पुष्कारार्द्ध लौं दीप, इनहीं मैं नर पाइए।
विगरि अढाई दीप,मनुज तनौं संचार नां।।193।।
दोय जु उदधि प्रवांन, दीप अढाई मांहि जे।
इन विनु नर नहि मांन, तेरी आज्ञा यों कहै।।194।।
जंबू धातकि खंड, पुष्करार्द्ध ए ढाइया।
इन विनु मुक्ति प्रचंड, तद्भव कोऊ देहि नहिं।।195।।
इह तेरी आज्ञा जु, नादि काल तैं नाथ जी।
तू सबकौ राजा जु, तेरी आज्ञा सहु भजैं।।196।।
आगैं दीप असंषि, उदधि असंषि जु तू कहै।
सुर अर तिर जु असंखि, तिनमैं रहही नाथ जी।।197।।

तोहि भजैं तै धन्य, चहुंगति मैं कोई भजौ।
तोहि भजें अति पुन्य, पुन्य पाप तैं रहित तू।।198।।
पुर अर कहा पुरार, तू जु सदा ही हौ प्रभू।
रहिहै एक करार, तू जु अनादि अनंत है।।199।।
पुनर्पुनः तौकौं जु, भजिये दीनदयाल जी।
तू निज रस हमकौं जु, देह जिनिंद कृपाल जी।।200।।
तू पुनरुक्त न देव, जब देखै तब ही नवो।
तेरी दै प्रभु सेव, और कहा यातैं भलौं।।201।।
पुष्कर नाम अकाश, तू आकाश जु सारिषौ।
पुष्कर सरवर भास, ताप हरन तू ही सरा।।202।।
पुष्कर सुंडि जु नाम, हाथी की आगम कहै।
केई तारे राम, सूंडाला करि नर करे।।203।।

(सवैया तेईसा)

पूजि तू ही इक ओर न पूजि सु पूत महा परमातम तू ही।
पूत सु वाक सुशासन पूत, सदा मति पूत जु तू सु समूही।।
पूत न तेरहि, नाति न कोई जु, न्याति न पाँति न पूजि अदूहि।
पूत जु कार सुनौं हरि मेरिहु दैं निरवांन जु अष्टम भू ही।।204।।
पूठि न देहि सु चोघ हु मेरि जु, वोर कृपा करि दीनदयाला।
सर्वगतो सरवज्ञ कहावत, तेरउ नाम जु सर्व विशाला।।
पूच अपावन रीति न तेरहि, तू जु सु पावन भावन लाला।
पूछि सवै इक तेरहि वार जु, तेरहु द्वार जु वर्जित काला।।205।।
पूरव तू जु अपूरब दूज नहीं, कबहू जु सु दूजि तिहारै।
पूरण शुद्ध सदा परिपूरण, आनंद पूरब नित्य बिहारै।।
पूजित देव अदेवनि तैं जु, महानर पूजित सर्व निहारै।
तोहि भजैं मुनिराय सबै, जिनराय तुही चउ संघ सुधारै।।206।।

(भुजंगी)

तु ही है सु पूज्याधिपूज्यो गुसांई। तु ही पूजयोज्ञो सयोगो सु सांई।।
प्रभू है जु पूतातमा सर्व व्यापी। विभू है जु पूजाई पूजे उदापी।।207।।
तुझी कौं रटै पूतना प्रांतकारी। तु ही है शिवो जैन देवो विहारी।।
तु ही विश्नु ब्रह्मा जिसै जिश्नु ध्यावै। सवै नांव तेरे श्रुती यों सुनावैं।।208।।
नहीं पूतिगंधो सदा तू सुगंधो। तु ही गंधवीतो अगंधो अबंधो।।
जिके पूतिगंधा सु संसारि जीवा। भजै तोहि तोसा हु वै लोक पीवा।।209।।
हमारौ जु देहा महापूति गंधा। सु याकै कुसंगै भये मैं जु गंधा।।
करै पूत देहा तु ही पूतिगंधै। तुझै नाथ ध्याये न कर्मा जु बंधै।।210।।

(छप्पय)

पूति गंध दुरगंध देह मम हौ तौ तोसा।
पूतातम चिदरूप अमित भावनि कौ कोसा।।
चिदघन रूप जु भूलि परिउ माया के फंदहि।
मोसे जीव अपार भ्रमिउ चउगति दुख द्वंद हि।।
तातैं परियो आंतिरौ, मुझ तुझ श्री जगनाथ जी।
वंदि छुड़ाय र जोगिया, देहु आपनौ साथ जी।।211।।
सत्तमि तेरसि नाथ दास तुव नेम जु लैंहि।
लघु भोजन इक ठौर करि जु उपवास गहैं ही।।
अट्ठमि चौदसि कौं जु त्यागि सव अशन र पाँनां।
तोहि जपैं जगदीस धारि उर तेरौ ध्याना।।
नवमी पूरणमासियाँ, दै जु दान भोजन करैं।
इकटक लघु ले असन जे, तेरौ ही चितवन धरै।।212।।
प्रेष्ट जु परम सु इष्ट अर्थ प्रेष्ट जु कौ वल्लभ।
प्रेम निबंधन बीत तू जु जिनवर अति दुर्लभ।।
तोसौं प्रेम करै जु साधु श्रावक सम्पत्ती।
सुरपति सेव करैं जु नागपति धारहि भक्ति।।
प्रेत जु भूत पिशाच ही, राक्षस शाकिनि यक्षहू।

तेरे दासनि तैं डरे, पीरहि नांहि कदापि हू।।213।।
पेक्षण एक तु ही जु लोक कौ पेषण स्वामी।
जाकै प्रेक्षण एक नांहि दूजौ अभिरामी।।
पेषै निज कों सोई देखई सबकौं सोई।
पगि जु रह्यो निज मांहि पार कौ लेस न होई।।
पेच न एक न तो नषैं, पंच संकल के सहु लषै।
सरणा ईसाधार तू, सरल भाव अमृत चषैं।।214।।
पेट भरी नहि अशन लैंन योज्ञो सु व्रतिनि कौं।
ऊनोदर रहिवौ सु वास धरिवौ व्रतपति कौं।।
तप संयम करिवौ जु, तू जु भाषै सव देवा।
पेड़ सकल कौ तू जु पात बिनु अगणित भेदा।।
पेल्यो पिलैं न कोई कौ, पेले सर्व विभाव जिह।
पेठा बैंगण ल्हालरा, निंदे सर्व अभक्ष तिह।।215।।
पैसा दार न सोय नांहि को लेसा ताकै।
पैसा एक न पासि अतुल कमला कहु जाकै।।
पैठि रह्यो सव मांहि पैठि सव जग मैं जाकी।
पैसे जामैं साधु त्यागि सव व्याधि सदा की।।
पैसा रुपया छांडि कैं, जाकौ आश्रय मुनि गहैं।
पैर न पैक न जासु कै, पै खबरि जु जाकौ रहैं।।216।।

(सोरठा)

पै दुग्ध जु कौ नाम, जल हू कौ पै नाम है।
पै सम उज्ज्वल राम, जल सम सीतल तू सही।।217।।
पैक जु पैर बिना जु, पैड पैंड तै मापिया।
तीसौ तू महराज, जाकी डोरी मै सबै।।218।।

(छप्पय)

पैरि रह्यो सब मांहि, नांहि को पैरा वासौ।
पैशून्यातम भाव लेस हु न धरई उदासौ।।

पैर्‌यो भवजल कौं जु पार वहु कीये जानैं।
पिशुन लहैं नहि जाहि शुद्ध कीये मुनि तानैं।।
पैजनि भी जु अनादि की, जाकी पिशुननि ना गहै।
पैशून्यादिक त्यागि सब, जाहि कौं योगी लहैं।।219।।
पिशुन कहावै दुष्ट पार की चुगली करई।
होय नरक कौ पात्र गात्र विक्रियको धरई।।
चुगली सम नहि पाप आन को जग में भाष्यो।
पापी पिशुन समान और नहि श्रुति मैं राष्यो।।
त्यागे सर्व जु पिशुनता, जो पिशुन्यातम तम दहै।
पैज एक तेरी गहै जु, तब स्वामी तोहि जु लहै।।220।।
पिशुन तनौं जो भाव, ताहि पैशून्य जु कहिये।
सबै त्यागी पैशून्य एक तुव सरण जु गहिये।।
तेरी पैठि विनां जु और की श्रद्धा नांहि।
सवै त्यागि भव भाव देव फसिए तो मांही।।
तो सौं उलझनि भली है, जो सुरझावैं जगत तैं।
पोथिनि मांही तुव जसा, तू जु उधारक अगति तैं।।221।।
तू पोषै जिनधर्म तू जु सोपैं सव कर्मा।
पोषै स्याद जु वाद तू न पोषै कछु भर्मा।।
पोसा पंडिकमणादि तू जु पोषै सु अनादि।
सामायक धर तोहि एक पूजैं अविवादी।।
प्रोषधोपवास जु कहै, पोत भवोदधि की तु ही।
प्रोहण तोसौ और नां, तू जु एक दीषै सही।।222।।
पोस जु माघ जु सीत, काल मैं चउ पथ जतिया।
वापी सरवर तीर, तटिनि तटि तप अति तपिया।।
ह्वै निरंगथ महंत त्यागि वस्त्रादिक सवही।
नगन दिगम्बर मुद्र धारि भोगाशन कबही।।
तोहि जु रटहीं निश्चिता, ध्यान अगनि उर मैं जगी।
सीत व्यथा व्यापै नंही, तोही सौं लगनि जु लगी।।223।।

पोषै विषयनि कौं जु सोक संताप लहै सो।
धोषै भूल्यों मूढ तोहि तजि पाप गहै सो।
रुलै जगत मैं नाथ जीव सठ मरण जु लिंतो।
पोरिस अपनौं भूलि पार कौ सर्व सु दिंतो।
तेरौ पोरिस जव लषै, तव अपनौं पोरिस लहै।
तेरौ सो पोरिस प्रभो, और दूसरौ को गहै।।224।।
अषै पोरिसौ तू जु पूज पोषै सव जग कौं।
पोषन हार अपार नित्य पोषै जिन मग कौ।
पोदनपुर कौ राव आदिनाथ जु कौ पुत्रां।
बाहुबली जसु नांम कामदेवो जगमित्रा।
तोहि भजे सिद्धो हुवो, पायो लोक जु सिषर पुर।
वृषभसेन तारक तु ही, पुरिमितालपुर कौ जु गुर।।225।।
तू जु भरथ कौ तार सीघ्र केवल कौ दाता।
सवै भरथ के भ्रात तैं जु तारे जगता।।
पोट अवद्या की जु नादि तैं मैरै माथै।
हांड्यो चंहु गति मांहि काम क्रोधादिक सांथै।।
अब तौ पोट उतारि हरि, दै विश्रांम दयाल जी।
पोट जु इह तनु पूति है, वीभत्सो विनु माल जी।।226।।

(सवैया तेईसा)

पोगउ मोह तनौं जिन कौं अति, काम जु क्रोध महामद लोभा।
वंचकता अर मत्सर आदि, सवै जु डरात मकार न क्षोभा।।
मोहि जु देव महादुख दीयउ, नांहि प्रभू कछु मो महि सोभा।
पोट अपावन टारहि नैं कुन, कूक सुनौं जगदेव अक्षोभा।।227।।
मोहि गह्यो विनु वारिस जांनि, सु पोट धरी कवहू न उतारैं।
सास जु लेन कभी नहि देत, महाजड़ साथ जु नित्य प्रहारैं।।
नंत वरग्गण पोट अथाह जु, पूति जु गंध महादुख कारैं।
तू अब वारिस होहु हमार हु, पोट उतारि जु तोहि निहारैं।।228।।

पोलि जु नांहि कदापि तिहारहिं, मैं इह वात सुनी श्रुति तैं जू।
कूक करौं तव तैं तुव द्वार, करौ निरवार सु लैं निज मैं जू।।
पोट उतारि हु पोचिर हौ मति, मोहि तु तेहि न्याति कहैं जू।
न्याति तनैं सिर पोट जु देखत, लाज न आवत नाथ तुझैं जू।।229।।
पौरिस एक रहै निति तो महि, और न पौरिस रूप न कोई।
पौरव एक रसौ सव तारिय, सो प्रभु तू इक ओर न होई।।
पौर कहे पुर के सुत भव्य जु, नांम इहै पुर आदि जिनो ई।
आदि जिनेसुर के सुत पौरव, तारिक तू तिनकौ जिन जोई।।230।।
पौरव नाम जु नागर कौ पुनि, नग्र जु मांहि वसैं न पौरा।
तोहि भजैं जिन पौर तिके जन, शेष सु पौर न दुष्ट जु चौरा।
ग्रामि जु मूढ़ तिके निहचै करि, जे नहिं ध्यांवहि तोहि जु गौरा।
पौरि तिहारि शक्र जु सेवहि, अर्क करै तुव दास निहौरा।।231।।
तेरिहि पौरिन नै अहिनाथ जु, चक्रि भजैं अधचक्री हु तोही।
साधु हु तोहि जपैं चउज्ञान सु धारक नाथ लषैं अति टोही।।
राव भजैं अर रंक भजैं सब, देव भजैं असुरिंद हु जोही।
खेचर भूचर मानव ढोर जु, नारक हू भजि दुरक न सोही।।232।।

(दोहा)

तेरी सी पौरि जु नहीं, तीन लोक में और।
तेरी आभा सहु करैं, तू त्रिभुवन कौ मौर।।233।।
तेरौ सौ पोरिस नहीं, सर्व लोक में नाथ।
पोरष तोसौ तो नषैं, सर्व जु तैरै साथ।।234।।
पौलोमी जु कहै शची, इंद्र जु महिषी सोय।
तुव भजि भव कै आंतिरै, पावै तुव पुर जोई।।235।।
पौलोमी कौ नाथ जो, सौधर्मा तुव दास।
पति पतनी भव आंतिरै, पाँवहि तेरौ वास।।236।।
पुष्ट जु केरौ भाव जो, पौष्टिक कहिये सोय।
पुष्ट जु पौष्टिकता धरैं, और न पौष्टिक होय।।237।।

पुत्र तने पुत्रा जिके, पौत्र कहै सव लोय।
तेरे पुत्र जु पौत्र सहु, तू जु पितामह होय।।238।।
तेंरै कोऊ एक नां, पिता पुत्र व्यवहार।
पौत्र कहाँ पइए प्रभू, तू एक जु अविकार।।239।।

(मंदाक्रांता)

तेंरै नांही किमपि सु प्रभू, पंच देहा प्रपंचा।
वंच्यो मोकौं भव वन मंही, मोह दै भोग रंचा।।
साधू तारै जिम प्रभु त्वया, मोहि हू तारि संचा।
त्यारे केइ कठिन न तुझैं, पुंडरीका अरंचा।।240।।
पंचाली जो कहहि जु जना, शुद्ध रूपा सती जो।
पंचालो जो द्रुपद नृपति, पुत्रिका द्रोपदी जो।।
ताकौ स्वामी अरजन महा, चापधारी सही जो।
द्वै जेठा जे जनक जु समा, देवरा पुत्र ही दो।।241।।
अैसी तेरौ श्रुति प्रभु कहै, द्रौपदी जांनकी वा।
ताकी लज्या तुऊ विनु परो, कौंन राखै अकी वा।।
तारै तू ही द्रुपद दुहितां, सांप्रतं स्वर्ग तीवा।
तो तैं केई शिवपद लहैं, तू हि देवो यती वा।।242।।
तेंरै स्वामी कथमपि कदा, पंजरा नांहि पंचा।
तेंरै नांही कबहुं जु प्रभू, पंच इंद्री जु रंचा।।
पंगा तोतै चरन जु लहैं, पंथ धारैं अकिंचा।
अंधा चक्षू लहहि जु प्रभू, तू जु है इष्ट पंचा।।243।।

(भुजंगप्रयात)

तुही पुंडरीकाक्ष पंडू सुघारा। प्रभू पाँडवा धार साधू उवारा।।
कहैं पिंजरो देह नामा गुंसाई। विदेहो तुही मोक्षमूल्यो असांई।।244।।
किये पंच पंचत्व तैं ही जिनिंदा। कहैं अर्थ पंचत्व नाशो मुनिन्दा।।
त्वया नासिता पंच देहा सवै ही। विदौ होपलब्धी तुझी कौं फवै ही।।245।।

नहीं पंडितो तो विना और कोई। नहीं पंडुरोगा तुझे क्वापि होई।।
तुही पंकवीता अपंका अशंका। सदा पंकजो तू हि सौगंधि अंका।।246।।
जितैं पंकजै नाथ तेरे जु पावा। मुनी भौंर तुल्या करैं रम्य रावा।।
सुपंथ प्रकाश सदाचार तू ही। कुपंथ प्रनाशा अनाचार दूही।।247।।
महामोक्ष पंथा महामोह नाशा। सु निर्ग्रंथ देवा नहीं कोई आशा।।
लग्यो पंक मेरै तु ही वाहि धोवै। नहीं तो विना और पंके जु षोवै।।248।।
तु ही है सु पंचामृतो और नांही। करै भव्य पुष्टा सपुष्टो रहांही।।
न ही पंच वस्त्रा तिहारै कदापी। तु निर्ग्रंथ देवो जिनेंद्रो उदापी।।249।।
जिके नाथ पासत्थ आदी जु पंचा। कुचारित्र धारी महामूढ संचा।।
तिके तोहि पाँवै नहीं धर्म हीना। तु ही साधु लभ्यो यतींद्रो प्रवीना।।250।।
सवै तू जु नाशै महा जे प्रपंचा। तु ही पंच इष्टो सु देवो अवंचा।।
तु ही पंच प्रावर्त्तहारी जिनिंदा। तु ही पंच व्रत्तोपदेशी मुनिंदा।।251।।
महाव्रत्त एई अणोव्रत्त एई। सही पंचभेदा महा तू जु लेई।।
हिंसा मृषा चौरता नारि संगा। त्रिश्ना सवै पंच त्यागैं असंगा।।252।।
इनौं के जु त्यागें व्रती सो जु होई। इनौं के जु पोषें अव्रती सु जोई।।
सवै भांति त्यागैं जु हिंसादि पंचा। महाव्रत्त तेई कंहावै अरंचा।।253।।
जु किंचित प्रकारैं तजैं पाप पंचा। अणोव्रत जेई कहावैं जु रंचा।।
तु ही देव इन्द्री जु पाँचो हि दंडै। तुही पंच सूना भवा पाप खंडै।।254।।
तु ही पंच प्राणीनि कौ नाथ त्राता। त्रिगुप्ती धरो देव तू ही विख्याता।।
जु एकेंद्रियाद्या सु पंचेंद्रियांता। त्रसा थावरा तू हि पालै प्रशांता।।255।।
सवै थावरा पंच भेदा जु हौंही। त्रसा चौ प्रकारा गनें नाथ त्यौंही।।
सवै तू जु पालौ दयापाल साचा। सवै पाप टालै तु जोगी न काचा।।256।।
तु ही है जु पंचांग साष्टांग वंद्या। न तो वाहिरा और देवा प्रवंद्या।।
तु ही और साधू तथा जैन वांनी। त्रयी पूजिता और पूज्या न जांनी।।257।।
महाव्रत्त पंचस्य पच्चीस भेदा। सु प्रत्येक प्रत्येक पंचैव वेदा।।
गुनें पंच पंचा जु पच्चीस हौं ही। तुझी तैं लही भावना ए मुन्यौं ही।।258।।
सुसम्यक्त आद्या जिके व्रत्त वेदा। सुल्लेखणा लौं जु चौंदा विभेदा।।
इको सम्यकौ एक सल्लेषणा जी। मिलें द्वादशा व्रत चौदा गिना जी।।259।।

अतीचार पंचैव पंचैव नाथा। सवै सत्तरी तू नसावै सु साथा।।
इके के जु घाती सु पंचैव दुष्टा। तुझी तैं तजैं पिंड तू है सु पुष्टा।।260।।
जु ईर्या सु भाषा कही एषणा जो। सु आदान क्षेपा परिस्थापना जो।।
गही तैं जु एई सु ईर्यादि पंचा। जिनौं तैं मुनी मोक्ष पावैं अरंचा।।261।।
जिके पंच मैं सुर्ग लौकांति देवा। तुझी तैं लहैं भौ धरे भौ जु छेवा।।
जिके पंच पंचोत्तरी देव शुद्धा। तुझी कौं जपें मोक्ष हौंगे प्रबुद्धा।।262।।
तु ही पाँच मैं नर्क सप्तादशाब्धी। थितीं जो बषानैं तु ही नंत लब्धी।।
कहै पाँच मैं सुर्ग आयू दशाब्धी। जु लौकांतिकौं की कहै आठ अब्धी।।263।।
तु ही पंच पंचोत्तरौं मैं जु आयू। कहै च्यारि मैं दोधिका तीस भायू।।
जघन्या इती ओर उतकिष्ट स्वामी। कहै तू हि तेतीस सिंधू विरामी।।
कहै एक सर्वार्थ सिद्धि जु मांही। सु तेतीस अब्धी कछू संक नांही।।264।।
तु ही पंचमो चक्रि शांतीस नाथो। तु ही पंचमों तीर्थ बुद्धीश नाथो।।
जु पंचाननो शंष राषै हरी जो। तुझी कौ लपै नाथ तू है धुरी जो।।265।।
लघू पंच अंका सु उच्चार मात्रा। थिती चौदमैं ठाण भाषै अगात्रा।।
तजे चौदमौ ठांण मुक्तीश होई। समै मैं पहूँचे तुझी सौ जु सोई।।266।।
सुपंचैव भावा कहै नाथ तौं ही। तिनौं के तरेपन्न भेदा जु हौंही।।
उदीकोपशांतो च क्षायोपशांतो। हुवै क्षायको पारणामो सु कांतो।।267।।
इमे पंच भावा कहै तू जु स्वामी। तरेपन्न मांहै चहै पंच नामी।।
उदीकोइकीसा जु धारै विभेदा। अठारा जु मिश्रो सवै तैं उछेदा।।268।।
उभै भेद धारै उपाशांत भावो। नहीं तो महै एक भेदो लषावो।।
न वो क्षायको पारिणामो त्रिधा जो। तिनौ मांहिं पंचैव धारै सुधा जो।।269।।
धरै च्यारि क्षैकाइको पारिणामों। तजै भाव सारे सही तू विरामो।।
सुज्ञांनो दृगो केवलो क्षायको वा। सु सम्यक्त चारित्र सिद्धत्व जोवा।।270।।
गहै पंच भावा तजै आठ छक्का। सु तो सौ तुही देव देवो जु इक्का।।
कहैं पंच लब्धी तुही लब्धि स्वामी। सु क्षायोपशांती विसोही च नांमी।।271।।
जु देसना त्रितीया सु पावोग चौथी। सुकर्णा जु अंती नहीं होय थोथी।।
भई च्यारि नंती जु वेला गुसांई। हमैं देऊ अंती न औरै असांई।।272।।
हते आश्रवा पंच तै ही अतीता। जु मिथ्या प्रमादा अव्रता वितीता।।

कषाय च योगा नहीं नाथ तैरें। पचौं के सतावन्न तोकौं न छेरैं।।273।।
सही पंच मिथ्या प्रमादा च पंद्रा। अव्रता दसा दोधिका मूल तंद्रा।।
कषाया पचीसा सत्तावन्न एई। सवै योग पंद्रा पमादे गनेई।।274।।
गहैं जीवलोका इनौं कौं न तू ही। तु ही आश्रवातीत बोधस्समूही।।
तु ही पंच पंचोत्तरा उच्च भाषै। नवो नोत्तरा पंच नीचै जु राषै।।275।।
तु ही पंच अस्ती बिना काल गावैं। मिलावैं जु काला तवै द्रव्य नावै।।
कहै द्रव्य भेदा जु तू ही षडेते। हतै दोष सारे जु रागादि जेते।।276।।
तु ही सप्त तत्त्वादि भाषै दयाला। मिलें पुण्य पापा कहै नौ विशाला।।
सवै तत्त्व भावा पदार्था कहै तू। तिनूं मांहि एको निजो भाव है तू।।277।।
नही पंच वर्णा रसा पंच तैरै। नही दोय गंधा तुझे नाथ घेरे।।
न अष्टा सपर्शा नहीं सात शब्दा। तु ही है चिदानंद देवो अशब्दा।।278।।
तु ही पंच पैंताल भाषै गुसांई। तु ही पंचमी ठौर दाता असांई।।
गती च्यारि छूटैं तिहारे प्रभावै। लहै मोक्ष भूती जिके तोहि ध्यावै।।279।।
कहै पूरवै पाँडवा पंच वीरा। जिनौं मैं सु कौंतेय तीनौं सुधीरा।।
तिनौं कौं सु तद्भौगहे तैं जु पासे। किये सिद्ध देवा महा सौषि रासे।।280।।
जिके दोय माद्रेय ल्हौरे सवौ मैं। तिके तैंजु कीये महादेव तौं मैं।।
गये सव्व सिद्धि तुझै ध्याय दोई। चये मोक्ष हौंही गहे एक भोई।।281।।
तुही पंचकल्याण भोगी अभोगा। सही पंचमी जौं निदाई अरोगा।।
तुही मेरू पंचा करै पावनोजी। तु ही पंचमासिंधु तै न्हान कोजी।।282।।
तु ही पंच चारित्र भाषै दयाला। तु ही पंच आचार राषै विशाला।।
तु ही पंच मिथ्यात छेदो गुसांई। तु ही पंच विघ्नस्य नाशो करांई।।283।।
तु ही पंच ज्ञानानि भाषै गुरू जी। गहै एक कैवल्य तू ही धुरू जी।।
हतैं पंच ज्ञानावृती कर्म तू ही। हतैं पंच निद्रा जु तू ही समूही।।284।।
कहै पंच नौकार मंत्रो जु तू ही। नया सौ जु मंत्रा लपै तू अदूही।।
महापंच अंकांक मंत्रो जु स्वामी। कहै तू ही नित्यो प्रभू अंत्र जामी।।285।।
कहै नैक मंत्रा तु ही मंत्र रूपो। सु मंत्री महामंत्र देवो अनूपो।।
कहै तू जु ध्यानेश पंचैव तत्त्वा। सवैं पौंन विद्या कहैं तू सु सत्वा।।286।।
कहै पंच पौनां तु ही पंच रूपा। जु चौ निस्सरा एक कूटस्थ भूपा।।

क्षती बारि वह्नि समीरा निकासा। नभोरूप वायु अनिकास भासा।।287।।
तिनौं के जु बीजाक्षरा पंच तू ही। कहै मोक्ष देवा तु ही है समूही।।
तुलंवं तुरंयं तुहं मंत्र तू ही। सबै बीज देवा तुही है अदूही।।288।।

(सोरठा)

तिथी वार नक्षत्र, योगा करणा ते भला।
जिनमैं तोहि जु मित्र, जपिये ते पंचांग वर।।289।।

(छप्पय)

अ सि आ उ सा पंच परमेष्टि जु मंत्रा।
अहनिसि ध्यावै नाथ ते तुझें लहहि सुमित्रा।।
ह्रां ह्रीं ह्रों ह्रौं ह्रः जु एसु हैं काज जु बीजा।
इन तैं तोहि लहै जु एक तू और न वीजा।।
पुरष जु लक्षण पंच है, दान भोग गुणरागता।
विद्यापारग सुभटता, सबतैं सरस विरागता।।290।।
मोंमैं लक्षण नाथ एकहूँ नांहि मिलै को।
पंच प्रकार अनर्थ दंड मो तैं नठि लै को।।
आरति रौद्र कुध्यान पाप उपदेश जु निति ही।
हिंसक पालन नाथ श्रवण है दुश्रुति तति ही।।
जातैं हिंसा होय सो, वस्तु जु क्रय विक्रय रहैं।
ए अनरथ दस आध जे, तोही तैं भविजन दहै।।291।।
ध्यान जु कारण पंच तासु कौ नाम न मेरै।
प्रथम जु परम विराग तत्त्व विज्ञान न नेरै।।
निरग्रन्थातम भाव चित्त जीतन नहि जांनू।
सहिवौ नांहि परीष क्रापि तप भेद न ठांनूं।।
कैसैं छुटिवौ जगत तैं, जौ लग तू न कृपा करै।
ध्यान जु कारण पंच ए, तो ही तैं मुनिवर धरै।।292।।

(अरिल्ल)

पंच जु पर्वी नाथ योज्ञ सब ही सही।
परि अट्ठमि अर चउदसी जु अति ही कही।।
पंचमि अति ही योज्ञ कहै तू ही प्रभू।
भवसदत्त अर नागदत्त सुषकर विभू।।293।।
छट्ठम गुन लौं नाथ प्रमादा पंच जे।
सप्तम मैं परमाद नांहि परपंच जे।
दर्शन आदि एकादश पडिम जे।
तू भाषै जगदीश देशव्रत मूल जे।।294।।
पंच भरत अैरावता जु जे पंच हैं।
पंच महा जु विदेह सदा सुख संच है।।
पंच पंच अर पंच मिले पंगा जिके।
तू जु वषानैं कर्म भूमि एहैं तिके।।295।।
त्रिंसत भोगधरा तू हि भाषै प्रभू।
एकक मेरू प्रवांन छह छहा जे विभू।।
पंच मेरू परवांन तीस है भोग भू।
तिन तैं मरि करि देव हौंहि निश्चै स्वभू।।296।।
पंच विदेह तने जु एक सौ साठिया।
सर्व विदेह इते जु कहै श्रुति पाठिया।।
भरत पंच अैरावता जु पंच सु जवै।
सवै मिली सौ सत्तरी जु हौंही तवै।।297।।
तिन मैं पंच जु पंच म्लेच्छ खंड जु सही।
एकक आरिज खंड नाथ भाषै तु ही।।
सबै जु साढा आठ सै जु म्लेच्छा धरा।
सौ सत्तरि परवांन सर्व आरिज गुरा।।298।।
आरिज मैं सम्यक्त ऊपजै कोई कौं।
म्लेछ लहैं नहि बोध तजैं नहि वोइ कौं।।

दस आरिज जे भरत मिलि जु अैरावता।
इनमैं रीति एक भांति तू गावता।।299।।
कबहू भोग जु धरा कर्म भू है कऊ।
ओर ठोर इक रीति न कहै तू ही प्रभू।।
दस आरिज मैं कालचक्र फिरिवौ कर।
और ठौर कालो जु एक रीति जु धरै।।300।।
प्रलैकाल होई जु कल्प के अंत मै।
दस ही आरिज मांहि सुन्यो इह तंत मैं।।
ए सब भेद जु भाव तो विना को कहै।
सदा अभेद जु भाव एक तू ही रहै।।301।।
सबै ज्योतिसि देव पंच ही भेद जे।
चंद सूर तारा नक्षत्र गृह वेद जे।।
तोही कौं ध्यावैं जु सर्व कौ नाथ तू।
बनभावन सुरनाथ जपै बड़हाथ तू।।302।।
तू पंचत्व निवारि हमारौ सांइयां।
पंच वि कारण देहु विमुक्त गुसांइयां।।
द्रव्य क्षेत्र अर काल भाव भव अति भले।
इनकौ पाय जु साधु बहुत तोसौं मिलै।।303।।
पंचम कोइल नाम शब्दजित तू जु ही।
पंच रतन दातार पंच पद तू जु ही।।
पंच वरण तू ही जु वरण कौ नाम नां।
पंच वरण प्रतिमा जु हरैं सव कांमनां।।304।।
पंच काम के वांन हरै तू ही प्रभू।
पंचम काल जु मांहि राषि पति मुझ विभू।।
पंच द्रव्य जड़ रूप चेतनो एक ही भाषै।
श्री जगदीस द्रव्य षट मैं सही।।305।।
बहुरि अमूरत पंच पुद्गलो मूरती।
तू भाषै जगदेव नांहि तू मूरती।।

पंच पल्यकौ आयु प्रथम अर दूसरै।
सुरग जु उतकिष्टो जु देवनारी धरैं।।306।।
पंचानन जे सिंह करैं अति पाप तौ।
पंचम नर्क थकी जु जांहि तू भाष तौ।।
पंथ लूटि तो कौ न लहैं वट पार जे।
पंच पाप कौं त्यागि लहैं तत सार जे।।307।।

(सवैया तेईसा)

स्त्री पशु शूद्र नपुंसक कौ नहि, पंचम तै अधिकौ गुनठांनां।
श्रावक व्रत्त धरै मुनि व्रत न, तू इह भेद कहै परवानां।।
पंचम ठांन महैं प्रतिमा दस, एक अधिक्क जु तैं हि बखाना।
देव जु नारक कौ चउथे तहि, ऊपरि होय न व्रत्त प्रधानां।।308।।
एक जु इंद्रिय ले अमना लग, आदि जु थान विनां नहि ठांनां।
मानव चौदह लौं पहुंचै प्रभू, तोहि जु ध्याय सु सिद्धि विधानां।।
पंचहि भेद मुनीसुर के प्रभु, आदि पुलाक अनादि निधाना।
पंचहि भेद सिकाव तने शुभ, तू हि जु भाषइ कारन ध्यानां।।309।।
वाचन प्रच्छन ओर जु धर्म निदेशन वार जु वार विचारा।
आम जु नाय गनें दस आध जु एसु सिझाव तनें विसतरा।।
पंच प्रकार जु नारक आपद तू हि मिटावहि देव अपारा।
पंच प्रकार विषें नहि तो महि पंच स्वरूप जु तू अविकारा।।310।।

(भुजंगी)

नहीं कोइ पंचायती देव तैरै। तु ही नाथ पंडा प्रमादा जु घेरै।।
विषै पंच इंद्री कषाया जु चौही। जु दुष्टा कथा च्यारि व्यर्था सवौ ही।।311।।
जु निद्रासने हो सवै दोष पंद्रा। नहीं नाथ तो मैं सही तू अतंद्रा।।
इनौं के जु भेदा सवै साठ सैंती। हजारा न तो मैं कभी नां बसैं ती।।312।।
पचीसा कषाया पचीसा कु वाला। इनौं के जुनें हैं प्रभु जी विख्याता।।
धसैं पंचवी साधिका जे प्रमादा। गुनें पंच इंद्री छठैं चित्त कादा।।313।।

सवै होंहि साठा जु सैंतीस सै का। फलावै जु पंचैव निद्रा सु लै का।।
तवै हौंहि पौंणा गुनीसा हजारा। करै दूण लै मोह द्वै भांति भारा।।314।।
तवै हौंहि साढ़ा जु सैंतीस भेदा। हजारा सवै देव तैं ही उछेदा।।
न पंडा न एते सवै भेद तो मैं। हरौं नाथ मेरे सुलाँगे जु मों मैं।।315।।
तु ही जो हतै तीन जोगा जु पंडा। वचो जोग च्यारयों मनो जोग अंडा।।
चऊ औ तनू जोग सप्ताह तै तू। इहै जोग पंद्रा जु सुत्ते कथै तू।।316।।
विना कर्म भू तू उधारै न कोई। तिके पंद्रहा भूमि पूर्वै सुनाई।।
तुही जो कहै नाथ पंद्रा जु भेदा। सुपात्रा कुपात्रा अपात्रा विवेदा।।317।।
त्रयी भेद पात्रा जु नौधा सू ह्वै ही। त्रयी जो कुपात्रा त्रयी ही रहैं ही।।
त्रयी जे अपात्रा मिलें ए जु पंद्रा। सवै भेद भासै तु ही जो अतंद्रा।।318।।
तु ही पंद्रहौं जो मनूं आदि स्वामी। जु चौदा पछें नाथ ऊष्यो अनामी।।
जिके षोडसा भावना नाथ भावै। तिनूं मांहि सम्यक्त आद्यो सु नावै।।319।।
विना दृग विशुद्धी न पंद्रा जु कांमा। मिलें दृग्विशुद्धी जु पंद्रा सु कांमा।।
तुही भावना षोडसा नाथ गाबै। तु ही भावना पंचवीसी बतावै।।320।।
तुही भावना द्वाद्वशा नित्य भावै। तु ही चौ सु मैं आदि भावी प्रभावै।।
उपाध्याय धारैं गुणां पंचवीसा। तुझी कौं रटैं नाथ तू है अधीशा।।321।।
त्रितीयें सु ग्रीवें जु आयू प्रबंधू। कहै तू हि पंचाधिका बीस सिंधू।।
महायोजना पंचवीसा पहारो। सु वैताढि नामा कहै तू विथारो।।322।।
नहीं पंचबीसा कषाया जु तैरै। नहं पंचबीसा अवार्ता जु नैरै।।
नहीं होई तीर्थंकरा पंचबीसा। सही होइ देवा सु चौबीस ईसा।।323।।
इहै नाथ तेरौ श्रुती ठीक गावै। जु नौकार पैंतीस अंका गिनावै।।
नहीं ओर मंत्रो जु कोई इसो जी। अनादिश मंत्रो इहै तो समो जी।।324।।
इनू अक्षरौं तैं करैं जे उपासा। सु पैंतिस ते हौंहि तेरे जु दासा।।
सु नौकार पैंतीस व्रत्तो कहै तू। सु संविति व्रत्तो युगादीश है तू।।325।।
जु सप्तै व सातैं तु पाँचे जु पंचा। चऊदा जु चातुर्दशी जे अरंचा।।
नवो नोंमि भैले जु पैंतीस हौंहि। उपासा जु पैंतीस नौकार सौं ही।।326।।
तु ही नाथ भाषै जु सिद्धसिला जो। सही लाख पैंताल योजन महा जो।।
तिसीं कै जु ऊचैं सु सिद्धो जु क्षेत्रो। इतो ई प्रमांणो कहै तू विजेत्रे।।

तहां सिद्ध राजैं अनंता प्रभू जी। तु ही सिद्ध देवो विशुद्धो विभू जी।।327।।
अढ़ाई जु दीपा हु पैंताल लक्षा। सुयोजन महा तू हि भाषै अलक्षा।।
नौ बाहिरे मानवा नांहिं होई। बिना मांनवा मुक्त होई न कोई।।328।।
जिके एक सौ नाथ चालीस आग। धिका सर्व कर्मा प्रकृति जु माग।।
तिनौं मांहि तीनौं न मिथ्यात मैं जी। इके तीरथ दोय आहार कैं जी।।329।।
सदा सर्वदा नाथ मिथ्यात ठाणें। कहै तू प्रमाणा प्रकृति विणाणे।।
जु सौ ऊपरै दैव पैंताल सर्वा। तु सत्ता प्रकृती वषांनै विगर्वा।।330।।
जु पंचास लाखा सु कोड़ी प्रमाना। जवै सागरा नाथ वीते समाना।।
गयें मुक्ति आदीश्वरैं दूसरौ जी। अजीतो भयो देव नाभेय सौ जी।।331।।
जिको ऊपज्यो जैत्रशत्रू धरैं जी। जु पंचास नौवा तनू जो धरैं जी।।
इहै तू ज भाखे तु ही है अजीतो। तु ही आदि देवो सवै दोष वीतो।।332।।
तु ही षोडसैं सुर्ग देवीनि की जी। बतावै थिति पल्य पंचावनीजी।।
तु ही पल्य भेदा त्रिधा जो प्रवानैं। तु ही सागरा सूचि भेदा बषानैं।।333।।
तु ही नाथ नासै प्रकृत्ती वयाला। जु नांमैं तनी सर्व स्वामी विशाला।।
सुपिंडा प्रकृती जु चौदा सवोई। अपिंडा अठाईस निश्चै जु होई।।334।।*
निज परणति पदमनि जिको सो हमकौ दे नाथ।
पदमनि चित्रनि शांखिनी। हस्तिनि सौं नहि साथ।।335।।

इति श्री पकाराक्षर संपूर्णम्।

फ

आगै फकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

फलाढ्यं फलदातारं, फल्गुभावविवर्जितं।
फाल्गुने कार्तिके मासे, शुचौ व्रतोपदेशकं।।1।।

---

* 335 से 342 तक के छन्द का एक पृष्ठ मिल नहीं रहा है।

सर्वदा पूजितं धीरैः देवं देवेद्रवंदितं।
फेनतुल्याज्जगत्कामाद्वितीतं परमेश्वरं।।2।।
फंदादिरहितं वीरं, वंदे सर्वाक्षरात्मकं।
सर्वमात्रामयं धीरं, लोकाधीशमतीश्वरं।।3।।

(सोरठा)

फकारांक विख्यात, झंका वायु तनौं बुधा।
कहंही नांम जु तात, तैरै झंझावात ना।।4।।
झंझावात विरुद्ध, जीवनि कौ दुखकार जो।
करइ जु तू सुनिरुद्ध, पंचकल्याणक मैं प्रभू।।5।।
सीतल मंद सुगंध, पवन जु पंचकल्याण मैं।
वजहि जु इह परबंध, तू सबकौ सुखकर सदा।।6।।
भय रक्षण कौ नाम, कहै फकार जु श्रुति विषै।
तू भयहर शिवधाम, भय कौ तू जु भयंकरा।।7।।
सप्त प्रकार जु भीति, सप्त प्रकार जु ईति जे।
तोतैं तजहीं प्रीति, डरै दास के दास सौं।।8।।
मरण वेदना द्वै जु, इह भव पर भव चोर भय।
बिनु रक्षा कौ भै जु, अकसमात मिलि सप्त ए।।9।।
ए भय सप्त प्रवांन, भीति कहै इनकौं बुधा।
सुनहु जु ईति विधान, सप्त जिके दुखदायका।।10।।
अति वर्षा च अवृष्टि, मूषक शलभा शुक गणा।
स्व पर चक्र नहि इष्ट, धान जु मंहगौ इन थकी।।11।।
सर्व ईति औ भीति, व्यापै दासनि कौ नहीं।
डरिकैं तजहीं प्रीति, भागैं दासनि कौं लखी।।12।।
फुनि इह थुति कौं नांम, कहैं फकार जु पंडिता।
तेरी थुति हि जु कांमि, ओर निकम्मी बात सहु।।13।।
तेरी भगति अधार, और न दूजौ आसिरा।
तेरी स्तुति जु अपार, करहीं मुनिवर गणधरा।।14।।

सुर नर नागपती जु, तोहि जपै अह निसि प्रभू।
तौंकौं ध्याय यती जु, पहुँचै तेरे पुरि हरी।।15।।
फकारांक कौ अर्थ, कहैं जु पंडित और हूँ।
सोर जु होय अतिर्थ, कहैं पकाट जु कार हू।।16।।
तेरै सोर न कोय, तेरी धुनि मधुरा प्रभू।
हरौ हमारै दोय, पुण्य पाप जे सोर हैं।।17।।
पाप नासिवे काजि, प्रथमहि पुण्य सु देहु जी।
पुण्य हु हरि महराजि, तत्त्व बोध दै नाथ जी।।18।।
तोकौं सर्व फबै जु, तू सबकौ प्रतिपाल कर।
तोतैं पाप दवै जु, प्रभू पापहर तू हरो।।19।।
तोसौ तू ही देव, ओर न तेरी तुल्य को।
दै प्रभु हमकौ सेव, सब परि तेरौ वास है।।20।।

(त्रिभंगी)

प्रभु फटिक समाना, निर्मल ज्ञाना, अवगम मांना, फलदाता।
प्रभु अतिफल रूपा, मुकति सुरूपा, भुकति अनूपा, जगत्राता।।
प्रभु फल्गु जु नांहि, फलित सदा ही, सकल जु मांहि, शुचिपिंडा।
कहु फल्गु जु अर्था, प्रगट सुव्यर्था, प्रभु न अनर्था, जड़ छंडा।।21।।
जित जगतति देवा, फणपति सेवा, करहि अछेवा, गुणमाला।
हरि हर मुनि ध्यावै, नरपति गावै, भजि जु नसावै, भवमाला।।
प्रभु फटइ न फूटै, कबहूं न लूटैं, जमहि जु कूटै, जसु दासा।
जर जर्जर नाहीं, जुर जु हराहीं, निकट रहाहीं, विनु वासा।।22।।
फल फूल न पाता, फलित विख्याता, जगत प्रमाता, शिवत्राता।
निरदुंद सदा ही, अतुल प्रभा ही, रहित व्यथा ही, अति पाता।।
मन फदक मिटावै, जन समुझावै, तपति बुझावैं, सुखकारी।
अति ही बड़भागा, परम विरागा, रहित विभागा, प्रभु भारी।।23।।
प्रभु करण फ्ते को, मदन हते को, परम विवेको फलि जु रह्यो।
जित फलिह सुरूपो, फल जु अनूपो, त्रिभुवन भूपो, श्रुति जु कह्यो।।

नहि फदक जु कोई, सबमय सोई, अति गति होई, जिन योगी।
फणि कौं नागेंद्रा, कियउ जिनेंद्रा, तैं हि मुनेंद्रा, अतिभोगी।।24।।
पदमावति कीनी, तैं हि अधीनी, लखि अति दीनी, अहिपतनी।
पति पतनी धारे, जरत उबारै, देवत कारे, अति जतनी।।
फरहर जु पताका, धुजपति पाका, जग बेबाका, जग राजा।
फर फर नहि कोई, फबइ जु सोई, फसि उन होई, शिव भाजा।।25।।
कितहू नहि फसियो, किनहि न कसियो, निज गुण लसियो, कर्म हरी।
फसिहै नहि कबहू, फफइ न कितहू, जगत सुपतिहू नगन धरी।।
फसिवौ नहि फफिवौ, तनु नहि धरिवौ, जड़ सहू हरिवौ, हरि तेरै।
करमनि कौ कसिवौ, शिवपुर धसिवौ, निज महि फसिवौ, करि मेरै।।26।।

(सवैया इकतीसा)

मोह कौ फॅरफराट मेटै तू जगत राट,
पाट धारी तू विराट नायक अनूप है।
फरकै न फुरकै जो निहचल दसा दयाल,
एकता कौ आगार अनेकता सुरूप है।।
उठिकैं जु प्रात जाकौ नांव सहु लेंत लोक,
सबनि कौ पालक अनंत बड़भूप है।
फणपति सुरपति नरपति खगपति,
मुनिपति गणपति ध्यावै तू निकूप है।।27।।

(सोरठा)

हमरै कंठि जु फांसि, मोह ठगैं राली प्रभू।
काटि अविद्या रासि, लै पहुंचाय सु निजपुरा।।28।।
फांस हृदै कै मांहि, चुभी हमारै सल्य जो।
तू काटै सक नांहि, माया मिथ्या सोच जो।।29।।

(सवैया इकतीसा)

फाकी तेरे सूत्रकी सु हरै मायामोहकौं जु,
फकै जु विभावनिकौं औषधी सुरूप जो।
जीव के असाधि रोग जनम जरा मृत्यु सोग,
सब ही नसावै देव अैसी है निकूप जो।।
याकौ करैं सेवन जु साधु सब बाधा जीत,
याकौ जस गावैं सुर नाग नर भूप जो।
फासि सब करै यातै तेरो ई प्रशाद इहै,
औषध कौ दायक तू वैद है निरूप जो।।30।।
फाकी लेय औषध की पथ्या जे रहैं सदीव,
अभख अहार त्यागि तजै जु कषायकौं।
जीभ वसि राखै अर नारी कौ न स्वाद चाखै,
अलप अहार लेय राखै दिढ़ कायकौं।।
तवै रोग कटै नाथ कभी नाहि करैं साथ,
कल्पकाय हौंहि जीति पित कफ बायकौ।।
बहुतनिकौ रोग हर्‌यो इहै जाची औषध जु,
फाकी देहु हमैं देव हरै जो बलायकौं।।31।।
फाल चूकौं नादि कौ जु फारिक न भयो कभी,
फंस्यो मायाफांसिमैं सु वादि ही जु उरझ्यो।
तू ही फांसि काटि अर फारिक कहै जु मोकौं,
कर्मनि कौ जोर सब तोनषैं जु मुरझ्यो।।
फांफ मारते जु काम क्रोध लोभ मोहादिक,
तोहि लखि नासे अब जीवगण सुरझ्यो।
फारी तोरी नांहि अर फारी तोरि डारे जड़,
रागादिक अंस षोवा तुही है अमुरझ्यों।।32।।
फाटि टूटि जाय सो तौ पुग्गल कौ रूप सब,
फाटिवौ न टूटिवौ न जीव मांझ देखिये।

ऐसौ भेद तोही तैं लख्यो जु भव्यजीवनि नै,
फारक सफार तू ही आप मांहि पेखिये।।
स्फार कौ अरथ नाथ कहै विसतीरण जो,
तू ही विसतीरण अनंत रूप लेखिये।
गुण की अनीक तेरैं नीके गुण एक रूप,
महा फार देव तू ही सब तै विसेखिये।।33।।
सीत कौ जु जड़ता बखानै सब लोक नाथ,
जड़ता अज्ञानता जु सीतता इहै सही।
जामैं ज्ञान भानु कौ जु तेज नांहि दीखै कहूं,
ध्यानानल सीत भई जाड्यता प्रभाव ही।।
वायु बधी जीवनि कै कंपनी चढ़ी जु रहै,
वायु तै बकैं जु योही मूढ़ता स्वभाय ही।
पर कौं कहै जु आप ज्ञान बिनु गहैं पाप,
इहै वायु हरौ ईस हमरी अनादि ही।।34।।
जड़ता वितीत होय सीतता समान सोय,
फागुन सौं सम्यक जु प्रगटै प्रथम ही।
ज्ञान रवि तेज लहै ध्यानानल ताप गहै,
जीव जो गुलाब सम फूलै जु मधुर ही।।
चित्त भंवरो जु सोई सुखमकरंद लेय,
स्यामता नसावै सब एकता प्रभा यही।
चारित जो चैत्र सोई प्रगटै तवैं जु वेगि,
त्यागि लोककांनि सब स्वेच्छता विहार ही।।35।।
ऋतुराज सम मुनिराजता प्रगट होय,
दिन दिन तप कौ प्रभाव होय अधिकौ।
वैसाख वृषत्वता जु मिटि जेष्टता सु होय,
शुचि कौ प्रकाश वेगि होय रस वधिकौ।।
सावन समान मन भावन पुनीत भाव कर,
झर लावैं अमृत कौं परम समिधि कौ।

भादव समान भद्र भाव शुक्लो जु होय,
सरद समान केवलातम विसुधि को।।36।।
सीत चौकरी जु गयी जाड्ता वितीत भई,
फेरि कभी काल माझ होय नांहि सिद्ध कै।
सरद समान भाव रहैं अति उज्जल जै,
जनम जरा जु मृत्यु व्यापै नांहि वृद्ध कै।।
सिद्ध सौ न वृद्ध कोऊ सिद्धता भर्यो जु सदा,
जर्जरता नांहि कहूं पूरण समृद्ध कै।
हमैं सिद्ध करौ देव स्वच्छता स्वरूप भेव,
ऋद्धि-सिद्धि वृद्धि कौ जु सागर प्रसिद्ध कै।।37।।
सिद्ध के अनंत गुन पै जु कर्म आठ गएं,
प्रगटे जु सम्यकादि अष्ट जे महागुणा।
क्षायक जु सम्यक र ज्ञांन दृग वीरज औ,
सूक्ष्म अगूरलघु अवगाहना मुणा।।
अव्यावाध आठ एईं जिनका जु ध्यान धरि,
व्रत करैं भव्य जीव सिद्धचक्र जो सुणा।
अठाई कहैं जु जाकौं आठ दिन व्रत विधि,
तू ही भाषै कीरति जु कर्म कोढ़ की लुणा।।38।।

(सोरठा)

फागुन कार्तिक मास, फुनि आषाढ़ जु अष्ट दिन ।
शुक्ल पक्ष उपवास, अष्टमि सौं पून्यौ सुधी।।39।।
अथवा शक्ति प्रमांन, करिवौ इह व्रत अवसि ही।
सिद्धनि कौ धरि ध्यान, भव्यनि कौ भव तारनौं।।40।।
फिकर सबै मिटि जांहि, दुख दारिद नासैं सबै।
भय कौं भय उपजाहि, सिद्धचक्र विधि करन तैं।।41।।
तेरे गुण परिनाथ, व्रत इहै जु अनादि कौ।
तू भासै शिव साथ, याकौ जस ग्रन्थनि विषै।।42।।

(सवैया इकतीसा)

कियोजु फ्त्नूर महामोह जो फिसादी अति,
तोतैं पारि आंतिरौ जु मोहि वंदि मैं कर्‌यौ।
बांध्यो अंस अंस मेरौ छुड़ायो जु ध्यान तेरौ,
विषै के विनोद लाय देव देह मैं धर्‌यो।।
फिरयो जू अनादि तैं जु त्रस ओर थावर मैं,
जनम मरण पाय दुख अति ही भर्‌यो।
अबै नाथ अभैदांन देहु मोहि दीन जानि,
वंदी छोड़ विरद जु राज्य तैं नहीं टर्‌यो।।43।।
जैसे वस्त्र उजल जो डारिये मजीठ मांहि,
विना लोद हरड़ै फिटकरी जु रंग नां।
तैसे जीव तप मांहि प्रेर्‌यो द्रव्यलिंगिनि नै,
तेरी रुचि सरधा भगति कौ जु संग ना।।
रंग नहि लहै नाथ अनुभौ के मारग कौ,
धूसरौ सो रहै यों ही लहै ज्ञान अंग ना।
तेरी रुचि सरधा भैं गति लेय तप धरै,
पीवै रंग पावै शुद्ध सिद्धि जो वरंगना।।44।।
फिर्‌यो डांवाडोल ह्वै करम के कलोलनि मैं,
मेरी दसा फिरिवे की अति ही जु देखिये।
तेरी किरपा तैं नाथ फिरिवौ सकल मिटैं,
फिकर मिटावन जो तेरी धुनि पेखिये।।
सुनि फिरियादि मेरी फिरिवौ मिटाय देव,
फिरि फिरि कहूँ कहा तू ही अति लेखिये।
तेरै नांहि फिरनौं सु विहर्‌यो सकल मांहि,
बिना हो फिरन हीं विहारी विसेखिये।।45।।
फिल्ल पारयो तैं ही मोह गयो फिसकाय भागि,
तोसौं लरि सक्यो नांहि चोरनि कौ रावही।

फिट्ट फिट्ट कीयें तैं जु राग दोष सेनापति,
तो नषै नसाय गये सकल विभाव ही।।
फील देनहार तू जु ज्ञान रूप दीरघ जो,
कर्मरूप कूकर जहां न दाव पाव ही।
फीटी बात तेरे जिन आगम मैं नाही जिन,
फीटी बात कियें नाथ तू न हाथ आवही।।46।।
फीटे परे काम क्रोध दासनि सौं लरै नांहि,
तेरी धाक आगैं परपंच जो नसाव ही।
फीनी पकवांन आदि स्वाद सब त्यागि साधु,
रूखा टूका षाय एक तोहीकौं जु ध्यावंही।।
फीच काटि सोग की सुफिहादिक रोग नासि,
फुनसी न फोरा कोऊ योग के प्रभावही।
फुटकरता मिटि फुनि गुन समुदाय होय,
इहै तैरी भक्तिकौ प्रताप मुनि गावही।।47।।
तेरे गुनु फुटकर न होय कभी लोकनाथ,
फुनसी न फोरा कोऊ तेरे जू शरीर मैं।
फुरकै न आंखि तेरी अनिमिष तू जु देव,
सुख के सहाई सब भीरी तू हि पीर मैं।।
तोकौं भजैं अंवर कौं त्यागि ह्वै दिगंबर जू,
फुलकारी आदि की सुभावना सबै बमै।
दारि भात फुलका सवाद तजि व्यंजन के,
तुछ रूक्ष भोजन ले नीरसो जु नीर मैं।।48।।

(सोरठा)

फुनि फुनि तेरौ ध्यांन, छिन छिन तोहि न वीसरै।
तव पावैं निज ज्ञांन, और न कारन दूसरौ।।59।।

(सवैया इकतीसा)

फूलि चित्त की जु करि तेरौ जस गावैं साधु,
फूल पाँन त्यागि सब ब्रह्मचर्य धरिकैं।
फूल पाँन भोग मांहि दोष तैं बखानैं नाथ,
तोहीकौं निहारे देव शक्र दृष्टि भरिकैं।।
फूटिफाटि नांहि तेरे भांवनि मैं देखिये जू,
फूलि रह्यो फलि रह्यो आपरूप करिकैं।
पूज्यो एक फूलतें जु मालिनि सुता अयान,
दोऊ तेरे पूजन तै भई देवि मरिकैं।।50।।
फूँकि फूँकि पग धरैं जीव की जु रक्षा करै,
अैसै मुनिराज नाथ तोही कौं चितारहीं।
फूस सम रागादिक जारै ध्यान पावक तैं,
भगति पवन प्रेरि भस्मभाव कार ही।।
त्रिण कौं जु नाम फूस ता समांन भोग जग,
कभी नांहि चाहै साधु तत्त्व कण सार ही।
फूलौ काटि मिथ्याकौ जिनागम सु अंजनतैं,
दृष्टि करि शुद्ध एक ब्रह्मकौ विचार ही।।51।।
फेन सम जग भूति तड़ित समान देह,
बादर की छाया निभजाया जगजाल है।
इंद्र चाप तुल्य भोग भावना विनश्वर जो,
बुदबुद जल के प्रमांन धन माल है।।
यामैं नांहि सार कोऊ सार एक तू जु होऊ,
अब तू उधारि प्रभु सबै दुख टाल है।
फेरी जग मांहि देत मोहि नंत काल बीत्यो,
फेरि फेरि कहूँ कहा करण निहाल है।।52।।

(सोरठा)

फेस्यो फिसै न तू जु, फैलि रह्यो सब ज्ञेय मैं।
फेर्यौं जन्म न कूंज, रोपू सो करि नाथ जी।।53।।
फैसल करि मोतैं जु, कर्मनि की वाकी जिको।
नहि छिपियो तोतैं जु, मेरो हाल हवाल सहु।।54।।
फैंटा पघरी आदि, एक न वस्त्र धरै तु ही।
नगन स्वरूप अनादि, पै लक्ष्मी कौ नाथ तू।।55।।

(सवैया इकतीसा)

फैल फाल नांहि तेरे मत मैं विलोकिये जु,
फैकट न एक कोय तेरे दरबार मैं।
फैंन विनु जैंन तेरो अैंन जो विलोकिये हो,
दीषै न विकार भाव जाके विसतार मैं।।
फोरा तोरी नांहि तौऊ फोरे तैं करम सब,
फोरा सम आकुलता तेरे न विचार मैं।
सवैं फोरा मिटि जाय फोरै में जु ध्यावै तैं जु,
अमित सुखी जु होय जीव तेरे प्यार मैं।।56।।
फोक सम ऋद्धि सब जग की न चाहिये जू,
कण रूप भक्ति मोहि देहु कृपा करि कैं।
क्रोध लोभ मोह की जु फौरि तू ही भांजै नाथ,
फौरि तैं वितीत तू जु सत्य रूप धरि कैं।।
फौंज नांहि कोऊ संग एकलौ सदा अभंग,
नित्य सेना तेरे ई जु नांहि जाहि टरि कै।
सकति अपार गुन गुन मैं अनंत शक्ति,
गुन हूँ अनंत तोमैं रह्यो तू जु भरि कैं।।57।।

(सवैया तेईसा)

फंद न तेरहि तू जु अफंद सुछंद न बंध न रंज न तेरै।
छंद अलंकरणादि सवै फुनि शब्द वितर्क सु तैं हि जु प्रेरे।।

नांम जु मालिक आदि र व्याकरणादि श्रुती सब तैं हि जु टेरे।
फंद मिटावहु बंध छुड़ावहु मोहि उधारहु साहिब मेरे।।58।।

(**टेरे** कहतां कहे—टेरिवौ नांम व्रजि भाषा मैं कहवाकौ कहैं छै।)

(सोरठा)

फंद अविद्या रूप, मेरे कंठि जु मोह नैं।
राल्यो तू हरि भूप, बंदी छोड़ जु विरद तुव।।59।।
फूंदी देत फिर्यो जु, सर्व जु लोकाकास मैं।
तोकौं उर न धर्‌यो जु, भगंति बिना भव बहु धरे।।60।।
अब तौ भ्रमण निवारि, लै पुरिसोतम आपु मैं।
फंद जु काटि उधारी, मति जु फफावै जगत मैं।।61।।
फरसी सम्यक बोध, तनी जु तेरै हाथि है।
फरसी करहु अबोध, लग्यो हमारै तासु कौ।।62।।
तो बिनु फरसी न्याव, हमरौ को ऊनां करै।
तू त्रिभुवन कौ राव, फैसल करि उरझार मुझ।।63।।

(दोहा)

फ: कहिये ग्रन्थनि विषै, फूतकार कौं ठीक।
फूतकार कौ अर्थ अहि, फूंकारो न अलीक।।64।।
सर्प जु फूंकारा करै, विष कौ भरियो जोइ।
तेरे नामं प्रभाव तैं, पुष्पमाल सब होय।।65।।
फुनि भाष्यो फ: सूत्र मैं, नि:फल भाषा सोई।
नि:फल तेरौ शब्द नां, तू फलदायक कोई।।66।।
फ: कथियो सिद्धांत मैं, नाम प्रवेश विख्यात।
मुक्ति प्रवेश जु तो थकी, ओर न दूजी बात।।67।।
फ: लिखियो आगम विषै, कलह नाम परसिद्ध।
तेरै कलह न पाइए, तू अविरुद्ध सु सिद्ध।।68।।

जौलौं कलह न छांडही, तौंलौं तोहि लहैं न।
जौंलौं तोहि न पाँवही, तौलौं भ्रमण दहैं न।।69।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

फल कौं जु दाता तू जु फणिपति करैं पूज,
फारिक सकल तैं फिसाद कौन नाम जी।
ज्ञांन फील देनहार फुनि फुनि ध्यावैं साधु,
फूँकि फूँकि पाव धारि तोहि गुणधाम जी।
फेन सम त्यागि भूति फैंन फैल फैकट जो,
त्यागि फोरा तोरी मुनि तोहि लखैं राम जी।
फौज बिनु एकलौ तू फौरिकौ न नाम तेरे,
फंदकौ हरनहार शून्य बिनु काम जी।।70।।

(दोहा)

तेरी नाथ सफारता, अति विसतीरणता जु।
सोई पदमा है सही, और न दौलति काज।।71।।

इति फकाराक्षर संपूर्णम्।



आगे बकाराक्षर कौ व्याख्यान करै है—

(श्लोक)

बर्द्धमानं महाबाहुं, विश्वविद्याकुलगृहं।
वंदे तत्त्वार्थसंसिद्धौ, कर्ममर्मनिवर्हणं।।1।।

(दोहा)

ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मज्ञ तू, परब्रह्म भगवान।
ब्रह्म निदेशिक विष्णु तू, जिष्णु पूज्य परवान।।2।।
ब्रह्म शब्द के अर्थ बहु, भगवत मोक्ष सुज्ञांन।
शील जीव श्रुति द्विज कुला, एते ब्रह्म बखांन।।3।।
ब्रह्मा आदि जिनिंद तू, ब्रह्मातम ब्रह्मन्य।
ब्रह्म जु कहनौं संभवै, तोहि तू न प्रभु शून्य।।4।।
बर्द्धमान ब्रह्मेश्वरो, बहुश्रुत बहु विश्रांम।
सेवहि साधु अनन्य ह्वै, अवतारक तू राम।।5।।
बहु जीवनिकौ पार कर, बहु गुण बहु सुख धांम।
ब्रह्मोदित उपदेश कर, ब्रह्मरूप अभिराम।।6।।
ब्रह्मविदेश्वर ब्रह्मविद, ब्रह्म तत्त्व चेता जु।
ब्रह्मवेदकौ वैद्य तू, ब्रह्म पंथ नेता जु।।7।।
ब्रह्म वचन प्रतिपाल तू, ब्रह्म योनि सु विशाल।
आनंदी आनंद घन, हरै महा भवजाल।।8।।

(त्रिभंगी)

वध बंध छेदा, सकल उछेदा, तैं हि अभेदा, अविकारी।
अतिभार जु धरणा, दुरिकत करणा, पाप जु भरणा, अविचारी।।
अन पान निरोधा, अति ही विरोधा, अंकुरण बोधा, तू निंदै।
अघ के सब भेदा, विविध विवेदा, तुम रहु वेदा, जड़ छिन्दै।।9।।
बक सम कपटी जे, अघ लपटी जे, धन कपटी जे, तुव न लहैं।
मुनि हंस समाना, कपट न जाना, उज्जज ज्ञाना, तुव जु गहैं।।
निरमल जो भावा, अति निरदावा, अतुल प्रभावा, प्रभु इक तू।
सरवर मानस सा, अति धर अतिसा, जग पति जति सा, इकत्रिक तू।।10।।
मुनि ह्वै वनवासी, तजि घर वासी, विविध विलासी, तोहि जपैं।
लखि सब मैं तोही, तजि सब मोही, तोहि जु ढ़ोही, ताप तपैं।।

बन जल कौं नामा, जल सम रामा, जल जड़ धामा, चिदभर तू।
वन विंतर कहिया, अर्थ जु लहिया, बन सम लगिया, भव हरि तू।।11।।
बगतर कौं बर्मा, कहहि ज शर्मा, तू हि अकर्मा, है वर्मा।
तुझसौं नहि बर्मा, तू हि मुशर्मा, परम सुधर्मा, है मर्मा।।
छहु काय जु पारै, जगत उबारै, दय जु उचारै, शिवदाई।
गुप्तो गुप्ती धर, सर्व पापहर, दास पार कर, जिनराई।।12।।

(दोहा)

बज्र सरिखौ कठिन है, विषय कषायनि कौं तु।
मोम र मांखन सारिसौं, मृदु सब जीवनि कौं तु।।13।।
वत्सलता कौ पुंज तू, वृत्त परांयण नाथ।
व्रत्तमयो व्रत्ती तु ही, वृत्त मूल व्रत साथ।।14।।
बहुत वस्तु जानैं तु ही, अलप वस्तु तू नांहि।
अल्पबहुत्वादिक सवै, तोही मैं सक काहि।।15।।
बटपारौं कौं शत्रु तू, तोहि न लहैं ठगा जु।
धर्म न्याय कौं थाप कर, पंथ चलावै राज।।16।।
बटपारे मोहादिका, रोकैं शिवपुर बाट।
तू साचौं जिनराज है, काटै सर्व जु काट।।17।।
बल्ली पलित जु काय हू, तव भक्ति करिवौ जु।
बल्ली ज्ञान जु पुण्य की, तू अति बास सुमौज।।18।।
काम क्रोध लोभादिका, जे सर्पा दुखदाय।
तिनकौ बल्मीक जु सही, इह तनु संग छुड़ाय।।19।।
बाद विवाद न तो विषैं, बहिरातम तू नांहि।
बाह्याभ्यंतरि एक तू, सब बाहिर सब मांहि।।21।।
बाल भानु सम देव तू, बाल न पाँवै तोहि।
जाल जंजाल न रावरैं, प्रभु जी शिव दै मोहि।।22।।
बाला कहिये नारी कौं, तेरै नारि न कोय।
बाल नांव मूरख तनौं, तू कोविद अति होय।।23।।

बाल नांव बालक तनौं, तू बालक नहि वृद्ध।
बाल नांव है केस कौं, तेरै बाल न वृद्ध।।24।।
ब्राह्मणादि चउ वर्ण हैं, मुनि व्रत योगि जु तीन।
शूद्रनि कौं ऋषि वृत्ति नहि, चउ मैं शूद्र जु दीन।।24।।
अणु व्रत च्यारिहु कौं सही, ऋषि वृत्ति तीन धरेय।
अैसे भेद अभेद जी, तू ही एक कहेय।।25।।
बाधा रहित दयाल तू, बासी भोजन निंदि।
तेरे दास सु परहरैं, तू जिनवर अभिनंदि।।26।।
बाग बगीचा बावड़ी, ज्ञानी नांहि करैं जु।
निरदुंदी रहि तुव जपैं, मद मच्छर न धरैं जु।।27।।
तो बिनु अैसी को कहै, ब्यालू दिनहि करे हु।
द्वै महूर्त्त भानु जु रहैं, गृहि अनपाँन हरे हु।।28।।
द्वै महूर्त्त जब दिन चढ़ै, तब तक अशन न होय।
रात्रि जु निरजल व्रत ही, भाषक तू जिन कोय।।29।।
मुनि कौं भोजन एकटक, दिन मैं अलख अदोष।
दूजां मुनि कौं उचित नहिं, जिनकै राग न रोष।।30।।
ब्याह बिना नारी फरस, तू निंदै जगदीस।
ब्याही नारी हू तजै, तब पावैं जगसीस।।31।।
बालि जु तैं ही तारियो, अर तार्‌यो सुग्रीव।
हनुमांन कौं मुक्ति दी, तू शिवदायक पीव।।32।।
ब्याल महाब्याल जु मुनी, फुनि जु अछेद्य अभेद्य।
चउ कोडीभड राव जे, तैं ही किये अछेद्य।।33।।
नागकुमार जु मदन के, भृत्या प्राण समान।
स्वामि सहित तोकौं भजी, पहुँचे पुर निरवान।।34।।
ब्याल नाम फुनि दुष्ट गज, दासनि कौं पीरैं न।
ब्याल कहावै सर्प हू, दासनि कै नीरै न।।35।।
ब्याघ्रादिक दूरहि नसैं, दासनि कौं लखि देव।
तो सौ तू ही देव है, दै हमकौं निज सेव।।36।।

काहू कौ भै नां गिनै, तेरें दासनि चित्त।
राज चोर सुर असुर सौं, नहि डरही तुव मित्त।।37।।
बसि जु रह्यो तू सबनि मैं, बासुदेव तुव नाम।
बसुदेवादिक सर्व जे, तोहि जपैं शिव धाम।।38।।
बासुदेव बलदेव शिव, नारंद तोही रटंत।
बासुपूज्य जगपूज्य तू, बसुपूज्यादि जपंत।।39।।
व्याकरणादि अपार हैं, ग्रन्थ जु शास्त्र विचार।
तेरे ध्यान समान नहि, और जु वनमैं सार।।40।।
बादीगर कौ बांदरा, मोहि जु कीयो मोह।
ज्यौंहि नचावैं त्यौ नचूं, लागे काम जु कोह।।41।।
बाट वहंता नाथ जी, उपनौं मुझ कौं खेद।
अब निजपुर कौ पंथ दैं, मोहि करौ निरखेद।।42।।
बानी तेरी सुनत ही, खोयो बहुत निषेद।
हमरौ भ्रमण निवारि हरि, देहु महा निरवेद।।43।।
बाड़ी तेरी फलि रही, जाकै बाडि न कोइ।
बहुत जीव फल ले गये, हम पर दृष्टि न सोय।।44।।
बिगरी बात सुधारि तू, तो बिगरि न कहुं चैन।
तेरौ बदन निहार तैं, सफल हौंहिं हरि नैन।।45।।
बिरही नादि जु काल कौं, मैं सठ भव वन मांहि।
निज परणति पाई नहीं, जातैं विरह बसांहि।।46।।
बिक्यौं अचेतन हाथि हूँ, नहि विकियो तुव हाथ।
ना तौं विकियो वौह है, अब अपनाय सु नाथ।।47।।
बिरयों बिरयों करि मनुज भव, मैं पायो जिनचंद।
सोऊ तेरी भक्ति बिनु, हारि गयो मति मंद।।48।।
बिरला तोकौं ध्यांवही, विरला ही पावंत।
तू विष तैं निरविष करैं, तातैं शिव सु लभंत।।49।।
बिजै जीव की ह्वै तबै, तू पकरै जब हाथ।
विजयादिक पंचोत्तरी, तोहि भजैं जिन नाथ।।50।।

बिलै होत सब कांमना, बिलै होत सब भर्म।
जब तू आवै घट विषै, श्री जिन भासक धर्म।।51।।
बिजित सकल परभाव तू, विशद विहद जगदेव।
निर्विकार निरदोष तू, करिहौं तेरी सेव।।52।।
तू विहाय सम निर्मलो, कहैं विहाय अकास।
सर्व विहाय जु तो विषै, भास्यो तू अतिभास।।53।।
फुनि विहाय कौ अर्थ इह, तजि करि सब परपंच।
तू बैठो जगसीस है, परम महा सुख संच।।54।।
तू विहाय सब लोक कौं, रहैं लोक कै अंत।
तू विहाय सम देव है, चिदाकाश भगवंत।।55।।
वियदाकार अपार तू, वियत हुं नाम अकास।
तू ज्ञायक सब ज्ञेय कौं, ज्ञान तिहारै पास।।56।।
तू वितर्क तैं वेग लौं, है अवितर्क अनादि।
बिसरि गयो तोकौं प्रभु, मैं भव खोए बादि।।57।।
तोहि विसारि जु विचरियो, झूठी माया मांहि।
सो भूलि जु मुझ माफकरि, अब लैं अपनै पाँहि।।58।।
तू विदार परपंच को, करि मोकौ शिव रूप।
तू विथार सुख ज्ञान कौ, सर्व स्वभावनि रूप।।59।।
तू विचार योगिनी कौ, तेरै नांहि विकार।
सर्व विचार वितीत तू, अविचारी अविहार।।60।।
निज विहार निरधार तू, विहरि रह्यो सब मांहि।
सर्व विहारी देव तू, बसै सदा सब पाँहि।।61।।
तू विस्फार विशेष है, निश्चय अर व्यवहार।
प्रगट करै नय उभय तू, उभयातम रसधार।।62।।
तू सामान्य विशेष है, एकानेक सुरूप।
द्रव्य गुणातम देव तू, शुद्ध सु पर्जय रूप।।63।।
तेरै नांहि विभावता, नांहि विपर्जै कोय।
तू जु विलासी तत्त्व है, परम रसाधिक होय।।64।।

बिनजारौ निरवांन कौ, मोटौ सारथबाह।
विनज निजातम द्रव्य कौ, तेरै अतुल अथाह।।65।।
सबकौं पूँजी देय तू, सबकौ पकरै हाथ।
ले पहुचावै निज पुरै, तोसौं तू जगनाथ।।66।।
मेरी विकरै जब परै, तू सिर परि प्रभु होय।
तोबिनु विकरैं ना परै, इह निश्चै करि जोय।।67।।

(छप्पय)

तेरे नांहि विभीति तू जु बीहै न कदापी।
बीवां तेरै पासि पासि हर तू जु उदापी।।
तू बीचार वितीत अप्रवीचार जु तू ही।
बीचारो संभोग सो न तेरै जु समूही।।
हौं तो तोहि जु बीसर्‌यो, तू मोकौं नहि बीसरै।
तू विस्मरण विवर्जितो, तोहि बीसर्यां क्यों सरै।।68।।
बीरा बारिन क्यौं हु रात्रि सब भक्ष अभक्षा।
रात्रें चउ जु विहार तू जु भाषै दय पक्षा।।
रात्रि जु अशन न पान खादि स्वादिम नहि कबहूं।
तैलादिक मर्दनि लेप नहिं करिवौ कितहू।।
इह आणा प्रभु तू करै, दया पाल सांचौ तू ही।
हैं जु निशाचर सारिखा, निशिभोजी निश्चै इही।।69।।
बीरा नाम तंमोल सो न षावौं ज्ञाननि कौं।
सदा सर्वदा पान फूल तजिवौ हि व्रतिनि कौ।।
ब्रह्मचर्य के शत्रु ए जु हैं पान र फूला।
इनकौ त्याग विराग ब्रह्मचर्य जु कौ मूला।
ब्रह्मचर्य सौं व्रत नहीं, तीन लोक में सार जी।
सर्व भेद या वृत्त के, तू धारै जगतार जी।।70।।
जे भोगी अव्रती जु नांहि बीरा बिनु रहहीं।
तिन हूँ कौं इह योगी शुद्ध जल धोय जु भखंही।।

सूकौं चूनौ काथ अवर निरवीध सुपारी।
इह आचार विधी जु तू जु भाषै जिमन सारी।।
तंबोली के हाट के, पाँन जु वाके जल मिले।
काथ फारि चूनौं सजल भषहि जिके शूद्र हु पिले।।71।।
पंच जु पर्वी पान अवर सब हरिय जु तजिवौ।
पर्वी दिन वीरा न क्रापि हू नांहि जु भषिवौ।।
रात्रि जु पाँन न षांन ए जु भाषै सव रीती।
बीधौ सीधौ मांस तुल्य अति अभख अलीती।
हाटैं विकती सीरनी, सदा त्याज्य तू ही कहैं।
पीस्यौं चून जु हाट कौ, चर्म वारि घ्रत नां गहै।।72।।
हरिय जु नीली सर्व तू जु वरजै जगनाथा।
बरजै मधु मदिरा जु आमिषो नर्क जु साथा।।
बरजै नवनीतो जु जासु कौं माषण कहई।
कहिय तु बहुबीजा जु सो न तेरौ श्रुति गहई।।
अच्छाणा मच्छाण जे, संधाणां तू निंदई।
विदल अन्न दधि मेलिकैं, भखिवौ निंदै तू जई।।73।।
वोरा घोर वरा जु सर्व बैंगण तु अभक्षा।
गूलर अंजीरादि फल न पीपर के भक्षा।।
बड़ के फल अति निंद्य निंद्य पाकर फल गावै।
अणंजाण्यो फल निंद्य निंद्य विष जाति बतावै।।
सारौ फल नहि खायबौ मांहैं कीटादिक जु ह्वै।
कंद मूल अर मट्टिका, नान्हौं फल भखि पाप ह्वै।।74।।
अति ही निंद्य तु सार जासु कौं पाला कहई।
बरफ तनी हू जाति जल जु जमि थीजि जु रहई।।
भखइ असूत्री लोक नांहि सूत्र जु के वेत्ता।
चलित रसो सहु वस्तु अभष तू कहइ ज नेता।।
इत्यादिक वर्जित सवै, तो ही तैं ज्ञानी तजैं।
निर दूषण जल अन्न लैं, निशिदिन इक तोही भजैं।।75।।

(भुजंगप्रयात)

जिके वीसरूपा गुणा पुद्गला हों। तिके सर्व तेरे नहीं तू महा हो।।
तु ही बीस भाखै पहारा प्रसिद्धा। जु मातंग दंता अनादी सु सिद्धा।।76।।
तिनौं मांहि तेरे सही बीस सौधा। धरें चैत्य तेरी तु ही हैं असौधा।।
महा जे विदेहा तिनौं मांहि वीसा। कहै तीर्थनाथा तु ही लोक ईशा।।77।।
अढ़ाई जु दीपौ मही क्षेत्र भाषै। जु सौं सतरी आर्य सूत्रें जु साषै।।
तिनौ मांहि सौ सत्ररी ही जिनेशा। लयै तुहि उतकिष्ट भांगे नरेशा।।78।।
कभी होइ तो बीस तैं धारि नांहि। किसी काल माहीं इहैं तू कहां ही।।
सदा बीस विस्वा प्रभू बात तेरै। हरौ बीस मूर्त गुणा संगि मेरै।।79।।
सदा नाथ वीहूँ जु मैं काम क्रोधा। विलोभा विमोहा मिले नंत रोधा।।
किसी भांति पाऊं तिहारे जु पावा। तु ही बीतभी मोहि कारै निदावा।।80।।
सु विद्युच्चमत्कार तुल्या जु भोगा। तुही जे छुड़ावै महादेय जोगा।।
चिमकैं यथा बीज क्षणमात्र काले। तथा देह हमारी गहै देहरा ले।।81।।
जु संसार देहो सु भोगो असारा। तु ही जो विनिंदै जग बीज भारा।।
सु बीजाक्षरा सर्व भासैं जु तू ही। तुही मोक्ष बीजो नहीं और दूही।।82।।
सु तेरे जु बीजा सबीजा सबै ही। तुही बीजभूतो सवै तो फबै ही।।
जबै बीफर्यो तू चिदानंद देवा। तवै नासि मोही गयो नंत भेवा।।83।।
यथा बीट तूहैं फलं सूकि जाई। तथा मोह तूहें न रागो रहाई।।
तदा बीतरागो जु योगीश होई। इहै तू जु भासै अनादीश जोई।।84।।
रहै नाहिं संसार मैं राग नासैं। गहै तू हि वेगे विमोहैं विनासें।।
गिनैं काक विष्टा समा शक्रलक्ष्मी। तबैं तोहि पावै विरागी अछद्मी।।85।।
जिनौं के घरैं अन्न बीधौ पिसेई। तिनौं के गृहे साधु भिक्षा न लेई।।
तबै तोही ध्यावै सको होई साधु। तु ही बुद्ध सद्धर्म देवो अवाधू।।86।।
तु ही है प्रबुद्धौ विशुद्धो किबुद्धो। सुबुद्धो अनिग्घो, अमुग्धो प्रसिद्धो।।
तु ही वुद्ध बोध्यो जिनो बुद्ध देवा। सुबुद्धी सु ऋद्धी अनंतो अभेवा।।87।।
नहीं बुद्ध देवो बिना तोहि औरे। तजे तोहि जीवा चहूं धां सु दौरे।।
तु ही बोध रूपो महाबोध स्वामी। हमैं देहु तेरौ सुबोधो विरामी।।88।।
जिके बुद्ध आदीसुरा ज्योति चक्रा। सवै ज्योतिसी तोहि ध्यावैं अवक्रा।।

बुराई न तेरै भलाई जु कारै। बुधा तोहि पूजैं तु ही भ्रांति टारै।।89।।
बुरी वस्तु सारी तु ही जु निवारै। बुरे कर्म तोकौं कभी ना निहारै।।
बुहारी सु नर्मा बतावै जु तू ही। त्रसा थावरा तू न पीड़ै समूही।।90।।
बुलायो न आवै खिनायौ न जाई। रह्यो तू सबौं मैं प्रभू जी समाई।।
उठायो उठै नांहि तू लोक स्वामी। कुड़ायो कुडै नांहि तू अंत्रजामी।।91।।
तू ही बुद्धि ऋद्धादि ऋद्धिप्रकासी। सदा कवलो शुद्ध कैवल्य भासी।।
न बूढो न बालो न तारुण्य रूपो। सदा एक रूपो तु ही है निकूपो।।92।।
तु ही वृद्ध सृद्धी सबौ कौं जु इष्टा। तु ही मंगलो नित्य शीलो सपष्टा।।
जु बूचौ हु अंधो हु बैरो हुमू को। तुझै कोपि प्रानी जपैं सो अचूको।।93।।
तुझैं ना निहारै तिके अंध प्राणी। तुझै नांहि गांवै जिके मूक जांनी।।
नहीं जे सुनै नाथ तेरे चरित्रा। सही बूचरा ते सु बैरा अचित्रा।।94।।
किये चूर तैं ही महाकर्म अष्टा। भये चूर तोतैं सबै दोष दुष्टा।।
जिके त्यागि बूरा पतासा सिता हू। करे सुल्प आहार ध्यावैं जु साहू।।95।।
तिके तोहि पावैं यतेंद्री पुनीता। तजैं जीभ स्वादा सवै रोग जीता।।
सु बूसा न छोला जु संसार मांही। लखे सर्व मिथ्या जु साधु तजाही।।96।।
सु बुग्रो जवै अमृतात्मा तु ही जो। हृदै क्षेत्र मध्ये सुधा धारहिं जो।।
तबै शांतता भव्य जीवै सु पाई। जु त्रिश्ना तनी झाल तैं ही बुझाई।।97।।
सु बूडयो प्रभू हूँ भवांभोधि मैं जी। तुहीं काटि स्वामी सु लै आपमैं जी।।
सु बूतौं कहा नाथ मोमैं जु एतो। बिना तो तिरुं सागरो बाहु खेतो।।98।।
तुझैं कातरा नांहि पावैं जु मूढा। गहै साधु तोकौ सवै त्यागि रूढा।।
तु बूसी जु निंदै सु बासी विनिंदै। तु ही बूर लड्डू समा भोग छिंदै।।99।।
सबै बूर लड्डू विषै के विकारा। इनौं मैं न सारा सबै ए असारा।।
न बूझयो कभी नाथ तेरौ जु पंथा। सु तातैं भ्रम्यो चौ गती ह्वै सग्रन्था।।100।।
जु बेगारि लीयो मुझै मोह कर्मे। तु ही जो छुडावै हमारे विभर्मे।।
सु हौं तौ जु चैतन्य तेरी हु जाता। जड़ो बेठि सारु गहै कौंन बाता।।101।।
सु तेरी रिजाई जु मांहै अनीती। करै मोह पापी कहौ कौन रीती।।
अबै देव बेला मती नां लगानो। सिताबी हमारी हु बेठी छुड़ावो।।102।।

हुं तौ बेतृपा जाहि लज्या न कोई। तुझै लाज आवै नहीं राव होई।।
हुं तौं बेसरी सौ बहु भार खैंचा। मिल्यों मोह पापी सु बेगारि अैंचा।।103।।
यथा बेसरी को सब ह्वाजु चालै। सु ले भार कंधे जु पंथा सम्हालै।।
तथा भार खैंचा भयो हूँ अनादी। परायो जु भारा बह्यो हूं जु वादी।।104।।
जु बेबुद्धि मो सौ न कोइ अबीजो। सु तोकौं विसारैं विमोहै हि धीजो।।
तु ही भेटीबे बुद्धिता नाथ मेरी। सबै रालि भारा करौ सेव तेरी।।105।।
तु बेदिल्लाता मेटि दै हर्ष मोकौं। सुध्यांऊं जिनिंदा सबै त्यागि तोकौं।।
नहीं कोय मोसे दुखी ओर वेग्रा। महापूति गंधा दुऊं बेठि जेग्रा।।106।।

(सोरठा)

बेगारी मो सौ न, अष्टतनीं पोटजु ढवै।
बंद्यु छोड़ तो सौ न, बहुत छुड़ाये बंद्य तै।।107।।
बेटा बेटी सर्व, भ्राता भगिनी मात पितु।
इनकौ करइ जु गर्व, सो झूठो ए नश्वरी।।108।।
चपला सी चपला जु, दौलति भार्यादिक सवै।
तुव न भजैं विकला जु, इनके बेगारी भये।।109।।
बेटा बेटा नाथ, मोहि अनादि जु काल तैं।
जब पकरै तू हाथ, तब बेहाली सहु मिटै।।110।।
कियो मोहि बेहाल, कर्म अष्ट मिलि दुष्ट जी।
तू अब करि सु निहाल, पुष्ट तुष्ट शिष्ट जु तु ही।।111।।
तू ही बेगलौं नाथ, रागादिक विपरीति तैं।
जे गुजराती साध, कहैं वेगलो भिन्न कौं।।112।।

(सवैया इकतीसा)

बैठौ तू जगत के जु मांथै भगवंत देव,
बैसक अनादि की त्रिलोक सिरि रावरी।।
व्यापि रह्यो लोक औ अलोकमैं जु तूही नाथ,
बैद नांहि तोसौं कोइ हरै भ्रांति आसुरी।।

असुर जु राक्षस जु दैत्य एइ अष्टकर्म,
आसुरी जु रागादिक परणति बावरी।।
तो ही तैं नसैं जु नाथ औषद अथाह तोपैं,
तो विना हरै जु कौन पूरक विभावरी।।113।।
जनम मरन नास करन इलाज तोपै,
बौदिकता तेरी और वैद्य नांहि कोइ जी।।
बैवस्वत काल कौ हू नाम है सिधंत मांहि,
वैवस्वत हारी तू जु जिनपति सोइ जी।।
निश्चै प्रकासकार निश्चै स्वरूप तू ही,
व्यवहार हू तुही जु स्यादवाद होय जी।।
बोधकौ निधान देव बौद्ध नांहि लहैं भेव,
बोधरूप बोधनाथ बोधमात्र जोइ जी।।114।।

(मालिनी)

भवजल जु अथाहो बोहथो तू हि देवा।
तव सम न जिहाजा तू हि पारं करेवा।।
परम धरम तू ही वो कहू देव कीयो।
सुनिउतूवसुनामा चारुदत्तै जु दीयो।।115।।
जिनवर मत कुशलो चारूदत्तो जु श्रेष्ठी।
परम धरम युक्तो जीव रक्षा व्रतेष्टी।।
दियउ जिह तु नामा बोक कौं जीव जांने।
गहिउ तिहतु नाम देव हूवो विमाने।।116।।
नहि लहहि सु तौंकौं बोकरा मारही जे।
लहहिं कुगति पापा मांस आहारही जे।।
थिर चर सब रक्षा कारका तोहि गांवै।
क्षणक मत विहारा बोधमार्गी न पावैं।।117।।
उभय नय विहारा बोध खंडा तु ही जो।
तुझ हि किमपि बोझा मूढ पावैं नहीं जो।।

बसु जु करम पुष्टा होंहि वोदा तुझी पैं।
जगजन अति बोदा होंहि पुष्टा तुझी तैं।।118।।
तुझही न प्रभु बौद्धा शून्यवादी न ध्यावैं।
नहिं लहहिं जु हिंसा मांहि धर्मो बतावै।।
सकल दरवि स्वामी बौहरौ लौक कौ तू।
निज दरबं दिखावै नाथ है थोक को तू।।119।।
तब निकट जु ऋद्धि सिद्धिकौं सिंधु तूही।
विगत सकल बंधा मोक्षमूलो प्रभू ही।।
नहिं कथमपि बंधो मोक्ष हूं नांहि तातैं।
परम जु चिनमात्रो शुद्ध भावो विख्यातैं।।120।।

(शार्दूलविक्रीडित)

तेरै बंध जु च्यारि भेद कबहूं नांही प्रभू पाइए।
नांही आस्रव पंच भेद जिनके नां संवरो गाइये।।
नांही निर्जर दोय भेद तुव मैं मोक्षो कहां तै छुवै।
पुण्यापुण्य अचेतना न तुझमैं शुद्धो निजो तू हुवै।।121।।
तारे भव्य अनंत तैं जु जग तैं मोक्षाधिनाथो प्रभू।
बंधू तू सब कौ न बंधन कभी बंधू न तेरै कभू।।
तेरै विकृति बंकता न कबहूं नां वक्रता लेश हू।
बंहिष्टो कहिये जु तूहि श्रुति मैं तेरे जु नामा बहू।।122।।
बांहिष्टो बहु भेद धार कहिये तेरे जु भेदा बहू।
भेदो एक न क्वापि हैं जु तुव मैं तेरे गुण एक हू।
जे पापा धनवंचका ठगगणा तोकौं न पावैं कभी।
पावैं शील दया दमो शम रता ध्यानी तु पावैं अभी।।123।।
बंधो ताड़न मारनादि सुवधो तेरे न दासा करै।
जानैं आप समान प्राणि गण कौं कारुण्य भावो धरैं।।
माता दासनि की जो पुत्रवति है औरै जु बंध्या समा।
बंध्या पुत्र समा कुदेव निरता सेवैं न स्वामी रमा।।124।।

तू ही एक रमापति जिनवरो धारै रमा शास्वती।
तेरी शक्ति चिदात्म रूप कमला ज्ञानात्मिका भासती।।
बंध्या पुत्र यथा विहाय कुसुमै ठानैं कभी सेहुरो।
त्वद भक्ति बिनु मूढ़ तापस तथा तौ पावई छै हुरौ।।125।।
बिंताकादि अभक्ष भक्षक नरा पावैं न भक्ति प्रभू।
त्यागैं बिंजन स्वाद भक्ति सुमुखा स्वादैं निरंता विभू।।
विध्यांरण्य महैं जु तूहि वसती विध्यांचले तू हि जी।
विंध्यांद्री पुर जानंता ऋषिगणा ध्यावैं तजी दूहि जी।।126।।
वृंदारण्यविहारको हरि जिको त्वद्रूप त्वल्लीन वा।
तू शंभू शिवरूप शंभव जिनो चिद्रूप चिल्लीन वा।।
तेरे नांहि गुणा जु विंसति जड़ा वर्णा रसा गंध का।
स्पर्शा सर्व जु पंच पंच उभया, अष्टा न ते वंध का।।127।।

(सवैया इकतीसा)

अमृत की बूंद नाथ वरसै हृदै मझांर,
तू जु घटि आवै जब जलद सुरूप जी।
सीतलता होई अति दाह सब मिटि जाय,
भाव जे मयूर सम हरषैं निकूप जी।।
विष के भरे जु काम क्रोध लोभ नाग गन,
नासि जांहि मोरनि पैं महा जे विरूपजी।
षेती फलैं साधुनिकी कणरूप शुद्ध ध्यान,
बोहरे करम सब चुकि जांहि भूपजी।।128।।

(सोरठा)

बंक चित्त जे जीव, तोहि न लहै कदापि हू।
तोहि न लहैं कुजीव, बंडभंड रंकादिका।।129।।
तोहि जु लहै पुनीत, सूधे साचे होय कैं।
पावैं राग वितीत, तजि कै कल्मष कामना।।130।।

(दोहा)

बंदौ तोहि दयाल जी, बंदौ तेरे दास।
वंदो तेरौ सूत्र जो, जामैं तत्त्व विलास।।131।।
बबा पासिद्वै शून्य है, अन्तिम मात्रा एह।
बाबा तू अति पुन्य है, शून्य हू लख्यो अछेह।।132।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

ब्रह्म परबह्म तू ही बालक न वृद्ध नाथ,
तू ही एक जीव की सु बिगरी सुधारही।
बीस ही गुननि तैं जु न्यारी सदा बुद्धदेव,
बूड्यो तू सुधा सुरूप आनंद की धार ही।
बेसरी समान हौं नु तू ही नररूप करै,
बदै तो सौ दूसरौ न बैदिक विचार ही।
बोदांनितैं मोटे करै बोहरौ जगतकौ जु,
बंकता न जाकै मांहि शून्यता जु टारही।।133।।

(दोहा)

तेरी नाथ जु वस्तुता, परम ब्रह्मता ज्योति।
चेतनता लक्ष्मी जिको, कमला पद्मा होति।।134।।
ओर विभूति न दौलती, लियें द्वैलती जोहु।
आवौ जावौ जासु कै, भूति विभूति सोहु।।135।।
बंदि विभूति जु भस्म कौ, सो हि कमला होय।
तेरी नाथ विभूति बिनु, सर्व भस्म है सोय।।136।।

इति श्री बकाराक्षर संपूर्णम्।

भ

आगै भकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

भव्यांभोरुहमार्तंडं, भानुकोटिजितप्रभं।
भिन्नं रागादिभिर्भीतिनाशनं भुक्तिमुक्तिदं।।1।।
भूतनाथं जगन्नाथं, सर्वभेषविवर्जितं।
भैरवादिं पतिं धीरं, सर्वभैरवतापहं।।2।।
भोगातीतं महाभोगं, योगींद्रं योगवर्जितं।
भौमभावनकल्पेंद्रज्योतिषेंद्रैश्च सेवितं।।3।।
भंगुरैर्कल्पनाजालैरभंगपरमेश्वरं।
वंदे देवाधिपं देवं, शून्याशून्यप्रकाशनं।।4।।

(दोहा)

भव्यनि कौ बांधव तुही, भवसागर की पोत।
भवसमुद्र कै पार तू, तेरै गात न गोत।।5।।
भव पार जु कारक तु ही, भर्ता त्रिभुवन सार।
भवहू तेरौ नांम है, तू शिवधव शिवकार।।6।।
या कारनि तू पंडितनि, भव भाष्यो जगदेव।
भवती गुण पर्याय मय, एको विविध अभेव।।7।।
भवहर भवतारक तुही, भव्य भजैं तोकौं जु।
भगवत भयहारी प्रभू, करि निरभय मोकौं जु।।8।।
नाथ भवांतक भवन विनु, भवन जु घर कौ नाम।
सर्व ठौर तेरौ भवन, तू सब ही कौ धाम।।9।।
तेरो भवन जु मुक्ति मैं, निजगुण मैं तहकीक।
सर्व जु लोक अलोक हू, तेरे भवन जु ठीक।।10।।

तेरे भवन न कोइ है, भ्रमण न तेरै होय।
तो सौ तू भगवंत है, कहां कहै प्रभु कोई।।11।।
लोक प्रमाण जु तू सही, पुरुषाकार प्रमांन।
ज्ञानापेक्षा नाथ जी, तू जु अलोक हु मान।।12।।
भ्रम वर्जित मुझ भ्रमण हरि, भव भय रहित करेहु।
भवभय भीत मुनीश्वरा, तो सौं धारहिं नेहु।।13।।
नाम भदंत जु रावरौ, सब तैं भलौं जु देव।
सर्व भलाई को भर्यो, देहु हमैं निज सेव।।14।।
भर्मायो भ्रमजीत तू, भर्म जु कंचन नाम।
तेरै कनक न कामिनि, कनकजीत द्युति धाम।।15।।
भर्म जु विभ्रम रूप है, तैं दोऊ त्यागे जु।
नगन दिगंबर देव तू, मुनि तौमैं पागे जु।।16।।
भर्म जु परिगह वारिलौं, भ्रम भीतरि कौ जोइ।
द्विविधि परिग्रह रहित तू, केवल चिदघन कोई।।17।।
भर्माभो यातें कह्यो, तू काई विनु होइ।
तू भरपूर जु भद्रकृत, भद्रो भल्ल जु सोइ।।18।।
तू भदंत कृत भव्यपति, श्री भगवान अछिद्र।
भाद्रिक परिणांमी तुझैं, पावैं तू अति भद्र।।19।।
भव्यनि के समुदाय जे, तिनकौ नायक तू जु।
भव्याभव्य द्वयी दसा, तेरे नांही पूज।।20।।
भव उद्भव तू ही सही, श्री भगवंत अनंत।
भव भंजन भवि रंजनां, अरि जीता अरिहंत।।21।।
भयजीतो भवजीत तू, भ्रमातीत करणो जु।
भरता भरत नरेश कौ, भरत क्षेत्र शरणो जु।।22।।
भरत चक्रि श्रुत तारियो, भवसदंत सुखकार।
तार्यो भरथ जु दशरथी, रामानुज अविकार।।23।।
भय कौ भयकारी सदा, भक्तवछल जगदीस।
भक्ति योगी भक्तेश तू, भरम उछेद करीस।।24।।

भवन निवासी दशविधी, नागादिक तुव दास।
तिनके भवननि मैं प्रभू, तेरे मंदिर भास।।25।।
सप्त कोड़ि बेहत्तरी, लाखा सत्य प्रवानु।
ते सु अकर्तृम देहुरा, अरचैं अमर सुजान।।26।।
भव्यनाथ भवनाश कर, भय त्रासन भव्येश।
जिनशासन विनु वास नां, प्रगटै जगत नरेश।।27।।
भण्यो भणायो तू नहीं, तेरे गुर नहिं कोय।
अपठ पाठ पाठिक तु ही, त्रिभुवन कौ गुर होय।।28।।

(सोरठा)

किये कर्म भकभूर, परमाणु ह्वै परणमें।
गुण अनंत भरपूर, तू हि भरि मौं लोक मैं।।29।।
भ्राजिश्नुः भास्वांन, अर्थ प्रकाशनशील है।
भावः परम प्रवांन, भावयती तू ही सबै।।30।।
भानुं तनौ प्रभु नाम, कहैं भासकर पंडिता।
तोहि भजैं अतिधाम, भानु आदि सब सुरगणा।।31।।
भाग्यवंत तू नाथ, भाग्य तिहारै साथ है।
भानोपम बड़हाथ, अज्ञानातम तिमर हर।।32।।
भाषा तेरी देव, सुनि सुरझै सुर नर तिरा।
मुनिवर तेरी सेव, करैं सकल जग त्यागि कै।।33।।
तेरौ सौ नहिं भाग, तीन लोक में और कौ।
जिनकी तो सौं लाग, तिन सम त्रिभुवन मैं नहीं।।34।।
भाजन सबकौ लोक, जो अलोक कौ अंस है।
भाग अनंतम थोक, सो अलोक तुव ज्ञान मैं।।35।।
तू भाजन नभ कौ जु, नभ हू तेरौ भाजनां।
दूजौ नहिं तो सौ जु, षट् द्रव्यनि मैं नाथ जी।।36।।
एक हि द्रव्य अकास, लोकालोक विभेद द्वै।
लोक जु सर्व विभास, है जु अलोक सु एकलौ।।37।।

तो मैं सहु प्रतिभास, तू भाजन सब ज्ञेय कौ।
है जु अनंत विकास, ज्ञान मूल जिन पास तू।।38।।
भाट ह्वै रहे नाथ, तेरे इंद्रादिक सुरा।
विरद कहैं बड़हाथ, ठौर ठौर जस उच्चरैं।।39।।
भार अनंत सु साथ, भाल जगत कौ तू सही।
भार्यो हलको नाथ, हैं नांही तू अगुरलघु।।40।।
भात जु पाँणी लेय, ह्वै उपवास जु पारणैं।
सब तजि इक तुव सेय, शिवकुमार तो मय भयो।।41।।
तजी पाँच सै नारि, बहुत काल दुद्धर तपा।
करि तोकौं उर धारि, सुर नर भव धरि शिव गयो।।42।।
मांहि जगत की तैं जु, केई काढै तैं प्रभू।
धारि भगति नहि मैं जु, तातैं रुलियो भव विषै।।43।।
अमित अनंत शशि जु, अतुल अनंते भानुजी।
नष मात्रा न द्युती जु, असम प्रभाधर देव तू।।44।।
शशि जड़ता कौ पुंज, है तापक अति भास्कर।
तू चेतन सुख कंज, सर्व ताप हर शांत तू।।45।।
भागाकार हिसाब, गुणाकार तू ही कहै।
तो हि जु कोई जाव, दे न सक्क नहि लेश धर।।46।।
भाग हानि गुन हानि, गुन भागा वृद्धी तु ही।
करै महारस खांनि, वृद्धि हानि कौ रूप तू।।47।।
तेरै हानि न वृद्धि, षट् गुण वृद्धी तू करै।
षट हांनी जु अवृद्धि, स्वाभाविक पर्यय सदा।।48।।
तेरै भाषा नांहि, शब्दातीत अतीत तू।
सब भाषैं सक कांहि, अद्भुत चेष्टा तू धरे।।49।।

(अरिल्ल)

तू सु भिषगवर देव नांव इह बैद कौ।
सर्व रोगहर नाथ नाशकर कैद कौ।।

भिक्षुक भिक्षा शुद्ध लेय ध्यावैं तुझै।
भिन्नातम भगवान करि अभिन्नो मुझै।।50।।
भिन्न स्वभावो तू जु सर्व तैं भिन्न है।
निज गुण पर्यय सौं जु सदा सु अभिन्न हैं।।
तू भिन्नौ जु अभिन्न भिन्न करि कर्म तैं।
करि जु अभिन्नो मोहि रावरे धर्म तैं।।51।।
तू जु कर्मभिद्देव भिन्न परपंच तै।
भृष्टा तोहि लहै न टरैं नहिं पंच तैं।।
भिल्यो न तू कबहू जु ज्ञेयविस्तार मैं।
मिल्यो न तू जगदीस लोभ अर मार मैं।।52।।
भीट्यौ भिटै न तू जु अछोपो हैं सदा।
भिर्यो न तोसौं कोइ नांहि भिरिहै कदा।।
तू न भिरै परसौं जु भिलैं नहि कोइ सौं।
भीज्यो भिजै न तू जु निरालौ बोइसौ।।53।।
भीति विभीति वितीत भीतिहर भीम तू।
भी कहिये डर कौं जु है अभीसीम तू।।
भयभीता जे तोहि भजैं अभया हुवैं।
भीति न तेरे दास किसी की नां जुवै।।54।।
भीष बतावै तू जु मुन्यौं कौ शुद्ध जो।
त्रिकुल जु श्रावक गेह अन्न अविरुद्ध जो।।
दोष छियालिस टालि भीख मुनि आदरैं।
निरारंभ निरदोष तोहि उर मैं धरैं।।55।।
छतौ द्रव्य सहु त्यागि हौंहि निरगंथ जे।
श्रावक घरि लहि अन्त गहैं शिवपंथ जे।।
जिन भाषित आचार ध्यारि तोकौं लहैं।
मुनि जु अयाची वृत्ति एक तो ही चहै।।56।।
करपात्रा जु सुपात्र भिषारी रावरे।
गनैं इंद्र कौं रंक जगत सौं बावरे।।

भीनें तोमैं चित्त वाक तनु रोकि कैं।
लीनै तो सौं नाथ तत्त्व अवलोकि कैं।।57।।
भीनौं निजरस मांहि तू स्वरसिया सही।
भीग्यो करुणासिन्धु आपु के गुन गहीं।।
भीज्यो कबहूँ नांहि विषय के रंग मैं।
भीड्यो किन्हू नहिं कदापि न संगमैं।।58।।
भीतरि वोरें तू जु एक सौ है सदा।
भीरु जु कायर चित्त तोहि नहिं लैं कदा।।
तो मैं भीरिपनौं न अचल अवकाश है।
तेरै पुर नहि भीड़ अनंत विलास है।।59।।
भीलादिक कुल नीच हू जु जौ तौ जपै।
अणुव्रत द्वादश धारि द्विदस विधि तप तपैं।।
साधुनि के उपदेश भक्ति जौ आदरै।
सोलम सुर्गि जु जाय त्रिकुल है शिव वरैं।।60।।
विप्रहु तो हितजी जु लक्ष चौरासीया।
रुलहि जु नाथ अनंत तू जु शिवरासिया।।
तु ही ब्राम्हणोद्धार क्षत्रिंगण तार है।
वेस्य वर्ण आधार त्रिकुल कर पार है।।61।।
शूद्र उधारै तू हि जनम कै आतिरै।
भील सु अंतिज हू जु ध्याय भव धरि तिरै।
स्त्री पशु और नंपुसकादि हु तुव भजी।
जन्मांतर लै मोक्ष हौंहि भौ भै तजी।।62।।
भीच्यौं मोहि अनंत मोह तनु यंत्र मैं।
घीस्यो त्रिभुवन मांहि लेय जड़ तंत्र मैं।।
भुवनेश्वर जगराय छुड़ावै मोहि तू।
तू भुवनैक जु त्रात रह्यो अति सोहि तू।।63।।
त्रिभुवन कौ पति एक सर्व कौ पात तू।
पिता पितामह तात जगत कौ छात तू।।

भुक्ति मुक्ति दाता जु मुक्ति तैं दूर तू।
मुक्ति मूल जगदेव करम चकचूर तू।।64।।
भुगते बिनु छूटैं न कर्म शुभ अशुभ जे।
जग मैं जीवनि कै जु लगि रहे विषम जे।।
तेरी भक्ति जु वन्हि काठ ज्यौं क्षय करै।
कर्मकलंक सवै जु भक्तितैं अति डरै।।65।।
दासु जु चाहैं भक्ति भुक्ति तैं काम ना।
भुक्ति कहावैं इंद्र पदी सुख वासना।।
भुक्ति सु नागपती च चक्री पदई प्रभू।
तेरे दास गनै निकम्मी सहु विभू।।66।।

(छप्पय)

तू भुवनेश विख्यात तोहि ध्यावैं जु भुजंगो।
दुसहस जीभ बनाय तोहि गावैं जु इकंगो।।
सहस नेत्र करि शक्र एक तो ही जु निहारै।
सबै सुरेश नरेश रैनि दिन तो ही चितारै।।
तोहि भुजंगीशो रहै, इह सोभा नहि रावरी।
वह तोकौं जपि ऊंच ह्वै तेरै नांहि विभावरी।।67।।
तैं ही नाथ भुजंग तारिया केई स्वामी।
सर्प हु श्रावक कारि देव कीये अभिरामी।
तारे नाहर तौहि स्याल हू केई तारे।
सूकर कूकर न्यौल नाथ तैं ही जु उधारे।।
मंत्र दिये अपने किये, ऊँच नीच सब तौहि जी।
दासनि कौ भुजग न डसै, केहरि दुरक न देहि जी।।68।।

(भुजंगीप्रयात)

भुजंगेश तू ही भुजंगीश नाथा। भुजंगादि तारी तुही लंव हाथा।।
विषा निर्विषा हौंहि तेरै प्रशादै। दुखा निर्दुखा हौंहि नासैं विवादैं।।69।।

भुजंगी प्रयातादि छंदा समस्ता। प्रकासे सबै भेद तैं ही प्रशस्ता।।
तु ही छंद बंधादि दूरो गुसांई। सुछंदो अमंदो अनंदो असांई।।70।।
तू ही भूतभृद् भूतभावो सु भूपा। तु ही भूतिरूपो विभूति सुरूपा।।
तु भूतो च भावी सु तत्काल तू ही। प्रभु तात मातू अभूतो अभू ही।।71।।
महाभूत भूतेश्वरो भूतिधारी। तु ही भूतनाथो अनाथो उधारी।।
तु ही भूपति भूप भूरीश्वरो वा। प्रभू है सुभूतीश्वरो धीश्वरो वा।।72।।
तु ही भूरि ऋद्धि विशुद्धी विसाला। सुभूतीश भूपाल देवो दयाला।।
तु ही भूत टारा तू ही भूत तारा। तु ही है जु भूमी भुजो भूमि पारा।।73।।
सुरुद्रो कहावै जु भूतीधरो जी। तिहारै जु पावा गहै ईष्वरो जी।।
किये भूक तैं ही महाकर्म अष्टा। नही भूख तैरै सदा तू सुपुष्टा।।74।।
नही भूलि तोमैं सु भूलै न काई। सु मैं भूलि हू तोहि ध्यायो न राई।।
महा भूछ मैं ही जु जान्यो न भेवा। न ही भूछ पावै तिहारी जु सेवा।।75।।

अथ एती वस्तु कौ नांव भूत कहिये—

(सोरठा)

भूत सुमंगल नाम, तू मंगलकारी सदा।
भूतातम विश्राम, चउ मंगल भासक तु ही।।76।।
भूत कहावैं जीव, छहौं काय के सर्व ही।
तू सबकौ सुख दीव, षट्कायनि कौ पीहरा।।77।।
कहैं सत्य कौं भूत, भूतारथ निश्चय करा।
तू सत्यो अति पूत, सत्य जु तेरौ धर्म है।।78।।
भूत अतीत जु काल, तू त्रैकाल्य प्रधान है।
होइ गयो नहि लाल, जब देखैं जब ही नवो।।79।।
भूत भावनो तू ज, सर्व भूत अंतर बसै।
तू सब ही कौ पूज, भूतांतर आतम तू ही।।80।।
उपजै जाको नाम, भूत कहैं आगम धरा।
तू उपज्यो नहि राम, स्वयं भूत है शास्वतौ।।81।।

भूत जु इंद्री पंच, तेरै भूत न एक हू।
इंद्री सुख अति रंच, आतम सुखदायक तुही।।82।।
भूत जो विंतर भेद, भूत जु भागैं नाम तैं।
किये काम मद छेद, भूत न इनसे जगत मैं।।83।।
भूतवाद मत धार, चारवाक तो ही न लहैं।
समैसार अविकार, भूतारथ इक तू सही।।84।।
भूति समान विभूति, भूति भसम को नांव है।
तेरै नांहि प्रसूति, भूति भस्म भावा जिको।।85।।
इहु बहिरंगा भूति, सही भूति है भ्रांति ना।
तेरी शक्ति विभूति, सो लक्ष्मी है शास्वती।।86।।
तजि बहिरंगा भूति, चिदघन रूपा तैं धरी।
तो मांहै सुविभूति, भूत्यंतर तू वस्तु है।।87।।
हरे भूख और प्यास, जग भूषण तू देव है।
तजि के भूषण रास, निरभूषण राजैं तू ही।।88।।
भूख क्षुधा कौ नाम, भूष नाम भूषण सही।
तेरे क्षुधा न राम, भूषण एको ना धरै।।89।।
त्रिभुवन भूषण सेव, तेरी दैं जग साइंयां।
भूषित महा सुदेव, तो बिन सोभित और ना।।90।।
भूप न दंडै ताहि, चोर न वाकै पैसई।
करे आपुनो ताहि, तिसै ईति भीति जु नहीं।।91।।
भूरि अनंत जु लक्ष, तेरै व्यक्ति प्रभा सही।
शक्ति मूल परतक्ष, भीहर भूमि पती प्रभू।।92।।
भू पृथ्वी कौ नाम, भू कहिये उपज्यो जिको।
तू पृथ्वीपति राम, उतपति तेरी नांहि है।।93।।
भूमि जु अष्ट विख्यात, नारक भावन मानुषा।
ज्योतिष सुर्ग उदात, ग्रीवा नुत्तर मोक्ष भू।।94।।
अष्ट भूमि कौ राव, अष्टम भू तेरौ गृहा।
तू प्रभु है निरदाव, तेरे दायादा नहीं।।95।।

भूलि हमारी देव, करौ माफजगदीस जी।
करिहौं तेरी सेव, अैसो करि भूलि न रुलौ।।96।।
भूलि न करिहौं चूक, चूक न कबहूं भूलि हों।
करि मेरे अथ भूक, लै निज भीतरि सांइयां।।97।।

(छप्पय)

भेष रहित अतिभेष धार तू भेक देव कर।
भेक जु मीड़क नाम सोहु तें कयउ प्रभु सुर।।
भेद चित्त करि तोहि जपैं मुनि जगत विरागा।
भेड रूप ह्वैं कर्म तू नषैं सर्व जु भागा।।
भेद रहित अति भेद तू, भेदभाव नहि तो विषै।
छेदन भेदन एक ना, तो सौ तू और न दिखै।।98।।
भेरि दमांमां नाथ बाजई तेरै बाजा।
भेजे संघ विमोक्ष तूहि निरवान विराजा।।
भेज लोक की चहैं एक तेरै ही द्वारै।
भेंट देव सब करहिं सुरगपति बदन निहारै।।
भेल्यो मिलै न कोइकौ, भैरवता तैरै नही।
भैरव तेरे सेवका, भैषज रूप जु तू सही।।99।।
भैषज औषध नाम तू सु भैषज रुगहारी।
कर्म रोग बलवान तू हि नाशक अविकारी।।
तोकौं भैं कछु नांहि काल कौ काल जु तू ही।
कालौ गोरौ तू न तू जु है ज्ञान समूही।।
भयो भैरवानंद इक, जीव घात बहु थापिया।
चंडमारिका कै मठै, मारुदत्त नृप पापिया।।100।।
वन कै भागि जु जोगि ब्रहमचारो तुव दासा।
अभयरुची जसु नाम क्षुल्लको अति हि उदासा।।
अभयमती तसु भगिनि बहन भाई विनु भर्मी।
ज्ञान विराग सुरूप जैन शासन के मर्मी।।

आवत है श्रावक घरै, अन्नपान कारन प्रभू।
मिनष जुगल ढूंढै नरा, नृप के तिनि पकरे विभू।।101।।
लखि उपसर्ग जु विषम बोलियो भाई धीरो।
सुकृत फल की बेलि बहन सौं वचन जु वीरो।।
मति बीहै भगिनि जु तैं सु धार्‌यो जिनधर्मा।
पायो जिनवर देव वोलख्यो अपुनौं मर्मा।।
तेरे ह्रदै अबंक मैं, थापि जिनिंद दयाल कौं।
तजि शंका सब मरण की, नां वीसरि जु कृपाल कौं।।102।।
इह तनु जाहु विनास रहौ जिनपद दृढ़ मन मैं।
धरे सु दैह अनंत अंत पायो बहु तन मैं।।
दृढ़ चित्तै तनु जाहु एहु अपनौ नहि कबहू।
जिन सम आतम रांम और वीजौ नहि ढबहू।।
जीव जु कबहू नां मरै, देह जु ह्वै ह्वै जांवही।
सुनहु अभैमति बहन इह, प्रभु चरनां चित लांवही।।103।।
सुनै भ्रात के बैंन बहन बोली सुनि भाई।
हमरै जिनमत सार और दूजो न उपाई।।
सप्त जनम दुख सहे ते जु भासे सब मोकौं।
अब एको भय नांहि कहूं अधिकी कह तोकौं।।
देह जाय तौ जाहु भल, रहै रहौ हमारौ नहीं।
हम चिनमूरति चेतनां, चिदानंद चिदघन सही।।104।।
या विधि भाई बहन बोध प्रतिबोध जु करिकै।
सकल त्यागि भय भाव चित कमलैं जिन धरिकैं।।
चालै दृढ़ ह्वै उभय मरन भय जिन सब टारे।
किंकर दुष्ट जु प्रेरि इनहि ल्याये दुर द्वारे।।
बाल अवस्था दुहुनि की, देखि भूप मन कंपियो।
कौन लोक तुम सांइयां, कौन निमित्त आगम कियो।।105।।
तब बोले ब्रह्मन्य नाम जे अभै रुची है।
सुनिहो मारी जु दत्त बात भाखें जु सची है।।

अंध पुरुष पै नृत्य बधिर पै गावौ सुर धरि।
अर्थी आगै न्याय कथन करिवौ मूढ़त करि।।
विषई आगै धर्म वच, हिंसक पै दुख रोवनौं।
ज्ञान निरुपण अज्ञ पैं, वोसरि वीज जु बोवनौं।।106।।
इति दृष्टांत नरेश तोहि सौ चरचा करिबौ।
वृथा जु माथा पच्च जासु मैं सुरक न धरिवौ।।
तुम तेडे हम अए अब जु जानंहु सो करिये।
होनहार सो होइ अधिक वोछो नहि भरिये।।
सुनि बानी क्षुल्लक तनी, पूछो मारि जु दत्त नैं।
कौन निमित्त गृह त्यागिया, सो कहिए प्रभु मुझ नैं।।107।।
तबै सुनाये जनम ब्रहम नैं अपने नृप कौं।
सप्त अमित दुख रूप जेहि भासै है निज कौ।।
सुनिहौं मारि जु दत्त सप्त भव पहली मैं हौं।
राव यशोधर नांमा भूमि कौ राज करै हौ।।
इह बहनि माता हुती, चंद्रमती जसु नाम हौ।
कुर्कट पिष्टी मो परी वारि लहै दुख ग्राम हो।।108।।
सप्त जनम लौं दुख मातृ पुत्र जु नैं पाये।
चून तनौं चरनायुधो जु हति जनम नसाये।।
कतृर्म ताम्र जु चूड हतन कौ एतौ पापा।
भयो जु जाकरि बहुत हमनि पाये संतापा।।
साचौ मुरगा मारते, तौ न जानिये का हुतौ।
थापन जीव विनास तैं, बहुत दिननिलौं दुख भुतौ।।109।।
या भव के पहलैं जु पाइयो जिनवर धर्मा।
तातैं नृप कुल जन्म पाय भायो निज मर्मा।।
सुनि कैं गुर के बैन सप्त भव हम हि विभासे।
माता बहन जु एह पुत्र हम भाई भा से।।
राज पाट सब त्यागि कैं, जिन चरणनि शरण जु गही।
पीठी मुरग बिनासि कै, हम बहुतैं आपद लही।।110।।

जिनमत पाय विशाल तत्त्व कौतूहल आयो।
मरिवे कौ भैं नांहि गुरनि मरिबौ न बतायो।।
देह तनौ जु वियोग मरन कहिये याही कौ।
प्राणनि पीड़ न होय, पाप भाष्यो ताही कौं।।
बावन जुगल तुमे हतौ, महा नर्क में जाहुगे।
हिंसा के अपराध तैं, घोर दुरक तुम पाहुगे।।111।।
सुनि जु अभैरुचि बैन मारिदत्त हि नैं जाने।
इसी जनम के भागिनेय मेरे हि पिछानें।।
तजि कै सकल विषाद जीव हिंसा नृप त्यागि।
पकरे बावन जुगल छांडि जिन सरधा पागी।।
पर्‌यो ब्रह्मचारी तनैं, पगि जिनधर्मी जो हुयो।
चंडमारिका कन फरै, करि बंदन जिनमत छुयो।।112।।

अथ वै स्तुति करै है—

धन्य धन्य जिन धर्म धन्य है जिन अरिहंता।
धन्य सुगुर निरगंथ धन्य केवलि वच संता।।
धन्य सु दर्शन ज्ञान चरन फुनि धन्य जु होई।
तप द्वादश विधि धन्य धन्य अनुभौ पथ सोई।।
धन्य दया प्राणीनि की, है धन्य सत्य वानी सही।
धन्य भोग तजिवौ गुरई, भोग तजक धन्य जु तुही।।113।।

(सोरठा)

या विधि करि थुति वै जु, राजा तौ मुनिव्रत गह्‌यो।
अनुव्रत क्षम फर लै जु, जन्म सुधार्‌यौ आपनौ।।114।।
विंतर देवी चंड, मारी हू सम्यक गह्यो।
व्रत धरिवौ न अखंड, देव दिवांगन जन्म मैं।।115।।
तुव दासा कौ संग, पायजु तीनौं सुर कियो।
लह्यो निजातम रंग, सम्यक दृष्टि ते भया।।116।।

भोपा भरडा पूजि, जनम गुमांवै आपुनौं।
करि तौसौं प्रभु दूजि, जग मांहै भ्रमते फिरैं।।117।।
भोम जु मंगल नाम, भूमि पुत्र जासौं कहैं।
तू मंगलमय राम, मंगल तेरौ दास है।।118।।
नवग्रह तेरे दास, दासनि कौ पीडैं नहीं।
तू काटन जग पास, भोला जीव न तुव भजैं।।119।।
भोला मूरिख नाम, मूरख तोहि जु न लहैं।
जे भद्रिक परिणाम, ते भोला पावैं तुझैं।।120।।

(छप्पय)

भोगीश्वर धरणिंद तासु कौ नाथ जु तू ही।
तोहि सु ध्यावै भोगि पती तू गुण जु समूही।।
भोग तिक्त तू देव योगिपती तू जु कहावै।
योगि तिक्त जगदीस तू जु भोगिंद्र लखावै।।
नहिं भोग कै लेश कछु, भोगीश्वर गावैं तुझैं।
योगीश्वर लव लावही, तो बिनु को तारै मुझैं।।121।।
भोगी सर्प जु नाम भोग है फण कौ नामा।
भोगी भोग समान भोग तैं भाषैं रामा।।
भोर समान जु तू हि रात्रि भोगातम नासी।
ज्ञान सुभानु प्रकासि आप पर सकल विभासी।।
मोर करै मेरौ प्रभू, मिले अष्ट अति दुष्ट जे।
मोहि छुड़ावो कष्ट तैं, तेरे विरद सपष्ट जे।।122।।
भोग त्याग तुव पंथ भोग कौ त्यागी देवा।
भोगै निजरस भोग योग संयोग न लेवा।।
योगी तो सौ और दूसरौ नाहि मिलै को।
निज परिणति कौ भोग नित्य जाकौ न विलै को।।
भोडल सम जगभूति तैं, त्यागि योगमुद्रा धरी।
भोगी तौ सौं और नां, ज्ञान विभूति रमा वरी।।123।।

सार भौम कौ नाथ एक भौमी भुज तू ही।
भौतिक न लहैं तोहि करहि आरंभ समूही।।
भौम जु विंतर नाम अष्ट भेदा सब वै ही।
तेरे सब ही दास तोहि कौं सर्व जपै ही।।
भृकुटी चढ़ै न रावरी, भृष्ट न पाँवै तोहि जी।
भव्य जु केई तारिया, क्यों न उधारै मोहि जी।।124।।
भौंदू भाई जीव तोहि नहि ध्यावैं मूढ़ा।
भौंकै पशु ज्यौं विफल तोहि तजि गहहि जु रूढ़ा।।
भं नक्षत्र जु नांम सर्व नक्षत्र जु तो ही।
सेवैं दीन दयाल साधु भावैं निरमोही।।
भंड बंड नहि पाँवही, भंडिम वात न रावरै।
भंड कथा को कादिका, पढ़ि प्रभु तुव गुन वीसरै।।125।।
भंगुर तू न दयाल भंग नहि तेरौ होई।
भंग किये तैं कर्म धर्म भास्यो नय दोई।।
भ्रांति न कबहूं होई भांति एक हि तू रहई।
भांति दुभांति न कोई तोहि, इह सूत्र जु कहई।।
भांज्ये भंजै न तू कभी भ्रंस न होई कदापि हू।
भंष न कबहूं देखिये, नाहि सचिक्कण क्रापि हू।।126।।
भ: कहिये श्रुति मांहि भ्रमर कौ नाम जु होई।
भ्रमर रूप सम्यक्त धार श्रावक मुनि जोई।।
चरण कमल मैं वास ध्यान मकरंद जु पीवैं।
करैं मलिनता दूरि शुद्ध ह्वै निर्भय जीवैं।।
अैसौ भ्रमर मुझैं करौ, चरन कमल नहि परहरू।
ले सुवास क्रम कमल की, चहुंगति फिरिवौ बीसरू।।127।।

(दोहा)

सर्व अलोकाकाश है, सरवर सम जु बखांनि।
तामैं लोकाकाश है, अंबुज सम रस खांनि।।128।।

ताकौ भ्रमर जु चेतनो, रसिया रस कौ पुंज।
ताहि लखैं विरला जना, वह षटपद सुख कुंज।।129।।
जैसे मधुकर कीट कौं, करै आपुने रूप।
तैसे प्रभु निज दास कौ, निज सम करै अनूप।।130।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

भरमकौ भंजक तू भ्रांतिकौ न लेश नाथ,
भाल सब लोककौ जु भिन्न परमातमा।
भीनौं निज रस मांहि भीति रै जीवनिकी,
भुकति मुकति दाय नाथ है चिदातमां।।
भूप सव भूतनि कौ भूतिकौ निवास सदा,
भेदभाव नांहि जामै भैषज समातमा।।
भोग ही जु रोगसम हरै जाहि भौतिका न,
लहैं बंड़ भंड कोऊ शून्य बिनु स्वातमां।।131।।

(दोहा)

तेरी नाथ जु भद्रता, वहै भवानी होइ।
कहैं भंद्रि काली जिसैं, चिदभावातम सोइ।।132।।
रमा जु पदमा मा जिको, ऋद्धि समृद्धि शिवा जु।
कमला लक्ष्मी संपदा, गौरी सिद्धि जि काजु।।133।।
संपति निज अनुभूति जो, लाछि महामाया जु।
काली कालहराजि को, चंडी जिन काया जु।।134।।
परम प्रचंडी चंडकी, शक्ति सुखातम भूति।
जिन सत्ता जिन भावना, जैनी जैन विभूति।।135।।
स्वाभाविक पर्याय जो, प्रभु की गुण रूपा जु।
परम शुद्धता वस्तुता, शुद्ध स्वचेतनता जु।।136।।

भा आभा द्युति कांति जो, देवी दिव्य स्वरूप।
और न देवी जगत मैं, इह भाषैं जिन भूप।।137।।
लोक जु भाषा मैं कहैं, दौलति वाकौं नाम।
सो पइए जिन सेव तैं, अपनी परनति धाम।।138।।

इति श्री भकार संपूर्णम्।

म

आगै मकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

महादेवं महावीरं, मानमायाविदूरगं।
मिथ्यामार्गनिहंतारं, मीनध्वजनिपातकं।।1।।
मुक्तिमूलं मुधावीतं, मूढ़भावनिवारकं।
मेचकामेचकाद्यैश्च भावैर्वर्जितमीश्वरं।।2।।
मेरुतुल्यं महाधीरं, निश्चलं लोकवत्सलं।
मेघतुल्यं नभस्तुल्यं, मैथुनातीतधर्मकं।।3।।
मोक्षतत्त्वप्रणेतारं, मोघभावविवीतकं।
मौलिं सर्वविराटस्य, मंदिरं सुखवीर्ययो:।।4।।
मंगल मंदतातीतं, मंक्षुपारकरं प्रभुं।
शून्याशून्यवितीतं च, शून्याशून्यप्रकाशकम्।।5।।

(चौपई)

महादेव महराज प्रधानं। महा प्रभू मह ऋद्धि महान।।
महा मोह मह तेज जु कहैं। महातपा इक तोहि जु चहैं।।6।।
मह महेंद्र महितो मतिवांन। महामहंत अनंत विधान।।
महा मनोहर रूप निधान। महा पापहर पुण्य वितान।।7।।

महाबोधि कर परम समाधि। मृत्युंजय वर्जित असमाधि।।
महावीर मरजादा बीत। मनमद मछर मनमथ जीत।।8।।
महाशोकहर देव अशोक। तरु अशोकध्वज अतिशय थोक।।
ईश महर्द्धिक परम महेश। महाविद्य विद्येश अशेष।।9।।
महा ब्रह्मचर्यात्म विभू। महाब्रह्म पथ दाई प्रभू।।
महा महेश्वर मह मंत्रो जु। महाधीर वीर जु तंत्रो जु।।10।।
महाशूर वीरो परचंड। महिमानिधि दातार अखंड।।
महानिधि मह परम निधान। ममता हर मरजादा वान।।11।।
तू मरमज्ञ मरम छेदी न। मरम छेदका तुव भेदी न।।
मतिहीनां चंडी के दास। तोहि न पावैं जीव विनास।।12।।
अठ मद अठ मल तेरैं नांहि। चउदह मल नांहि तुव मांहि।।
महाजयो मल वर्जित करै। महाशयो मह धीरज धरै।।13।।
महा अर्क अर्केश्वर तू जु। पूज महोदर्को जग दूज।।
महा प्रभोदय कर्म दही जु। महायशो महधाम तु ही जु।।14।।
महासत्त्व महधृति सुख रास। महासंपदा परम प्रकास।।
महाबली महशक्ति अपार। महाज्योति ज्योतिश्वर सार।।15।।
महाभूति महद्युति जु मुनिंद। महामती अतिज्ञान जिनिंद।।
मति श्रुति अवधि मनपरजै जु, तू केवलमय अतिपरचै जु।।16।।
महानीति महक्षांति निवास। महादया कर मह सुविकास।।
महाप्रज्ञ प्रज्ञाधर तु ही। महाभाग महनाद जु सही।।17।।
महाकवि कवि काव्य प्रकास। महा महामहकीर्ति विलास।।
महा मनीषी मनु पतिदेव, करहि मनीषी जाकी सेव।।18।।
नांव मनीषा बुद्धि तनौ जु। तू केवल बुद्धीश घनौ जु।।
तू जु मलघ्न कलघ्न अशेस। महाकांति महबपु महभेस।।19।।
महादान महज्ञान प्रमान। महायोज्ञ महगुण परधान।।
महा महापति महपति जती। महा महीषी अति जति पती।।20।।
सर्व मही कै उपरि रहे। महीनाथ जाकौं श्रुति कहै।।
मही नांम पृथ्वी कौ कही। अष्टम ही कौ रावल वही।।21।।

वा सम नांही मही मैं कोइ। सर्व महिपति कौ यति सोइ।।
वसु मही कहिये जग मांहि। छाछि नाम इह संसै नांहि।।22।।
छाछि समान सवै जग होइ। घ्रत तुल्यो तू सार जु सोइ।।
महा प्रातिहार्याधिप ईश। महामुनी महा मौन अधीश।।23।।
महादमी मह शम निरधार। महा शीलमय मह अविकार।।
महासषो महावीर दयाल। महामषो शतमष प्रतिपाल।।24।।
यज्ञ नांव जिन पूज करै जु। यज्ञ नांव मुनि भोजन दै जु।।
यज्ञ प्रतिष्टा तीरथ जात। पर दोष जु ढंपन मष ख्यात।।25।।
मष कहिये यज्ञ जु कौ नाम। सोई मष भजिये निजराम।।
कर्म होमियें ध्यान प्रजारि। ध्यान समान न पावक धारि।।26।।
मन मरकट के रोधक साधु। मष उपदेसैं भजन अबाध।।
मष अध्वर ए यज्ञ जु नाम। अध्वर अर्थ जु करुणा धाम।।27।।
महाव्रती मदनांतक मह्य। मगन सुरूपी परगट गुह्य।।
मह्य नांव है पूज्य तनौ जु। जिन बिनु मह्य न और गिनौ जु।।29।।
महा मैत्री मय अति मंत्री जु। महामंत्रदायक तंत्री जु।।
महोपाय अनुपाय अकाय। महा कारुणिको करुणाय।।29।।
महा पद्म पदमापति प्रभू। महसां पति महतां पति विभू।।
महा धुरंधरो है तू जु दयाल। महौदार जो महत प्रपाल।।30।।

(नाराच)

महोमयो महोदयो महा सु घोष नाथ है।
महेज्य सर्वपूजितो सदा अनंत साथ है।।
महा महर्षिनायको महिष्ट वा कईश्वरो।
महा महंत पारको महातमा अधीश्वरो।।31।।
महा जु तामसंहरो प्रभू महात्म रूप जो।
महा कलेस नास को महा विभूति भूप जो।।
महा पराक्रमो हनी, महा जु भूत भूपती।
महा कषाय नासको महातमा महा जती।।32।।

महा भवोदधी उतार है महा गुणाकरो।
महा गुणी गुणादरो महाद्रि मोह खय करो।।
महा सु ध्यान धारणो महा सु धर्म कारको।
महा सुशुक्ल धारको महा व्रती उधारको।।33।।
महा जु कर्म नाशनो, अकर्मभव भासनो।
महेशिता मनोहरां, गहै प्रभू आबासनो।।
महा अरी हनै अनादि अर्हता श्रुती कहै।
महा मनोज्ञ उत्तमो मनूपती मुनीश है।।34।।
मनू जु चौदहा सवै जपै जु जाहि सर्व ही।
महेंद्र औ अहेंद्र औ नरेंद्र जाहि अर्च ही।।
मनां हरै तनां हरैं करै जु आप सारिखौ।
मला हरै कला हरै मदा हरै सु पारिखौ।।35।।
मनोज दंड चित्त दंड है मनोभवारि जो।
लहैं न मत्सरी जिसै इहै जु ठीक धारि जो।।
मरी विडार मृत्यु डार बोध कौ प्रबोध जो।
मली मसाल हैं न जाहि पाप कौ निरोध जो।।36।।
मना मलीन मानवा भजैं न जांहि देव सो।
मरुस्थली दुनी मझार वारि दो अछेव सो।।
बसै जु सर्व मध्य जो मनुक्ष ही उधार ही।
महा जु पौरषौ प्रथु मनुक्ष रूप धार ही।।37।।
नहि मनुक्ष जौंनि जो नराकृति निराकृती।
मनुक्ष सौं लखैं मुनी महाजनो महाकृती।।
जनो नही जिनो सही जु मर्दिता महामला।
महोत्तमा नरोत्तमो जिनोत्तमो महाकला।।38।।
महा सु पुण्य पावनो, जु पाप पुण्य नाशनो।
महाधिलछि दायकौ अकायको अनाशनो।।
मयाकरो दयाकरो वरंकरो मतिंकरो।
शिवंकरो यतिंकरो हितंकरो गति हरो।।39।।

(चौपई)

मठ मगरा मैं वास न धरै। सबके सिर परि गरजन करै।।
भव सागर मैं काल जु मच्छ। हरै काल कौ तू अति स्वच्छ।।40।।
मगरमच्छ कौ भय कछु नांहि। जिन सौ खेवट ह्वै जब पाँहि।
मकरध्वज है नांम जु काम। तू जु कामहर कामद राम।।41।।
कामद कहिये वांछित दाय। सर्व कामनां हरइ सुभाय।।
महित पुरुष तू कल्मष नास। मन इंद्री गण कर उदवास।।42।।
मगन सदा तू निजरस मांहि। मगदायक तू उनमत नांहि।।
मघवा तोहि भजैं जगनाथ। मघवा कहिए सुर गण नाथ।।43।।
मन की अटक लगे तुझ ओर। तव जिय पावै उत्तम दौर।।
मचमचाट इह देह पलीत। मछ गिलागिल जगत अनीत।।44।।
मजलि बतावै तू हि जु नाथ। माझ सकल कै तू जु असाथ।।
मटक न चटक न तेरै कोई। मतवाला मदमत्त न होइ।।45।।
मधु मद मांस वरावरी तीन। इनके भक्षक तोहि न चीन।।
मधुसूदन तू मधु परिहरै। मधुमाषी मल फरस न करै।।46।।

अथ एती वस्तु नै मधु कहिजै—

मधु सहैत तुव दास न भषैं। मधु मदिरा कबहूं नहि चखैं।।
मधु वसंत सम तोहि लखी जु। फूलहि तरु सम दास सही जु।।47।।
मधु चैत्र जु कौ नाव हु कहैं। तेरे चैत्य चैत्र सम गहै।।
मधु मकरंद पिवैं मधुकरा। ह्वैं दासा पदकमल सु धरा।।48।।
मद सूदन तू मद कौ नास। मकरध्वज कौ मूल विनास।।
मधु सूदन मधुकर ज्यौं रहे। तेरे चरन कमल अति चहै।।49।।
मधुकर चरन कमल के जेह। मकरंदो निज रस अति लेह।।
करहि मधुकरी भिक्षा साध। तोकौं भजि ते हौंहि अबाध।।50।।
ममता मेरी दूरि पुलाय। तव ममता पर है नहि राय।।
मया तिहारी तैं जु जिनिंद। मयराजा हूए निरदुंद।।51।।

मय राजा मंदोदरि तात। तुव परसाद भये सु उदात्त।।
मयणां सुंदरि सुखकर तू जु। मदन मंजूषा दुख हर पूज।।52।।
ए दोऊ महिषी श्रीपाल। तुव भजि पायो धर्म विशाल।।
महिषी इंद्र तनी तुव ध्याय। इक भव धरि होवै जु अकाय।।53।।
मपती डोरि न तेरै कोइ। विनु मपती मांपे सब लोइ।।
ममकाराहंकार निषेध। मरण रहित करि हरहु अबेध।।54।।
तेरी मर काहू पैं नाहि। मल्ल प्रहारी मल्ल कहांहि।।
मल्लिनाथ मुनिसुव्रत जो हु। मदन विहंडी जगपति सोहु।।55।।
महल न महिला जाकै कोइ। नगन रूप राजै प्रभु सोइ।।
मस्करि दंडधारकौं कहै। निरग्रन्था विनु वाहि न गहै।।56।।
(मस्कर वांस कौ दंड नैं राखै सो मस्करि कहावैं श्रीपात दंडी कौ नाव है।)
मल मूत्रादि रहित सुख पिंड। निर्मल निरलेपो मद दंड।।
मद्य मांस मधु भाषण तजैं। महिला तजि जाकौं भवि भजैं।।57।।
मातंगी चंडी जे भजैं। सुर्ग मुक्ति कौं ते नर तजैं।।
मातंगो कहिये चिंडाल। सोऊ जिन जपि भयो विशाल।।58।।
हिंसा तजि पायो सुरलोक। जिनमत पाय गह्यो निज थोक।।
मातंगो हस्ती कौ नाम। हसती हू पायो सुरधाम।।59।।
माया मान विडारक सही। मार मारिका मारक तुही।।
मार जु कहिये काम जु नाम। मार मारको तू हि जु राम।।60।।
कहैं मारि का नाम मरी जु। मरी जु भागै दास लखी जु।।
मारगणा चौदा तू कहै। तिनके बासठ भेद हु गहै।।61।।
गहै नही एको कछू तू जू। तो सौ तू ही त्रिभुवन पूज।।
गति च्यारयौं मैं एक न धरै। पंच इंद्रिनि मैं भाव न करै।।62।।
षट काया कौ पीहर सही। पै आपुन काया तैं रही।।
जोग तीन के पंद्रह भेद। एक न राखै आप अभेद।।63।।
तीन वेद मैं एक न आप। नारि न पुरुष न षंड न थाप।।
चऊ कषाय के जेते भेद। कछु नहि धारै नाथ अछैद।।64।।

अष्ट ज्ञान मैं और न थाप। केवल ज्ञान सु निज परताप।।
चउ दरसन मैं एकहि आप। केवल दरसन रूप निपाप।।65।।
सप्त जु संयम तिन मैं एक। यथाख्यात धारै सविवेक।।
सिद्धदसा मैं इह हूँ नांहि। केवल तत्त्व रूप निज मांहि।।66।।
आप हि संयम आप हि शील। दास उधारइ करई न ढील।।
षट लेस्या कौ भाव न होय। शैलेसी किरिया पति सोय।।67।।
भव्य अभव्य दसा नहि धरै। षट समकित मैं एक जु बरै।।
क्षायक सम्यक आप स्वरूप। समना अमना नांहि निरूप।।68।।
आहारक नाहारक नांहि। मार्गण रहितो आप जु पाँहि।।
मग्गण गुणठाणा नहि कोइ। पारणामिको भाव जु जोइ।।69।।
मारग दायक मारग तू ही। मात्रा मारन तेरै सही।।
अक्षर मात्रा सहु प्रतिभास। मारगकार सु माट ग पास।।70।।

(मंदाक्रांता)

मायाजालो न गहहिं तुझैं तू जु है शुद्ध तत्त्वो।
मायाशून्यो श्रुति इह कहै, माधुरी ज्ञान सत्त्वो।।
मा लक्ष्मी कौ कहहिं जु बुधा सा स्वशक्ति अभिन्ना।
न्यारी लक्ष्मी युवति तनुका सा न तेरै विभिन्ना।।71।।
मा माता जो जनइ न तुझैं तू अयोनी जु रंभो।
माता ताता सुत हित गणा भ्रात भृत्या न दंभो।।
बाह्य माया किमपि न नषैं अंतरा लच्छि पासे।
सत्ता शुद्धा चिद्गुण धरा तत्त्व लक्ष्मी विभासे। ।72।।
मा शब्दो जो कहहि सुमुनी आत्म नामां जु सत्यं।
आत्मारामो जिनवर तु ही लोक माया असत्यं।।
मा मानो हूं कहिय तु प्रभू तू न है मान रूपो।
मानो नांही तुझ हि सु गहै मांन दाता तू भूपो।।73।।
मानं निंदै कबहु न छुवै तू जु मानापहारी।
मारै मारं मदन रिपु तू मारजिल्लोकतारी।।

मारै तारै नहि जु कबहू जीव कौं तारइ तू।
मारो कामो मदन मनजो मन्मथो नाशई तू, ।।74।।

(स्रग्धरा)

माषा मुद्गादि धान्यां, विदल प्रगटहि द्रालि ह्वै ज्यातनी भो।
त्यागै दासा दही सौं, मिलित नहि भषैं, ज्यां जिनाज्ञा सुनी भो।
मांगै नांही जु दासा, जगत सुख कछू ह्वै अजाची जु ध्यावैं।
माहैं पोसे नदी कैं, तटि रहि ऋषिया धीधना तोहि गांवैं।।75।।
तुल्यं मानापमाना, सम सुख जु दुषा, मित्र शत्रु समाना।
त्यागैं देहाभिमानां तजि सकल रमा, तोहि मांनै अमाना।
नांही आरंभ कोई, तुव भजि परमा पावई मुक्ति रामा।
तू ही निर्वाण देवो जगत दुख हरो, तोहि ध्यावैं विरामा।।76।।

(चौपई)

मांचि रह्यो हूं भववन मांही। तू ही पार करै सक नांही।।
माद्री कौं सुरलोक जु दियो। तुव भजि कुंती सुरपुर लीयो।।77।।
माद्रेया नकुल र सहदेवा। कीये अहमिंद्रा शिव लेवा।।
कौंतेया त्रय पार उतारै। धर्म पूत भीमा नर तारे।।78।।
माखी माछर चौइंद्री जे। मन नांही नहि करणेंद्री जे।।
चौंइंद्री लौं अमना सब ही। पंचेन्द्री मैं दोऊ फवही।।79।।
अमनां तोहि न पावैं देवा। कोइक समना धारहि सेवा।।
मन इंद्री जीतैं तुव दासा। तुव परसाद लहैं स्वविलास।।80।।
मार्जन नांव पूंजंणी कौ है। नरम पूंजणी धरण कह्यो है।।
तेरै आगमि तातैं दासा। कोमल मार्जन धारहि पासा।।81।।
मारजार आदिक जे जीवा। मांसाहारी दुष्ट सदीवा।।
इनहि देखिकै भोजन मोहि। ए जु अंतराई सक काही।।82।।
सब आहार विधी तू भाषै। हिंसक जीव सु दास न राषै।।
मांझि सकल कै तू इक रहई। जहि घटि प्रगटै तहि अघ दहई।।83।।

माठादिक तेरै नहि होई। माठा जीव न पावै कोई।।
सर्व पदारथ तो महिपावै। सबकौ मांट जु तू इक हावै।।84।।
मांटि पनै जीते सहु कर्मा। तो सौ मांटी और न धर्मा।।
मांटी नांव सबल कौ कहिये। तू इक सबल निबल सहु लहिये।।85।।
मांटी अभष कहै तू सांई। माठी बुद्धि हरै जु गुसांई।।
मांड तिहारी त्रिभुवन राजा। माथै सबके तू हि विराजा।।86।।
मास मास उपवास जु करहि। तो पनि तो बिनु सिद्धि न धरहीं।।
मात भये तो ठिग सब देवा। सुर नर मुनिवर धारहिं सेवा।।87।।
मांद मांदगी मरण न तौकौं। मार्दव धर्म पती तुझ धोकौं।।
मार्दव मान विनासो कहिये। बिनु मार्दव तोहि जु नहि लहिये।।88।।
मापा साइर तेरै नांही। माल जु गायति गहइ न पाँही।।
मापै लोकालोक सबै ही। राह चलावा तू इक है ही।।89।।
माफकरौ मेरी अति चूका। करि मेरे करम जु सहु भूका।।
मांम राषि मेरी जिनराजा। माया काया रहित विराजा।।90।।
माई बाप न तो बिनु कोई। मार नाशनो तू इक होई।।
मालदार तू है निज माला। माला तिलक न तेरै लाला।।91।।
मावादिक रात्रि जु नहि लेवा। रात्रे अशन न भाषइ देवा।।
दिन पख मास ऋतु जु अयनादी। वरष पूरवा पल्य अनादी।।92।।
सागर कल्प जु तू ही भाषै। तौं बिनु कौंन सवैं भ्रम नाषै।।
मासमांगि सरजल तटि वैठा। रहै सुखी मुनि तो महि पैठा।।93।।
माहिर सब कौ तू इक होइ। तेरे माहिर विरला कोई।।
मांसादिक जे मलिन कुवस्तु। तिनकौ सपरस नांहै प्रशस्तू।।94।।
मांसाहारी माँस जु त्यागैं। तब तेरे मारग कौं लागैं।।
मार न मोह न काम न आदी। करहि तिके षौवे भव बादी।।95।।
वसीकरण आकर्षण करहीं। ते सठ तोहि जु लहहिं न कब हीं।।
सकल कामना त्यागि निरासा। पाँवहि मुनिवर तेरहु बासा।।96।।
मांकुण आदि जीव की रक्षा। करहिं तिके कारहि तुव पक्षा।।
तोलै मासै जीव न राषै। तब जग जीवन तोहि जु सावै।।97।।

मा लक्ष्मी कौ धव कहिये पति। तातैं माधव तू हि जु अति यति।।
माधव तोहि उमाधव ध्यावै। तू कमला वर शुद्ध कहावै।।98।।
मार्ग प्रभावी मारग भासै। माधुर माधर तू हि बिभासै।।
हमकौं देहु माधुरी सेवा। तू शिवमारग जिनवर देवा।।99।।

(छप्पय)

मितवादी हितवादी मिष्ट बच तेरे स्वामी।
है संदिग्ध वितीत शब्द तेरे अभिरामी।।
मित कहिये मरजाद सकल मरजाद है तू ही।
षट् कायनि कौ मित्र तू जु है ज्ञान समूही।।
मित्र नाम है भानु कौ, भानु रासी तुव दास है।
मित्रपती मित्रेश्वरो, मितभासी मित पार है।।100।।
मिष्ट सु जिनमत सार मिष्ट सतगुर की सेवा।
मिष्ट व्रत्त दृढ़ धरन मिष्ट भजिवौ जिनदेवा।।
मिष्ट जु साधु महंत मिष्ट दिव्य ध्वनि जिन की।
मिष्ट मंत्र नवकार मिष्ट चरचा तत्त्वनि की।।
मिष्ट सांहिमी मिलन है, मिष्ट द्विदस तप धारिवौ।
मिष्ट जु अनशन मरण है, मिष्ट जगत कौ त्यागिवौ।।101।।
मिष्ट विमोक्ष महान सोह सब जग कै ऊंचै।
मिष्ट जु रतनत्रयी हु जा विनां मुक्ति न सूचै।।
मिष्ट जु धारण ध्यान मिष्ट मिश्री नहि होई।
मिश्र भावहु न मिष्ट मिष्ट सुध सम्यक सोई।।
मिथ्या भाव न मिष्ट कहुँ, मिष्ट जु सम्यक ज्ञान है।
मिथ्याती ध्यावैं न तुव, करहि सम्यकी ध्यान है।।102।।
तू मिथ्यात निकंद तोहि तैं सम्यक पावैं।
मिथ्या एक जु दोय तीन अर पंच गिनावैं।।
मिथ्या के बहु भेद तू जु एको नहि राखै।
मिथ्या दृष्टि आदि चौद गुणठाणा भाषै।।

मिथ्याठाणैं जीव अति, मिथ्या की थिति अनित है।
तजि मिथ्या सम्यक्त ले, तब तोहि इक सरदहै।।103।।
सास्वादन दूजौ जु जासु मैं स्वाद लगारा।
परै जु समकित पाय आव ही प्रथम जु धारा।।
जैसे फल तूटौ जु साख थी भूमि हि आवै।
अंतराल वरती जु नाम सास्वादन पावै।।
पतन सांम हौ भाव हैं, छह आवलि थिरता करै।
परि के पाय मिथ्यात तौं, सादि मिथ्याती पद धरै।।104।।
मिश्र ठाण तीजो जु मध्य मिथ्याती कहिये।
समय मिथ्यात उदै जु मिश्र गुणठाणा लहिये।।
तह पइए द्वे भाव सम्यको अवर मिथ्यातो।
सम्यक मिथ्याती जु सोहु कहिये जु विख्यातो।।
सिखरणि कौ सौ स्वाद जहं, अंतमहूरत थिति गहै।
चौदह मांही तीसरो, तोही तैं सुनि मुनि कहै।।105।।
अव्रत चउथौ ठाण व्रत्त विनु सम्यक होई।
पंचम देश जु व्रत्त श्रावको मुनि सम सोई।।
छठौ परमत नांम त्याग घर बार करै जे।
मुनिवर धर्म सराग चरण करणानु सरै जो।।
सत्तम ठाण प्रमत्त नहिं जहां धर्म परिपूर है।
प्रथम शुक्ल लहि श्रेणी धर, अठम अपूरव करण ह्वै।।106।।
नवमौं अनिर्वत्ती जु भाव पाछौ नहि आवै।
लागा परम समाधि मांहि निज तत्त्व सु ध्यावै।।
दसमौं सूक्ष्म लोभ मुक्ति कौ लोभ जु जामैं।
नहि संजुलन तीन लोभ कौ लेश जु तामैं।।
उपशम मोह जु ग्यारमैं, क्षपक श्रेणि धर नां छुवैं।
इह ठाणौं है पतनमुख, याहि पाय पाछा हुवै।।107।।
द्वादशमौं निरमोह क्षीणमोहो जु कहावै।
क्षपक दशमथी याहि लैंन कौं सूधौ धावै।।

उपशम श्रेणि जु धार याहि नहि पावै रावा।
पाय ग्यारमो ठाण आवई पाछौ भावा।।
बारम सौ इह बारमैं, वेगि देय केवल जिको।
उत्तम अंतर आतमां, द्वितिय शुक्लधर धसति को ।।108।।
तेरहमौं जु सजोग सप्त हैं जोग जु जामैं।
केवल कै परभाव वेदनी अवल जु तामैं।।
केवल दरसन ज्ञान वीर्य सुख प्रगट चतुष्टा।
गये घातिया च्यारि अष्ट मैं जे जु बलिष्ठा।।
रहे अघाति जु च्यारि जड़, प्रकृति पचासी तिन तनी।
जरी जेवरी सी जु वै, त्रितिय शुक्ल तेऊ हनी।।109।।
चौदहमौं जु अजोग जोग संजोग न जामैं।
लघु पंचाक्षर मात्र थिति जु भाषै तू तामैं।।
चौथौ शुक्ल इहां जु ओर नहि यासौं ठांणा।
शीघ्र सिद्ध पद करै अंतिमौं अतुल वंखाणा।।
तेरम पंचम ठाण थिति, कोडि पूरवा कछु घटैं।
सागर तेतीसा अधिक, चौथे की थिति तू रटै।।110।।
छट्टम सौं ले द्विदस थकी सब ही गुण ठाणा।
अंतमहूरत रहनि तूहि इहु करइ वखांणा।।
मिटैं कर्म सब देव आवतैं घट मैं तोकौं।
तो सौं मित्र न कोई तारि तू जिनवर मोकौ।।
जग के झूठे मित्र सब, साच न आये तोहि सौं।
मोकौं सिद्ध करि प्रभु, तारिजु बिनवै तोहि सौं।111।।
महास्वामि तोसो ज और कौ दीसै जग मैं।
मिथ्यातैं मोकौ जु काढि कै लेहु सुमग मैं।।
तो सो साधु मिलाप करहि तू परम मिलापी।
अमिल मिलापी देव तू जु नहि मिलइ कदापी।।
मिलि जु रह्यो सबसौं प्रभुजी, सदा जुदौ परभाव सौं।
लिये प्रभाव अनंत तू, मिलै सुमुनि निरदाव सौं।।112।।

(उपेंद्रवज्रा)

मिलाप तेरौ कबहू न छूटै। तु ही मिलापी कबहूं न तूटै।।
मिटै मिटायो कबहूँ न स्वामी। मिलाप साचौ तुझ सौं अनांमी।।113।।
करे सु साधू हमकौं प्रभू जी। मिलाप तेरौ इक दै विभू जी।।
मृषा विवादो कबहूं न तेरै। सु मध्यस्थ तू ही कितहू न प्रेरै।।114।।
सही मिलापी मुनिवर्ग कौ तू। रहै जु नागौ कमला धरो तू।।
सबै मिलापी जग कै जु झूठे। कभी जु तूठे कबहुं क रूठे।।115।।
तजैं मिठाई सब त्यागि मेवा। भये उदासा तजि सर्व बेवा।।
लगे जु तो मैं प्रभु धारि सेवा। तिके मिलापी तुम्हरे गनेवा।।116।।
मिताक्षरो तू सु हिताक्षरो है। अमिट्ट देवो लक्ष्मी वरो है।।
लक्ष्मी न तेरै बहिरंग कोई। यतींद्रियो योगधरो जिनोई।।117।।
मिल्यो न तो सौं इह जीव क्कापी। रुल्यो जु तातैं जग मैं सतापी।।
मिले जु तो सौं मुनि सिद्ध हूए। लिए न जन्मा कबहूं न मूए।।118।।
हत्यो जु मीनध्वज तैं हि देवा। हरै जु मीचा तुम्हरी हु सेवा।।
कहै जु मीनध्वज काम नामा। तुही अकामो जिन देव रामा।।119।।
नहीं हु जानौ कछु मीन मेषा। तुही उधारै मुझको अलेषा।।
कहै श्रुतिज्ञा द्विदसा हु रासी। मेषादि मीनांत सवै विभासी।।120।।
नही जु तेरै प्रभु कोई रासी। महा गुणो तू हि अनंत रासी।।
शशि जु भानो प्रमुषा ग्रहा जे। सवै ग्रहा तोहि भजैं महा जे।।121।।
नक्षत्र तारा सब तोहि सेवै। सुदेवा जु दैत्या इक तोहि वेवैं।।
सुरेसुरा चार निषेचरा जे। तिरा नरा सर्व जितेश्वरा जे।।122।।
तुझै अराधै जु तिके हि धन्या। नहि जु ध्यावै धृग तेहि गन्या।।
प्रभू न तोसौ जग मैं द्वितीये। तु ही जु देवा इक अद्वितीये।।123।।

(कुंडलिया)

मीनो जलचर नाव है, जल बिनु छांडै प्रांन।
वैसी प्रीति जु तोहि सौं, करैं मुनी मतिवान।।

करै मुनि मतिवान तो बिना क्षन नहि रहई।
भीग्यो तुवि रस मांहि दुतिय भावो नहिं लहई।।
लग्यो जु तौ सौ रंग और वस्तु जु नहि चीनो।
करै कलोल अलोल साधु ही जलचर मीनो।।124।।
पापी तोहि जु ना लहै, खग मृग मीन हतैं जु।
जीव दया पालैं जिके, ते जन तोहि लहै जु।।
ते जन तोहि लहैं जु होय तेरे निज दासा।
तुव परसाद जिनिंद पाँवई तुव पुरि वासा।।
मीट न आंखि लगै जु साधु ध्यावैं सु प्रतापी।
खग मृग मीन हतैं जु ना लहैं तोहि जु पापी।।125।।
तेरैं मीट जु ना लगै, अनिमेषो तू देव।
मीठो हो मीठो अती, दै हमकौं निज सेव।।
दै हमकौं निज सेव हम जु मीजी गल अति ही।
उठिहि न सकहि कदापि तू न जौ ह्वै जगपति ही।।
मीढादिक प्राणीनि की जु तू करुणा को प्रेरै।
सदा जु जाग्रत ज्योति ना लगै मीट जु तेरै।।126।।
मीता तो सौ और ना, महामीत चिदधीश।
मित्र छहू कायानि कौ, बिनु स्वारथ जगदीस।।
बिनु स्वारथ जगदीस मीन केतु जु कौ नासा।
मीन केतु है नाम काग कौ प्रगट विभासा।।
काम न क्रोध न लोभ तू जु है सदा नचींता।
महा सु मीत न देव, और नां तो सौ मीता।।127।।
मुक्तो बंधन तैं तु ही, मुक्ति धरा कौ ईस।
मुक्तातम मुक्तीश तू, मुक्तिपति जगदीस।।
मुक्तीपती जगदीस सीस बैठौ सब ही कै।
मुक्तीश्वर अलखो जु नाथ माथै तुम ही कै।
मुक्ति दायको देव उक्ति युक्ति जु करि व्यक्तो।
मुक्ति जु जाकै पासि, तुही बंधन तैं मुक्तो।।128।।

मुक्ती धरे ईश्वर तुही, देहु मुक्ति हमकौं जु।
मुक्ति करन तू जगपती, नमो नमो तोकौ जु।
नमो नमो तोकौं जु मुनिनि कौ देव जु तू ही।
है सुमुनिंद्रहि पूजि सेवही मुनि जु समूही।।
कहैं मुनीश्वर सार, श्रुति जु कौ तोहि प्रव्यक्ति।
है जु मुमुक्ष अधार, तु ही ईश्वर धर मुक्ती।।129।।

(सवैया इकतीसा)

मुनिनि कौ राज तू ही मुनिनि की लाज तौकौं,
तोहि कौ मुमुक्ष सु वदत मतिपार जी।
मुनि प्रेष्ट मुनि जेष्ट मुनिनि मैं श्रेष्ठ तू ही,
मुनिनि कौं मारग कौ दायक सुधार जी।।
जाकै काजि भव्य सव त्यागि जगजालभाव,
जांनिकै प्रभाव ताकौं हौंहि अनगार जी।
सोहै तू मुमुक्ष सार मुनिनिकौ नायक जो,
मुनिनिमैं रमि रह्यो मुनिमत कार जी।।130।।
मुकति के वांछी ते मुमुक्ष कहिये जु नाथ,
तोहीकौं जु ध्यायवै विमुक्त हौंहि जग तैं।
मुख्यरूप तू ही और गौण है सकल बस्तु,
मुनिनि कौं तारक अनादि हैं सुमगतैं।।
तो समा मुनीश्वर न और है मुनीश कोऊ,
मुकति भकति देय देव तू विगत तैं।
मुकति कौं मूलमंत तेरी जिन मुद्रा संत,
तेरी बिनु मुद्रा ईश छूटिवौ न गति तैं।।131।।
मुकुट न मुरली जु तेरै नांहि देखिये जू,
मुकुट के धारी सुर सेवै जगदीश तू।
मुरली मनोहर कहावै नवमो जु विश्नु,
तो मई जु है प्रभू जिनिंद है अधीश तू।।

तोही कौं महेश औ जिनेश कहैं साधु जन,
तू ही शिव शंभू परमेसुर मुनीश तू।
मुक्ताफल मालादिक तेरै ना नगन तूहि,
योगकौ प्रकाशी एक योगी है चिदीश तू।।132।।
मुसकनि मुलकनि नांहि कभी राग होत,
तैरै तू मुषरता धरै न कभी सांइयां।
तेरौ मुख है मयंक तेहि लखि जो मृगांक,
करै जु चकोर भाव ज्योतिष गुसाइयां।।
तेरौ मुख देखिकैं सुरेस नैं हजार नेत्र,
कीनें तऊ नांहि त्रिप्त मोहैं तू असाइंया।
सूची को प्रवेश देखि मुशल प्रवेश करैं,
अैसे ए विभाव भाव टांरि हो सु सांमियां।।133।।
मुलक कौ रावल तू तेरी ही जु मुद्रा पूजि,
और सब मुद्रा निज कांमि नांहि आंवही।
मुद्रिका न तेरै कोऊ मुद्रित कभी न होऊ,
मूसिवेकौं तेरौ धन चोर नाहि जावही।।
ज्ञान रूप मुहर हैं हाथ तेरै जोरे नाथ।
तातैं चोर चोरिवे कौ तेरै नाहिं जावही।
डरै ज्ञांन मुद्गर सौं कालरूप दीखै तू जु,
मुसै न मुसावै क्यौं हु महामुनि ध्यावहीं।।134।।
मुस्यो मेरौ धन सब भोर करि रहे चार,
तो विनां सवै जु माल द्यावै कौन दूसरौं।
तू तौ उनमुद्रित सदा जु सावधान नाथ,
न्याव कौ करनहार देव हैं अदूसरौ।।
मुसकिल नांहि तोकौं द्यायवौं जु मेरौ माल,
मुतलक नांहि तेरै मुतलव धूसरौ।
मुकरिरि द्याय माल मुनकिर होहु मति,
तू ही जौ न द्यावै तौं गहै जु कौंन ईसरो।।135।।

मुलक के स्वांमी भरतादि जे महंत नृप,
त्यागि कैं विभूति सब तोहि जपैं नाथ जी।
मूरति न तेरे कोई मुरति अनंत तेरी,
मूरति अमूरति कौं जानैं वड हाथ जी।।
मूरतीक पुग्गल है पंच जे अमूरतीक,
षट मांहि इहै भेद कहैं तू सु साथ जी।
पंच जड़रूप एक जीव है सचेतन जो,
तूही सब भाषै नाथ काहूकै न साथ जी।।136।।
मूल मोक्ष कौ तू ही जु मूकनि कौ शब्द देय,
मूंके तैं अनादि बंध आश्रव वितीत तू।
मूल मंत्र तू ही और तंत्र मंत्र नांहि कोऊ,
मूल उनमूल किये करम सजीत तू।।
मूढ जीव तोहि न चितारैं जग जाल तजि,
मूरति अमूरतीक सही है अजीत तू।
मूल पुरिसो जु तू ही मूरख न पावैं साथ,
मूल नायको तू देव ईश्वर अतीत तू।।137।।

(सोरठा)

मू बंधन कौ नाम, तेरै बंध कहां प्रभू।
निरबंधो शिवधाम, चऊ बंधनि तै दूर जो।।138।।
मूलोन्मूल करी जु, पात पात कीये विधी।
आठों कर्म हती जु, बैठो जग कै ऊपरैं।।139।।
मूरति प्रतिमा जेहि, तेरी कर्तृ अकर्तमा।
बंदैं ते सुख लेहिं, तीन मूढ़ता त्यागि कै।।140।।
देव धर्म अर लोक, इनमैं मूढ़त भाव जो।
तीनौं मिथ्या थोक, तिनके त्यागे तुव लहैं।।141।।
मूक मूढ़मति हीन, मूलि महासठ बुद्धि मैं।
तू करि हरि निज लीन, या सम नांहि प्रवीनता।।142।।

(सवैया इकतीसा)

मूषक समान हैं जु कायर अनादि कौं जु,
रहौं देह विल मांहि व्याकुल महासठा।।
मेरी घात लागि रहैं क्रोध लोभ वायस जु,
अंतक विडाल मोकौं तकत है जो हठा।।
मूसे तैं जु सिंह करै अैसौ तू समच्छ देव,
अंतक कौ अंतक है ज्ञान कौ धरें लठ।।
मूढता निवारि मेरी मूषक तैं सिंह करी,
तू ही नरसिंह देव महा ऋद्धि कौ गठा।।143।।

(शार्दूलविक्रीडित)

मूढ़ा तोहि न ध्यावही जु विकला तू मूल कर्ता प्रभू।
है मूर्ती बिनु मूर्ति तू हि सगुण आचूल मूलो विभू।।
कंदा मूल सवै तु निंदित कहै भोगा तजै सर्व तू।
योगी योग परायणो जिनपती धारै नहीं गर्व तू।।144।।
मूंगा रक्त परंतु नांहि जु प्रभा तेरे जु पावा जिसा।
तेरे हस्त तला च होठ सुरगा भाखैं कहौं कौन सा।।
तेरी तुल्य तुही जु और नहि को दीखै प्रभू दूसरो।
मूंगा दी जप मालिका करि तुझैं जंपै तु ही ईसरो।।145।।
मूंगा मौठ जु माष आदि द्विदला तक्रै मिला भक्ष नां।
तू भाषै दधि युक्त अन्न द्विदला लैबौ श्रुतिपक्ष नां।।
डाढ़ी मूंछ तने सु केस सिर के लोचा करे हस्त तैं।
ध्यावैं त्यागि परिग्रहा मुनिगणा जानैं तुझै वस्तु तैं।।146।।

(छप्पय)

मूंड मुडायें कहा तत्त्व नहिं पावै जौलौ।
मूढ़नि कौ उपदेस सुनैं मुक्ति जु नहि तौलौं।।

मलमूत्रादि भर्‌यो जु देह कबहू नहि शुद्धा।
शुद्धो आतमराम ज्ञान कौ मूल प्रबुद्धा।।
अैसी तो बिनु को कहै, को देवै निज ज्ञान कौं।
सुनि जु वीनती तारि हरि, मूंदि रहै मति कान कौ।।147।।
क्षेत्र मलेछ अयोज्ञ नांहि समकित कौं योज्ञा।
आरज क्षेत्र निवास उच्च कुल देह अरोज्ञा।।
जिनमत तन कौ श्रवन अवर मेधा अति पूरी।
विषय विरक्त जु भाव कुमति कुटिला अति दूरी।।
एक आंतिरौं रावरौं, देहु नाथ सब दायकौ।
मेघरूप तू जगत पति है, बिनु जड़ता सब लायको।।148।।
मेघ श्रवै जलधार तू जु ज्ञानामृत धारा।
वाकी रहनि न ठीक तू जु है नित्य विहारा।।
वह निपजावै धान तू जु उपजावै ध्याना।
वह दे दगौ कदापि तू जु निहकपट विधानां।।
वाकै चपला चंचली हो तेरै कमला निश्चला।
वाकौ धनुष न सासतो हौ तुव चापो अटल जु कला।।।149।।
तेरै चाप सुज्ञान व्रत्त के वांणा तेरै।
मेघेश्वर कौ तार तू जु शिव संपति प्रेरै।।
मेघेश्वर कहिये जु सोमप्रभ राव सुपूतो।
नृप श्रेयांस तनौ जु भ्रात्रि जो परम प्रसूतो।।
जयकुमार हौ नाम जसु जीते मेघकुमार सुर।
तव चक्री भरतेश नैं, मेघेश्वर भाष्यौ सुघर।।150।।
भरथ चक्री कौ प्राण परमभड जय जु कुमारो।
मेघेश्वर कहिये जु शील कौ पुंज करारो।।
करि बहु काल सुराज त्यागि सब जगत जंजारा।
तोकौं ध्याय सु नाथ हुवो गणनायक भारा।।
तू मेघेश्वर तार हैं, सिद्ध कियो मेघेश्वरैं।
बहुरि मेघकुमरैं जु तैं, ही थाप्यो अहमिंद्रेश्वरै।।151।।

मेघ कुमर इक नाम भूप श्रेणिक कै पुत्रो।
चेलन रानी कुक्ष जनमियो भगवत मित्रों।।
करि दरसन महावीर धारि महव्रत्त जु भारा।
तजि कै सकल विभाव ध्याययो जगत उधारा।।
लयो भव्य अहमिंद्र पद, पैहै जन्म विदेह मैं।
लै शरनौं जु विदेह कौं, जे हैं सही विदेह मैं।।152।।
मेघकुमार जु जाति बहुरि हैं भवनपती मैं।
दस विधि भवनपती जु प्रगट हैं देवगति मैं।।
तिन करि पूज्य सदा जु तू हि प्रभु देव सुदेवा।
मेघनाद सुख कार देव तेरी हि सुसेवा।।
तू जू विभीषण को अती, इंद्रजीत भवतार तू।
कुंभकर्ण हू पार करि सरणा ईसा धार तू।।153।।
मेर जु पंच सुमेर तिनौं मैं थान तिहारे।
एक एक प्रति षोडसा जु प्रभु अस्सी सारे।।
पूजैं इंद्र फणिंद्र चारणा मुनिवर पूजैं।
पूजैं नारद आदि तोहि कौ और न दूजैं।।
मेर जु पावन तैं किये, न्हांण पीठ तेरे तिके।
क्षीरोदधि प्रमुखा सबै, भये ख्यात तीरथ जिके।।।154।।
कटि मेखल आदी जु षोडशाभरन न तेरै।
निरग्रन्थी जोगी जु कनक कांमिनि नहि नेरै।।
मेट्यो मिटै कभी न मेटिबे सक को नाही।
मेधा कहिये बुद्धि बुद्धि कौ सागर मांही।।
तन मन वच वाहि न लहै, मेधा कै हू जौ परैं।
मेघा कुटिल सु नाम है, कुटिल न भक्ति हिये धरैं।।155।।
मेधा हू जु लहै न पौंचहीं कैसैं मेघा।
सर्व मेदनी को जु नाथ है आप अमेघा।।
नांव मेदनी धरा देव जिनराज धरापति।
रहै मेदनी सील जा कनैं हैं जु महाछति।।

जा कारनि चक्री नृपा, त्यागि मेदिनी सकल ही।
निरग्रन्थी योगी हूवा, ध्यावै अहनिसि अचल ही।।156।।
हम से सठ मति महा ज्ञान वैराग न जांनै।
धरे जु चातक भाव तोहि में हैं न पिछानै।।
मेधा कौ नहि लेश मेष से ढोर जु हम हीं।
मेष जु मीढा नाम खान पान न विनु गमही।।
रोग प्रमेहादिक भर्‌यौ, तनु मन चंचल वचन जु चला।
किम पाऊं सांई जु कौं, सो देही मुझ कौ कला।।157।।
मेचकता मुझ मेटि मेचको मलिन जु कहिये।
तू नहि मलिन कदापि मेढ़ जग की तू लहिये।।
मेढ कहैं मरजाद सकल मरजादा तो तैं।
तेरी किमपि हु नाथ सेव हुई नहिं मो तैं।।
मेद रोग सम मेदनी, कंठ माल सम राज जी।
इनहि त्यागि तोकौं भजैं, ते सारैं निज काज जी।।158।।

(अरिल्ल)

नाम मेनकी आदि अप्सरा नहि चहैं।
निज दासा ते नाथ करै तुब भजन हैं।।
तो सौ वल्लभ और दूसरौ नां मिलै।
तो आगलि सब पाप भाजि पाछे ठिलै।।159।।
नांव मैंथुली जानकी जु सीता सती।
रघुकुल तिलक जु राम हैं सु जाके पती।।
मिथुलापुर कौ राव जनक जाकौ पिता।
जनक सुता अतिशील मैंनमद जिह जिता।।160।।
मैंन महाबलबान डरै दासनि थकी।
मैंन कहावै काम दूरि भाजैं सकी।।
मैथुन चिंडालो जु छुवै नहि दास कौं।
मैथुन दंपति भोग धरै अघ रास कौ।।161।।

मैथुन तजि जे धीर मैंन कौं वसि करैं।
मैं आदिक चउ भावना जु उर मैं धरै।।
ते पावैं तुव सेव हौंहि भवपार जे।
मैं आदिक भावी जु कहै श्रुति सार जे।।162।।
मैत्री करुणा और कही मुदिता सही।
चउथी है मध्यस्थता जु संतनि गही।
सबसौं मैत्री भाव दुखी लखि ह्वै दया।
गुनी देखि आनंद इहै मुदिता भया।।163।।
विपरीती पापी जु अविनई देखि कै।
ह्वै मध्यस्थ जु भाव असूत्री पेखि कै।।
करै न राग विरोध सोहु मध्यस्थता।
ए चऊ भावन भाय लहै निज वस्तुता।।164।।
ए मै आदि चऊ सु जिनिंदै अनुसरी।
मैथुन महिला मैं न अमैत्री परहरी।।
मै न चैन नहि देय हरौ याकौ प्रभू।
मोहान्धासुर भेदी करण तू है विभू।।165।।
मोह मल्ल कौ जीत अभीत अतीत तू।
मोक्ष पंथ परकास मोक्ष कौ मीत तू।।
मोचक और नही जु तो बिना दूसरौ।
मोच षरइ कबहूँ न होइ नहि धूसरौ।।166।।
सुर मोहन जग मोहनो जु तू देव ह्वै।
मोह न हूं कौ मोहनो जु अति भेव है।।
मोह तनै वसि नांहि मोक्ष दरसी तुही।
मन मोहन कहिए जु मोह रहितो सही।।167।।
तो बिनु मोक्ष सुमार्ग और दूजो नहीं।
मोक्ष मूल भगवान सकल मैं निवसही।।
है मोक्षाधि सु नाथ मोक्षदाता जिनो।
मोष निधान महान तिमरहर जो दिनो।।168।।

मोक्षगति मोहारि विनय कर देव जो।
मोक्षरूप जगभूप जगत कौ बेव जो।।
मोक्षमई मोघो न मोघ कहिये वृथा।
तू अमोघ जगदीस वृथा नहि है प्रथा।।169।।
प्रथा नाव विसतीर्ण तू जु विस्तरि रह्यो।
सर्व ज्ञेय मैं ज्ञान तिहारौ प्रभु कह्यो।।
तू आपुन कै मांहि नांहि पर मैं कभी।
शुद्ध बोधमय वस्तु तत्त्व तू है अभी।।170।।
मोटे पुरुष तिके जु तोहि उर मैं धरै।
मोटे पाप सबै जु तोहि जपि परहरै।।
मोटे छोटे जीव सवै तू पाल ही।
मोटे छोटे दोष सबै तू टाल ही।।171।।
छोटे सौं मोटे जु तुझी कौं ध्यावते।
हौं ही त्रिभुवन पूजि तुझी कौं गावते।।
मोट विद्या की जु देह अति दुक्करा।
तो बिनु मोट जु कौन उतारै ईश्वरा।।172।।
मोद हरष कौ नाव हरष कर तू सही।
तेरै हरष विषाद कोइ दीखै नहीं।।
तेरी भक्ति अमोल देहु हमकौ गुरू।
मोर समाना भव्य तूहि मेघो धुरू।।173।।
मोथादिक सब कंद सदा हि अभक्ष है।
इनकौ दोष सुने जु गहै नहि दक्ष है।।
मोम लाख हरताल आदि बिनज जु बुरे।
तेरी आज्ञा धारि तजैं बाणिज धुरे।।174।।
त्याग विचार विवेक तो बिना को कहै।
मोल दया कौ नांहि दया तू ही गहै।।
मोसै जीव जिके जु तोहि नहिं पावही।
मन मोसै जे साधु तुझी मैं आवही।।175।।

मोसे जीव अपार रुलिउ हूं भव मही।
दया पालि जगनाथ तोहि मुनि सरदही।
मोसे पापी की जु कौन गति ह्वै प्रभू।
तोसे साहिब जौन होंहि सिर परि विभू।।176।।
मोहे जीव अनंत मोह नैं जगत मैं।
तू निरमोही देव विराजै मुकत मैं।।
मौनधार तू मौलि है जु सब लोककौ।
मौलि कहावै मुकट मुकट सब थोक कौ।।177।।
मौड अखिलकौ तू जु मौड बिनु श्रीबरी।
मौड़ मुकट सब त्यागि योग परनति धरी।।
मौजी तोसौ ओर नहीं को लोक मैं।
विहर्‌यो सब मैं एक रहै नहिं रोक मैं।।178।।
मौज न एको कोइ तिहारै जोगिया।
एकहि मौज जु मांहि हरै सब रोगिया।।
मौर्वी पिडच जु नाम धनुषकौ गुण जिको।
तेरे पिडच न चाप रोप नहि है तिको।।179।।
तू निरभूषण देव धरै नहि आयुधा।
वज्रायुध तुव दास तू सु धर्मायुधा।।
चक्रायुध अति ही जु तिहारौ दास है।
सर्व पूजि योगीश तू जु सब पास है।।180।।
मौनी अति वक्ता जु अद्‌भुतो है तु ही।
ध्यावैं मौनधरा सु मुनीश्वर अति जु ही।।
मौलिधरा ध्यावैं जु मौढ्‌यता रहित तू।
मंत्री तंत्री मंगलातमा सुहित तू।।181।।
मंगलकारी नाथ अमंगल हरइ तू।
मंगलमूरति देव सु मंगल धरइ तू।।
मंगल मूल अभंग मंत्रकृत ईश तू।
मंत्र मूरती एक मंत्र मय धीश तू।।182।।

मंगल वरदाता जु मंत्रवित् तू सही।
तू जु मंगलाराध्य सकल पातिग दही।।
मंता ज्ञाता कौ जु नाम है श्रुति विषै।
तू मंता मंत्रीश सकल वस्तु हि लिखै।।183।।
मंदमती तोकौ न लहैं जग राचिया।
मंगल रूप न हौंहि तजे सु पिसाचिया।।
बड़ौ पिसाच लग्यो जु जीव कौं काम जो।
तेरे मंत्र बिना न ऊतरै बाम जो।।184।।
बाम कहै बैरी जु बाम है बैरि हू।
बांम जु सुंदर नाम काम बैरी इहू।।
तेरे नाम बिना न मंत्र है आन को।
तेरौ मंत्र सु तंत्र कहै उनमान को।।185।।
मंदिर सुख कौ देव एक तू ही हरी।
मंदर गिर सम धीर नित्य लक्ष्मी बरी।
मंगल चउ परकास मंगलीको प्रभू।
मंगल प्रमुख सु राजु तोहि गांवै विभू।।186।।
मुंजी बंधन आदि जनेऊ लेन की।
विधि भाषै तू देव त्रिकुल मैं देन की।।
मंडन सबकौ तू जु नांहि मंडन धरै।
त्रिभुवनमंडन हस्ति तोहि तैं सुर वरै।।187।।
मुंचि न मोकौ नाथ संग अपने गहौ।
मुंच मुंच परभाव इहै मोसौ कहौ।।
मंक्षु सीघ्र कौ नाम सीघ्र भव तारि तू।
मंजलि पहुँचाये जु अरज उर धारि तू।।188।।

(दोहा)

अति गुण मंडित तू प्रभु, मंडन त्रिभुवन को जु।
अंजन मंजन रहित तू, जग में नहीं तो सो जु।।189।।

तेरी निज गुण मंजरी, अतिहि सुवास विभास।
मंथरता तोमैं नहीं, परम सु पूर्व प्रकाश।।190।।
मंथन गर्विष्टे कहै, गर्विष्टा मोहादि।
तू गर्वापहरो हरी, हरे मोह लोभादि।।191।।
मानादिक शयन जु नहीं, भूमिशयन है योगि।
वृती ब्रह्मचारीनि कौ, तू ही कहै अरोगी।।192।।
मंदकषाई तो बिना, नव ग्रीवा लौ जांहि।
मंजिल तौ विनु नां लहैं, फिरि पाछौ भव पाहि।।193।।
तेंरै नांही मंदता, नांहि तीव्रता कोई।
तू अकषाई शासतो, अमित गुणातम होई।।194।।

(छप्पय)

म: कहिये श्रुति मांहि शिवो शशि अवर जु वेधा।
शत रूपा आनन्द पूर परिपूरण मेधा।।
तू भविजन को चन्द सूर शसि तेरे भक्ता।
शीतल शांत सु गात परम्परताप सु युक्ता।।
वेधा नाव विधान को, तू ही विधाता तात है।
शिव मग वेधा तू ही हरसै, और न दूजी बात है।।195।।
बेधा पूरव कर्म कर्म को नाशक तू ही।
शिव कहिए कल्याण तू जु कल्याण समूही।।
शिव जु कहावै रुद्र रौद्र भाव जु नहि तेरे।
रुद्र इकादश नाथ, रावरे दास घनेरे।।
शसि जु तिमरहर चंद हैं, तु ही चंद्र सबलोक कौ।
म: कहिये तोकौ सही, त्रिविधि रूप पति थोक कौ।।196।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

(सवैया)

महादेव महाराज मारग प्रकास महा,
माया तै वितीत मिथ्या भाव न कभी धरै।
मित हित भासी सदा मीन केतु मान मार,
मीत मुनिवर्गकौ जु मुनिनि मैं थिति करै।।
मूरति अमूरतीक मेदनी कौ रावल जो,
मेधा कै रहै जु पार मैत्रिभावना बरै।
मोह कौ हरनहार मौलि सब लोक कौ जु,
मंगलस्वरूप नाथ शून्यता सबै हरै।।197।।

(कुंडलिया)

मा पद्मा जु रमा जिको, जिनवर की सत्ता जु।
चिच्छक्ती लक्ष्मी जिको, जिनचरणौं रत्ता जु।।
जिनचरणौं रत्ता जु छाड़ि जिन कितहु न जाई।
जिन सौं एक स्वरूप द्वितीय भावो न धराई।।
प्रभु की परणति सार, रमण शील तातैं रमा।
भाषै दौलति ताहि, जिको रमा पद्मा जु मा।।198।।

इति मकार संपूर्णम्।

इति श्रीभक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन अध्यात्मबारहखड़ी नामधेये उपासनातंत्रे जिनसहस्रनामएकाक्षरीनाममालाद्यनेकग्रन्थानुसारेण भगवद्भजनानंदाधिकारे आनंदरामसुत-दौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते पकारादिमकारांतपंचाक्षर-प्ररूपको सप्तमः परिच्छेदः।

अष्टम परिच्छेद



आगै यकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

यशोराशिं महाबाहुं, याञ्चापूरकरं प्रभुं।
यियासारहितं नित्यं, निश्चलं लोकवत्सलं।।1।।
व्ययीभावव्यतिक्रांतं, युक्तं गुणगणैः सदा।
यूथाधिपतिमीशानं, निजबोधधरं सदा।।2।।
ये रागरहिताः शूद्रास्तेहि ध्यायंति तंपतिं।
यैर्न ध्यातं नतैः प्राप्त, योगिभिर्द्रव्यलिंगिभिः।।3।।
यौगिकीसिद्धिदातारं, यं न पश्यंति पामराः।
यः कर्मरहितः सार्वस्तं वंदे परमेश्वरं।।4।।

(दोहा)

यदा जु कहिये जा समै, तोहि जु ध्यावै नाथ।
तदा जु कहिये ता समै, जीव लहै शिव साथ।।5।।
यत्कहिये जातैं प्रभू, तोहि भजैं मुनिराज।
तत्कहिये तातैं तिके हौंहि सु शिव सुख भाज।।6।।

यस्य कहै जाकैं उरैं, तू निवसै जग नाथ।
तस्य कहैं ताकै नषैं, नाहि टिकैं जड़ साथ।।7।।
यस्मिन्कहिये जा विषै, तेरी भक्ति जु नांहि।
तस्मिन्कहिये ता विषै, गुण गण नांहि रहांहि।।8।।

(कुंडलिया)

यतिनाथो यतिदेव तू, यतिपति यतिगण ध्येय।
यतिनायक सु यतीश्वरो, यतिपालक यतिमेय।।
यतिपालक यतिमेय सेवहीं जाहि यतिंद्रा।
यतिगुर गुरु दयाल आप यतिमेस मुनिंद्रा।।
यतिराजो यतिराव धार ही यतिवर साथो।
यति वर्गनि कौं तात देव तू है यतिनाथो।।9।।
यति तारैं यजमान तू, यज्यजन यज्ञेश।
यज्ञाशा पूरन करन, नमो नमो जगतेश।।
नमो नमो जगतेश यज्ञ कहिये तुव पूजा।
तू पूजित भगवान और नहिं पूजित दूजा।।
भक्तवछिल तू नाथ भक्ति विधि गुरु उचारै।
यज्ञपती परमेश एक तू अति यति तारै।।10।।
यज्ञ विधांनो एक तू, यज्ञ तुम्हारी सेव।
विनु सेवा कर्मिष्ट जे, ते न लहैं तुव भेव।।
ते न लहैं तुव भेव तो बिना सदा अनाथा।
करहीं जांमन मर्ण नांहि पावैं तुव साथा।।
यज्ञ प्रतिष्टा भेद यज्ञ भाष्यो अति दांनो।
यज्ञ मूल तुव नाम एक तू यज्ञ विधानो।।11।।
ध्यान प्रणीता नल भयो, कर्म जहां हवि रूप।
याज्ञक साधु मुनीश्वरा, इह है यज्ञ अनूप।।
इह है यज्ञ अनूप यज्ञ पुरुषै हिं मिलावै।
यज्ञ पुरिष तू देव शुद्ध यज्ञांग बतावै।।

तेरौ भाष्यो यज्ञ धारही भव्य पुनीता।
उभै कर्म हविरूप अनल निज ध्यान प्रणीता।।12।।
हिंसादिक अपराध जे, तेरै मत नहि लेस।
दया रूप धर्म सु विधी, तू भाषै जगतेस।।
तू भाषै जगतेस दया कौ पालक तू ही।
यज्ञपवीत सु लैन रीति भाषै सु समूही।।
द्विज नृप वैस्यनि कौं जु धारिवौ विसवा विंसा।
तजिवौ मन बच काय पाप कौ मूल जु हिंसा।।13।।
कहहीं नाम जनेउ कौ, पंडित यज्ञपवीत।
लेय जनेऊ उत्तमा, तजही सकल अनीत।।
तजही सकल अनीत नांहि भखही जु अभक्षा।
पर दारा रति डारी धारही तेरी पक्षा।।
पूजैं तोहि सदा जु सकल तजि तोहि जु गहही।
यज्ञपवीत जु नाम लोक जनेऊ कहही।।14।।

(मोतीदाम)

मुनीश्वर होय तजै घरवार। करैं हि मिलाप जु तोहि सु सार।।
तवै जु जने सफल्ल जु होइ। त्रिकुल्ल जु पायउ तिन ही सोई।।15।।
बिना जु त्रिकुल्ल न यज्ञपवीत। बिना न त्रिकुल्ल मुनिव्रत लीत।।
द्विज नृप वाणिज त्रिकुला जु। इंनू विनु ओर न ह्वै मुनिराज।।16।।
बिना मुनि तोहि लहै नहि कोइ। इहै जिन सासन भासइ सोई।।
मुनिव्रत मैं न जनेऊ हु होइ। गृह वसि त्रिकुला धारहिं जोई।।17।।
चउत्थ कुलैं न जनेऊ हु लीन। नंही जु महाव्रत धारहि दीन।।
अणुव्रत तेउ जु लैहि भलै जु। इक भव लेकर मैं हु दहैं जु।।18।।
इहै सव भेद जु भाषइ तू जु। सही जु उधारहि तू हि अदूज।।
नहीं कुछ भेद जु तेर हि कोइ। तु ही जु चिदातम चेतन सोइ।।19।।
तुही यम आसन नेम प्रकाश। तु ही सब पूर करे चकभास।।
तुही इक कुंभक भाषक देव। तुही इक प्रत्यवहार अभेद।।20।।

तुही इक धारन ध्यान समाधि। तु ही यम नाशक है अनूपाधि।।
कहैं यम काल तनौं बुध नाम। लखै नय मो तुझ दासनि राम।।21।।
तुही यतनागर यत्न करै जु। तुही सु यथाख्यातउ जु धरै जु।।
सु यत्र जु यत्र जु देषहि साध। सु तत्र जु तत्र जु तू हि अबाध।।22।।
तुही यस कौ जु पहार जिनेश। तुही य समूरति है जु अशेष।।
यवोन्नति हू प्रतिमा तुझ देव। हरै सहु पाप प्रपुंज अछेव।।23।।
सु किंडुरि मात्र हु तेरहु सौध। हरै सहु डुरक न जानहि बौध।।
कभी यव मात्र नरो यव खाय। करै उपवास अतुल्य प्रभाय।।24।।
तऊ नहि तो विनु खावइ मोष। तु ही यम फंद उछेदक घोष।।
तु ही यमिनाथ जु बल्लभ साध। तु ही शम दम्म यमो जु अबाध।।25।।

(दोहा)

यवन नाव है म्लेच्छ कौं, यवन तिके जग मांही।
जे ध्यावैं नहि तोहि प्रभु, वृथा जु जन्म नसांहि।।26।।

(सवैया इकतीसा)

यजमान तू ही अर यजन सुरूप तू ही,
तू ही एक यज्य और दूसरौ न जानिये।
यज्य कहैं पूजाजोग्य परमपुनीत कौं जु,
पूजा कौ करैया यजमान जो बखानिवे।
यजन सु पूजा करिये जु विधि पूरवक,
व्यवहार भेद करि तीन रूप मानिये।
निश्चै निज आतम सु आप ही जु यज्य रूप,
यजै निजभाव तातै यजमान ठानिये।।27।।
माया मोह मूरछा हरन कौ यतन तोपै,
महा तू यतनगार अति अनगार है।
यश तेरौ उज्जल जु फैलि रह्यो धरनी मैं,
दहूं दिसि मांहि एक तेरौ ही विचार है।।

यष्टि मुष्टि तारनौं न तेरै काहू सत्व कौं जु,
भूतनि कौं पालक तू रावल अपार है।
यष्टी व्रत ज्ञान की जु तोतैं कभी टरैं नांहि,
तातैं कर्म कूकर न पावैं पइसार है।।28।।

(दोहा)

लाठी कौ यष्टी कहैं, पंडित संस्कृती जु।
अंधे की यष्टी समो, हमरै तू हि धृति जु।।29।।

(सवैया इकतीसा)

यमकौ न भै कदापि तेरे निजदासनि कौं,
यातना प्रहार देव तू ही निरधार है।
यातना जु पीड़ा नाम तू ही पीड़ हरै राम,
याचना जु पूरी करै त्याग कौ सुधार है।।
जाहि याचि याचक जु और ठौर याचैं नांहि,
पूरण सुरूप हौंहि एसौ जो उदार है।
निर्यापक आपु हो जु पोसा पडिकौंणा देय,
दोष कौ हरनहार याचक उधार है।।30।।
याचना कहैं जु भीष भीष तेरै ही जु द्वार,
तू ही पूरी भीष देय न करै जु नांहि जी।
याचना जु कीजे नाथ तोहीसौं न अन्य ठौर,
तू ही याचनाकौ पूर वसै शिवमांहि जी।।
तेरौ है अयाची व्रत याचै तू न काहू पै जु,
सवै तोहि याचै तू दयाल सब पाँहि जी।
यातना नरक केरी तोही तै मिटे जु देव,
अयाची मुनीश याचैं तो बिनां न कांहि जी।।31।।
या कहैं विधाताकौं जु तूही है विधाता देव,
लछिकौ निवास सदा निगम सुरूप जी।

रचैं निज भाव सव विरचै विभावनि तैं,
परम स्वभाव आप सर्व लोक भूप जी।।
याति कुल रूप न शरीर नांहि जाकै कभी,
सवै कुल याति के स्वरूप कौ निरूप जी।
याति कहैं मातृ पक्ष कुल जो जनक पक्ष,
जाति कहैं जनम सु तेरै न अरूप जी।।32।।

(दोहा)

यान पात्र तो सम कवन, तारै भव जल तैं जु।
यात्रा मूल जिनिंद तू, ज्ञान रूप सब मैं जु।।33।।
नाम यामिनी रात्रि कौ, माया निसि सम जोइ।
तू माया रैंनि जु हरो, जिन दिनकर पति सोइ।।34।।
यावत तोहि न ध्यावंही, तावत मोक्ष न होय।
यावत मोक्ष न पाँवही, तावत तोतैं दोय।।35।।
ध्यावत कहिये जब तकैं, तेरौ दास न होइ।
तावत कहिये तब तकैं, मोह न जीतै सोइ।।36।।
या कहिये नारी जिको, तोहि भजै जिननाथ।
सा कहिये सोऊ लहै, जन्मांतरि तुव साथ।।37।।
याभ्यां कहिये दोय करि, रुलै जीव संसार।
राग दोष एई उभै, इन त्यागैं भव पार।।38।।
कहैं यियासा श्रुति विषै, गमनेच्छा कौ नाम।
गमन तिहारौ नांहि कहुं, तुम निश्चल शिव धाम।।39।।
गमन तिहारौ सर्व मैं, सर्वमई तुम देव।
ज्ञानापेक्षा सर्वगत, प्रभु सरवज्ञ अछेव।।40।।
नांहि यियासा क्वापि हू, विनु इच्छा सहु गम्य।
तू ही एक दयाल जी, परम महा अति रम्य।।41।।
क्षयी भाव नहिं तो विषै, तू विजयी भगवान।
हमैं अव्ययी भाव दै, परमेश्वर परवांन।।42।।

युग युग तेरौ आंसिरा, तू युगादि थितिकार।
युग युग तू चिरजीव है, तेरी रहल अधार।।43।।
तू युगादि पुरषा प्रभू, आद्योपाँत तु ही जु।
तु ही अनादि अनंत है, सर्वोपाधि दही जु।।44।।
सदा हि युग तैं दूरि तू, युग की लगै न वाय।
युग युग की रीति जु सवै, तू ही भासै राय।।45।।
युग कहिये विख्यात ही, कृतयुग कलियुग जे हि।
सब युग मैं इक रावरो, भजन हि मुख्य गने हि।।46।।
युग दो कौ हू नाम है, तेरै द्विविधा नांहि।
राग दोष दोऊ अरी, तुव अग्रे न रहांहि।।47।।
तेरै नांहि शुभाशुभा, इष्टानिष्टा न कोइ।
तू शुद्धत्व प्रंभा, ...।।48।।*

(सोरठा)

ये ध्यावैं मन लाय, तेरे गुण जु निरंतरा।
ते हौंही शिवराय, सुखदाई सब जगत के।।63।।
ये तोसौं लव लाय, निखरे ते जगजाल सौं।
ते हौंही जु अकाय, वहुरि न जग मैं जन्मही।।64।।
ये लखि अपनौ रूप, तेरौ सौं पडछंद जी।
हौंहि तोमई भूप, हरे पंच प्रावर्त्ततन।।65।।
ये तेरे निज दास, और देव सौं काम नां।
तिनके सुरपति दास, नरपति फणपति दास सहु।।66।।
ये तोहू कौं गाय, अन्य वस्तु चितवन करैं।
ते मूढ़ा अधिकाय, नर भव वृथा गुमांवही।।67।।
ये कहिये जे जीव, तोहि जु गांवैं साइयां।
ते हौंही जगपीव, रहैं सदीव जु तुव नषैं।।68।।

---

1. यहाँ मूल प्रति में एक पत्र कहीं खो गया है जिसमें 49 से 62 तक के छन्द थे।

येन शब्द कौ अर्थ, जा करि तोहि लखै प्रभू।
त्यागि जु सर्व अनर्थ, सो कारण दै साइयां।।69।।
येन कहै जिह जीव, तोहि जु ध्यायो साइयां।
तिह पायो जु सदीव, शिवपुर जग कै ऊपरैं।।70।।
येन कहैं जिह सांथि, सदा जु ज्ञान विराग हैं।
सब सुख ताकै हाथि, जाकै सिर परि तू प्रभू।।71।।

(द्रुतविलंबित)

येनोच्यते ब्रह्म मया न बुद्धं, तेनैव बुद्धं मनसाप्यगम्यं।
येनोच्यते ब्रह्म मया च बुद्धं, न तेन बुद्धं वचसाप्यगम्यं।।72।।

(दोहा)

यैः कहिये जिन करि तुझैं, पावैं दीन दयाल।
ते रतनत्रय दे हमैं, जिनवर जगत प्रपाल।।73।।
यैः कहिये जिनि मुनिनि नैं, तोहि जु ध्यायो देव।
तै– कहिये तिन ही सही, पायो पद जु अछेव।।74।।
यैः कहिये जिन सहित प्रभु, तोसौं भेटैं नाथ।
सो समुवाय सम्बन्ध दै, ओर न चांहै साथ।।75।।

(द्रुतविलंबित)

यैर्न श्रुता त्वद्गदिता सु वाणी। नाराधिता त्वद्गत राजधानी।
हुता न पीडा च निपीडितानां। तेषां वृथा जन्म तनुभृतानां।।76।।

(शार्दूलविक्रीडित)

ज्यां मूढ़ां जगदीस तोहि न भज्यो त्यां नादर्‌यो धर्म भो।
ज्यां मूढ़ां न सुन्यां चरित्र तुमरां त्यां बांधिया कर्म भो।।
ज्यां मूढ़ा न कियो सुदान कबहूं पूजा न तेरी करी।
त्यां मूढ़ां भव खोइ वादि नरकौ नर्का गती आदरी।।77।।

(भुजंगप्रयात)

तु ही योगविद्योगनाथो अनाथा। तु ही है सयोगी अयोगी असाथा।।
तु योगातमा देव योगिंद्र तू ही। भजैं योगी जाकौं तू ही है समूही।।78।।
सदा योगिबंद्यो तु ही ब्रह्मयोनी। महायोज्ञ योगीश्वरो तू अयोनी।।
तु ही है जु विश्राम योगीश्वरौं का। तु ही योगी योगाधियोगी सवौं का।।79।।
तु ही योज्ञयोज्ञाधिपो देव देवा। तु ही योग सिद्धांत भासी अछेवा।।
तु ही है जु सिद्धांत योगीनि का भो। तु ही योग आरूढ़ योगेश्वरा भो।।80।।
तु ही है सु योगेश भोगा न जाकै। तु ही देव भोगेश योगा न ताकै।।
तुझी कौं न भोगा न योगा न पावैं। सु अष्टांग योगा तुझी कौं बतावै।।81।।
स्व योगो सु ध्यावो स्वसंबंध तेरै। मनो वाक योगो न काया च नेरै।।
तु संयोग संबंध संश्लेष वीता। स्वसंवाय संबंध रूपो अतीता।।82।।
तु ही योगिगम्या तु ही योगिनाथा। तु ही योगरूपा सदा योगि साथा।।
तु ही योगपारी तु ही योगितारी। न ही योषिता संग तेरै विहारी।।83।।
तु ही योगि राया तु ही योग दाया। तु ही योगकाया सही है अमाया।।
तु ही योगि भाया प्रभू योष ग्राही। कहैं योष अर्थों सुमौनं धराही।।84।।
तु ही योध योधा तुसौं कौन षैटै। सवै मोह आदी तुझैं नांहि भेटैं।।
नहीं कोई शस्त्रा नहीं कोई युद्धा। नहीं कोई बैरी जु तेरै प्रबुद्धा।।85।।
तु ही योगिमूला सु योग्यातमा है। तु ही योज्ञता पार ज्ञानातमा है।।
तु ही योगलिन्ना तु ही योगा दिन्ना। त्रयी योगभिन्ना त्रयी योगसन्ना।।86।।
त्रयी योगरत्नत्रयी तू हि धारै। त्रयी योग वाक्काय चित्तै विडारै।।
त्रयी रत्न योगा कभी तू न त्यागै। सु रत्नत्रयी आप भेदो न लागै।।87।।
त्रयी योग संयोग के पंद्र भेदा। नहीं कोई तेरै अयोगी अभेदा।।
मनोयोग च्यारयौं नहीं नाथ तेरै। वचोयोग च्यार्यौ नहीं क्रापि नेरै।।88।।
नहीं काय योगाहु सप्ता जु क्रापी। तु ही ज्ञान रूपो अरूपो उदापी।।
तू ही योग भाखे तू ही योग नाखे। तू ही मंत्र एक जीवो बतावै।।89।।
नहीं ए स्वयोगा कहांवै सयोगा। जु कर्मोपधी योग एही सरोगा।।
नहीं स्वात्मयोगो सु पंद्रा जु मांहैं। नहीं सिद्ध भावैं कभी ए रहा है।।90।।

त्रयी योग संयोग है पुद्गलाही। नहीं आतमाराम सौं ए मिलाही।।
स्वरत्नत्रयी योग है आप मांही। स्व सम्यग्त्रयी योग नित्यो रहा ही।।91।।
त्रयी योग धारै त्रयी योग टारै। तवै सिद्धि पावै इहैं तु उचारै।।
बिना तोहि अष्टांग योगा कहै को। विना तोहि रत्नत्रयी कौ लहै को।।92।।
तु ही सर्व योनीश्वरो योनि भेदा। कहै सर्व तू ही गहै नांहि भेदा।।
तु ही योनित्यागी अयोनी जु शंभो। स्वयम्भू अनुत्पन्न देवो अदंभो।।93।।
अयोनी स्वरूपो अलूनी शिला तू। सलौनो जु तू ही सवौ मैं मिला तू।।
मिलैं नांही आपो जु छांडे जु तू ही। सदा व्यापको नित्य शुद्धो अदूही।।94।।
तू ही स्वात्मरूपोपयोगी गुसांई। रहे पासि ही मूढ़ भूले असांई।।
तु ही है जु दूरा बिना शुद्ध बोधा। महा योजनो तू हि नीरै स्व सोधा।।95।।
रहै दूरि तू ही सबौं तैं जु न्यारा। सु लोकांत वासी तु ही देव प्यारा।।
अनु तै जो लेयो ज सांता विथारा। बिना तौ नु कौ बाखई ए विचारा।।96।।
तु ही योग तंत्रा स्व योगाधिरूठा। बिना योग तोकौं लहैं नांहि मूढ़ा।।
तु ही योग भासी तु ही योग रासी। सवै पाप नासी सु धर्मा प्रकासी।।97।।
महा यौगिकी दीक्षदाता तु ही जो। तु ही यौगिकी मुद्र धारी सही जो।।
धरै यौगिकी दीक्ष तेरे हि दासा। तुझैं सेय दासा सवौं सौं उदासा।।98।।
तुझी कौं सुहावैं सवै संग त्यागा। तु योगीश्वरी रीति सौं नाथ पागा।।
तु प्यारा लगै नाथ योगीश्वरौं को। यथा वासुदेवा सु नीलांवरौं कौं।।99।।
नहीं यौवनारूठ वृद्धो हु नांही। नहीं बाल भावो तुझी मैं रहाही।।
तुही सर्व वैस्यौ वितीता गुसांई। चिदानंद चैतन्य रूपा सुसांई।।100।।
जिके यौवनावस्थ मैं तोहि ध्यावैं। तजै सर्व कांमा तुस्यौ रंग ल्यावैं।।
तिके जन्म जीते लहैं शुद्ध तत्त्वा। तु ही शुद्ध वुद्धो प्रबुद्धो सुसत्त्वा।।101।।
जिके वृद्ध हू होय तोकौ न गांवै। लगे मोह माया महैं भ्रांति भावैं।।
तिके नांहि वृद्धा सुगद्धा तिके ही। विना भक्ति तेरी रुलैं जन्म ले ही।।102।।

(सोरठा)

यौ कहिये द्वै नांम, द्वै हरि द्वेदै देव तू।
राग दोष हरि राम, ज्ञान विराग सुदेह जी।।103।।

यौगिक जे संबंध, अर संश्लेष संबंध जे।
सबही मिथ्या धंध, तू ही सम्यग्तत्त्व है।।104।।
पुत्र कलत्र धनादि, ए यौगिक संबंध है।
कर्म र काय अनादि, लगे जु संश्लेषा तिके।।105।।
दोऊ तेरै नांहि, तू समुवाय संबंध है।
निज गुण परजै मांहि, सो समुवाय जु जांनिये।।106।।
यौगिक भाव तजे जु बाहयाभ्यंतर सर्वथा।
भाव थकी तजि दे जु, संसलेष हू जब मुनी।।107।।
तब समुवाय लखैं जु, तुव किरपा तैं यौंगिया।
विकलप नांहि रहैं जु, पायें समुवाये प्रभू।।108।।

(त्रिभंगी)

प्रभु तू हि अयंत्रा, परम सुमंत्रा, प्रगट सु तंत्रा, अविकारी।
सव यंत्र जु मंत्रा, सकल जु तंत्रा, तू हि निमंत्रा, अधिकारी।।
इहु देहु जु यंत्रा, जगत हु यंत्रा, लिखित हु यंत्रा, तू गावै।
फुनि सकट हु यंत्रा, वजइ सुयंत्रा, तूहि नियंत्रा, सब भावै।।109।।

इक तू हि जु यंत्री, अतुल जु मंत्री, यंत्र नियंत्री, बिनु यंत्रा।
इक सिद्ध जु यंत्रा, अजपउ मंत्रा, योग जु तंत्रा अति तंत्रा।।
सब तू हि जु गावै, विधि जु सुनावै, मंत्र उपावै जगराया।
जड़ यंत्र नसावै, यंत्रि कहावै, तंत्र बनावै बिनु काया।।110।।

(भुजंगप्रयात)

इहै जैन धर्मा सुयंत्र सुरूपा। तु ही देव यंत्री चलावै अनूपा।।
सवै तंत्र तू ही विभासै गुसांई। सवै मंत्र भासै अनादीश सांई।।111।।
तु ही यंत्र मंत्रादि तंत्र प्रधानी। नहीं यंत्र मंत्रादि तेरै निसानी।।
तु ही ज्ञान यंत्रा तु ही ध्यान तंत्रा। तु ही मंत्र मूर्ती महामूल मंत्रा।।112।।
तु ही है मनो पंच इंद्री नियंत्रा। तु ही है अमंत्री अयंत्री स्वयंत्रा।।
नहीं ओर यंत्री तु ही एक यंत्री। सदा सर्व मंत्री सही है स्वतंत्री।।113।।

न तू यंत्रितो क्वापि ह्वै कर्म भारे। त्वया यंत्रिता सर्व कर्मा पछारे।।
हमै देहु सेवा तिहारी गरिष्टा। नहीं ओर यांचैं तु ही एक इष्टा।।114।।

(सोरठा)

यं कहिये जिहनैं जु, तू अपुनी आश्रित करै।
तं कहिये तिहनै जु, जग माया नहि आवरैं।।115।।
यः कहिये जो जीव, तोकौ ध्यावैं योगिया।
सो सुख लहै सदीव, बहुरि न आवै भ्रांति मैं।।116।।
यः कहिये यम नाम, तू यमधर यमहर प्रभू।
हरै काल तू राम, यम नियमादि प्रकासई।।117।।
यः भाष्यो फुनि नाथ, नाम याम कौ सूत्र मैं।
यान पात्र भव पाथ, तनी एक तुव भक्ति है।।118।।
यान सुवारी नाम, यान न तेरै एक को।
सर्व पदारथ राम, तेरी ही यान जु गनें।।119।।
सब परि वैठौ ईस, तो मैं सर्व समाइया।
तेरी यान जगीस, सब ही अर तू सबनि की।।120।।
यान पात्र कौ नाम, कहैं जिहाज जु लौकिका।
तू जिहाज गुण धाम, तारै भव्य समूह कौं।।121।।
यतन नाम विख्यात, यः कहिये सिद्धांत मैं।
कर्म रोग हर तात, तू यतनागर धर्मधी।।122।।
नाव त्याग कौ नाथ, यः कहिये आगम विषै।
तेरै निज गुण साथ, तू त्यागी पर द्रव्य कौं।।123।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

(सवैया)

यतिनिकौ नायक तू यतन करैया देव,
यानपात्र लोककी जु यियासा नहीं करै।

व्ययी भावो नांहि तेरै युक्त युक्ति यूथनिसौं,
यूथकौ उंधारकार रक्षा सबकी धरै।।
तोहि ये भजैं न मूढ़ ते न पावैं तत्त्व गूढ़,
यैर्सुसुन्यों तोर हि ज सत्यां हैन शिवा दरै।
योग कौ प्रकाश देव यौगिकी जु दिक्षा देय,
यंत्र मंत्र नांहि जाकै शून्यता सवै हरै।।124।।

(कुंडलिया)

या अनुभूती रावरी, हरै चित्त की भ्रांति।
सा शुद्धा तव भानु की, किरण जु परम प्रशांति।।
किरण जु परम प्रशांति तिमर यवन जु कौ नासै।
माया यामिनि मेरि बोध दिवसैं जु विभासै।।
मोहासुर क्षयकार ज्ञानमूला जु विभूति।
भाषैं दौलति ताहि रावरी या अनुभूती।।125।।

इति यकार संपूर्णम्।

र

आगे रकार कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

रजोहरं रमानाथं, राजराजेद्रंसेवितं।
रिक्तता रहितंपूर्णं, धर्मरीतिप्रकाशनं।।1।।
रुक्माभं च रुजातीतं, हयलावण्यभूषितं।
नरेशं चामदेवो च, शंकरेतरक्तिादिवर्जितं।।2।।
श्रीधरं श्रीप्रपूंर्णांगं वंदनीयं नरामरैः।
रोधकं पापमार्गस्य, सर्वरोगविवर्जितं।।3।।

रौपिकारौपि ज्ञातारं, रूपरंगादिवर्जितं
रग देवं प्रव दहं शून्याशून्यप्रकाशनं।।4।।

(उपेन्द्रवज्रा)

रकार भाषै धन कौ जु नामा। नहीं रकारौ विनु नाम रामा।।
तु ही धनो देइ जु शास्वतो जी। तु ही धनाढ्यो सु विभोस्वतोजी।।5।।
रकार भाख्यो फुनि वैश्रवोहू। तुझैं हि सवै अमरेश्वरोहू।।
सवै हि देवा इक तोहि सेवै। मुनी तुझैं ध्याय शिवो जु लेवै।।6।।
रपो रमा नाथ रमापती तू। रसाधिपो एक महा यती तू।।
रसा नरो सार सवाक्य तू ही। रसायनो ओर न तोहि दूही।।7।।
रमाधरो देव रमाधवो तू। रमा विती तो हि सु साधवो तू।।
न लेशा मात्रा हु रमा जु बाहा। धरै सदा तू हि रमा अबाहया।।8।।
रमा करै सेव जु नित्य तेरी। महा स्वशक्ति निज भाव केरी।।
रत्नादि दाता जगतेश्वरो तू। रसा निधानो परमेश्वरो तू।।9।।
सदा हि रत्नाधि परत्नरासी। महा सुरक्षा विधि कौ प्रकासी।।
रच्योन जाकौं रचि है न कोई। अनादि सिद्धो जगदीश सोई।।10।।

(दोहा)

रत्नपती पूजैं जिसैं, रत्नगर्भ भगवान।
रत्नेशो रत्नेश्वरो, परम ज्योति परधान।।11।।
रत्नत्रय कौ मूल जो, रत्नत्रय दातार।
रत्न चतुर्दश दायको, चक्री तारनहार।।12।।
रत्न न जासौ ओर को, सर्व रत्न जसु हाथ।
पंच रत्न परकास जो, रमण रमा कौ नाथ।।13।।
रमणशील अति शील जो, रमणीक सुर समूल।
रमि जु रह्यो सब मैं जिको, बैठो जग के कूल।।14।।
नव हि रत्न किस काम के, पाषाणा जड़ रासि।
एक रत्न अति यत्न सो, पास हरण जग पासि।।15।।

रत्न चतुर्दश धारका, दासनि के अति दास।
जाके सो जगदेव है, पूरण ब्रह्म प्रकास।।16।।
जा सेयें धरि कल्पतरु, कामधेनु धन मांहि।
हस्त विषैं चिंतामणी, सो प्रभु अपुनैं पाँहि।।17।।
जाकी सी न रती धरै, तीन लोक में कोई।
रती मात्र रति अरति कौ, धारक नाही सोई।।18।।
रक्षण विधि सब जीव की, कहै दया कौ पुंज।
रक्षक सब कौ आपुही, परम महासुख कुंज।।19।।
रय शीघ्र जु कौ नाम है, शीघ्र उधारौ नाथ।
प्रभू वेगि दे भव हरौ, तुरत गहौ मुझ हाथ।।20।।
रज रज में कौ नाव है, रज धारी सु भटेश।
रजमाधर ओर न कभी, कर्म हरण जगतेश।।21।।
रजताचल सो सत्तरी, सकल सुक्षेत्रनि मांहि।
एक एक रयताचल, यामे संसय नांहि।।22।।
रज कहिये धूलि हु सही, धूल समान जु कर्म।
कर्म जु रज हर वायु तू, नाशक सकल विभर्म।।23।।
इक इक रजताचल विषै, इक इक देवल होई।
इक इक देवल मांहि सौ, अष्टोत्तर छवि जोई।।24।।
हैं जु अकर्तृम देवला, तेरे ऐ जग नाथ।
वंदे सुर चारन खगा, तू ईश्वर बड हाथ।।25।।

(सवैया इकतीसा)

रघुवंस तारक तू रघुनाथ नाथ तू ही,
जपैं रघु भूप तोहि तारि तू हमैं जती।
रणधीर रणवीर रणजीत जीतक तू,
रजजीत रजवीत तीन लोक कौ पती।।
रच्यो नांहि काहू नै सु रचै नांहि काहू कौं जु,
रचै नांहि कोइ सौं जु वीतराग है अती।

रच्यो निजरूप मांहि विरच्यो विभावनि तैं,
काह पैं न रग तेरी तारक तू चौ गती।।26।।
तेरै हाथ सवरग भासै तू जु मोखमग,
निधि तेरै पग पग नायक महामती।
रथादिक चतुरंग छह सत्त सेन त्यागि नगन,
दिगंबर ह्वै बैठो त्यागि कै छती।।
रद भांजै मोह के सु एकलौ ई जोर भड,
रमैं नांहि विषैं मैं जु बड़ौ ही सती दती।
रटै तोहि इंद चंद रटै साधु ह्वै अफंद,
रटै सुकुमार सेठ त्यागि कै सवै तती।।27।।

(छप्पय)

मोहि अदा है मोह नाथ रद भांजि जु ताके।
रमै जु विषयनि मांहि जीव सब करतब जाके।।
रहै तोहि जो कोइ मोक्ष पावै सु तुरंता।
रव कहिये उच्चार सुनि जु गुर कौ विहरंता।।
रमा जु तेरै संगि है, तोहि न छांडै सासती।
तोही मांहि रहस्य है, तेरी चिद परणति छती।।28।।
रहसि कहावै गुह्य गुह्य गुण परणति तेरी।
तोही मांहि विहार प्रगट गुण गुण मैं नेरी।।
तेरी शुद्ध प्रभा जु द्रव्य अकृत्य जु स्वामी।
निज पर्जे सुखरासि परम स्वाभाविक रामी।।
सोई लक्ष्मी ओर नां, बहिरंगा दीषै जिको।
तेरी कमला तोहि मैं, अमित कला भासै जिको।।29।।
रल्लादिक जे धारि भये लुंका अति मूढ़ा।
तिन कै पीछै ढंढ भये ढूंढ्या अतिरूढ़ा।।
देवल देवउ थापि चलैं मिथ्या मत मांही।
दसा मलीन महा जु तत्त्व चरचा न धरांही।।

कवलाहार जु केवली, अवला कौं मुक्ति जु कहैं।
इत्यादिक विपरीतता, जिनवर कौं कैसै लहैं।।30।।
रमा रमण जिनदेव राग रहित जु अविकारी।
रा कहिये धन कौं जु आप निजधन अति भारी।।
धन कौ दाता रामं देय धन अंतर बाहिर।
रमि जु रह्यो सब मांहि सर्व वस्तुनि कौ माहिर।।
रागादिक सब दोष जे, तिनतैं न्यारौ है प्रभू।
तातैं कहियत वीतभय, राम राय राजा स्वभू।।31।।

(कुंडलिया)

राका कौ चंद जु कहा, तातैं उज्जल चित्त।
करहि जीव तव पाँवहि, तेरौ दरसन मित्त।।
तेरो दरसन मित्र सकल सुखदायक कहिये।
राणं सकल कौ तू जु क्रांति कौ पुंज जु लहिये।।
महाराज राजेंद्र मांन, हर मन बांका कौ।
तो सम उज्जल नांहि कहा, चंद जु राका कौ।।32।।
रांमा रहितो देव तू, राघव तोहि रटंत।
राधा नाम जु बुद्धि कौ, बुधजन तोहि जपंत।।
बुधजन तोहि जपंत, राचिया तोहि जु मांही।
रारि भारि सब त्यागि, वैर भावो न धरांही।।
रासि गुननि की तू जु, राम देव जु शिवधांमा।
रा कौ पति कहिये जु, देव तू रहितो रामा।।33।।
राख समाना भूति जो, राषि रहै न सोय।
राग करैं यासौं जिके, ते मतिहीन जु होय।।
ते मतिहीन जु होई राग राष जु सौं करहीं।
राचे भव मैं मूढ़ ध्यान तेरौ नहि धरही।।
राल्यो गलइ जु तौष मोह नैं विषय विधानां।
चाहैं मूरिष लोक भूति जो राष समांना।।34।।

रारि न जोरा रावरै, शांत रूप जिन देव।
तेरी मुद्रा देखि कैं, मिटइ विरोध अछेव।।
मिटई विरोध अछेव भस्म होवै जु विकारा।
राल अगनि संयोग पाय जिम जरइ अपारा।।
राधि रुधिर को पुंज देह धरि कै हरि मोरा।
देहु जु आनंद रास राव है रारि न जोरा।।35।।
रज तुल्यो राजस सही, रज रज भेद न कोइ।
राजा परजा एक हैं, मूरिख जानैं दोइ।।
मूरिख जानैं दोय राज अभिलाख न त्यागै।
राजस तामस त्यागि सात्विकैं कबहुं न लागै।।
राम भजै बड़ भाग राम भजिवौ जु अतुल्यो।
तामस कीच समान सही राजस रज तुल्यो।।36।।

(छप्पय)

राम भजै सुविवेक और अविवेक जु सब ही
जिनमत तजि मत आंन गहैं नांही बुध कबही।।
राछ न अपने देय ओर के लेय न ज्ञाता।
सोधि अचार सवै जु पालही सूत्र प्रमाता।।
रात्रि जु भोजन ना करै, दिन नारी फरसैं नहीं।
तब कहिये श्रावक सुधी, परधन कबहू नां गही।।37।।
राष्ट्र कहिये देश देश नहि तेरै कोऊ।
सकल राठ कौ राय तू जु एकल प्रभू होऊ।।
तो सौ रावत और दूसरौ नांहि मिलैं को।
राजस तामस सात्विका हु तो विगरि ठिलै को।।
रा राधा मा लच्छि है, तेरी शक्ति रमा जिको।
तेरी राधा तोहि में, अवला रूप न धरति को।।38।।
रांक तिके हि जु नाथ तोहि तजि विषयनि राचे।
रांव तिके हि दयाल त्यागि जग तोहि जु सांचे।।

रासि पुन्य की तू जु पुन्य नहिं पावे तौकौ।
नि:पापातम देव पाप रहित जु करि मोकौं।।
रक्त न पीत न सेत है, हरित न कृश्न अमूरती।
राह चलावैं मुकति की, दीन दयाल असूरती।।39।।
त्रिभुवन चंद्र जिनिंद राहु केतु जु नहि गहहीं।
क्षयी भाव कबहूं न तोहि नहि कलमष लहहिं।।
तू निकलंक दयाल तिमरहर भ्रांति निशाहर।
नांहि निशाकर तू जु जड़त हर तू जु प्रभाकर।।
अस्त भाव तेरै न को, उदय रूप निति देखिये।
घटत बधत कौ कथन नां, परम सुधाकर पेखिये।।40।।

(सवैया इकतीसा)

रिक्त नांहि कभी नाथ अतुल गुणा जु साथ,
रागादिक भावनितैं रिक्त तू अनादि कौ।
रिक्तता न रक्तता दोऊ नांहि पाँवै तोहि,
पूरण विरागता जु धारक तू आदि कौ।।
रिधे भर्म सब ही जु तेरी धाक आगै देव,
रिपुनि कौ नाशक तू होत नांहि वादि कौ।
रिपु नांहि तेरै कोऊ निरवैर तू जु होऊ,
तू ही एक दीखै प्रभु देनहार दादि कौ।।41।।
रिपुता न जीवनि सौं रिपु जु करम नासि,
गये तेरी धाक तैं जु रिस कौ निवार तू।
रस रिस दोऊ नांहि शुद्ध है रिजाइ तेरी,
रसै नांहि लसै सदा जगत उधार तू।।
रीतिकौ उद्योतकार त्यागक अरीतिकौ जु,
रीठिन करत मोही तोसौं अतिभार तू।
रीसि बिनु रिपु हते रिठि न सके जु करि,
रीतिकौ निवास देव नीतिकौ प्रकार तू।।42।।

(सोरठा)

रीझ षीजि कछु नांहि, तेरे पद मैं साम्यता।
रीझ रह्यो निज मांहि, रीझे तो आगै विधि।।43।।
रीरी भाषै नांहि, काहू पै तेरे जना।
है जिन कै उर मांहि, महा लच्छि कौ पुंज तू।।44।।
रीता भरई होई, जैसे अरहट की घरी।
तैसे जगजन जोई, तैरै दास न दुख धरैं।।145।।
रीता रहैं न दास, भरितावस्थ दसा धरै।
तुव महिमा अति भास, पूरण ब्रह्म पुनीत तू।।46।।

(सवैया इकतीसा)

रुकमाभ उज्जल तू रकम नंही जु तुल्य,
तेरी सी विमल ताल तू ही एक धारही।
रुकम जु रूपा नाम कहा रूपा अैसो राम,
तेरे रूप की समानता जु वहै कारही।।
तेरी रुख साँच और झूठी जग रुख नाथ,
रुजहर रुगहर तू ही एक सार ही।
रुकै नांहि रोक्यो कभी रोकन समच्छ कौंन,
रुपि जु रह्यो अनंत प्रभाकौ पहार ही।।47।।
रुणक रुणक करि तेरे पुर नांचै इंद,
रुचि अति धारि अर हौंहि प्रतिफूल जी।
रुदन करत मोह सुनि कैं विकास तेरौ,
गयो भागि धरा छांडि महा प्रतिकूल जी।।
निरुपम देव तु ही उपमा न तेरी कौइ,
रुक्यो नांहि रुकिहै न सदा अनुकूल जी।
रुल्यो नांहि जगमैं रुलैं न रुलिहैं कभी जु,
अंबुरुह समता प्रभु जू शिवमूल जी।।48।।
रुपया पईसा औ न हौर हीरा माणिक जे,

तिस्ना महा जु ताप उपजावैं मन मैं।
उपजैं जु दुरक सेती रहैं महाकष्ट सेती जाहि,
जब अति ही विषाद धरैं तन मैं।।
तातैं प्रेम इनसौं करैं तिके महा जु सठ,
प्रेम एक तोहि सौं भलौ जु तीन पन मैं।
भूरह समान राय भुकति मुकतिदाय,
फल कौ निवास प्रभु छाय रह्यो घन मैं।।49।।
रुचै तू जु भव्यनिकौं अभविनिकौं नांहि रुचै,
तेरी रुचि सरधा प्रतीति देहु मोहि जी।
रूप ही अरूप तेरै है अरूप रूप सौ जु,
मूरति अमूरतीक वनैं सब तोहि जी।।
रूपवंत रूपवान पुरुष अकार तू जु,
लोकमान ज्ञेयमान ज्ञानमांन सोहि जी।
रूपतैं अतीत तू जु चेतनास्वरूप नाथ,
अटल अबाधित विलोकैं मुनि टोहि जी।।50।।

(सोरठा)

रूढ नांम परसिद्ध, तू परसिद्ध दयाल है।
रूढ़ गूढ़ अविरुद्ध, तो सौं तू ही देव है।।51।।
रूढ़ि अविद्या की जु, तो विनु कौंन हरै प्रभू।
लागी अविधि घनी जु, जीवनि की तोतैं मिटै।।52।।

(त्रिभंगी)

प्रभु कबहुं न रूठैं, कबहूं न तूठैं, अमृत बूठैं, उर मांहै।
प्रभु करत निहाला, अति ही विशाला, सुर नर पाला, अति चाहैं।।
सब वाकै दासा, वह जु अनासा, परम विलासा, भव तारी।
नहि रूसि जु जानैं अति हित ठानै, परम प्रवानैं प्रभु भारी।।53।।
प्रभु कबहु न रूसैं, कबहूं न तूसैं, अविधि जु दूसै, विधिकारी।
प्रभु आप अदोसा, अगणित कोसा, अति गुण पोसा, अविकारी।

प्रभु है अति रूड़ा, धर इन कूड़ा, त्रिभुवन चूड़ा मनि है जो।
नहि रूर जु कूरा, वाय जु दूरा, जड़त निचूरा, धनि है जो।।54।।

(सवैया इकतीसा)

रूति रूति कर्मनि कौ नास कियो तैं ही देव,
रूमि रूमि व्यापि रह्यो सरवगतो तुही।
तो बिना न रूडौ कोइ कूडौ सब परपंच,
कूड़ा तैं जु वाहियै तु ही जु एक है वही।।
रूड कूड़ होय रह्यो हौं जु जग वांय माहि,
मेरी बाय मेटि ईश करौ चेतना जूही।
रूधे तैं अनंत पाप रूधै तू सकल ताप,
रूनी मोह माया तो पैं तू ही देव है सही।।55।।
तेरी रुह पाय हौं जु जीतौं मोह माया कौ जु,
रेतरक्त कौ जु पिंड तो विना न ह्वै शुचि।
मेरी राखै तू जु रूष सब मूषनि कौ,
रूखौ नांहि चीकनौ जु परम महा रुची।।
तोहि छांडि कौन रेष राखिहै जु मेरी देव,
रेख्यो हौं जु करमनि नैं ह्वै रह्यो महा कुची।
रेणुका समान हौं जु भयो भववाट माहि,
तोहि तैं लहौं जु थान आपदा सवै मुची।।56।।
विषैसुख रेचकार औषद दै मोहि नाथ,
कर्मनि को पाचक जु दे तु ही विराट मैं।
तेरै नांहि रेचक न पाचक न लेनौं कछू,
सदा ही निकूप तू जु रहै निज थाट मैं।।
रेचक औ पूरक औ कुंभक प्रकासै तू हि,
रेपल लहैं न तोहि पगे रहैं काट मैं।
रेवा तीर ध्यांन करी चक्री दोय दश काम,
भए सिद्ध तोमई विराजै निजपाट मैं।।57।।

रेज करि नाषैं सब करम प्रपंच तै जु,
रैवती नक्षत्र आदि सेवैं सब देवता।
रेवंत प्रदायक तू नाम इहै अस्व कौ जु,
अष्टादस कोटि अस्व पाँवै तुव सेवता।।
सेवक न चाहैं कछूं तू जु भुक्ति मुक्ति देय,
रेफऔ विसर्ग सब तू ही एक बेवता।
रेफऔ विसर्ग मांझ चूकौ हौं जु तू सुधारि,
सेवाकौ जु फल देहु भक्तिकी अछेवता।।58।।
रेसम कौ कीट जिम आपुनी ही लालतैं जु,
फसै मूढ़ आपदा स्वरूप फंद कै मही।
तैसैं हौं जु आपुनी ही भ्रांति तैं फंस्यौ जु नाथ,
सुरझि सकौं न क्कापि जौ न ह्वै तु ईस ही।।
रेसमी पटंवर औ सूत कैं सवै जु वस्त्र,
त्यागि मुनिराय ह्वै दिगंबर भजै तु ही।
रेत सम गनै लछि त्याग ही सवै अभछि,
तवै तोहि पाँवै दछि तेरे होई कैं रही।।59।।
रेवरा समान जग कूरे सै भर्‌यो जु सदा,
तामैं हौं जु लेटियो सु मोह मदिरा पिये।
रेवट अघनि कौ जु मोहि रेवरा तैं काढि,
नेठिमीजु ठौहर दै राषि आपु मैं किये।।
दुखरूप भव वारि तातैं प्रभू वेगि तारि,
रम्य रमणीक नाथ तिष्टि तू सदा हिये।
रेज मन तेरै कोइ तू जु है समाधि सिंधु,
एक ही सुरेलामांहि शुद्ध करि लैजियें।।60।।

(सोरठा)

रे रे चित्त अयांन, भजहु भजहु जगदीस कौं।
भजि करि होहु सयांन, बहुरि न भटकहु जगत मैं।।61।।

रै रै लंपट चित्त, तजि लपंटता आपुनी।
रटहु न प्रभु कौं मित्त, जिनहि वीसरे क्यौं सरै।।62।।
रैवंतक गिरनारि, तनौं नाम बुधजन कहैं।
धन्य नेमि तजि नारि, धर्यो जोग गिरनारि परि।।63।।
जीव दया कै हैत, त्यागि राज राजुल जिको।
पहुंच्यो सिद्ध सु षेत, करि पुनीत गिरनारि गिर।।64।।
धान पूंजला मांहि, रै काढ़ैं ताकी यथा।
देह पूंजला मांहि, चिदधन निरखौ तिम मुनी।।65।।

(सवैया तेईसा)

रै कहिये धन हूँ करि तोहि, कहा मन मूरिख खेद करै क्यौं।
ध्याय धनाढ्य जु लछि तनौं, वरवा सम वित्त न पाप भरै क्यौं।
रोर हरै प्रभु रोग हरो हरि, रोप न चाप न शस्त्र धरै क्यौं।
रोर दरिद्र जु रोग प्रगट्ट जु, हारक हरि बिनु तोहि सरै क्यौं।।66।।
रोपक है सर चाप धनुरक जु नांहि धरै प्रभु आयुध भारां।
रक्षक है सबकौ बिनु आयुध रक्षण कारइ नित्य विहारा।।
रो कहिये भय तू हि जु निर्भय रोहर रोस निवारक प्यारा।
रोकि रहे मुझ कर्म महाभड़ तो बिनु कौन छुड़ावन हारा।।67।।
रोष न तोष न दोष न सोष न, रोस हरै सवना निति धारा।
रोस न तोस न दास करैं प्रभु, तो करि मोख लहैंहि करारा।।
रोग वितीत जु राग वितीत जु, दोष वितीत जु मीत अपारा।
रोदसि व्यापि रही तुव कीरति, आनंद रूप जु एक अधारा।।68।।
रोक धना अर धान अपार जु, त्यागि सवै इक तोहि जु ध्यावैं।
रोचिक होइ भजैं सु निरंतर, रोध करे विधि तो ढिंगि आंवैं।
रोझ समान तिके नर मूरिख, तोहि जु भूलि भव भ्रम भांवै।
रोस कसाव करे सठ वादि जु, तो बिनु मानुष देह नसावैं।।69।।

(सवैया इकतीसा)

रोटिका जु रूखी खाइ रूखो जग सौं जु होई,
तवै तोहि पावै नाथ और न उपाय को।
रोकिवौ न बाँधिवौ न जीवनिकौं तू जु कहै,
रोकिवौ जु इंद्रिनि कौं बांधिबौजु वाय कौ।।
रोध करि सोध करि तोहि जे जपत नाथ,
तेई पद लहै शुद्ध त्यागि संग काय कौ।
रोम रोम व्यापि रह्यो दूहौ न कभी जु होत,
तोहि न भजत मूढ़ जनम नसाय को।।70।।
रोर नांहि रहै कहूं तेरौ मुष देषत ही,
संपति कौ रूप तू जु रोम लौ चकार है।
रोवनो पर्‌यो जु कांम क्रोध लोभ मोहनि कै,
धरि तू विराज्यो धरि आनंद विहार है।।
रोस विनु कर्म मारि किये चकचूर तैं ही,
रोहिणी नक्षत्र व्रत भासक उदार है।
रोहिणी प्रमुष सब देव गण तोहि रटै,
रोहतादि मच्छनि कौ ज्ञायक विथार है।।71।।
राजा की कुमारि एक रोहनी विख्यात नाम,
कुंवर अशोक नै जु ब्याही बड़भाग तैं।
पूरव जनम इनि दोऊ ने जु व्रत कीनौं,
रोहनी नक्षत्र कौ परम अनुराग तैं।।
तातै भये आनंदित शोक कौ न व्याप्यो लेस,
तुझैं ध्यायो दंपति हि चित्त की जु लाग तैं।
प्रीतम तौ साधु होइ सिद्ध भयो वाही भव,
प्रिया हू भवांतर लै निवरै सराग तैं।।72।।
रौर वादि दुरकनि तैं टारक तु ही जु देव,
रौरव कहावै नर्क सुख कौ विथार है।

रौढ़िकर सारथीक सवै शब्द भासै तू जु,
रौपिक अरौपिक कौ भासक अपार है।।
रौगिकन भाव तेरै रौकम समान शुद्ध,
तेरी सी न रौस और ठौर न लगार है।
रंगनाथ रंग राय रंग देव रंग काय,
रंग पाय रंग दाय रंग राज सार है।।73।।
रंग रूप रंग भाव रंग न विरंग तेरै,
रुधक करम कौ जु तू ही जिनराय है।
रुंधन करम कौ सु तेरै ई प्रशाद देव,
करही भविक जीव ओर न उपाय है।।
रंकनि कौ राव करै ऐसौ तू समृद्ध देव,
रंध्र जु कहावै छिद्र तेरै न कहाय है।
रंधन न अशन न एक हू न तेरै कोऊ,
रंच न विकार तोमैं सबकौ सहाय है।।74।।
रंग के महल सब त्यागि कैं जिनिंद देव,
रंग के महल मांहि रहै तू जु निति ही।
विषै के जु रंग जे ते कहवति के रंग एक,
रंग हैं सवै जु नाथ रहै नांहि किति ही।।
सांचौ रंग निज रंग सोइ कहिये सुरंग।
और तौ कुरंग सब भागैं जिति जिति ही।
तोतैं रंग मंदिर है आतम सुरूप नित्य,
तामैं तू विराजै शुद्ध अचल सुगति ही।।75।।
रंग निज मंदिर मैं राजै तू प्रसिद्ध देव,
रंग कौ पहार एक रंगित नरंग जी।
रंच नाम तुछ कौ जु तूहि नांहि रंचक भी,
सदा ही अरंच नाथ अतुलित अंग जी।।
रंजित न कभी होत रंजन स्वभाव नांहि,
आप है निरंजन तू अंग कौ न संग जी।

अंग ही अनंग तेरौ हरै तू अनंग कौं जु,
रंजकता नांहि तोमैं प्रभू है अभंग जी।।76।।
अंतर न तेरै मांहि तु जु है निरंतर जो,
रिंद न लहत तोहि रिदंगी विडार तू।
रिंद काम क्रोध लोभ मोहादिक शत्रु सब,
रिंदगी विभावता हरै जु अविकार तू।।
रिंदनी के धारक हू तेरे पुर आंवै नांहि,
तेरे पुर आंवै साध महान निरवार तू।
रंडा सुत रिंद्र मैरे लार लागै नादि के जु,
इनतैं छुड़ाय देव सही है सुधार तू।।77।।
रंभा तरुथंभा सम जग को प्रंपच नाथ,
सारता न यामैं कोइ सदा ही असार है।
रंभा नाम केलि कौ जु कदली कहत जाहि,
जगत की केलि सब केलि सी निसार है।।
छालि ही जु जाकै मांहि कण कहूं दीखै नांहि,
रंकता सही जु एहु संपदा न कारहै।
संपदा तुही जु एक आपदा सवै जु और,
तोहीकौं सुभेंटे नित्य संपदा विहार है।।78।।

(सोरठा)

रः कहिये श्रुति मांहि, नाम काम कौ ख्यात है।
तेंरै काम सु नांहि, कामदेव सेवैं तुझैं।।79।।
कामदेव चौबीस, बाहुबली इत्यादि जे।
सबही हैं जगसीस, तुव परसाद लहैं शिवा।।80।।
काम जु मदन विकार सोईरण्य समो गहन।
भस्म करै निरधार दावानल सम तू सही।।81।।
अगनि नाम परसिद्ध, रः कहिये सिद्धांत मैं।
तू ही अगनि सुवृद्ध, जारै आठ जु काठ सहु।।82।।

कहै वज्र कौ नाम, र: सूत्र जु सिद्धान्त मैं।
वज्री तेरौ राम, है गुलाम सौ किंकर।।83।।
वज्रपात भय नांहि, सर्वोत्पात विलीन है।
तू निवसै घट मांहि, लव तब कौ कित अवसरा।।84।।
वज्र समानो तू ज, बज्रांगी अविनास है।
सकल जगत को पूज, कर्म पहार प्रहार तू।।85।।
शब्द नाम विख्यात, र: कहिये आगम विषै।
शब्दमूल जगतात, शब्दरूप शब्दातमा।।86।।
शब्दातीत अशब्द, शब्दसपर्शन तो विषै।
अब्दजीत अतिअब्द, अमृत झरलावै सदा।।87।।
र: भाष्यो फुनि ठीक, रूप तनौ नाम जु इहै।
रूप जु सर्व अलीक, एक अरूप सु सत्य तू।।88।।
रूपवान तौसो न, तीन भुवन मैं कोई है।
जग मै सठ मो सो न, तोहि छांडि विषयनि रच्यो।।89।।
रूप अरूप जु तू जू, उभय रूप स्वरूप प्रभु।
सवरण अवरण पूज, शब्दरूप तैं भिन्न जी।।90।।
र: कहिये श्रुति मांहि, रक्षण हूँ कौ नाम है।
तो विनु रक्षण नांहि, तू रक्षण सब लोक कौ।।91।।

अथ द्वादस मात्रा एक कवित्त में—

रण्य नाम वन कौजु लोक ही अरण्य महा,
तातै काढि मोहि राव रावनिकौ कंत तू।।
रिघे तो नषै जु कर्म धर्म रीति भासक तू,
रुकम समान जस रूप है अनंत तु।।
रेजम निकासि मेरी रैनि सम भ्रांति मेटि,
विषम जु रोग हर औषद दै तंत तू।
रोर हरि रौरव कै कारन निवारि प्रभु,
रंग नाथ रंग देहु शून्य हर संत तू।।92।।

(कुंडलिया)

स्वामी तेरी रम्यता, रमा जु कहिये सोइ।
रति विपरीत विवर्जिता, धर्म रीति अति होई।।
धर्म रीति अति होइ धर्म है केवलभावा।
भावभाविनी भूति, लच्छि तेरी निरदावा।।
आराधै सुस्वभाव राधिका ऋद्धि स्वरमी।
दौलति संपत्ति सिद्धि, रम्यता तेरी स्वामी।।93।।

इति रकार सम्पूर्णम्।

ल

अग्गै लकार का व्याख्यान करै है—

(श्लोक)

ललितं लालसातीतं, लिखितं नायकनायकैः।
लीनं लीनाधरं धीरं, लुप्तं रागादिभिर्नहि।।1।।
लूपभावं विकारेभ्यो, लेपलेशादिवर्जितम्।
लावण्यभूषितं देहं, वर्जितं मलिनैर्दिमलैः।।2।।
लोभमोहादिहंतारं, लौकिकाचारनिर्वृतम्।
लौलितारहितं शांतं, लांगलीतारकं प्रभुम्।।3।।
लंपटैः नो क्वचिल्लभ्यं, लिंगवेदादिवर्जितम्।
वंदे शून्यमशून्यं च, लश्च दाने प्रकाशनम्।।4।।

(उपेन्द्रवज्रा)

लकार भाष्यो सु श्रुति मैं जु इंद्रा। जपैं जु इंद्रो तुझकौं जितिन्द्रा।।
लकार भाष्यो निलून वामा। तूही सलूनो अविकार रामा।।5।।

सबै सवादा तजि लून आदी। भजैं उदासा तुझकौं अनादी।
कहैं लकारो फुनि ब्याज हूँ कौ। तु ही जु मूलो न गहैं अहूं कौ।।6।।
कहैं जु ब्याजो सु कपट्ट नामां। तु ही अव्याजो जगदीश रामां।।
तु ही जु लक्ष्मीश अलक्षा अलक्षो। स्वलक्षतो लक्षणरूप दक्षो।।7।।
महा स्वलक्ष्मी पति लोक नाथो। लक्ष्मी निधानो सु अनंत साथो।।
लक्षण्य लक्ष्मी वर लक्षणाढ्यो। लक्ष्मी प्रमाणो अतिहि धनाढ्यो।।8।।
लक्ष्मी सु कांतो अति लच्छि दाता। भजे सदा लक्षमण जाहि ज्ञाता।।
सहस्र अष्टोत्तर लक्षणंको। अलूणो केवल बोध अंको।।9।।

(चौपई)

लक्ष्मीवान सु लक्षणवंत। लक्ष्मी पाल कृपाल अनंत।
लक्ष्मी नाथ अनाथ जु आप। लक्ष्मी रासि निवास प्रताप।।10।।
लक्ष्मी नायक तू ही सुजान। श्री तेरी परिणति परधान।।
तुव क्रांति विनु लक्ष्मी न और। लक्ष्मीस्वर ईश्वर जग मौर।।11।।
लख चौरासी तें मुझ काढि। कावसि कालिम सकल जु वाढि।।
लगनि विषय की दूरि जु जाय। सो उपदेश कहौ जिनराय।।12।।
लगनि लगै मेरी तुझ ओर। तव मैं पाऊं उत्तम ठौर।।
लय तोसौं जु लगाय जिनिंद। रहै मगन सुषरूप मुनिंद।।13।।
तू न लट्यो लुटियो जगदीस। लहलहाट दीषै जु अधीस।।
कट्टरता को लेस न धरै। लष्ट पष्ट कबहू नहि करै।।14।।
तेरी घांलटकनि जे करै। निज लक्ष्मी को निश्चल धरै।।
लज्यादिक इकवीस सुगुणा। श्रावक धारहि तुव गुण मुणा।।15।।
लज्या करुणा और प्रशांति। फुनि जु प्रतीति धरै बिनु भ्रांति।।
परदोष जु ढ़ापै बुद्धिवान। पर उपकार करै हि सुज्ञान।।16।।
सोम दृष्टि गुन ग्राहक सही। सवकौ इष्ट गरिष्ट जु कही।।
शिष्टपषी अर मिष्ट जु वाच। दीरघ वात विचारी साच।।17।।
फुनि जु विशेषज्ञो जु रसज्ञ। करतज्ञो धरमज्ञ सु तज्ञ।।
दीन न अभिमानी सु विनीत। मध्य विहारी परम पुनीत।।18।।

सर्व पाप किरिया तैं भिन्न। ए इकवीस गुणा शुभ चिन्न।।
इनके ग्राहक उत्तम जीव। अभख जु वाईसा नहि लीव।।19।
कुबनिज कबहु न करइ सुजांन। सो गृहस्थ तुव दास सुज्ञान।।
धरि अठबीस मूलगुणा साध। ह्वै निरग्रन्थ भजैं जु अबाध।।20।।
चउरासी लख उत्तर गुणा। साधु धरैं इह श्रुति मैं सुणा।।
ते सिद्धांत प्रमाण सबै जु। चरचा मैं विनयेसु हमैं जु।।21।।
बहुरि जु कहिये तौ पुनरुक्त। तातैं ह्वांधारौ जिन उक्त।।
लखैं दयाल जगीसहिं अती। इन करिए श्रेष्ठ जु हैं अती।।22।।
लगैं जु प्रभु सौं त्रिश्ना खोई। तव पावैं मुनि अपनी खोइ।।
भववन की सबही तजि वोय। जिन भजि जिन पुरि पहुंचै सोय।।23।।
लषै जु प्रभु कौं अमित स्वरूप। तन मन धन वारैं सु अनूप।।
लगे रहैं वाही दरबार। लहैं आपनों रूप अपार।।24।।
लघु दीरघ कौ भेद न कोइ। प्रभु कौं भजहि सु प्रभु के होइ।।
लजैं नहि भक्ति हि कर तैं जु। तब अपनी महिमा सु लहैं जु।।25।।
लटे फटे हू सेवत रहै। तब अपनी संपति बहु लहैं।।
लठा ज्ञान कौ धारि महंत। कर्म जु कूकर टारैं संत।।26।।
लरिबौ भिरिबौ सब सौं तज्यो। लरि विभाव सौं निज गुन सज्यो।।
लरिका वाला धन घर वार। सब तजि ध्यायो एक अपार।।27।।
तब उतरे भवसागर मुनी। इहै बात ग्रन्थनि मैं सुनी।।
रहैं जु प्रभुस्यौं लगनि लगाय। तब भवदुख सब ही मिटि जाय।।28।।
लब्धि मूल लब्धीश्वर प्रभू। लत्त न लागै जाकौ कभू।।
लपिवौ लिषिवौ इक प्रभु कौ जु। प्रभु विनु कौंन हरै अघ फौज।।29।।
बिनु लसकर एकल भडराव। रावल सब कौ हे बिनु दाव।।
लभ्य अलभ्य जगत गुर सही। केवल लभ्य इहै श्रुति कही।।30।।
ललित महा सोभा कौं पुंज। लोक ललामी सुख कौ कुंज।।
कहैं ललांम तिलक कौ नांम। तिलक अखिल कौ तू इक राम।।31।।
ललि देय न सीघ्र जु भौ हरै। लव मात्र हु परपंच न धरै।।
लव अंकुस कौ तारक देव। लता ज्ञान की सघन अछेव।।32।।

जाहि लवार न लपरा लहैं। लघु भोजी मुनि वाहि जु गहैं।।
लड्डू पेड़ा स्वाद जु त्यागि। नीरस भोजन करि व्रत पागि।।33।।
लहरि विषै की सब तजि देय। तब निज लहरी लहइ अछेय।।
अमित लहरि कौं पुंज जिनिंद। लहरी सिंधु अगाध मुनिंद।।34।।
जैसे उदधि लहरि सौं भर्‌यो। तैसे प्रभु शक्ति जु विसतर्‌यो।।
निज परणति बिनु लहरि न कोइ। लहरी जिन सौं और न होई।।35।।
एकल हरि मैं दारिद हरै। अतुल अनंती संपति करै।।
बड़ौ लहरि दरियाव जिनिंद। रतनाकर नागर निरदुंद।।36।।
क्षार भाव जामें नहि कोइ। अति अमृत जग जीवन सोई।।
अंधे की लकरी ज्यौं जीव। गहै जीव कों जो हु सदीव।।37।।
तव पहुंचै शिवपुरि तहकीक। जिन बिनु और सबै जु अलीक।।
लसै जिनेश्वर नगन सुरूप। लखैं सर्व कौं आप अरूप।।38।।

(सवैया इकतीसा)

लाभ कौ धरनहार लालच हरनहार,
लांगली उधार कार लाछि कौ निवास है।
लांगली कहावै बलिदेव वासुदेव भ्रात,
लांगली कहावै हल आयुध विभास है।
लांगली जपत जाहि लाहली न लहै ताहि,
लाघवता नांहि कोऊ परम प्रकास है।
लाडिलौ सवनिकौ जु लाडिली न पासि कोऊ,
लाजकी जिहाज देव दयाकौ अवास है।।39।।
लांट पाँट नांहि लाल लाफन चलत तो पैं,
लापर लहैं न तोहि सत्य कौ पहार है।
लादन लंदावन नां संग कौन संग तेरै,
एकलौ सवनि मांहि विहर्‌यो अपार है।।
लाधो मुनि हूं नै टोहि तोहि पेखि निजमैं जु,
लागि रहे तोहिसौं लह्यो जु ततसार है।

लागि लागि इंद्रिनि कौं तोहि जे विसारै सठ,
ते न पावैं आपुनौं स्वरूप अविकार है।।40।।
भौंदू जीव लाल तोहि भूलि परमाद सेवै,
लाकसौं षडग बांधि बांक धरै मन मैं।
लत्त लागी नादि की सु बावरे भये अनंत,
लात खाय मोह की मरे जु रहैं तन मैं।।
भूले आपुनौ स्वरूप पर मैं ममत्व धर्‌यो,
भये मोह के जु दास बंधे मूढ़ पन में।
लाभ कछू नांहि अर टोटो ही अपार जामैं,
तऊ नीसरैं जु नांहि बूड़े भव बन मैं।।41।।
लाखनि कौ देनहार लागन लगाव तेरै,
लाभ कौ स्वरूप नित्य लिप्त नांहि है कभू।
तोहि तजि लानती लगै जु विषै भोगनि सौं,
लिप्त भये पाप सौ जपैं न तुझकौ प्रभू।।
लिचरि पिचरि वात करैं मूढ़ अति ही जु,
लिप्तता के मेटन की रीति गहै नां विभू।
लिन्न भये मूढता के सागर मैं सदा जीव,
तेरी चरचा न कभी धारही अनादि भू।।42।।
लिपिबौ न लपिबौ न लिखिवौ न तेरै कहूं,
लिचरि पिचरि वात तैं जु कभी नां गही।
लपै तैं जु द्वादशांग लखे तैं जु सखांग,
लिप्तता के मेटन की रीति तैं ही ने कही।।
लीन निज रूप मांहि लीनता न पर मांहि,
लीक तेरी मुनि गहै छांड़ि कै अलीक ही।
लीढ़ तू स्वभाव मैं विभाव मैं फंस्यो न कभी,
आनंद स्वरूप नाथ पातिग सबै दही।।43।।
लीषादिक जीवनि कौ एक कर छिपालपी,
तू जु करुणा निधान अमलान जगभूप है।

लीजे कहा दीजे नाथ तो बिना न और कछू,
सवै असहाय एक तू ही जो अनूप है।।
लीवौ एक तेरौ अरु छांडि दीवौ सबै लोक,
लोक को अधीश्वर तू ईश्वर अरूप है।
लीवौ शुद्ध व्रत कौ र दीवौ चउ दान केरौ,
व्रत्त दान भाषक तू दुहूं कौ स्वरूप है।।44।।

(सोरठा)

लीला वर्जित नाथ, लीला निधि लीला धरो।
लीला परणति साथ, और न लीला तो दिखे।।।।45।।
लीला मात्रे तैं जु, कर्म पहार विभंजिया।
लीला सब तोमैं जु, जग की लीला सहु वृथा।।46।।
लीला लीन जु नांहि, तेरे निर्वृति नगर में।
तू जु वसै जा मांहि, फूटि टूटि कौ नांव ना।।47।।
कर्म जु चीर समान, लीर लीर किया तुमे।
लीनें मुनि जु अमान, दीने गुन जु अनंत प्रभु।।48।।
लीयें मुनिगण तैं जु, दीयो अपनौ वास जौ।
सेयो कबहु न मैं जु, तातैं रुलियो भव विषै।।49।।

(भुजंगप्रयात)

न लुप्तो न गुप्तो सदा तू प्रसिद्धो। नहीं लुब्धता कोइ देवो सु सिद्धो।।
लुगाई न तेरे तुही ब्रह्मचारी। लुकै नांहि स्वामी सदा तू विहारी।।50।।
लुक्यो नां लुकैगो लुपै नां लुपैगो। लुप्यो नांहि देवा कभी नां खपेगो।।
लुट्यो नां लुटै तू लुटैगो न क्रापि। लियें नित्य पद्मा रहै तु उदापी।।51।।
लुण्यो नां लुणै जू न कोई लुणैगौ। सदा शुद्ध क्षेत्रो फल्यो ही रहैगौ।।
भज्यो खाय लुक्भी चणी मोह तोपै। तिहारी सु सोभा वणै नांहि मोपैं।।52।।
लुनाती तुही मोह कौं देव देवा। तुझै कौ लुनावै तुही है अछेवा।।
न लूटै न खोसै किसी कौ जु तू ही। महा नीति राजो प्रभू है समूही।।53।।

सबै पुद्गला नंत भेले जु होवैं। तुझे लूटिबै कौ सकै नांहि जोवैं।।
तुझे कौन लूटै युगादी भड़ो तू। सदा जाग्रती ज्योति है निश्चलो तू।।54।।
अनंता विभूती धरै तू हि नग्नो। न रूखौ न सूषो चिदानंद मग्नो।।
नहीं लू झग्गरादि तेरे सु देसै। नहीं कोइ झंझानिलो नाथ लेसै।।55।।

(सवैया इकतीसा)

लूटिवौ न षोसिवौ न तेरे पदमांहि कहूं,
लूषौ न सच्चिकण तू शुद्ध रूप देव है।
लूषौ जग सौं जु होइ तोहि जो चितारै जीव,
सोइ सुख लहैं नित्य धारै जिनसेव है।।
लूण आदि रस हू जु त्यागि कैं विवेकी जीव,
तापस पुनीत होइ पावैं निज भेव हैं।
तेरी ही जु लूहरि जो गावै मन धारि देव,
सोइ निजरूप पाय होइ जो अछेव है।।56।।
लूलानि कै पाव होइ, आंधे आंखि पावै नाथ,
कोढ़िनि कौ कोढ़ जाइ तेरे परसाद तैं।
कुब्जानि की कुब्जता न रहै तोहि भेटत ही,
.....।।*
हौं जु सठ बुद्धि कछु जानत न वेद भेद,
कैसे जस कीरतन करिहौं उदार ही।
लेहु लेहु मोहि नाथ गहौं क्यों न मेरौ
हाथ अमित उधारै तैं हि मेरौ कहा भार ही।।60।।

(सोरठा)

लेहु लेहु निज भाव, छंड छंड परद्रव्य कौं।
अैसे सबद सुनाव, मोहि जिनिंद दयाल जी।।61।।

---

* यहाँ पाँडुलिपि में से एक पत्र खो गया है

ले कहिये श्रुति मांहि, तीन सलेष्णा ख्यात है।
वायु पित्त कफतोहि, तेरे पद मैं नाथ जी।।62।।
कहैं जु घर कौ नाम, ले पंडित सिद्धांत मैं।
तू निजपुर विश्राम, तेरौ घर जग ऊपरैं।।63।।
लै लै जिनवर मोहि, लै धरि अपुनै पास जी।
सब वनि आवै तोहि, दै रतनत्रय जोगिया।।64।।

(सवैया इकतीसा)

लोककौ अधिक्ष तू जु अधिकारी सर्वकौ जु,
लोककौ अधार जग नाथ तू हि लेखिये।
लोकेश्वर लोकपाल लोक कौ अधीश तू ही,
लोकधाता लोकविज्ञ एक तू विशेषिये।।
लोकबंधु लोकतात लोभ तैं वितीत तू ही,
लोलुपता नांहि कोइ निरलोभी पेखिये।
लोकालोककौ प्रकास लोकके शिखरि वास,
लोकांत निवास देव आपु मांहि देखिये।।65।।

(भुजंगप्रयात)

तु ही है स्वलोकेश लोकज्ञ स्वामी। सवै लोक वात्सल्यरूपो अनामी।।
तु लोके अलोके सु व्याप्यो सदाई। अलोको अनंतो तुझी मैं समाई।।66।।
तु लोक प्रकासी विलासी जिनिंद्रा। तु ही लोभवर्जी यतेंद्री मुनिंद्रा।
तु लोकांत दाता महालोक तू ही। तु लोक प्रमाणो प्रदेसी समूही।।67।।
तुझै लोभ पापी छुवैं नांहि देवा। तुही लोक प्यारौ महाभूत लेवा।।
तु लोकाधिपो तीन लोका बखानै। सवै लोक सेवैं तुझै नाथ मानैं।।68।।
न लोभी लहैं तोहि कामी लहैं नां। न क्रोधी भजैं तोहि मोही गहैं नां।।
पापी जु पावैं सवै पाप त्यागे। न लोला जु पावैं कभी तोहि लागे।।69।।
कहैं लोलता चंचलाई जु नामा। तुझै लोलुपा नांहि पावैं सकांमां।।
नहीं लोच तो वाहिरी लोक धंधै। इकै लोच तू ही बिना तो जु बंधै।।70।।

तु ही लोच भासैं मुन्यौं कौं मुनिंद्रा। तु ही पंच मुष्टी करैं लोच इंद्रा।।
तु ही इंद्र तौकौं भजैं सर्व इंद्रा। प्रभू हैं अतिंद्री अतंद्री यतिंद्रा।।71।।
यथा लोह बेड़ी तथा स्वर्ण बेड़ी। तुझी तैं कटैं सर्व बेड़ी जु मेरी।।
गनैं लोह सोना दोऊ तुल्य साधू। तवै तोहि पावैं हरै सर्व वाधू।।72।।
जु नर्कादि दुस्कर तिके लोह वेड़ी। जु सुर्गादि सुरका तिकै सुर्ण वेड़ी।।
दुहूं के जु मूला प्रभू पुण्य पापा। हरौ नाथ दोऊ लगे जे सतापा।।73।।

(चौपई)

लोद फिटकरी हररै बिनां। जैसे रंग मजीठ न गिनां।।
तेरी रुचि सरधा परतीत। बिनु तैंसैं निजरंग न लीत।।74।।
लोष्ट जु पत्थर कौ है नाम। मणिपत्थर दोऊ जड़ धाम।।
इक चूड़ामणि साचौ तु ही। तो बिनु निज मणि कौन जु लही।।75।।
लोट नपारा पत की भांति। लोट पलेटहु बोध विभ्रांति।।
अति लोट्यो हूं लोक मंझार। अब तू थांभि उतारि जु पार।।76।।
लोढ़क सेरू आदि जु कंद। तेरे दास न भषहि अद्वंद।।
लूण्यों काचौ हू नहि योज्ञ। मधु मदिरामिष अति ही अयोज्ञ।।77।।
शुद्ध अन्न जल ले तुव जपैं। ते दासा सहु पातिग षिपैं।।
लोथि परै इह करत जु ध्यान। जपत जपत छूटैं दस प्रान।।78।।
सो उपदेस कहौ जु दयाल। कबहु न छांडहि तोहि कृपाल।।
धर्म सकट कीलोधर तू जु। तो ही तैं चालै मग पूज।।79।।
लोप होइ नहिं तैरो कभी। नित्य विराजै तू हि जु विभी।।
लोपनहारौं कौन सजोर। सब तैं जोर जु तू हि अरोर।।80।।
लोम नषादिक कबहुं न बढ़ैं। भेंट सकल की जाहि जु चढैं।।
लोम वस्त्र जाकै न स्पर्श। चरम लोम अस्थ्यादि अपर्श।।81।।
लोष्ट समान जगत की भूति। तू न सपर्शै जगत प्रसूति।।
लोलपनौं मैंटो हरि देव। जनमि जनमि दै अपुनी सेव।।82।।

(सवैया इकतीसा)

लौल्यता न तेरै मांहि लौकिकता पाँसि नांहि,
है अलौकिकी सुरीति तेरी जु गुसांइयां।
लौकांतिक जपैं तोहि अष्ट भेद भाव धरि,
पंचम सुरग के निवासी सुर सांइयां।।
देव ऋषि वसुवै जु अष्ट सागरा सु आपु,
एक भव मानुष कौ लेय तिरैं नांमियां।
तेरौ ही प्रसाद देव तोंहीकौं रटैं जु देव,
लोकांतिक तार तू ही सार है असांइयां।।83।।
लौकिक न तजै जौलौं तोहि न लहत तौंलौं,
लोलिपता त्यागि मुनि तुझीकौं लहैं सही।
लोहितता नांहि कभी रक्तता न काहू सौं जु,
लोही मांस हाड़ चाम देह न धरै तु ही।
लौंनता जु तेरैं मांहि फीकौ सब जग और,
लौंन आदि त्यागि रस भजैं साधु तोहि ही।
लौकिकता पार तू जु लोक सब करैं पूज,
सब तैं अदूज नाथ दूहौं एक तू जु ही।।84।।

(छप्पय)

लंपट लहैं न तोहि लंगवंगादि न तेरै।
लिंग विवर्जित तू जु लिंग तीनौं नहि नेरै।।
लंघ्यौ भवदधि तैं जु तोहि लखि जगत उलंघैं।
लंछिन सब दुरि जांहि तोहि कोऊ नहि लंघै।
लंडवंड तोहि न लहैं, तोहि सरल जन पाँवही।
लंपटता सब त्यागि कै, तोही मांहि जु आंवही।।85।।
लंज खंज दुख भुंज जीव हू तोहि चितारै।
तौ हौंही दुख दूर तोहि उर मैं जु निहारै।।

लंव न ठीग न नांहि नांहि दीरघ ह्रस्व जु तू।
लिंपित लुंपत नांहि नित्य शुद्धो स्वस्थ जु तू।।
लुंचित गुण कबहूं न होई, लुंचित केशा साधु जे।
तोहि भजि उतरैं जु प्रभो, तेरे दास अबाध जे।।86।।
द्रव्य लिंग जे धारि साधु ह्वै ध्यान न जानै।
तप धारण अतिकारि क्षीण काया निज ठानै।।
ते हौंहि सुरलोक मांहि भोगनि के भोगी।
नवग्रीवक लौं जांहि मोक्ष पावै नहि जोगी।।
भाव लिंग जे धारि जो, मुनि तपि तोहि जु ध्यावही।
ते हौं हैं निरवांण जी, परम पुरिष पद पाँवही।।87।।
लं पृथ्वी कौ बीज बीज जल कौ वं जानौ।
रं अगनि कौ बीज यं जु मारुत कौ मानौ।।
हं आकाश सु बीज पंच ए बीज प्रसिद्धा।
तू भाषै जग देव मूल मंत्र जु तू सिद्धा।।
लः भाष्यो दांन जु प्रगट, दातृ पात्र दान जु सवै।
तू ही एक प्रकाशई, सरव विरद तोहि जु फवै।।88।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

लच्छि कौ निवास तू ही लक्षण अनंत तो मैं,
नायक सु लायक तू लिप्तता न कोइ सौं।
लीन निज रूप मांहि लुप्त कभी होत नांहि,
लूषो नांहि चीकनौं टरै न निज षोइ सौं।।
लेश मात्र रागादिक तेरै नां विलोकिये जु,
ले लै प्रभु तारि मोहि टारि जग बोइ सौं।
लोभ न विमोह तेरै लौल्यता न एक कोइ,
लंपट लहैं न तोहि न्यारौ शून्य दोइ सौं।।89।।

दोइ शून्य पुन्य पाप तेरै नांहि तू ही आप,
तेरौ साधु करैं जाप परम प्रताप तू।
लसैं जू स्वभावनि मैं विलसैं प्रभावनि मैं,
धसैं ना विभावनि में हरै तीन ताप तू।।
तेरी निज ज्योति सोइ लक्ष्मी कहावै जोइ,
और संपदा न कोई जगत कौ बाप तू।
शून्यता निवारि मेरी शून्य ध्यान मोहि देहु,
पूरण प्रकाश देव भरम उथाप तू।।90।।

(कुंडलिया)

तेरी जो लावण्यता, लाल तिहारै लार।
लब्धि मूल ऋद्धि जिकौ, सर्व लोक मैं सार।।
सर्व लोक मैं सार, ज्ञान चेतनता प्रचुरा।
जगत उदोतनि ज्योति, द्युति जु तेरी प्रभु अदुरा।।
शिवा शंकरी शक्ति जैनता भूति घनेरी।
भाषैं 'दौलति' ताहि जो हु लावण्यत तेरी।।91।।

इति लकार संपूर्णम्।

व

आगै वकार का व्याख्यान करै हैं—

(श्लोक)

वश्येंद्रियं वृषाधीशं, वाग्वादिनिभाषकम्।
विशालाक्षं च विश्वेशं, वीतरागं गतक्लमम्।।1।।
वेदवेदांगवक्तारमंगपूर्वप्रकीर्णकैः।
वैश्वानरनिभं कर्मकाष्ठभस्मकरं प्रभुं।।2।।

व्योमतुल्यं चिदाकाशं, बिंबितं जगतीतले।
विवशं वीतमोहं च, वंदे वःतारकं विभुं।।3।।

(उपेन्द्रवज्रा)

वकार कहिये वर्णो जु देवो। दिगाधिपो त्वचरणाब्जसेवो।।
तु ही सवौं कौ गुरदेव राजा। सुरासुरा मानुष भक्ति भाजा।।4।।
वकार भाष्यो फुनि वायु नांमा। तुझै जगत्यौं न लगै न रामा।।
त्रयो जु वाता वलया कहै तू। सर्वत्र व्याप्तो शिखरैं रहै तू।।5।।
तु ही जु नाथा वदतांवरौ है। वश्येंद्रियो देव दिगबंरो है।।
वृषो वृषांको वृषभोज तू ही। वृषध्वजो ईश महा समूही।।6।।
धर्मो पवित्रो जु वृषो कहावै। उभै विधी धर्म तू ही बतावै।।
वर्णाद्वितीतो वृषभांक स्वामी। तुझै हि वर्णौं किस भांति नांमी।।7।।
वृहस्पति दास तनौं हि दासा। वृहद्वृषो केतु तू ही प्रकाशा।।
वृषाधिशो हु वृषायुधो तू। वृषोद्भवो धीर निरायुधो तू।।8।।
तु ही जु ईशा वचसां अधीशो। वरिष्ट धी स्वोद्भव है जगीशो।।
वरप्रदो तू वर देव नाथा। वशिष्ट इष्टो गुण रूप साथा।।9।।
तु वह्निमूर्ती सहु कर्म धूका। तु ही वरेण्यो भव भर्म भू का।
वर्योतिवृद्धो विवशो दयाला। वशी प्रवक्तो वृषदो विशाला।।10।।

(चौपाई)

वर्षीयांन जु व्यक्त अव्यक्ता। व्यक्तशासनो सर्व प्रथक्ता।।
व्यक्तवाक परसिद्ध तु ही है। व्यक्त वेद अती गुप्त सही है।।11।।
वज्रागनि सम त्रिश्ना जारै। तो विनु कौन सु सीतल कारै।।
वसैं जिनौं कै घटि तू देवा। हरै तिनौ को दुख अछेवा।।12।।
वही तू जु जाकौं ऋषि ध्यांवै। वही तू हि नारद जस गावैं।।
वन्यौं ठन्यौं अति सुंदर रूपा। वनि आवैं तोकौं बड़ भूपा।।13।।
तेरौ सौ वांनिक तोही पैं। वाचस्पति तू अति ही उदीपैं।।
वातरसननिवति जु तू ही। वागीश्वर धीश्वर सु समूही।।14।।

वायुमूरती है जु अकेला। क्षमामूरती क्रोध न झेला।।
वारिमूरती शांति उपावै। अगनिमूरती भ्रांति जलावै।।15।।
अंबर मूरति तू जु दिगंबर। तू जु अलिप्त सर्वगत सुंदर।।
विनु अंबर तू अंबर रूपा। परम निरंबर अतुल अनूपा।।16।।
वायु रोध उपदेश करै तू। मन रोधन कै हेतु धरै तू।।
पूरक कुंभक रेचक भाषै। प्राणायाम सकल विधि साषै।।17।।
वायु रहित वागीश अतीशा। व्यापक ब्रह्म अगाध अधीशा।
वाकवादिनी तात जु देवा। तो ही तैं उपजैं श्रुति भेवा।।18।।
वात्सल्यादि प्रकाश तु ही जो। वाच्यवितीतो तू हि सही जो।।
मैं बलि जाऊँ तेरी नाथा। वारिजजित क्रम वदन जु हाथा।।19।।
वारिज जीत नयन हैं तेरे। बाधा रहित विशाल घणेरे।।
तू विद्वान जु विद्यानिधि है। विपुल ज्योति धारक अति रिधि है।।20।।
परम वियोगी योग वितीता। सदा संयोगी तू हि अतीता।।
तू विविक्त विनु कल्मष धाता। देव विधाता सकल प्रमाता।।21।।
सुहृद विनेय जनौं का तू ही। तू विवेद विनवेद समूही।।
तू विनेय जनता वंधू है। सदा विपाप्मा सर्व प्रभू है।।22।।
तू विहितो किन ही नैं नाही। अविहित कहिये रचित न कांहि।।
विहतांतक तू विविध विलासा। महा विनेता परम प्रकासा।।23।।
प्रभू विलीना शेष विभावा। तू हि विकल्मष विगत अभावा।।
विगत राग तू है जु विशाला। विगत विहार जु परम कृपाला।।24।।
बोध विशाल विपापात्मा तू। महा विदांबर परमात्मा तू।।
विष्टरश्रव तू रहित विकारा। नित्य विहारी निश्चल धारा।।25।।
विभवो भावो तू हि अभावो। विश्रुत विश्वातम विनुदावो।।
विश्वेश्वर विश्वंभर तू है। विश्व जु शीर्षा जगत प्रभू है।।26।।
विद्या विश्व महेश्वर स्वामी। विश्व किरणि प्रभु अंतर जांमी।।
विश्वतपादो विक्रम धारी। तू जु विश्वभुक अति गुण भारी।।27।।
तू विशिष्ट विश्वेशो ईशा। विश्व रूप विश्वेड अधीशा।।
महा विक्रमी विश्वासी है। धर्म विश्वसृट् शिव वासी है।।28।।

नायक विश्व तनौं तू एका। तू विजितात सु परम विवेका।।
भाव नाम है मन कौ देवा। तू हि विभावो मन विनु वेवा।।29।।
तेरै एक विभाव न पइए। तू हि विभाव भाव न गहिये।।
प्रभू विश्वजित विभयो धीरा। विभू विशोको विरुजो वीरा।।30।।
विरजो तू हि विरागो विरती। विधि कारी तू नायक धरती।।
विधि विधाता अविधि विनासी। विघ्न विनाशक तू अविनासी।।31।।
तू हि विनायक नायक रहिता। तू हि विशेष जु नायक महिता।।
देव विशेषज्ञो इक तू ही। विमुक्तातमा सर्व जु दूही।।32।।
तू विकलंक विकल्मष कारी। विश्वभाववित विश्व उधारी।।
विश्वचक्षु तू विश्वविभूती। तू जु विश्व भू रहित प्रसूती।।33।।
तोहि ध्याय ह्वै विश्व जु वेता। तू हि विश्व वितकार जनेता।।
विश्व निदेशो विश्व विहारी। विधेश्वर कारक अविकारी।।34।।
सर्व अविद्या हरन तु ही है। ब्रह्म सु विद्या करन सही है।।
विद्येशो विद्वान तिको ही। तोहि ध्याय जग तैं निरमोही।।35।।
विश्वयोनि निरयोनि गुंसाई। विश्व सुदृष्टा देव असांई।।
विश्व विलोचन विश्व जु व्यापी। विश्व विलोकी अतुल प्रतापी।।36।।
परम विवेकी विश्नु जिनेशा। सर्व व्यापको तू हि अलेशा।।
सदा विधीश्वर अविधि न प्रेरै। विधि अविधि दोऊ नहि नेरै।।37।।
वियदाकार अपार जु तू ही। शुद्ध विहाय समो जु अदूही।।
विभू दूसरौ और न तो सौ। भौंदू जन दूजौ नहि मो सौ।।38।।
वियत विहाय अकाश जु नामा। तू अकास सौ जड़ नहि रामा।।
सर्व विहाय समायो तोमैं। सर्वगतो तू क्यौं नहि मोमैं।।39।।
बहुरि विहाय सकल भ्रम जारा। बैठै जग सिरि जगत उधारा।।
तो हि बिहावै नित्य जु यों ही। छांड़ि स्वभाव गहै नहि क्यौं ही।।40।।
विश्व कर्म तैं न्यारा तू ही। विश्व विमूरति तू हि अदूही।।
विश्व जु कर्मा तू हि कहावै। कर्म कर्म की रीति बतावै।।41।।
घट घट कौ मरमी तू अघटा। विश्व ज्योति सांई तू अपटा।।
विश्व प्रदर्शी विश्व विभेसा। सर्व विश्वधर तू हि महेशा।।42।।

वसे विभा जामैं अगणित ही। तातैं तू हि विभाव सु निति ही।।
विविध प्रकार प्रभातो मांहै। विबुधगणा तोकौं अति चाहैं।।43।।
विनय मूल तेरौ जिन धर्मा। विनय समांन जु और न पर्मा।।
विधुताशेष जु बंधन तू ही। संसारार्णव तार प्रभू ही।।44।।
तू हि विमोक्षण मुक्ति प्रदाया। तू वितिरिक्त परम सुख भाया।।
नित्य विमुक्त जु पद भागी तू। करन विमुक्ती बड़ भागी तू।।45।।
परम विरागी विसतीरण तू। विश्व प्रमाणो नहि जीरण तू।।
वितरण दान तनौ है नामा। तू दानी दानेश्वर रामा।।46।।
विरज करे रज रहित जु मोही। अरज सुने विष हरि निरमोही।।
विष निर्विष ह्वै तोहि जपंता। विग्रह सर्व शमैं तु भजंता।।47।।
विग्रह नाम कलह कौ कहिये। विग्रह एहु शरीर हु लहिये।।
विग्रह सौ विग्रह नहि दूजौ। कौन हरै नहि होइ प्रभू जौ।।48।।
विग्रह पाँचों मेटि दयाला। सुनि विनती मेरी सु कृपाला।।
तू जु विवर्जित विग्रह स्वामी। सदा अविग्रह तू हि अनामी।।49।।
तू हि वितीताशेष प्रदोषा। महा विराग विमोह विमोषा।।
महा विपुलमति विमल जिनिंदा। अमलातम विमलेश मुनिंदा।।50।।
तेरे नाथ विभाग न कोई। तू अविभाग अखंडित होई।।
अविभागी परमाणु जु आदी। तेरे पुदगल नहि अनादी।।51।।
महा सभाग अभाग न पावै। तो बिनु कौन विभाग बतावै।।
भागी पर परणति तो आगै। सकल त्यागि मुनि तोहि जु लागैं।।52।।
तू हि विराम विरक्त जु स्वामी। विद्याधर भूधर अभिरामी।।
विषयातीत विवेक गुरु तू। विरतीशो ईशो जु धुरू तू।।53।।
विश्व जु नाथो विश्व स्वरूपा। विश्वभूप जगदीश अनूपा।।
विमल बोध केवलगम्यो तू। सर्व विकार हरो रम्यो तू।।54।।
विरह वितीत वियोग वितीतो। सदा वियोगी साधु पुनीतो।।
लहैं सयोग अवस्था तेरी। तू हि विराजैं रहित जु फेरी।।55।।
सर्व विराटपती महाराजा। सर्व विकासी सर्व सु काजा।।
विदुष विबुध पंडित कौ नामा। ते पंडित जे जपहिं जु रामा।56

सर्व पापहर है जिनराजा। और न राजा सब दुख भाजा।।
राजा जो परवसि नहिं होई। रहै अखंडित अमर जु सोई।।57।।

(सोरठा)

वि कहिये श्रुति मांहि, पंखी कौ नाम जु सही।
पंखी रुलिये नांहि, गीधादिक तोकौं जपी।।58।।
पंखी तरे अनंत, पशु हू केई तारिया।
करे आपुनें मित्त, जन्मांतर मैं मुक्ति दी।।59।।
पंखिनि कौ सिरदार, गरड पंखि कहिये जिको।
ताहि कहै निरधार, नाम विराट जु पंडिता।।60।।
तू विराट सौ दैव, कर्म सर्प नासै महा।
ज्ञान पक्ष अति भेव, द्विजराजो जिनराज तू।।61।।
फुनि अकास कौ नाम, वि कहिये सिद्धांत मैं।
गगन रूप शिवधाम, तू ही एक विराम है।।62।।

(भुजंगप्रयात)

तू ही वीतरागो तू ही वीतदोषा। तु ही बीतमोहो तु ही वीतरोषा।।
तु ही कल्मषो बीत है वीत संगा। तु मत्सर्वितीतो प्रभू है अभंगा।।63।।
तु ही वीरबीराधिपो धीर धीरा। तु ही है सु वीराधिवीरो असीरा।।
जपै नारदा तोहि वीना बजावै। सु गावै तुझी कौं तोकौं रिझावैं।।64।।
नहीं रावरै वीन वेनादि कोई। महा तू प्रवीनो सवै राग खोई।।
तु ही वीतभी वीतरोगा च शोका। सदा मृत्युवीतो प्रभू वीतरोका।।65।।
तु ही वीतजन्मा जरा वीत स्वामी। तु वाग्मी च वागीश्वरो अंत्रजामी।।
तु ही वीतहिंसा तु ही वीतद्रोहा। तु ही वीतसंसार वीत प्ररोहा।।66।।
तु वीत प्रचारो प्रभू वीत छोहा। सदा माया वीत है वीत लोहा।।
जिके हैं गुणा साथ व्रीडादिका भो। इकीसा जु भेदा विवेकाश्रया भो।।67।।
तुझी तैं लहैं श्रावका शुद्ध बोधा। तु ही है उभै धर्म भासी अरोधा।
सु लज्या तनौं नाम ब्रीड़ा कहावै। धरे भाव ब्रीडा किसै नां दुखावै।।68।।

तुझै सर्व की व्रीड़ पालैं सवौं कौं। तु ही है अलभ्यो सदा ही सठौं कौं।।
करौ वीतमोहा हमैं लोक स्वामी। सदा तू विशुद्धो प्रबुद्धो अनांमी।।69।।

(सोरठा)

वुस उत्सर्ग बखान, त्याग तनौं इह नांम है।
तेरै त्याग प्रधान, तू त्यागी सब लोक कौ।।70।।
ब्यूह गरड अर चक्र, व्यूह आदि युद्ध जु समै।
सेना भेद अवक्र, धनुर्वेद की रीति सहु।।71।।
तो विनु कौन प्रकास, तो विनु इनकौ तजक को।
तेरै युद्ध न भास, तौसौं लरिवे सक कवन।।72।।
गरड़ ब्यूह है सोइ, गरड़ाकार जु फौज जो।
व्यूह समूह जु होइ, भाषै युद्ध कला कुशल।।73।।
चक्र सरीखी गोल, गिरदाकार जु फौज जो।
चक्र व्यूह इहतोल, कहैं युद्ध वेत्तार जो।।74।।
व्यूह प्रव्यूहादी जु, भेद विभेदा युद्ध के।
तजे सु तुव ध्याई जु, बहु संता सिद्ध जु भये।।75।।

(भुजंगप्रयात)

तुही वेदविद् विश्वभूतेश स्वामी। तु वेधा विधाता सही अंत्रजामी।।
लखैं वेद वेत्ता तुझै देव देवा। तुही वेद सिद्धांत भासी अछेवा।।76।।
सु दिव्य ध्वनी वेद कहिये तिहारी। नहीं ओर वेदो तुझै छांड़ि भारी।।
तु ही है जु निर्वेद वेदा न जाकै। नहीं पुंस नारी नहीं षंढ ताकै।।77।।
तु ही वेदवेद्यो स्वसंवेद्य तू ही। सवै वेद वेदांग भासी समूही।।
तु ही है जु वेत्ते चतुर्भेद पंचा। तु ही एक रूपो युगादीश संचा।।78।।
कहैं नाम द्वै कौ सु वे सूत्र मांही। तु सामान्य रूपो विशेषो सदा ही।।
त्रयी भेद रत्नत्रयी तु हि धारै। अनंता चतुष्टै लिये तु विथारै।।79।।
तु ही पंच भावा गहै सिद्ध भावैं। तु ही एक चैतन्य योगीश ध्यावैं।।
तु ही है षडात्मा छहौं कारका जो। धरै आप मांही तु ज्ञानात्मा जो।।80।।

तु षडात्मा देव सप्तातमा तू। तु ही अष्टभेदो प्रभू स्वात्मा तू।।
तु ही नाथ सर्वदा धर्मातमा है। जु एको अनेको सु तत्त्वातमा है।।81।।
तु सप्तातमा सप्त भंगा बखानैं। तु अष्टातमा अष्ट कर्मा जु भानै।।
गुणा अष्ट लीयें रहै लोक माथे। अनंता गुणा देव तेरै जु साथै।।82।।
नवो तु अनादीश नौ तत्त्व भाषैं। दशा एक धारें दशों धर्म साषै।।
न राखै कदेही प्रकृति जडा जो। महाबोध रूपो तु ही है छड़ा जो।।83।।
अनंतातमा तु हि सर्वातमा है। जु एको अनेको सुज्ञानात्मा है।।
तु संख्यो असंख्यो अनंतो सही तू। न वेषो मु भेषो अभूषो वही तू।।84।।
जु वेगें उधारै तिको तू दयाला। नहीं वेणवंसी जु तेरै रसाला।।
नहीं वेध तेरै तु ही वेध धारै। नहीं वेग तेरै तु ही वेगि तारै।।85।।
त्रयी वेदवीतो अवेद प्रचारी। चतुर्वेद नाथो तुही है उचारी।।
त्रिषष्टी शलाका मंहाभूत भेदा। तिनकौं जु गावैं सु प्रथिमानु वेदा।।86।।
त्रयी लोक चालोक भेदा बखानै। तिकौ दूसरो वेद कर्णानु मानैं।।
गृहस्था मुनी दोय भेदा जु स्रिष्टी। तिनौं के कहै धर्म जो ज्ञान वृष्टी।।87।।
कहावै तिकौ तीसरौ वेद शुद्धो। सु चर्णानुयोगो महा जो प्रबुद्धौ।।88।।
चतुर्थो जु वेदो सु द्रव्यानु नामा। तजें आंन भावा बतावैं स्वरामा।
जड़ा चेतना सर्व भाषै जु दोई। गहै एक चैतन्य कौं तत्त्व सोई।।
इहैं च्यारि वेदानि कौं तत्त्व देवा। तुझै जो अराधै लहैं जन्म छेवा।।89।।
तु चौ वेद धारी त्रयी वेद वीता। त्रयी योगधारी चतुर्वेद जीता।।
तु वेदाधिरूढ़ो सही वेद शून्या। तू वेदांतकारी प्रभू है सुपुन्या।।90।।
जु पाषाण अस्थी जु काष्टा जु वेत्ता। जिके च्यारि माना तुमे सर्व जेता।।
तु ही है अमानी सवै गर्व हारा। प्रभू सर्व सर्वेश्वरो वेद सारा।।91।।
तु ही देव मिथ्यात पंथ विवर्जै। सवै प्राणि हिंसा तुही एक तर्जे।।
सुधन्या प्रभू वे जिके तोहि ध्यावैं। तुझै ध्याय भौ मांहि जन्मा न पावैं।।92।।
तिहारौ जु वेदा निषेधै जु वेरा। कहावैं जु बद्री फला पाप ढेरा।।
तुही शृंगवेरादि कंदा जु निंदै। सवै कंद अच्छाण खावौ उछिंदै।।93।।
कहावै जु आदा तिको शृंगवेरा। महा दोष मूला निगोदी घणेरा।।
नहीं वेपथो तो महै देव देवा। कहैं वेपथो कंप नामा जितेवा।।94।।

तु ही हैं जु वेवा मुन्यौं का सदेवा। तु ही सप्त बिस्ना निषेधै अछेवा।।
तु ही द्यूत निंदै सवै मांस निंदै। खुरा पान निंदै जु वेश्या विनिंदै।।95।।
तु पापर्दि निंदै तू चोरी विनिंदै। तू ही पार की नारि अत्यंत निंदै।।
जु वेस्या समो निंद्य जन्मो न कोई। सवै पाप सेवै मलीना जु होई।।96।।
जु वेस्या ग्रहो सोहि नर्को कहावै। सिला धोवि की तुल्य वेश्या लषावै।।
जिके सेवहीं वाहि ते नीच तुल्या। लहैं नांहि भक्ति प्रभु की अतुल्या।।97।।
कदापी जु वेश्या हु त्यागे कुकर्मा। भजै तोहि देवा सुनैं जैन धर्मा।
सवै पाप क्षेपैं लहैं व्रत्त भेदा। गहे और जन्मा लहै तोहि वेदा।।98।।
तू जैनेंद्र देवो हि विष्णु कहावै। जिनोपासका वैश्नवा नाम पावैं।।
न तो वाहिरौ और विष्णु जु कोई। न दासा बिना वैश्नवा नाम होई।।99।।
जिके वेष हू धारि तोकौं न ध्यावै। तिके वेषधारी न साधू कहावैं।।
इहै तुल्य वेश्या जु दुर्बुद्धि होई। हरौ नाथ मेरी महा भ्रांति सोई।।100।।
तु ही है जु वैवस्वतांतो अकाला। कहै नाम वैवस्वतो जो हु काला।।
गहै नांहि वैवस्वतो तोहि ध्याये। न वैद्यो हु नाड़ी गहै तोहि गांये।।101।।
तु ही कामनाशा जु आशा विनाशा। तु वैधव्यकारी रती कौ आकाशा।।
..... ।।102।।
कहैं नाम वैधव्य रंडत्व केरौ। रती कौ जु वैधव्य दाता जि तेरौ।।
रती काम की नारि कांमो जु भर्ता। तु ही देव वैश्वानरो कामहर्ता।।103।।
यथा नाथ वैश्वानरो काष्ट जारै। तथा तू हि कर्मा जु कामा प्रहारै।।
यथा वैनतेयो जु नागा नसावै। तथा तू हि रागादि दोषा भजावै।।104।।
कहै वैनतेयो विराटो विराजा। जु पंषीश पक्षेंद्र नागारि गाजा।।
भ्रमासर्प तुल्या तु ही वैनतेयो। सवै रोगहारी तुही वैद्य ज्ञेयो।।105।।
महा वैद्य नाथो जु मृत्युंजयो तू। महारोग हारी प्रभू आश्रयो तू।
तु ही वैदिको वैदि विद्या प्रकासी। तु ही देव वैराग्य धोरी विभासी।।106।।

(अरिल्ल)

वै इति निश्चय नांम तु ही निश्चय प्रभू।
निश्चय अर व्यवहार तु ही भासक विभू।

तेरै नां वैकल्प वैकृतो नांहि को।
तू वैराग्यपरो जु राग नहिं पाँहि को।।107।।
वैदेही कहिये जु जानकी ख्यात जो।
सीता सती पुनीत अनूपम गात जो।।
ताके दोऊ लोक सुधारै तैं गुरो।
वैदेही अतिशील कहै तू ही धुरो।।108।।
वैस्य उधारे तैं हि क्षत्रिया तारिया।
विप्र उधारे केई सौत्रि कुल धारिया।।
वैराग्यारूढ़ो जु दिगंबर है तुही।
तो सौ वैरागी न दूसरौ है सही।।109।।
तु ही विदेहो नाथ सु वैदेहो प्रभू।
ह्वै मुनि वैदेहाजु तुझी तैं जग विभू।।
तु ही एक सौ साठि विदेहा उच्चरै।
वैदेही संव रीति तु ही परगट करै।।110।।
वैराग्याधीशो जु वैकृतांतक है तु ही।
वैहत नाम विकार तो महै है नहीं।।
विना ज्ञान वैराज्ञ तुझै कौंन जु लहै।
तो वैद्य जु विनु नाथ अविद्या को दहै।।111।।
सव विद्या कौ ईश तु ही वैद्येश है।
सर्व व्यथा हारी जु तू ही लोकेश है।।
औषध रतनत्रै जु दैंय भवज्वर हरै।
नमो वैद्य राजेश सुवैदिक विधि धरै।।112।।

(सवैया तेईसा)

व्योम अकाश जु नाम कहैं बुध, तू हि जु व्योम समान अलिप्ता।
व्योम जड़ो अर तू प्रभु चेतन, तो सम व्योम न होई प्रगिप्ता।।
तू ज अमूरत सर्वगतो हरि, अंबर मूरति तू लिप्त न छिप्ता।
व्योमवतो सव व्योम जु आदिक, है षट द्रव्य जु तू हि सुत्रिप्ता।।113।।

वोट नहीं कछु आड़न तेरहि, वोहरि तोहि न राषइ कोई।
वोह अविद्यतनी मुनिराजनि, दूरि करी प्रभू तो जपि सोई।।
वोत न घात नं दंड करै नहि, दंडिय कर्म सवै विधि जोई।
कर्म तनी नहि वोल जु राखइ, मूल जु सत्व उषांरक होई।।114।।
वो हरिवौ नहि तेरइ रावल, जीवनि कौं कबहूं न दुखावै।
वो हरिवो मन इंद्रिनि कौ प्रभु, वो हरिवौ पवनां जु बतावै।।
अर्थ जु वो हरिवे कहु रोक न, तोहि न रोकन बांधन भावै।
वो छिन ही दरबार तिहारहि, पूरन द्रव्य तु ही दरसावै।।115।।
वोर तिहारि हि इंद्र निहारहि, नागपती फुनि तेरिहि बोरा।
चक्रि हलि सब तोहि जु गांवहि, साधु सु ध्यांवहि त्यागि जु सोरा।।
वोढ़न नाहि विछावंन नांहि, लखे मुनि तोहि करैं तप जोरा।
वोप चढ़ै प्रभु तोहि जु ध्यावत, तोहि न जानहि जे नर ढोरा।।116।।
वोस जु बूंद न प्यास बुझावइ, त्यौ नहि आन जु देव उधारा।
तु ही उधार करै जिम निर्मल, वारि बिना न बुझै तिस भारा।।
वोस जु बूंद समान विषय सुख, नाहि मिटावै दाह अपारा।
शीतल अंबु समान स्वबोध जु, तो बिनु कौन पिवावन हारा।।117।।
वोठ हलै न फिरै कर हू न, जपे अजपा जु निरंतर ध्यावै।
तोहि जिके सुलहैं निज भाव, तजे उरझाव सु तोमहि आवैं।
वो सरषे तम हैं कबहू जिम, अंकुर रूप नहीं दरसावैं।
त्यौं जु अभव्यनि कै घटि नाथ, कभी निज बोध न साधु बतावैं।।118।।

(छप्पय)

ओला घोलवरादि जेहु बाईस अभक्षा।
तिनके भक्षक मूढ़ तोहि पावैं न अलक्षा।।
सर्व अभक्षै त्यागि शुद्ध अन्न जु जल लैकैं।
तोहि जपैं जगदीस पाप ताप हि जल दै कैं।।
तैं पावैं तोकौ नरोतमा, तेरे दास प्रसंत जे।
मूढ़ न तोहि लहैं गुसाई, करहि अनर्थ अनंत जे।।119।।

यथा ब्यौंत कौ वस्त्र ऊफडू नांहि लखावैं।
फलैं जु जन कौं बहुत पार कौं नांहि कहावै।।
तथा स्त्रिष्टि की नाथ साहिबो तोहि जु सोहै।
सब कौ ठाकुर एक तू हि सबकौ मन मोहे।।
व्यौटपनौं तेरै नहीं ब्यौंत सकल जाने तु ही।
वंचकता कबहू न कोई, वंशवितो तू जु ही।।120।।
विंगियुक्तियुत अर्थ शब्द भेदा हि बतावै।
सब तैं न्यारौ तू हि तोहि विंगिजु नहि पावैं।।
विंसति गुण रूपी जु पुदगलो तोहि न छीवै।
जीवो तुव गुन ध्याय शुद्ध ह्वै नित्य जु जीवै।।
वंसच्छल नगरो महा, ताकै पश्चिम कुंथ गिर।
तापरि तोहि जपि उधरे, कुलदिसभूषण तैं सुथिर।।121।।
सर्व वंश कौ नाथ एक हु न वंश जु तेरै।
इक्ष्वाकादि सु वंस तो विना कौन जु प्रेरै।।
वंशनि मैं मोती जु दुल्लभो भागि विनां ज्यौं।
वंश खिडा सम जगत ताम है तू हिम हात्यौं।।
वंचक तोहि न पावई वंचकता मह पाप है।
मोहि जु वंच्यो ठगनि स्वामी, दियउ अनंत जु ताप है।।122।।
वः कहिये श्रुति मांहि, गमन कै अर्थि प्रसिद्धो।
गमनागमन सु नांहि तू जु हि निश्चल सिद्धो।।
तोहि सर्व की गम्य एक ठौर जु रहते कौ।
सब मैं व्यापक पूजि, दुल्लभौ है हम सेकौ।।
वः युष्माकं रावरै प्रभु रागादिक लेश न मिलै।
वः श्रेष्ठ जु अत्यंत तू ही, तो दासैं काल न गिलै।।123।।
वः कहिये नयने जु नयन है सबकौ तू ही।
वः कहिये जु विकार नांहि तो मैं स्वसमूही।।
तू अविकार अपार नांहि वः तेरै संगा।
नः अस्माकं तारि नाथ है तू हि अभंगा।।

तोकौ हमरी वीनती ओर न तो सौ दूसरौ।
कै तू कैसु विषौ सु वौंनी, और सवै जग धूसरौ।।124।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

(सवैया इकतीसा)

वरदाई भव्यनिकौ वाकवादिनी कहै जु,
विगत विकार देव वीतराग है तुही।
वुत्तो जिणसासण मैं व्यूह न प्रव्यूह तेरै,
वेद कौ रहस्य देव निर्वेद जु है सही।।
वैवस्वत हारी नाथ वैकलिता नांहि कभी,
व्योम सौ अलिप्त शुद्ध वोट जु धरै नहीं।
व्यौत कौ सौ वागो जाहि सोह तजै साहिवि जु,
ज्ञानवंत धर्मवंत शून्यता सवै दही।।125।।

(कुंडलिया)

तेरी नाथ जु परणती, वीतरागता जोहु।
सोई विगत विकारता, शुद्ध चेतना सोहु।।
शुद्ध चेतना सोहु ताहि कहिये निज लक्ष्मी।
ज्ञान विभूति अनंत स्वात्मभूती विनु छद्मी।।
वाणी वर्जित शक्ति अस्तिता लच्छि घणेरी।
भाषैं 'दौलति' ताहि परणती नाथ जु तेरी।।126।।

इति वकार संपूर्णम्।



आगैं तालवी श वर्ण का व्याख्यान करै हैं—

(श्लोक)

शक्तीशं शक्तिमूलं च, सर्वशास्त्रप्रकाशकं।
शिवं शीलप्रणेतारं, शुक्लध्यानप्रदीपकं।।1।।
शूरवीराधिवीरं च, शेमुषीशैः प्रपूजितं।
शेमुषीदायकं धीरं, शैलपुत्रीशस्वामिनं।।2।।
शोकसंतापहंतारं शौचाचारविभूषितं।
शंकरं शंवदं वंदे, जिनं शून्यप्रनाशनं।।3।।

(दोहा)

श परोक्ष कौ नाव है, तू परतक्ष जिनेश।
सदा परोषि अग्यान कौं, उभै रूप जगतेश।।4।।
उभय प्रमाण प्रकाश तू, प्रतषि परोषि दयाल।
शकुन रूप शकुनेश तू, जगशसि जगत प्रपाल।।5।।
शशि जु निशाकर तै सही, तू निशिहर जग ज्योति।
अमित कोटि शशि सूर की, नष सम द्युति नहि होति।।6।।
शर्म जु सुष कौ नांव है, तू शर्मी सुख रूप।
शर्मा वर्मा गुप्त तू, तोसौ और न भूप।।7।।
तेरे दास जु सकल हैं, तू दत्तो दातार।
तो सम शकुन न और कौं, विघन विनाशन हार।।8।।
शक्र नाम इंद्र जु तनौं, शत इंद्रा तहकीक।
सब करि पूजित एक तू, तो विनु सर्व अलीक।।9।।
शत पुत्रा धृतराष्ट्र का, दुरजोधन इत्यादि।
करे कपट पाँडौंनि सौं, तो विनु मुये सु वादि।।10।।
शक्तातम शक्तीश्वरो, शस्त प्रशस्त जु ईश।

तू शरण्य चउ शरणदो, शमी शमाधिप धीश।।11।।
शरणाई साधार तू, शरणागत प्रतिपाल।
तेरौ शरणौं मोहि दै, परम पुनीत विशाल।।12।।
लक्षण तू हि सुलक्षणां, शम दम यम नियमा जु।
तो बिनु कौन प्रकासई, तू है भवजल पाज।।13।।
तू शत्रुघ्न अविघ्न है, शत्रु न तेरै कोई।
कर्म शत्रु सब नासिया, ते शत्रुंजय होई।।14।।
रामानुज जो शत्रुघन, सो तेरौ निज दास।
भरत उधारक देव तू, शक्ति अनंत सु पास।।15।।
शमधारी क्षमकार तू, शम निधांन शमिलभ्य।
दमी उपरमी नाथ तू, विनु शम है जु अलभ्य।।16।।
शस्त्रास्त्र जु तेरै नहीं, विनु शस्त्र जु जगराव।
तेरौ शरण जिको गहैं, सो पावै निज भाव।।17।।
शब्दातीत अतीत तू, करण जु शब्द विलास।
शब्द सपर्श न वर्ण है, गंध न रस न विभास।।18।।
शक्ति न तेरी सी कहूं, सवैं अशक्त जु लोक।
एक शक्त जग व्यक्त तू, शमित सकल दुख थोक।।19।।
शमित कहैं सांत जु किये, तें सब दुष्ट विभाव।
ज्ञान शक्ति दृग शक्ति कौ, रूप जु तू हि स्वभाव।।20।।
तेरी वानी शर्करा, महा मिष्ट रोचीक।
या बिनु मिश्री और नहि, इहै सिता तहकीक।।21।।
सिता शर्करा नाम है, प्रगट जु मिश्री जानि।
तेरी वानी अमृता, पिवै भविक उर आनि।।22।।

(अरिल्ल)

शव जु मृतककौ नाम जीववर्जित जिको।
जीवित शव जु समान भजैं तोहि न तिको।।

शव होवे पहली जु शिव विषै चित दे।
सो पावै शिवभूति सकल पर वित्त दे।।23।।
तू शमुद्रगुन कौ जु नया अतिधारही।
रतनपूज रतनेश रतिपती मार ही।।
तोसौ शमुद न कोई सुधारसकौ भर्यो।
तू असंखि उदधी जु प्रकाशक विसतर्यो।।24।।
शनै शनै भव त्यागि तोहि जे ध्यावंहि।
सोहु पपीलिक पंथ महामुनि गांवही।।
तजिकै तुरत सवै जु तोहि इक आदरै।
इहै विहंगम पंथ मुनीश्वर आचरैं।।25।।
शासनदायक देव शांतिकारक तुही।
जिनशासन कौ मूल तू जु इक है सही।।
शांति सु कारक शांतिनाथ जगसार तू।
शांति प्रधारक ईश शांति विसतार तू।।26।।
शांति स्वरूपी शांति विहार जु है प्रभू।
शांतातम शांतीश शांत दांत जु विभू।।
शासन शिव दातार तिहारौ सांइयां।
तू जु शास्वतो देव मुनीश असांइयां।।27।।
शा सोभा कौ नाम तू हि सोभित प्रभू।
तेरी सोभ अपार निश्चला है विभू।।
तेरी सी नहि और ठौर शादी खई।
शांतारी दांतातमा जु तू है सई।।28।।
तेरी नाथ विभूति शास्वती है सदा।
तोकौं छांडि न जाय और ठौर जु कदा।।
शांतिभाक सालिलातमा जु तू जोगिया।
शांतोत्तम जगदीश हरै सहु रोगिया।।29।।
शांतिनिष्ट तू शांतिप्रधानो शांतिदो।
शांती शांतिनिधान शांतिकृत्क्रांतिदो।।

शातकुंभ तुल्यो जु तू हि बिनु काइया।
शातकुंभ कौ अर्थ सुवर्ण बताइया।।30।।
कहा कनक कंगाल तिहारै पट तरै।
कनक कनक सौ ठीक बावरौ जग करै।।
कनक नाम धतूर कनक कंचन हुहै।
कनक कनक तैं सौंगुना हु पंडित कहै।।31।।*
तो सौ चिदघन घन नहि होइ। भव्यनि सेन शिखंडी जोइ।।
बहुरि शिखंडी राजकुमार। अरजन कौ भारी अधिकार।।48।।
तानैं बान चलायो अती। भीषम कै लागो अति गती।।
तव भीषम धरि तेरौ ध्यान। परम समाधि तज्यो निजप्रान।।49।।
बाल ब्रह्मचारी अति बली। तुव परसाद लही गति भली।।
लोकांतिक सुर भयउ सुजांन। इक भव धरि पासी निरवान।।50।।
शिविर पट कुटी डेरा नाम। डेरा डांडा तजि धन धाम।।
जे तोकौं ध्यावैं मन लाय। ते निज रूप हौंहि जिनराय।।51।।
शिखरी परवत कौ है नाम। शिखर समेद तुझी करि धाम।।
शिखरीपति जो मेरू प्रधांन। सो तैं कियउ पुनीत प्रवांन।।52।।
शिखरि लोक कैं तू हि जु रहै। व्यापि रह्यो घटिघटि श्रुति कहै।
शिखई अगनि कौ नाम प्रधान। तू जु शिखई सौ जाजुलिमान।।53।।
कर्मकाष्ट भस्म जु कर शिखी। शिखा सूत्र त्यागक तू सुखी।
शिलपी तोसौ और न कोई। शिवमंदिर सु रचै अधिकोई।।54।।
शिवा पार्वती नांम जु होइ। महा सती जानै सहु कोई।।
भूतिपति की पतनी जिको। भजन करै तेरौ ही तिको।।55।।
तुव परसाद अमर पुर पाय। नर ह्वै सिद्धि लहै अधिकाय।।
शिथिल किये सब कर्म जु तैं हि। भजियउ नांहि जु तोकौ मैं हि।।56।।
नाम शिलीमुख भ्रमर तनौं जु। तुव पद अंबुज भ्रमर मनौं जु।।
जब ह्वैं तव पावै मकरंद। ज्ञानरूप परिमल निरदुंद।।57।।

---

* यहाँ पाँडुलिपि में एक पत्र कहीं खो गया है

(छप्पय)

तू साचौ शिवराय तोह भजि शिवपुर पइए।
शक्ति कलह हि न तोहि तोहि जपि शक्ति जु लहिये।।
शिव शक्ति के दास भेद तेरौ नहि पावै।
करि कैं अभष अहार मूढ नर देह गुमांवै।।
हिंसा मारग लागि कैं हो, तोहि न कोइ पावइ।
दया पाल साधू जि तोकौं, लहै सकल मैं भावई।।58।।
शिला मुक्ति सी और ठौर नहि जग मैं कोइ।
जहां विराज्यौं देव तू हि त्रिभुवन पति सोइ।।
शिला पाँडु काहू जु जा सिरै न्हायो स्वामी।
कोटि शिला हू एक पाँवना अति अभिरामी।।
कोटि साधु सिद्ध जु भये, जंह जा परसे शुभ पाँवही।
वासुदेव बलवंत महानर, नवही जाहि उचांवही।।59।।
शिष्यो तू नहि होई तू जु है गुरु सवनि कौ।
शिष्या दिष्या दाय नाशकर तू हि अघनि कौ।
तारे जीव अनंत तारिहै वहुरि अनंता।
तोमैं तारक शक्ति शुद्ध है तू भगवंता।।
चहुगति मैं सम्यक्त दाता, तिर नर कौ देय जु व्रती।
मुनिव्रत दाता सौ त्रिकुल कौं, मुक्तिप्रदाता अति व्रती।।60।।
शी शयन जु कौं कहैं नांहि शयन जु प्रभु तेरै।
सदा जु जाग्रत ज्योति नींद को नाम न नेरै।।
शी कहिये निंदा हु तू ज नहिं निंदित देवा।
निंदै दोष सवै जु नांहि निंदै गुण भेवा।।
शी हिंसा हू कौं कहै वुध, तू हिंसा वर्जित सदा।
हिंसा नर्क पुरी हि पंथा,हिंसक सुगति न लें कदा।।61।।
शी कर नाम तरंग तू जु है अमित तरंगा।
रागादिक नहि लेश शुद्ध पर्याय अभंगा।।

निज परणति हित रंग लहरि आनंद कलोला।
विकलप लहरि न कोइ तू जु है सिंधु अडोला।।
शील निकेतन है सदा ही, शीलरूप शीलेश्वरो।
शील कंद जिनचंद तू ही, शीलनिधि लोकेश्वरो।।62।।

शील निवासुरूप शीलवांन जु तू स्वामी।
शील खानि बड़ दानि शील शीलो अभिरामी।।
शीलाधिप शीलांग शील सदन जु जित मदना।
शील उजागर देव कोटि चंद जु जित वदना।।
शीलागर तू शील सतिर, शील विभेद विभास जो।
सहस अठारह शील अंसा हु, तू धारै सु सुपास जो।।63।।
शीत न उष्ण न तू जु रूक्ष चिक्कण तू नांही।
हलको भार्‌यो तू न नांहि मृदु कठिन धरांही।।
तू शीतांग जु हरण दाह जुर हरण जु तू ही।
तू आनंद जु करण मरणरहितो सु समूही।।
शीर्षौं मस्तक नाम कहिये, तू जग सीस विराजई।
नांहि तुलाई शीरषाको, स्वस्थो शुद्ध विभासई।।64।।

(मोतीदाम)

कहै बुध शीघ्र जु नाम तुरंत। उधारहु शीघ्र हमें भगवंत।।
करौ निजरूप हमैं हु दयाल। हरौ सहु भ्रांति जु है भवजाल।।65।।
तु ही जिन शुद्ध सुरूप अनंत। तु ही शुचि शौच विभासक संत।।
तु ही जु शुची शुचि है शुचिकार। तु शुद्धुपयोग प्रकाशन हार।।66।।
तु ही जु शुभाशुभ वर्जित देव। तु ही जु शुधत्व विकाश अछेव।।
तु शुक्ल जु ध्यान प्रगट्टक ईश। तु शुद्ध सुचिद्रूपो जगदीश।।67।।
तु शुद्धुपयोगमई भगवान। तु शुद्ध जु बुद्ध जु है निज ज्ञान।।
तु शुक्ल जु ध्यान बिना नहि गम्य। तु ही प्रभु शुक्ल जु है अति रम्य।।68।।
तुझै न शुभाशुभ पाँवहि क्रापि। तुझै इक पावइ शुद्ध उदापी।।
तु ही प्रभु शुद्धातम निज रूप। तू शुद्ध नयो अभयो जग भूप।।69।।

तु ही प्रथमै अशुभो ज उथापि। कहै शुभ रीति सुव्रत सथापि।।
पछैं उपदेसि जु शुद्ध स्वरूप। हरै जु शुभाशुभ सर्व विरूप।।70।।
शुभो जु दिखावई सुर्ग विलास। करै अशुभो नरकां अतित्रास।।
तजे जु शुभाशुभ शुद्ध धरेय। तवै पुरसोत्तम तोहि मिलेय।।71।।
शुनी जु कहावइ स्वान जु नारि। तिसी इह कूड अविद्य विथारी।।
शुनी सुत दोय शुभाशुभ होइ। भुसैं सठ लोक जु मांहि सोइ।।72।।
प्रभू विरला मुनिराय सुजांन। सु शुद्ध पयोग जु यष्टि अमांन।।
करे निज हाथ विडारिउ स्वांन। लषे इक तोहि लहै निरवान।।73।।

(दोहा)

कथा पुरांननि मैं इहै, सुनी सुगुरु कै पासि।
शुनी स्वपच दोऊ तुझै, भजि नासी दुख पासि।।74।।
नगर विनीता मांहि जे, सुनि उपदेश रसाल।
पूर्व जन्म के पुत्र को, सुरझे तुरत दयाल।।75।।
तुछ आयु सुनि आपुनी, लयो जु अनशन सार।
स्वपच मरे देवो भयो, पुण्य रूप अधिकार।।76।।
शुनी भई नृप कन्यका, अनशन कै परभाव।
सुनि शब्द जु वा देव कौ, त्याग्यौ व्याह विभाव।।77।।
बाल ब्रह्मचर्य जु धर्‌यो, भई अर्यका सार।
तप करि पायो देव पद, शुभ की हद्द अपार।।78।।
शुनी स्वपच की इह कथा, स्वपच कहैं चिंडाल।
कुत्ती चिंडालो उभै, पायो पद जु रसाल।।79।।
जन्मांतर पाँवै तुझैं, भ्रमैं नहीं संसार।
तेरे दास जु होइ कैं, तजैं महा भव जार।।80।।
कहां कूकरी स्वपच वै, कहां देव पद ऊंच।
जन्मांतर तोसौं मिलन, तजिवौ चउ गति पूच।।81।।
तू सव करन समछ हैं, करै रंक सो राव।
तेरौ सरनौं लेइकैं, तजहीं सकल विभाव।।82।।

प्रथम धरम फुनि शुक्ल प्रभु, ध्यान देहु जगदीश।
आरति रुद्र निवारि सहु, हे जिनवर जगसीस।।83।।
शुक्ल जु लेश्या तू धरें, साकृति दशा मझार।
नांहि निराकृति पद विषै, षट लेश्या उरझार।।84।।
शुद्ध भाव भूषित तु ही, शुद्ध बोध अविकार।
परम शुद्ध नय भास है, केवल तत्त्व सु सार।।85।।
शुद्धाशुद्ध विभेद सहु, तू ही प्रगट करेय।
गहै शुद्ध कौं तू सही, नांहि अशुद्ध धरेय।।86।।
तेरी अतुल विशुद्धता, तू जु शुद्ध नय लभ्य।
तो विनु और न शुद्ध नय, तू विनु ज्ञान अलभ्य।।87।।
तू हि जु शुद्ध स्वभाव है, परम प्रभाव जिनेश।
रहित विभाव अभाव तू, अकषाई अलषेश।।88।।
तू जु शुभंयुः शुभ थकी, पहली जोरै नाथ।
शुभैं मिलावै जीव कौं, हरै जु अघ कौ साथ।।89।।
शुभ लक्षण शुभ योग तू, शुभ मनोज्ञ कौ नाम।
तोसौ और मनोज्ञ नहीं, तू हि अरोज्ञ सु राम।।90।।
शुभ कहिये तुव मत विषै, दया दांन उपगार।
व्रत शीलादि पुनीत विधि, जिनपूजा अधिकार।।91।।
शुभोपयोगी रीति ए, तू भाषै सुखदाई।
इन करि अशुभ निवारिए, अशुभ महा दुख दाइ।।92।।
अशुभ कहावै पाप जो, हिंसादिक व्यवहार।
मिथ्या अव्रत कृपणता, इनमैं शुभ न लगार।।93।।
शुद्ध उभै तैं वेगलौ, केवल रूप स्वभाव।
जा विनु तोहि न पाइए, तू जिन त्रिभुवन राय।।94।।
शुचिःश्रवा तू देव है, शुच्याचार विधांन।
कर्म सरोवर शुष्क कर, नमो नमो भगवांन।।95।।
शुष्क वृक्ष हरित जु हुवै, शुष्क तड़ाग सु पूर।
तेरे दासनि के लखें, विघन रहैं नहि मूर।।96।।

शुष्क जु सूके कौं कहैं, शुक सूवे कौ नाम।
सूखै हू सुरपद लयो, तुव पूजा करि राम।।97।।
शुक्ति सीप कौ नाम है, रजत जु रूपा नांम।
शुक्ति विषै जिम रजत मति, जड़ मति धरैं अकांम।।98।।
तिम मेरी विभ्रांत मति, पर मैं आपा मांनि।
तोहि विसारि जु वहि परी, अब करि सम्यक् ज्ञानि।।99।।
अंबुधि मैं शुक्ति जु विषै, परै स्वाति की बूंद।
होय यथा मुक्ताफला, बहुमोला निरदुंद।।100।।
घट सिंधु जुउर शक्ति मैं, तथा काल परवान।
तू वारिद बरसै जवै, अमृत बूंद विधान।।101।।
सम्यक मुक्ता फल तवै, प्रगटै अद्भुत कोइ।
ताकरि भूषित मुनिगणा, वरैं मुक्ति सी जोइ।।102।।
शूकल अश्व बुधा कहैं, वद लगाम हय होय।
तद्वत् मेरौ इह मना, थांम्यो थंभै न कोइ।।103।।
सो उपदेशक हौ प्रभू, जा करि मन बसि होय।
तुव पुर कौ मारग गहै, शूकल तात जिसोइ।।104।।

(छप्पय)

शूरो तू अतिशूर शून्यता रहित जु स्वामी।
शून्य र पूरण तु हि कर्मशून्यो अभिरामी।।
तू शूरत्व प्रधान पासि आयुध नहिं कोई।
शूल त्रिशूल न नाथ चाप षडगादि न होई।।
शूली रुद्र जु नाम, धरै त्रिशूलायुध जिको।
सो शूली तुव दास है, तू शूलीपति है तिको।।105।।
शूली बहुरि तिको हु जा सिरैं चोरहिं दैंही।
शूली सोजा समान नाम परताप जु ह्वैं ही।।
भई सुदर्शन कौंहु और भी बहुत जु ठौरा।
शूल चुभै नहि कोइ पीर व्यापै नहि औरा।।

पेट शूल सिर शूल जे, शूल सवै मिटि जांहि जी।
तुव भजि सुरक अपार, दुरक जु व्यापै नांहि जी।।106।।
शूलारोहन आदि नर्क की त्रास सु जेती।
तेरी भक्ति बिना जु मैं सु पाई बहु केती।।
शूकर कूकर योनि भक्ति विनु बहुत जु पाई।
थावर जंगम मांहि हौं जु रुलियो अधिकाई।।
शूकर कूकर स्वपच हू, तोहि जपी सुर्ग जु लहैं।
इक द्वै भव कै आंतिरै, मुक्त हौंहि सदगुर कहैं।।107।।
शूकर सिंह जु न्योल कपि जु मिलि च्यारि सु प्रांनी।
वज्रजंघ कौ दान देत देख्यो विधि ठांनी।।
करि अनुमोदन दांन सुरझिया च्यार्यो जीवा।
पूरब जन्म निहारि वोलख्यो त्रिभुवन पीवा।।
वज्रजंघ की साथि, रहे जु जन्म पर्यंत ते।
मरि कैं भोगधरा ई, तहँ तैं अपछर कंत ते।।108।।
कैइक जन्म जु भोगि सुरक सुर नर के अति ही।
ऋषभ तने सुत होय पहुंचिया पंचम गति ही।।
तू है जगत उधार नीच ऊंच जु कौं तारै।
शून्यवादि सठ तोहि लखै नहि भरम जु धारै।।
शूची सूत्र विना जु जैसे, नष्ट होइ काज न सरै।
तुव सूत्र जु विनु जीव शूची, त्यौं नष्ट होइ बोध न धरै।।109।।
शूची कौ जु प्रवेश देखि मूसल पैठांवै।
तैसे दुर्जन लोक तोहि कबहू नहि गांवै।।
शूद्रादिक हू तोहि ध्याय जन्मांतर मुक्ति।
पावैं शूम न क्रापि जगत गुर तेरी भक्ति।।
शूम जु कहिये कृपण कू, त्याग विवर्जित अधम जे।
तोहि लहैं जु उदार, दानी ज्ञानी परम जे।।110।।
शेषर जग कौ तू हि शेहुरो त्रिभुवन कौ है।
विनु ही शेखर नाथ सिद्धि को शुद्धवरौ है।।

तू जु शेमुषीशो हु शिष्टभुद्देव जु तू ही।
भजैं शेमुषीशाजु तोहि तू गुण जु समूही।।
कहैं शेमुषी बुद्धि नामो, तू दायक है शेमुषी।
तू जु शेमुषीशेश स्वांमी, अतुल बली अमित जु सुखी।।111।।
शेष अलप कौ नाम, तू जु है अल्पबहुत्वा।
कहे अशेष समस्त तू अशेष जु बहुसत्त्वा।।
तोहि जु शेस रटै हि ध्यावही तोहि सुरेशा।
गनधर मुनिवर रटैं, तोहि तू है जु जिनेशा।।
शेक सींचवे कौ जु कहौ, तू सींचे करुणा तरु।
करुणा कर करुणा निधि, करुणा सिन्धु जु तू गुरु।।112।।
शेन सिचानां नाम, दुष्ट पंखी हिंसक जो।
तिसहि आदि ले बहुत प्राणि प्राण विध्वंसक जो।।
तिहि फरसिवौ नांहि पालिवौ नांहि जु होइ।
नषिया पषिया जीव मांस आहारक सोइ।।
इनके देखे अशन तजिवौ, व्रतिनि कौं तू भासई।
मांसाहारा नारकी धारा धर्म न क्रापि प्रकाशई।।113।।

(अरिल्ल)

शैल जु पर्वत नांम मेरु तिनकौ पती।
शैलेश्वर परि न्हान करैं तू अतिमती।।
तू शैलेसी क्रिया करन जगदीश है।
शैलराज सम अचल तू हि जगसीस है।।114।।
शिशु कहिये वालो जु तासु कौ भाव जो।
शैशव कहिये नाथ सठत्व लखाव जो।।
शैशवता मैं नाथ पढ़े विद्या जिके।
विद्या के परसाद लहैं धर्म जु तिके।।115।।
शैशवता में पठन विद्या कौ तू कहै।
तो मैं शिशुता नांहि विद्या कौ पूर है।।

शैल शिखर रहि नाथ तुझै मुनि ध्यांवही।
शैल गुफा मैं पैसि तुसौं लव लांवही।।116।।
शैलसुता जो सती पार्वती नाम है।
तोहि जपै मन लाय तु ही शिवराम है।।
शैलसुता कौ धनी शंकरो तुव जपै।
तू शंकर कर साधु तोहि जपि तप तपै।।117।।
शैवादिक मत पक्ष तुझै नहि पाँवही।
तेरे दास अनन्य तुझी मैं आंवही।।
शोक रहित तू देव शोकहर भविनि कौ।
शोभा तेरै पासि तू जु हर अघनि कौ।।118।।
शोभनीक गति रूप तूहि शोभाई।
शोच न तैरे कोई तूहि सबकौ दई।।
शोकनिवार अशोकवृक्ष तुव पास है।
तू अशोककर देव सकलदुख नास है।।119।।

(बरवै)

वृक्ष अशोक र पुष्पवृष्टि तेरै जु। दिव्य ध्वनि फुनि चमर जु है नेरै जु।
सिंहासन अर दुंदुभी जु बाजैं जु। भामंडल शुभ छत्र तीन राजै जु।।120।।
तो बिनु और न प्रातिहार धर कोई। तू चउतीस जु अतिशय धारक सोई।।
तू जु अनंत चतुष्टय राजित देव। साकारोपि निराकारो हु अछेव।।121।।
शोक न शोच न शोष न तेरै नाथ। शोधन कार दयाल जु तू वड़ नाथ।।
शोभनीक नहि तो विनु जग मैं और। शोधि विचारक है जु तू हि जगमौर।।122।।
शोभित कीये तैं हि महा मुनिराज। शोषित कीये राग दोष मोहाज।।
शोणित रुधिर जु नांम तिहारै नांहि। सप्त धातु कौं पिंड न है तुव पाँहि।।123।।
क्षीर वरण वर शोणित साकृति मांहि। धरइ जु तू ही ओर सु दूजौ नांहि।।
नांहि निराकृति मांहि जु कोऊ धात। तू चैतन्य सु धात है जु विनु गात।।124।।
शूरवीर कौ भाव जु कहिये शौर्य। तू हि शौर्यधर देव सु और अशौर्य।।
शौर्यादार्य सु आदि अमित गुण पूर। गांभीर्यादि गुणाकर तू अघ दूर।।125।।

यदुकुल कौ वड भइउ जु राजा शूर। शूर तनै जे पुत्र पौत्र ते शौर।।
तू धोरी शौरीश परम भड शूर। शौरी तारे तैंहि जु तू अति तूर।।126।।
शौर्यपुरी कौ नाथ जु तू जगनाथ। तु ही द्वारिकानाथ जु नेमी नाथ।।
तु ही अजोधानाथ जु त्रिभुवन नाथ। ऋषभनाथ तू नाथ जु है वड़ हाथ।।127।।
शौरी समुद्रविजै जु अंति वसुदेव। तैं दशार्ह दश भ्रात किये सुख देव।।
शौच प्रकासी नाथ तु शौच सुरूप। सत्य विभासी देव तू शौच निरूप।।128।।
शौचाचार परायण शौचात्मा जु। तो बिनु शौच न कोई तु करुणात्मा जु।।
अंतर बाहिर शौच प्रकाशै तू हि। तू सर्वांग सु शौचो है जु समूहि।।129।।
अंतर शौच जु ज्ञान रूप निज भाव। वाहिर शौच जु पंच महाव्रत राव।।
अंतर बाह्य परिग्रह तजिवौ शौच। तेरौ ध्यान जिनेश है जु अति शौच।।130।।
लौकिक शौच जु दर्भा जल मट्टी जु। ज्ञान विना नहि शौच जु मल कट्टी जु।।
हमैं देहु निज शौच जु जगपति देव। हरे मलिनता हरि वर दै निज सेव।।131।।

(छप्पय)

शं कहिये सुख कौं जु तू जु शंकर जिनदेवा।
शं भव शंभु अदंभ है जु बिनु भ्रांति अछेवा।।
शंकर शंवद पूजि तू जु सुख कौ है मूला।
शंकर शेस सवै जु तोहि पूजैं जिन थूला।।
तू जु शंकरी शक्ति धारें, तीन शल्य वर्जित सही।
शंखादिक जे सकल वाजा, बाजैं तेरै श्रुति कही।।132।।
तेरै शंका नांहि तू जु निःशंकित देवा।
अष्ट अंग सम्यक तू हि भासै अति भेवा।।
शंख बजै घरि भवनवासि देवनि कै स्वामी।
कलपवासि घर घंट बजै रव अति अभिरामी।।
ज्योतिष घरि हरिनाद होई, विंतरघरि पटहौ बजै।
तेरे पंचकल्याण मै है, स्वयमेव हि धुनि अति सजै।।133।।
पंचानन शंषो जु वस्तु है देव पुनीता।
ताकौ धारक तोहि ध्यावही हरि जु सुनीता।।

हल कौ धारक हली तोहि सौं तन मन लावैं।
चक्री वज्री सर्व तोहि कौं जपि सुख पावैं।।
शंख रूप तू नांहि देव, ऋद्धि सिद्धि वृद्धि भर्यो।
नमन दिगंबर ज्योति धारी, लक्ष्मीकांत सु विस्तर्‌यो।।134।।

(दोहा)

बारम मात्रा शून्य ह्वै, तू नहिं शून्य जिनिंद।
शून्यवादी तोहि न लहै, तू पूरण सु मुनिंद।।135।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

(सवैया इकतीसा)

शक्तिनि कौ पुंज तू हि शांत दांत है समूहि,
शिवरूप लोक कै शिखरि तू विराजई।
शिखामनि सबनि कौ सुशील कौ निकेतन तू,
शील रूप शुद्ध रूप शुद्धता समाजई।।
शूरवीर धीर वीर शेमुषी प्रदायक है,
गुननि कौ शैल तू अशेष रूप राजई।
शोक हरै रोक हरै शौच कौ जु सागर तू,
शंकरो जिनिंददेव शून्य विभु नासई।।136।।

(कुंडलिया)

तेरी नाथ जु शांतता, अतुल शक्ति सत्ता जु।
लक्ष्मी श्री संपति रमा, तुव रूपैं रत्ता जु।।
तुव रूपैं रत्ता जु तो बिना भिन्न न लसई।
द्रव्य अस्तिता देवि वस्तुता तौंमैं वसई।।
वहै भवानी भूति शुद्धता शांति घणेरी।
भाषैं 'दौलति' ताहि शांतता नाथ जु तेरी।।137।।

इति श्री शवर्ण संपूर्णम्।



आगें षकार का व्याख्यान करै है—

(श्लोक)

ष परोक्षे समाख्यातः, प्रत्यक्षोसि त्वमीश्वरः ।
षा चल लक्ष्मी समाख्याता, सा स्वसत्ता प्रकीर्तिता ।।1 ।।

(सोरठा)

ष कहिये श्रुति मांहि, नांम इहै जु परोक्ष कौ ।
तू परोक्ष प्रभु नांहि, है परतक्ष जिनेश तू ।।2 ।।
अनुभवगम्य अगाध, वचनगम्य तू नाहि है ।
दोय स्वरूप अगाध, सदा प्रतक्ष परोषि तू ।।3 ।।
द्वै विधि ज्ञांन प्रमांन, प्रत्यक्षो जु परोक्ष वा ।
तू केवल विज्ञान, सव भासी निज रूप तू ।।4 ।।
तू षट लेश्या वीत, षट् कर्म जु तेरै नहीं ।
भ्रष्ट कर्म विपरीत, तोहि छुवै नहि क्रापि हू ।।5 ।।
षट सु कुलाचल सोइ, सवै तीस कुल पर्वता ।
इक इक मंदिर सोइ, तेरौ वनमैं सांइयां ।।6 ।।
निज षट कारक तू जु, पर षट कारक वर्जितो ।
कर्ता कर्म जु पूज, करण संप्रदानो तु ही ।।7 ।।
अपादान अधिकर्ण, ए षट कारक नाम हैं ।
तेरै जन्म न मर्ण, नित्य जु षट कारक मई ।।7 ।।
षट वृद्धि षट हांनि, सब द्रव्यनि मैं तू कहै ।
गुण परणति परवानि, सूक्ष्म चरचा अति इहै ।।8 ।।
षट् आवस्यक धार, मुनिराजा तोकौ जपैं ।
तू स्वामी भवपार, षटकु सारिका तुव रटै ।।9 ।।

षट षंडेश्वर दास, जाके सो तू देव है।
षट द्रव्य जु परकास, दयापाल षटकाय है।।10।।
रक्षक षट काया जु, जाकौं पावैं साधुगण।
भुक्ति मुक्ति दाया जु, सौं जग जीवन देव है।।11।।
षट् काला जु विभास, सदा षडभी रहित तू।
षट भाषा परकास, षट रस रहितो तू सही।।12।।
जे षडांग सेना जु, धारैं चक्री हरि वली।
तू आतम सेनां जु, तोहि जपैं सेना धरा।।13।।
षटद्रव्यनि मैं और, तो सौं कोइ न दूसरौ।
सब द्रव्यनि कौ मौर, षट नृप विद्या भासकर।।14।।
षट रागा परसिद्ध, रागिनि मिलि षटतीस सहु।
तजि कैं रागविरुद्ध, सब रागा भासै तुही।।15।।
करिकै राग अलाप, तोहि रटै इंद्रादि का।
तजि कैं सकल विलाप, तोहि चितारै ऋषिगणा।।16।।
षटदश सहस जु नारि, जाकै सो तोहि जु रटे।
षटदश भूषण डारि, तू बैठै योगीश्वरा।।17।।
षटदस भावन भाय, तेरौ पद पावैं मुनी।
तू त्रिभुवन कौ राय, षटदश भावन भावको।।18।।
षटदश सुर्ग प्रमांन, नव ग्रीवा नाव नुत्तरा।
पंचानुत्तर जान, सवकै ऊपरि तू रहै।।19।।
व्याप्यो सब मैं नाथ, तू निर्मल अचलाशनो।
पर रहितो अति साथ, कंचन षटदस वानि कौ।।20।।
षटदश कुलकर नाथ, भरथ चक्रि लों तू कहै।
तू तारक वड हाथ, षट दस हतै कषाय तू।।21।।
षट दस ध्यान कहै जु, आठ त्यागि आठ हि दिसै।
आप अलिप्त रहै जु, धारण ध्यान सु ध्येय निज।।22।।
षट दस प्रकृति नसै जु, प्रथम गुणस्थाने सही।
तव ऊपरि विलसै जु, ऐसे भेद जु तू कहै।।23।।

बहुरि वारमैं ठाण, षटदस क्षपि केवल लहै।
तो बिनु कौन वषाण, करै सकल चरचानिकौं।।24।।
षटविंसति प्रकृति जु, मोह तनी तू ही हतै।
अठवीसा निहती जु, मोह विदारक देव तू।।25।।
एक मिथ्यात तनें जु, तीन भेद करिये जवै।
तव अठवीस गने जु, नांतरि षटविंसति सही।।26।।
चउथी ग्रीव जु नाथ, आऊ षटविंसति उदधि।
करिकैं अति तप साथ, जीव गयो नव ग्रीव लौं।।27।।
इकविंसती उदधी जु, भुगती आयु जु तौ कहा।
तो बिनु मुक्ति न लीज, मुक्ति प्रदाता मुक्त तू।।28।।
षटत्रिंसत गुणधार, आइरिया तोकौं जपैं।
तू त्रिभुवन मैं सार, षटत्रिंसत गुण दायको।।29।।
षटत्रिंसत प्रकृति जु, नवमैं ठाण मुनी हतैं।
ह्वै कै अनिवृति जु, निरवरतैं जगजाल तैं।।30।।
तेरे ध्यान बिना न, प्रकृति क्षपैं नहि क्रापि हू।
तो बिनु और गिनान, भवहर्ता शिवकारको।।31।।
त्रिक शत अर षटतीस, मतिज्ञान भाषैं तु ही।
सन्निपात षटतीस, हरै तु ही दे निज रसा।।32।।
कारण षटतीसा जु, है निगोद दाता जिके।
तजहि जु अति धीशा जु, तेरे दास विकल्मषा।।33।।

(दोहा)

षटचत्वारिंसत गुणा, धरै जु तू गुण रूप।
अमित गुणातम है गुणी, पर गुण रहित स्वरूप।।34।।
षटपंचास कुमारिका, देवी रुचिकनि वासि।
तेरी नाथ सुदासिका, तू पूरण सुख रासि।।35।।
षटषष्टी सागर कही, भव थिति तैं उतकिष्ट।
जाकै षट क्षय इक उदै, ता वेदक की शिष्ट।।36।।

जाकी सातौं क्षय गयी, सो क्षायक परवांन।
अैसौ सम्यक और नहि, तुरत देय निरवान।।37।।
रहै कदापि जु भव विषै, तौ सागर तेतीस।
दोय कोड़ि पूरव अधिक, पछैं मिलै जगदीस।।38।।
जाकी सातौं उपशमी, सो उपशमधारी जु।
पहली उपशम ही हुवै, शिवदाता भारी जु।।39।।
उपशम वारौ जग विषै, रहै कदापि घनौं जु।
अर्द्ध जु पुदगल प्रावतन, आगै नांहि गिनौं जु।।40।।
ऐसे भेद दयाल जी, तो विनु कौन कहेय।
मिथ्या कौ जु छुड़ायकै, को सम्यक्त जु देय।।41।।
षटषष्टी जु हजार औ, त्रिक शत परि षटतीस।
क्षुद्र मरण जीवा करैं, तू भाषै जगदीश।।42।।
अंतर्मुहरत मांहि जिय, एता मरण करेय।
तेरी भक्ति विसारि कैं, देह निगोद धरेय।।43।।
तू टारै दुख सकल ही, अजरामरण करेय।
तेरे दास न दुर्गति, लहहि सुसूत्र कहेय।।44।।
षटहत्तरि लक्षा प्रभू, तेरे मंदिर ठीक।
दीप कुमारनि कैं घरां, श्रुति भाषै तहकीक।।45।।
एतेही उदधीनि कै, तडितकुमारनि कै हु।
मेघकुमारनि कै बहुरि, अगनिकुमारनि कै हु।।46।।
दिककुमरनि हूं कै इते, छह ठौरै एता जु।
तेरे सौध अकर्तृमा, पूजे देव समाज।।47।।
षट अस्सी के अर्द्ध जे, तीयालीसा होइ।
एती प्रकृति न बंधई, चौथे ठांणि जु सोई।।48।।
चौथे ठांणि जु सम्यकी, लघुनंदन तेरे जु।
देशव्रती इन तैं बड़े, जिनि अव्रत घेरे जु।।49।।
मुनि तेरे बड़ सुत प्रभो, सब करि पूजि तिके जु।
सर्व लोक कौ छांड़ि करि, तेरे हाथ बिके जु।।50।।

षण्णवती लक्षा सही, तेरे चैत्य निवास।
पौंन कुमारनि कैं घरां, सुर पूजित अतिभास।।51।।
षण्णवती जु सहस्र सहु, नारी तजि चक्री जु।
होइ दिगंबर तुव भजै, तू जु धर्म चक्री जु।।52।।
षष्टि नाम है साठि कौ, साठि हजार जु पूत।
जाकै सौ सगरौ तुझै, ध्याय भयो अति पूत।।53।।
षट्वा नाम जु षाट कौ, षट्वा शयन न योज्ञ।
व्रती ब्रहमचारीनि कौं, तू वरजै जु अरोज्ञ।।54।।
भूमि शयन ही योज्ञ है, व्रतिनि कौं जु सदैव।
ब्रह्मचर्य की रीति सहु, तू भाषै जग दैव।।55।।
परनारी जा परि सुवै, षट्वा पार तनी जु।
परदारा त्यागिनि कौं, होइ कदापि न लीज।।56।।
षवरि परै जगनाथ जी, तेरी केवल मांहि।
बिनु केवल पूरी षवरि, छदमस्थनि कौं नाहि।।57।।
खपै चित्त अभिमान कौं, सुख अभिलाषी होइ।
पै तो विनु कर्म न क्षिपै, दुखी होइ अति सोइ।।58।।
मोहि षफीफ जु अति कियो, मोहादिक मिलि अष्ट।
बहु भरमायो षलक मैं, दियो महा अति कष्ट।।59।।
तव षराव हाली मिटै, जव पकरै तू हाथ।
षवरदार तू षलक कौ, सकल तिहारै साथ।।60।।
षड़ का पूला मांहि ज्यों, लगी अगनि भवकै जु।
भस्म करै षड़ पुंज कौ, कछु बाकी न धरै जु।।61।।
कर्म भये षड़ पूंजला, तुव ध्यानो हुतभूज।
तुरत जलावै जड़ सवै, राखे लेश न हूज।।62।।
षस षस का दाना हु तैं, मैं अति नानौ देह।
धर्‌यो बहुत वारैं प्रभू, करि विषयनि सौं नेह।।63।।
जाकरि तनु धरिवौ मिटै, कटै जगत की पासि।
सो निज रूप दिखाइ कैं, राखि आपुनैं पासि।।64।।

खस की टाटि फरसि ज्यौं, लू सीतल ह्वै जाइ।
त्यौं इह दुखिया जीव प्रभु, तोहि मिलें सुख पाय।।65।।

(सवैया तेईसा)

ष कहिये लषिमी कऊ नाम जु, तू लखिमीधर देव जिनेशा।
षाप न खड्गा न म्यांन न तेरहि, चाप न रोप न एक अशेषा।।
षाप न तो महि तू अति शुद्ध जु, ख्याल न क्रीड़ न लोक नरेशा।
षासन सासन वासन हू नहि, आशन दिच्छ धरें जु अलेशा।।66।।
षाज न पीज न लेन न देन न, राज न काज न साज न वाजा।
गांन न तांन न मांन न कांनि न, धान न यान न तू अतिराजा।।
षाल न रोम न अस्त्र न वस्त्र न, देह न नेह न आप विराजा।
थाहि न भाहि न ज्ञान अनंत जु, षाम षयाल न तू भवपाजा।।67।।

(सवैया इकतीसा)

हौं जु पर्‌यो षाड मांहि नीकलिवे सक नाहि,
षांचौ अतिपर्‌यो नाथ मोमैं कण नांहि जो।
लूट्‌यो मोहि कर्मनि नै ज्ञान घन सवै लेय,
षाली हाथ कियो देव धर्‌यो वंदि मांहि जो।।
षाड तैं निकासि अर षांचौ सब मेटि मेरौ,
षाली कौं जु पूर करि राषि निज पाँहि जो।
षातरि मुस्याल करि हमरी जिनिंद देव,
तोहि जपि तिरें नंत यामैं सक कांहि जो।।68।।
षांडौ देहु ध्यान कौ जु करम समूह हरे,
षाग त्याग दोऊ अति तेरै तू सुभूप है।
तेरी षाग आगै सब भागे जू विभाव भड़,
तेरे त्याग आगै रोर रहै ना विरूप है।।
त्यागी तू विकारनि कौ नायक गुननि कौ जु,
षांवद षलक कौ जितेश्वर अनूप है।

षादि औ अषादि कौ विवेक तो बिना जु कौंन,
कहै जगदीशराय तूही जो निकूप है।।69।।
षांड गुड सिता आदि मीठै कौ वनिज सब,
हिंसा को स्वरूप तू ही वरजै दयाल जी।
धान पान मोम और मादिक वनिज निंदि,
लूण घी वनिज का विनिंदै तू कृपाल जो।।
हींग तेल लोह लाष साबुन औ नीलि काठ,
इन के जु वानिजा लहै न ज्ञान माल जी।
पसू देहि भाड़े और पसूकौ वनिज करै,
कुगतिके पाँत्र वै कहै जु तू विशाल जी।।70।।
जहां है निरंतर ही आगि कौ प्रचार सौ हु,
वनिज न तेरे मत भाषै गुरदेव जी।
कूप औ तडाग वापी सोषिवौ न तेरै मत,
हिंसक कौ पालिवौ न राषै तू अछेव जी।।
जेवरा रसा जु गूंद चीढ़ हरतार निंदि,
वनिज करैया दुख पावैं अति भेव जी।
मधु औ हरिनि कौ वनिज अति ही जु निंदि,
रंग औ किरानांनि कौ वनिज न लेव जी।।71।।

(दोहा)

षाई षाष जु हाट मैं, वणिज कारणैं अन्न।
कब हू दसन संग्रहै, सुनि तुव सूत्र अछिन्न।।72।।
अन्न दान करिवौं सदा, याकौ वनिज अजोज्ञ।
जीव दया कै कारणैं, तू वरजै सु अरोज्ञ।।73।।

(त्रिभंगी)

मणि कंचन रूपा बनिज निकूपा, श्रुति जु निरूपा, गृस्थनिकौ।
फुनि रूई कपरा इन बिनु सगरा, बरजइ सुगुरा, वणिकनि कौं।।

तजिवौ त्रसघाता, अति उतपाता, नर्क जु दाता, अति निंद्यो।
इह अखिल विभेदा, तुझ करि वेदा, तूहि अछेदा, जगवंद्यो।।74।।
नहि कोट जु षाई, पउरि न गाई, अद्‌भुत राई, तू सिद्धा।
अरहत में सब ही, अति गति फवही, कसर न कब ही, तू वृद्धा।।
तजि मलमल षासा, अति हि उदासा, नगन निरासा, दिगवासा।
इक जप हि जु तोही, अति निरमोही, तजि हि सवो ही, जिन दासा।।75।।

(दोहा)

सेवत ही लागैं भले, विषया दुरक निदान।
षाजि षुजावत ही भली, फुनि दुख अति ही जान।।76।।

(भुजंगप्रयात)

इहै षाजि तुल्यो जु कामो गुंसाई। महा आपदा मूल मेटौ असाई।।
सही षाक तुल्या हि लौकीक माया। तु ही रत्नतुल्यो जिनाधीश राया।।77।।
नहीं भक्षयोज्ञा हु षाटा जु वोया। जिके षांहि मूढा तिनैं जन्म षोया।।
तुही नाथ वर्जै सवै पाप भेदा। तुषा सा दयापाल देवो अषेदा।।78।।
नही षासषाई न व्यापार अन्ना। तिहारे सुपंथे कदापि न लिन्ना।।
जिके षाय रूका जु टूका अराधैं। तुझै ते हि निर्वाण पावैं अबाधै।।79।।
मुझै पौदगली वर्गणा षात षातै। गयो नंत कालो लही कर्म घातै।।
तऊ त्रिप्त नांही भयो हौं विमूढ़ा। अबै त्रिप्त कारे जिनाधीश गूढ़ा।।80।।
इसौ कारि त्यागे सवौं कौ तुझै ही। भजौं देव त्रिश्ना तुझी तैं बुझै ही।।
इकै तोहि वोकौ सवै दौष रौकौं। करे कल्पना जाल वीतो तु मोकौं।।81।।

(सवैया तेईसा)

षा सर एक है नहि मो महि कारि असौ जगदीश अछेवा।
षात समांन सवै जग त्यागि जु तात तुमैं हि गहौं सु अभेवा।।
कासन स्वास न रोग न मृत्यु न दासनि कै घटि हो इन देवा।
षानि अनंत स्वभाविनि की तुव देहु जिनिंद हमैं निज सेवा।।82।।

षाय न धाय न जाय न आय न गाय न राग तुही जु विरागा।
और नहीं रस षानि तु ही इक खालिन तेर हि तू हि सभागा।
पाप न पुण्य न मोह न छोह न कर्म न भ्रम न एक न लागा।
आधि न व्याधि न होइ उपाधि न आनंद रूप प्रभु निति जागा।।83।।

(सवैया इकतीसा)

षासी षैन मिटि जाय सवै फैन घटि जाय,
क्रोध मैंन हटि जाय तेरे जिन नाम तै।
कीये कर्म कटि जाय, माया मोह दटि जाय,
राग रोष लटि जाय रावरे सुधांम तैं।।
भौथिति विघटि जाय पुग्गल बिछटि जाय,
तिमर गुमर फटि जाय तुझ राम तैं।
सवै भ्रांति छुटि जाय मिथ्यात निसटि जाय,
तेरै ही निकटि जाय तेरे गुनग्राम तैं।।84।।

(सोरठा)

षिरक न षिरकी एक, नांहि षिसांनौ जो परै।
देय महा स्वविवेक, षिस्यो न काहू काल जो।।85।।
षिरौ न कबहू नाथ, षिज्यो न षिजिहै जो कभी।
वह जगपति अति साथ, निज गुण रूप निरजंना।।86।।

(भुजंगी)

षिजै नां वकै नां तुही जो दयाला। क्षमा रूप स्वामी सवै दोष टाला।।
षिसायो षिसै नांहि तू लोक धाता। षिजायो षिजै नांहि तू सर्वज्ञाता।।87।।
षिनायो न जावै वुलायो न आवै। षिसांने परे कर्म जापैं न जावैं।।
क्षरायो क्षरे नांहि नित्यो सदा ही। षिलायो न षेलै हिलै नां कदा ही।।88।।
षिलायो मिलायो किनी नैं न साई। क्षपाये बुरे कर्म जानैं सबोई।।
न होई जु ग्रस्तो न होई सु जाकै। लषै सर्व कौ मोह माया न ताकै।।89।।

.....।
नहीं गोधना षिर्क होई कहांतै। महापुष्ट तुष्टो युगादी सदा तैं।।90।।
तु षीरादि नीली हरी सर्व निंदै। जषीरा न तेरै तुझै साधु बंदै।।
जषीरा लिये पुरैं नांहि आवै। छड़ा होइ साधु तुझी कौं जु पावै।।91।।
न षीजै न रीझैं न छीनै कदापी। न षीसै न रीसै न दीसै उदापी।।
न षीसा न वागा न अस्त्रा न शस्त्रा। नीराग योगीश नग्नो अवस्त्रा।।92।।

(सोरठा)

करै महा उपगार, नांहि षिसानौं कोइसौ।
ले पहुँचावै पार, षिस्यो न षिसिहै ना षिसैं।।93।।
षिजै न काहू सौं जु, षिज्यों न षिजिहै जो कभी।
करै जु साहू कौं जु, निजगुण रूप निरंजनां।।94।।
षिस्ती परै न बात, जाकी जा घटि तू वसै।
तोसौ तू ही तात, घात न काहू की करै।।85।।
षिरक समानो देह, पशु सम ए इंद्री गणा।
इन तैं करि सठ नेह, तोहि वीसरे नाथ जी।।96।।
पशु रहने की ठौर, कहै षिरक गोपालका।
इंद्रिनि से नहि और, पशु जगत में दूसरे।।97।।
गो पशु हू कौ नाम, इंद्रिनि हू कौ गो कहै।
अद्भुत पशु ए राम, चरै अतृप्ता विषयत्रिण।।98।।
अथवा मूरिष लोक, हम से तेई पशु भये।
विसरे तुव गुण थौंक, बंधे घर षिरक जु विषै।।99।।
तेरै षिरक जु नांहि, गोधन कौ संग जु नहीं।
तू निज षिरकी मांहि, बैठो सबकौ देखइ।।100।।
झांकी कौ षिरकी जु, कहैं लोक भाषा विषै।
गेह न देह न लीज, तेरै षिरकी ह्वै कहाँ।।101।।
बहुरि पौरि कै होइ, षिरकी आव न जान कौ।
तेरै पोरि न कोई, कोट कपाट न षातिका।।102।।

समवशरण में होइ, तीन कोट अर षातिका।
बड़ी पौरि अधिकोइ, सेवै सुर नर मुनिवरा।।103।।
सिद्ध दसामै नाथ, मिलै न पर कौ लेश हू।
लिये ज्ञान सुख साथ, अमित गुणातम तू लसै।।104।।

(भुजंगप्रयात)

षिनायो न जावै बुलायो न आवै। तिहारौ सदा भाव तोमैं लषावै।।
षिसाने परे काम क्रोधादि तो पै। कभी नांहि दासांनि सौ युद्ध रौपै।।105।।
षिजाये षिजै नांहि तेरे जु दासा। लिये शांतता देव राजै उदासा।।
तुही है परात्मा निजानंद मग्नो। चिदानंद देवो जिनाधीश नग्नो।।106।।
षिलायो षिलै नांहि तू कोइ कौ जी। मिलायो मिलै नांहि तू लोय कौ जी।
षिरायो षिरै नांहि तू काल कौ जी। दुरायो दुरै नांहि जंजाल कौ जी।।107।।
षिपाये सवै कर्म तैं देव देवा। नसाये सवै भर्म तैं वीत छेवा।।
सिषायो पढ़ायो किनी नैं न तोकौं। विना सीष तू विज्ञ तोकौं जु धोकौं।।108।।
न षीजै न रीझैं न छीजै तु ही जो। सदा एक भावो प्रभू है सही जो।।
तु षीसा महैं नाथ लीयें सवौं कौ। करै पार स्वामी तु ही जो मुन्यौ कौं।।109।।
न षीसा जु तेरै न वागा न रागा। न शस्त्रास्त्र धारें तु ही वीतरागा।।
जषीरा न कोइ तु ही है छड़ा जो। इसौं कौंन सावंत तोसौ लड़ा जो।।110।।
जिके तीन शल्या जु षीला समाना। चुभी जीव कै नादि तै दुरक दाना।।
तिके तू हि काढै तू ही है निशल्यो। महा मोह वीतो प्रभू है अतुल्यो।।111।।
न लीला न हीला न षीला जु तेरै। नहीं तो विना नाथ धर्मैं जु प्रेरै।।
दही षीचरी मेलि भक्षं ण होई। द्विदाली दही तक्र वर्जे तु सोई।।112।।
नहीं षीचला भक्ष होइ कदापी। न षीरादि नीली हरी भक्ष क्रापी।।
सुने जु तुम्हारी प्रभू जैन वांनी। ग्रहैं भव्य जीवा सवै दोष भांनी।।113।।
नही आदरै जे तुम्हारी सु आज्ञा। तिके मूढ़ जीवा महामंद भाग्या।।
नहीं तोहि पावैं कदाची जु पापी। जिके षीजि टारै तिके धर्म धारैं।।114।।
षुसैं नांहि तेरौ कछु भाव क्रापी। सदा तिक्त दोषो तुही है निपापी।।
षट्ट कै महा तू विमोहस्सहीये। षुट्ट कै महादेव कामस्स जीये।।1115।।

षुसी तू सदा देव षुस्वोइ पूरा। षुसी कौंन कारै विना तो सुशूरा।।
षुस्याली करै तू विहाली हरै तू। निरोमाल तू ही निजाली धरै तू।।116।।
षुचै नांहि तेरै पदैं मोह फांसा। षुभैं नांहि तेरै उरै भोग धांसा।।
षुचै नांस कौ चैतु व्याख्यानकर्ता। षुसै नां लुटै नां तु ही पापहर्ता।।117।।
षुलै भ्रांति ग्रन्थी जु तेरै प्रभावै। षुसै कर्म सेना सबै तो लषावै।।
षुटै पाप तापी जु तेरै प्रतापैं। लुटै लोभ पापी जु तेरे अलापैं।।118।।
छुटै जीव भौथी सु तेरी दया तैं। जुटै जीव तोसौं जु तेरी मया तैं।।
जु षुर्मा जु नर्मा सवै स्वाद त्यागै। तिहारी षुसांमद्दि मांहै जु लागैं।।119।।
तवै जीव जीवै सब ही ह्वै षलासा। षुला तू जु सर्वांग सर्वज्ञ षासा।।
षुलासा इहै हू तथापी स्व भूली। फस्या साभया नाथ तो प्रातिकूली।।120।।
तिहारी जु षूवी सु सर्वत्र स्वामी। उधारै जु दासा प्रभू अंत्रजामी।।
सुनी मैं सु षूवी तवै द्वारि आयो। महाभाग तैं देव तू नाथ पायो।।121।।
सू षूब तिहारी हमैं जौ उधारै। हमारी क्रिया पैं प्रभू नां निहारै।।
न षूषौ परै क्रापि तेरौ सु नग्रा। तु ही जागृति ज्योति धारें सुउग्रा।।122।।
न षूटै कदे हू तिहारी विभूती। न षूषी परै नाथ तेरी प्रभूती।।
नहीं षून होवैं तिहारी पुरी मैं। न तूं क्रापि होई प्रभू जी बुरी मैं।।123।।
न षूंनी पहुंचैं कदा काल तोमैं। न तो वाहिरी और शक्ति जु मोंमैं।।
करैं षून भौमें जिके मोह आदी। तिनैं रावरे दास नासैं अनादी।।124।।
किया षूंन मेरा जु मोहो कहावै। सबै ज्ञान आदी अनंता नसावै।।
तु ही मोह षूनी जु कौ देसजा जो। कहैं का तुझै देव तेरी रजा जो।।125।।
जवै नाथ षूटै महा मोह ग्रन्थी। हदी तू विराजै तवै बीतग्रन्थी।।
मुझै देव षूचैं विभावा अनेका। करै पार तू ही इनौं तैं विवेका।।126।।
महा मूढ़ मैं जो विषै पंक मांही। जु षूंतों सु गूंतो न पौंच्यौ घराही।।
नहीं तो बिना पंक तैं कोइ काढ़ै। न तो वाहिरौ कोइ भ्रांती जु बाढ़ै।।127।।
धरां जे पहू तात जे भो वनां जे। तुझै लेय आगू मुनी बोधनां जे।।
नहीं षूव तोसा जु दूजा सवौं मैं। सबौ तैं छुड़ावै तु ही लेय तौ मैं।।128।।
चरे षूदि इंद्री तुरंगा विषै की। मनां के जु प्रेरे गहैं राह षैकी।।
फिरायो इनैं ही मुझे लोक मांही। छुड़ावै इनौं तैं तु ही सक्क नांही।।129।।

न षेस्यो षिसैं तू महा लोक षेवा। न मेढयो मिटै क्रापि तू एक देवा।।
न षेयो कदे दुरक तैं सौषि पिंडा। तुही है जिनाधीश ईशो अपिंडा।।130।।

(त्रिभंगी)

नहि खेल जु खेला जड नहिं भेला, कर्म उखेला जगदेवा।
प्रभु है जु अछेहा रहित जु खेहा विगत सनेहा शिव देवा।।
सबद वितीता जगत अतीता, है जु अतीता, जिन देवा।
किनहीं नहीं खेस्यो, श्रुति उपदेस्यो परम अलेस्यो, यतिदेवा।।131।।
नहीं कोई जु खेमा, रहित जु प्रेमा, अतिगति नेमा, अतिक्षेमा।
नहिं खेट जु खेडा रहित बखेडा, अति ही नेडा, अति प्रेमा।।
तुझ पुर नहिं खेला, मिलइ न खैला, कबहु न मैला, मग पावै।
नहिं रोग जु षैना रहइ न फैना, तुमरे वैना मुनि ध्यावै।।132।।

(सवैया इकतीसा)

खेल नांहि तेरे जिन मारग मैं एक प्रभु,
फैल नाहि तेरे श्रुति मांझ कभी पेखिये।
खैंचि लेय तू ही शिव लोक मांहि जीवनिकौ,
खैर औ सलाह कौ स्वरूप तू हि देखिये।।
खैंचिखांचि तेरे दरबार मैं न दीखे देव,
मोह खैंट के विडार आप रूप लेखिये।
खूवी खुसवोइ कौ जु पुंज निजकुंज नाथ,
खैर की जु और एक तैंरै ही विसेखिये।।133।।
खैट कौ विलोकि जैसे चोर की जु भ्रांति आनि,
राति कौ वटोही महा भयो जु विरूप है।
लीनी नांहि सुख नींद देखि देखि डर्यो वाहि,
तिमिर के जोर मैं न वोलख्यो स्वरूप है।।
तैसे माय निसि मांहि पुग्गल कौ आप मानि,
भ्रांति मैं विभूलौ जीव लह्यो ना अरूप है।

जवै तू त्रिलोक भानु तिमर गुमर हरै,
तवै जीव शुद्ध बोध पावै जो निकूप है।।134।।
षोडस ही कारण कौ कारण जु तू हि नाथ,
कारण औ कारिज प्रकाशक तु ही सही।
खोडानि की खोडि मोटि पाव तू ही देय देव,
अंधे न कै आंषि होइ तेरे परसाद ही।।
खोट नाहि तैरै अर चाल खोटी नाहि कोइ,
खोटे जीव तोहि सु लहै न गुर यौ कही।
खोज शिव मारग कौ तैरैइ जु हाथ देव,
खोजि जिनमारग कौ तू ही है जु एकही।।135।।

(दोहा)

षोडश सुर्ग जु लोक कौ, दायक तू इक होइ।
तो विनु षोडस वानि कौ, कंचन और न कोई।।136।।
षोडस तिथि परकास तू, षोडश कला सु चंद।
अमित कला जिन चंद तू, निरदोषी निरदुंद।।137।।
षोडश शृंगारा तु ही, तजि बैटौ निरग्रन्थ।
महासती षोडश सही, तिनि पायो तुव पंथ।।138।।
ब्राह्मी चंदन बलिका, राजी मति सीता जु।
द्रौपदी और मृगावती, कौशल्या सुलसा जु।।139।।
शिवा सुभद्रानल प्रिया, कुंती चेला शुद्ध।
पद्मावत्त्य प्रभावती, सुंदरी है जु प्रबुद्ध।।140।।
इन सम नारी को नहिं, महाशील की खानि।
इनकौ जस कीर्तन करैं, भुकति मुक्ति के दानि।।141।।
चौवीसों तीर्थंकरा, द्वादश चक्री होइ।
नव हरि नव अरि नव हली, ए त्रेसठ अति कोई।।142।।
इन सम नर नहि लोक मैं, ए नर पति परवीन।
जिन मारग की धुरधरा, पूजि पुरिष निज लीन।।143।।

तू सव मय ए तो मई, इनकै तेरौ गान।
तू सिद्ध जु परमात्मा, सकल पदारथ जान।।144।।
मोहू करि हरि आपुनौ, ज्यौं तैं किये अनंत।
तेरौ शरणौ मेहि दै, सुनि विनती भगवंत।।145।।

(सवैया इकतीसा)

खोले धरे मैं अनंत आवत न छेह कभी,
खोज नांहि पायो मोक्ष मारग कौ मैं कभी।
तेंरै ही प्रसाद नाथ खोज निज आवै हाथ,
पाऊँ शिव सथ सही हौ हमैं सदा अभी।।
खोहा दूध पैड़ादिक त्यागि कै सुपुष्टरस,
सूक्ष्म आहार लेय जपैं साधु ह्वै जभी।
तबै तोहि पावै देव तेरी निति करै सेव,
तोही तै अभेव हौहि त्याागि कै शुभाशुभी।।146।।
खोहरै पहार कै निवास करि जपै साधसु,
खौरिमै इकंत बैठि तोही कौ चितारही।
खौरि काढि चंदन की वंदन गृहस्थ करैं,
साधु गण तिलक न खौरि कभी धारही।।
खौरकु जु मांनि तेरी भागे काम क्रोध छल,
तोहि लखि जोगिय जु हौंहि भव पारही।
खौंच नाहि तैंरै कोऊ खौफ न कभी जु होऊ,
तेरे दास होइ मुनि मोह कौ जु मारही।।147।।
षंढ वै ही कहें जे तेरी नांहि करै सेव,
षंढ जे करै तु सेव षंढ नांहि वै नरा।
षंजनि की षंजता जु तोहि तैं मिटै सुदेव,
अंजन वितीत तू निरंजन प्रभाधरा।।
खंज नांव पायही न सौ तौ पावैं पाव नाथ,
खंज जेमर्मोनोलापषि नैंनं ऐन है परा।

तेरी सी न चक्षु भी न खंज औ चकोरनि की,
मृगनि की चक्षु जीत चक्षु तेरी है गुरा।।148।।
चक्षु नाहि तैंरै तू अत्यक्ष है जिनिंद देव,
सरवंग चक्षु तू हि केवल महोदरा।
अरहंत पद मांहि साकृति स्वरूप तू ही,
सिद्ध है निराकृती जहां न कोइ वोपरा।।
ज्ञान कौ समूह ज्ञानगम्य है तु ही सुदेव,
ज्ञेय कै प्रमाण ज्ञान रूप है नभो दरा।
नभ कै प्रमाण तू ही लोक मान नर मान,
है अमान आपमान धर्म कौ सहोदरा।।149।।
खंखता हरण देव खत दत नैक भेव,
खंड खंड जस तेरौ छाय रह्यो नाथ जी।
खंध तैं अतीत तू हि वर्ग वर्गणा समूहि,
तेरे निज भाव मांहि नांहि जड साथ जी।।
स्पर्द्धका न तेरे खंध देस न कदापि कोई,
खंध पर देस कौ न लेश वड हाथ जी।
एक परमाणु कौ न तो मैं कहूँ अंस नाथ,
द्विणक सकंध कौ न बंध तैंरै पास जी।।150।।

(दोहा)

षष्या पासि दु शून्य जो, बारम मात्रा होइ।
सव मात्रा मैं एक तू, ज्ञान मात्र निज सोइ।।151।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त मैं—

षट्द्रव्य भासक तू खानि गुन नंतनि की, खिसायो खिसै जु नाहि षीजि रीझि नाहिं जी।
खुल्यो तू न बंधै कभी खूवी खुसवोई भयो, खेवा नांहि मिलै तो सौ भवोदधि मांहिजी।
खैल नाहि फैल नांहि खैर की जु ऐर, तेरे खोट कौ न लेश कभी खोडि नांहि पौंहि जी।
खौरि मांहि वैठे साधु तेरौइ जु ध्यान करै, खंखता हरण देव शून्यता न साहि जी।।152।।

(कुंडलिया)

तेरी देव सुकांतता, हरै खंखता जोहु।
ताहि कहै बुध लक्ष्मी, कमला संपति सोहु।।
कमला संपति सोहु संपदा भूति विभूति।
अनुभूती परसिद्ध योगमाया जु प्रभूती।।
शिवा शंकरी शक्ति जैनत्तता ऋद्धि घणेरी।
भाखै दौलति ताहि कांतता देव सु तेरी।।153।।

इति षकार वर्ण संपूर्णम्।

स

आगें दंती ससा कौ व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

सनातनं सदा शांतं, सारासारनिरूपकं।
सिद्धं सितं हिताढ्यं च, पूजितं सीरपाँणिनं।।1।।
सीताख्यातकरं धीरं, सुश्रुतं सुप्रियं परं।
सूत्रसिद्धांतवक्तारं, सर्वसेनापतिं प्रभुं।।2।।
स्वसैन्यालंकृतं वीरं, सोमदृष्टिं जिनेश्वरं।
सोहं हंसोपदेष्टारं, सिद्धिसौधं चिदात्मकं।।3।।
सौम्यं सदात्मकं कांतं, संपदां संचयं जिनं।
वंदे देवाधिपं देवं, वंदितं देवदानवैः।।4।।
सदा शून्यविभावैश्च, पूरितं दर्शनादिभिः।
गुणाकरं जितांभोधिं, स्वभावगुणमंडितं।।5।।

(दोहा)

स कहिये ग्रन्थनि विषैं, श्रेष्ठ वस्तु कौ नाम।
सकारांक तू ही सही, स्रष्टा श्रेष्ठ स्वराम।।6।।
सृष्टा धर्म जु स्रिष्टी कौ, हर्ता कर्म प्रपंच।
स्रष्टा तत्त्व विग्यान कौ, तेरै मोह न रंच।।7।।
तु ही सर्वलोकातिगो, सरवारथ सिधि दाय।
सर्वलोक कौ सारथी, एक नियंता राय।।8।।

(कुंडलिया)

सदा स्व त्रिप्तो देव तू, सदा योग जगदीश।
सदा भोग भोगीश तू, सदा सनातन ईश।
सदा सनातन ईश तू जु है सदा गती जो।
तू जु है सदा विद्येश तू जु सरवज्ञ यती जो।।
सदा सौख्य पिंडो जु, सर्व समयज्ञ प्रगिप्तो।
प्रभू सदोदय सत्य देव, तू सदा स्वत्रिप्तो।।9।।
सदा स्वभावी भाव तू, सदा भावि भूतो जु।
स्वस्थो स्वच्छ समाहितो सदा गुणी पूतो जु।।
सदा गुणी पूतो जु तू सदा सर्व गुणात्मा।
सर्वातीत अभीत सर्वव्यापी जु सदात्मा।।
सर्व जपैं तोकौं जु नाथ तू महाप्रभावी।
सर्वातिग सर्वेश भाव तू सदा स्वभावी।।10।।
तू जु समूही ज्ञान कौ, कहे सनातन धर्म।
सत्यारथ सर्वादि तू, सकल उछेदक भर्म।।
सकल उछेदक भर्म स्नातको तू हि समस्ता।
समरथ सर्वग सर्वगत तू हि प्रशस्ता।।
सर्व लोक कौ सार सद्गति दायक तू ही।
सद्योजात अज्ञात ज्ञान कौ तू जु समूही।।11।।

सद्य उधारै नाथ तू, सद्य शीघ्र कौ नाम।
स्पष्ट देव पुष्टो तुही, स्पष्टाक्षर अभिराम।।
स्पष्टाक्षर अभिराम शुद्ध स्वर्णाभ गुसांई।
स्वयंभूत भगवान है स्वभू तू हि असांई।।
स्वयंबुद्ध अविरुद्ध तू स्वयंभू जग तारै।
सर्वातम जगतेश नाथ तू सद्य उधारै।।12।।
स्वयंसजीतो धीश्वरो सर्वेश्वर सर्वांग।
स्वयंप्रभू सबकौ पती, स्वयंभूति धर्मांग।।
स्वयंभूति धर्मांग पार, कर स्वयंप्रभा कौ।
आप स्वयंप्रभ है जु, नाथ है द्विदश सभा कौ।।
सर्व तनौं दृग दैव सर्वस्रज सही अजीतो।
सर्वदर्शनो धीर धीश्वरो स्वयं सजीतो।।13।।
सर्वदोष हर है हरी, तुही सर्ववित ईश।
स्वयंज्योति ज्योतीश्वरो, सर्वजितो चिदधीश।।
सर्वजितो चिदधीश लोक लोकेश्वर भूपा।
सतवन योगी जिनिंद तू जु सद्रूप अनूपा।।
तो ही जपी निरग्रन्थ स्नातका होंहि प्रभाधर।
तू हि सयोग अयोग है हरो सर्व दोष हर।।14।।
सर्व कलेशा तू हरै, है समग्रधी आप।
सर्व योगि सेव्यो तु ही योगीश्वर निहपाप।।
योगीश्वर निहपाप ताप कौ नाम न तेरै।
सत्यातम सत्येश सत्य धर्म जु अति प्रेरै।।
सत्य विग्यान प्रधांन सत्य वाणी जु अशेसा।
सत्यशासनो देव तू हरै सर्व कलेशा।।15।।
सत्यपरायण नाथ तू, सत्यासी सत रूप।
तू जु सत्यसंधान है, वागीश्वर जु अनूप।।
वागीश्वर जु अनूप है स्थवीयांन समूला।
स्थवीयान को अर्थ प्रगट है दैव सथूला।।

तू स्वतंत्र निज मंत्र तोहि ध्यावैं जु नारायण।
समयसार जगसार नाथ तू सत्य परायण।।16।।
तू अकृत्य हर देव है, सदाचार परवीन।
प्रभु सत्कृत्य जु कृत्य तू, स्वसंवेद्य निजलीन।।
स्वसंवेद्य निजलीन तू जु है समय प्रकाशा।
सतवन तेरौ देव करैं इन्द्रादि विभासा।।
स्वसमय तू जिनराज सदा परसमय जु परहर।
स्वपर समय प्रतिभास देव है तू अकृत्य हर।।17।।
समभावा तोहि जु भजैं, तो निज समय लभंत।
स्वल्प बुद्धि तोकौं कहा, जानैं तू जगकंत।।
जानैं तू जगकंत स्वयं सिद्ध जु तू देवा।
सर्वोत्तम सव पूजि स्व प्रधानो हि अछेवा।।
सबतैं दूजि अदूजि सर्व मैं सार जु रावा।
समरथ गणधर देव भजैं तोहि जु सम भावा।।18।।
स्वसमय दायक देव तू, देवाराध्य महंत।
सर्वातीत अतीत जे, तोहि भजैं भगवंत।।
तोहि भजैं भगवंत तू जु है सकल सु आतम।
अकलातम पर रूप स्व स्वरूपोहि चिदातम।।
तू पर तैं अति भिन्न सकल जांण जु जगनायक।
सकलपती सकलज्ञ देव तू स्वसमय दायक।।19।।
सर्व प्रतीतो तू सही, परम स्वरूपानंद।
स्वगत सुगत सब भेद धर, सर्वनाथ शिवकंद।।
सर्वनाथ शिवकंद व्यापको तू हि समस्ता।
सर्वहितो समदृष्टि मुनिसखो तू हि प्रशस्ता।।
समभावी समभाव दायको तू हि अतीतो।
सर्व मूल सर्वेन तू सही सर्व प्रतीतो।।20।।
सकल प्रपंचा तू हरै, सर्वनि कौ सरवस्व।
समय समय तोकौं रहै, ते हौंहि अति सस्व।।

ते हौंहि अतिसस्व सस्व कौ अरथ धनाढ्या।
बिनु निजरूप धनोन ताहि विनु लषें अनाढ्या।।
निज सत्ता परकाश तू जु है निह परपंचा।
सर्व रहित जड़भाव तू हरै सर्व प्रपंचा।।21।।
तू जु सनातन ब्रह्म है, सत्यारथ श्रुति सार।
सकलाराध्य अबाध ऋषि, तोहिं जपैं जगतार।।
तोहि जपैं जगतार तू जु है कालिम वीता।
सर्व विभाव विशून्य भाव पूरण भव जीता।
सकल जीव सम देश सकल उद्वेग रहित तन।
स्व पर प्रकाशक देव ब्रह्म है तू जु सनातन।।22।।
सदा अनादि सिद्ध को, जो धारै मुनि ध्यान।
सत्ता रूप अरूप कौ, ते पावैं निज ज्ञान।।
ते पावैं निज ज्ञान समरसा समदृष्टि धारै।
सद्दृष्टि सम दृष्टि पाय चिद्रूप चितारैं।।
समाधान सरवंग सर्वभूतेश गुसांई।
सर्व दाय समुदाय तू सदा देव असांई।।23।।

(दोहा)

सदानंद सद्रूप कौ, जे धारै निज ध्यान।
चिल्लक्षण चिद्रूप मैं, ते रमि रहै सुज्ञांन।।24।।
समर सगहि समता धरा, ध्यांवै तोहि मुनिंद।
तू सर्वत्रग सर्वगत, आतम रूप जिनिंद।।25।।
सर्व काय सर्वालयो, सर्व जीव सुख दाय।
समरस पाँवै जीवडा, तोहि भजी सम भाय।।26।।
तू जु समुन्मूलित अरी, निरदोषी निरमोह।
प्रभू समंतोभद्र है, नहि काहू सौ द्रोह।।27।।
समंतभद्र आचार्य की, तैं राषी परतज्ञ।
रुद्र पिंडी मैं आपुनो, रूप दिखायो विज्ञ।।28।।

सप्तार्चि: कहिये अगनि, तू वैस्वानर देव।
कर्मकाष्ट भस्म जु करै, परम प्रताप अछेव।।29।।
सप्तार्षि: सरवर हुवै, सर्पमाल सम सोइ।
सिंह स्याल सम ह्वै भजै, तोहि भजें शिव होइ।।30।।
तु स्थविरो अति जो जरी, स्थविर वृद्ध कौ नांम।
तोसौ वृद्ध न दूसरौ, अनंत काल कौ राम।।31।।
जरा जो जरौ तू नहीं, नित्य नवल जगदीश।
सद्यो जात सदा तुही, सुर नर पूजित ईश।।32।।

(चौपई)

तू हि सहस्रमूर्ति जिनदेव। तू हि सहस्र शीर्ष अतिभेव।।
तू जु सहस्रपात जगतात। सहस्राक्ष तू जगत विख्यात।।33।।
सहस्राक्ष फुनि इंद्रिहि कहैं। इंद्र शतांनि चरन तुव गहै।।
रश्मि सहस्र धरो दिनपती। तोहि जु सेवै तू जगपती।।34।।
फण सहस्र धारक धरणिंद। तोहि जपैं तू परम जिनिंद।।
समताधर मुनि सेवा करैं। तन मन लाय भगति उर धरैं।।35।।
सहस्ररश्मि जौं कोटिक मिलै। तेरे चर अंश नहि भिलै।।
तेरे नष की ज्योति अनंत। रश्मि अनंत धरै तू संत।।36।।
सक नाही काहू की तोहि। तू जु करण सक दै शिव मोहि।।
सषा सबौंका तू अति यती। सलिल समानो निरमल अती।।37।।
सलिल न बोरै तुव भगतांह। कोडीभड उतरे जपतांह।।
सगौ जीवमात्रनि कौ तूहि। सच्चौ देव जु गुणह समूहि।।38।।
स्वच्छ महा अच्छ जु निरमलो। सठ इन सांठ्यो अति बलो।।
सठ नहि पाँवहि जाहि कदापि। बुध पाँवै जाकौ विधि थापि।।39।।
सजा देय करमनि कौं अती। सो जिनराज सदा शिव पती।।
सटके जा आगैं छल लोभ। निसटे जा लखि मोह र क्षोभ।।40।।
सत दत धारी सत्यपहार। सच्छ समूह रचे जिनि सार।।
सच्छ कहैं शास्त्र जु कौं नांम। तो बिनु सच्छ न होइ जु राम।।41।।

सती सील व्रत भूषित जिके। तोही करि पाँवै सत तिके।।
सधै मुक्ति तुव भक्ति करंत। मुक्ति प्रजननी भक्ति अनंत।।42।।
सफल होइ तुव जपतां देह। सपर सरस नहिं तेरै एह।।
समल भाव तोमैं नहि कभी। विमल देव तू है अति अभी।।43।।
सप्त जु नर्क निवारक तू जु। नर्क भेद भासक जगपूज।।
सप्त तनें पाथड गुनचास। अधिक अधिक दुख तिनमै भास।।44।।
तेरा ग्यारा नव सप्ताह। पंच तीन एक जु कथिताह।।
या विधि सप्त मांहि गुनचास। भाषैं जिनवर काटै पास।।45।।
चउरासी लष तिन मैं विला। तुव भजियां विनु जीवहि मिला।।
अमित अपार तहां दुख होइ। केवलगम्य वहै दुख जोइ।।46।।
पंच प्रकार महादुख जहां। ताकौ वरनन होइ ज कहां।।
असुरोदीरित अर मन कौ जु। परसपरै फुनि अति अधिकौ जु।।47।।
क्षेत्रजनित अर देह जु भवो। ए पंच भेद कहै साधवो।।
असुरोदीरित तीजा लगै। आगै असुरकुमार न पगै।।48।।
पहले सौले अंतिम लौं जु। अधिक अधिक वेदन सु गिनौं जु।
चौथे तक अति उश्न जु होई। पंचम उश्न र सीत जु सोई।।49।।
छठै सीत जु सातम अती। सीत जु भाषै जग गुर णती।।
पहलै आऊ सागर एक। दूजै तीन लहैं अविवेक।।50।।
तीजै सप्त र चोथै दसा। पंचम सतरा सागर वसा।।
छट्टे द्वाविंसति उदधी जु। सप्तम तेतीसां बुधि लीज।।51।।
होय सासना अति ही तहां। छेदन भेदन पेलन जहां।।
हम भुगते नरका बहु बार। तो विनु लहिउ न भवजल पार।।52।।
अब हरि हमरौ भवभ्रम हरे। सप्त तत्त्व की सरधा धरै।।
जीवाजीव जु आस्रव बंध। संवर निरजर मोक्ष प्रबंध।।53।।
ए सप्ता तत्त्वा तहकीक। इनकी सरधा दै प्रभु ठीक।।
इनमैं पुण्य र पाप मिलैं जु। तव नव पद अरथा सहु वैं जु।।54।।
द्रव्य जु षट अर अस्ति जु काय। पञ्च प्रकार कहै जिनराय।।
इन भेदन की सरधा बिना। नारक दुरक लहया अतिघना।।55।।

जे अघ नारक कारन देव। ते अघ तू वरजै अति भेव।।
हिंसा अनृत तसकरता जु। बहुरि कुशील परिग्रहता जु।।56।।
क्रोध मान छल लोभ गनें जु। प्रथम चौकरी नर्कहिं दे जु।।
सप्त विसन नर्क जु के दांनि। द्यूत मांस मद पाप जु खांनि।।57।।
वेश्या चोरी और सिकार। पर नारी नरका दांतार।।
चुगली चाड़ी दुरजनता जु। वहु परपंच सु अति ममता जु।।58।।
परधन हरिवौ सब विधि बुरौ। नर्कपुरी पहुंचावै धुरौ।।
ठग पासीगर दगरा मार। परहि लुटेरा नरक मझार।।59।।
वृथा दंड कारक नृपति जु। निश्चय पावै अधम गती जु।।
दंभी पाखंडी सुलवार। नरक पुरी के पात्र असार।।60।।
परथाती दावि जु जे रहैं। ते पापी नरकां दुख लहैं।।
पर निंदक पर दोष हि लपैं। नर्क लहै हिंसा मत थपै।।61।।
गमै गल कटा अधम पुरी जु। गहै धन रटा कुगति बुरी जु।।
पर पुरषां रत जे नारी जु। परैं नरक मैं ते दारी जु।।62।।
वेश्या पावैं नर्क निवास। दूती लहहि नरक गति त्रास।।
साधु होइ परपंच न तजैं। ते सठ नर्क निवासहि भजैं।।63।।
महा पाप करि मानव मच्छ। सप्तम लों जावै परतच्छ।।
स्त्री पापाँ करि छट्टा लौ हु। नाहर अघ करि पंचमलौ हु।।64।।
सर्प जु चौथा लग ही जाय। पंछी तीजा लौं हि रहाय।।
सरीश्रपा दूजा लग कहै। जीव असैनी पहल हि रहे।।65।।
पंचेद्री तिर नर बिनु नर्क। पावैं नांहि जु और अतर्क।।
नर्क थकी आंवै द्वय मांहि। पंचेद्री तिर नर सक नांहि।।66।।
स्वामि द्रुहा अर मित्र जु द्रुहा। गुरद्रोही अर धर्म जु द्रुहा।।
बिनु नरकां तिनकौं को छुवै। इनसे पापी और न ध्रुवै।।67।।
विष दाता दव दाता जे हि। पर धन दारा क्षेत्र जु लेहि।।
पित्रनिहंता नर्क जु परै। बाल वृद्ध घाती दुख भरै।।68।।
निर्मयिल जे अंगी करैं। ते पापी नारक गति वरै।।
सरणै आया कौं दे दगा। पहुंचै कुगति कुमारग लगा।।69।।

जे विस्वासघात कारी जु। नरक कष्ट पावैं भारी जु।।
मातृ पितृ लोपक सुत कुधी। नरकपुरी पहुंचै बिनु विधी।।70।।
पशुघाती पलभक्षी जना। दुर्गति पावै करि अघ घना।।
वांमी कामी चंडीदास। विनु भगवंत लहैं अति त्रास।।71।।
कुगुर कुदेव कुशास्त्र धरै जु। ते जड़मति कुगतिहि वरैं जु।।
भक्षक जेहि अभक्ष तने जु। गम्यक जे हि अगम्य तने जु।।72।।
नारक वास लहैं ते सठा। जिनकै उरि जिनवर नहि गठा।।
विभचारी नाचारी जना। नरकहि पावैं नरवध मना।।73।।
मनुष समान न हत्या कही। मनुषि हतैं ते कुगति गही।
जीव जु मारक नारक गहैं। अघ मारक योगी शिव लहैं।।74।।
मन इंद्री अर हनइ कषाय। ते पावैं निश्चय जिनराय।
सप्त विसन हिंसा के मूल। ठौर ठौर निंदे अघमूल।।75।।
सप्त भीति अर सप्त जु ईति। तू सब टारक रहित अनीति।
यप्त हि रज्जू अरघ होइ। सप्त अघौ भाषै तू कोई।।76।।
सप्त जु परम स्थान प्रकाश। सज्जात्यादिक जे सु विकास।
सप्त हि कर्तृन्वय किरिया जु। तू हि विभासै प्रभु धुरिया जु।।77।।
सप्त मौंनि श्रावक कौं कहै। सप्त मौंनि तोतैं मुनि गहैं।
अंतराय सप्त जु टारै जु। जीमत गृहस्थ शुचि धारै जु।।78।।
दोष छियालिस मुनि जन टारि। भोजन लेहि तवाज्ञा धारि।
सप्त भंग धारै तुव वानि। सप्त जु संयम कहइ प्रवानि।।79।।
सप्त क्षेत्र ए सुभ के प्रभू। जिन प्रतिमा जिन मंदिर विभू।
जिन पूजा सु प्रतिष्ठा गृही। जिनकल्याण यात्रा लही।।80।।
श्रुति लिषिवौ र लिषावौ कही। संघ भक्ति ए सप्त जु सही।
इन सम क्षेत्र न त्रिभुवन मांहि। ऐ सम्यक्त देंहि सक नांहि।।81।।
भरत हैमवत हरि जु विदेह। रम्यक हैरण्यवत अछेह।।
अैरावत ए सप्त हु क्षेत्र। तोही तैं जानैं श्रुति नेत्र।।82।।
सप्त विसन कौ शत्रू तू ही। विसनी तोहि लहै न कभूही।।
सप्त जु सेना धरै सुरेश। षट सेना धर चक्रि नरेश।।83।।

चऊ सेना धारै सब भूप। तू त्रिभुवन कौ भूप अनूप।।
सब सेनाधर तो ही जु रटै। तोहि रटै भव संकट कटै।।84।।
सप्त प्रकृति मोहाच लबंत। ते उपशम ह्वै जब ह्वै संत।।
उपशम सम्यक प्रगटै तवै। महा मोक्षदायक जो फबै।।85।।
सप्त क्षये क्षायक परकाश। सों तुरतैं काटै जग मास।।
सप्त मांहि कछु क्षय कछु शमै। तव क्षयउपशम नाम जु गमैं।।86।।
ताके तीन भेद प्रभु कहै। जिनआगम विनु को सरदहै।।
चौ क्षय त्रय उपशम पहलौं जु। पंच क्षय द्वय उपशम दूजौ जु।।87।।
षट क्षय इक उपशम तीजौ सु। सो महराजा क्षायक सौ जु।।
ए त्रय क्षय उपशम रस भया। अब चउ वेदक विधि सुनि भया।।88।।
चउ क्षय ह्वै उपशम इक वेद। सो पहलौ वेदक जगछेद।।
पच क्षय इक उपशम इह वेद। सू दूजौ वेदक भव छेद।।89।।
षट क्षय इक वेदै जिह ठौर। सो तीजौ वेदक शिव मौर।।
क्षायक सौ इह वेदक जानि। तुरत हरै जम पासि प्रवांनि।।90।।
षट उपशम इक वेदै जहां। उपशम वेदक प्रगटै तहां।।
उपशम सौ इह हू वड़भाग। चउथौ वेदक निजरस पाग।।91।।
चउ वेदक त्रय क्षय उपशमा। क्षायक और गिनौं उपशमा।।
ए नव सम्यक जिनवर कहै। इनहि पाइ भवि भववन दहै।।92।।
है जु मुख्य तौ इह ही बात। शीघ्र मुक्ति दाता ए तात।।
जौर कदापि भव स्थिति धरै। तौ कब तक इह श्रुति उच्चरै।।93।।
क्षायक सागर तेतीसा जु। कछु अधिके वरषा सुखभाज।।
षट क्षय इक उपशम इह भेद। छासठि सागर भवथिति वेद।।94।।
षट क्षय इक उदयो जहँ होइ। सोऊ छयासठि जांनौं लोय।।
पंच क्षया द्वै उपशम जहां। सो केती भवथिति इह कहां।।95।।
इक सौ वत्तीसा उदधी जु। आगै जब थिति नांहि सुनी जु।।
पच क्षय इक उपशम इक वेद। ताहू की एती बिनु षेद।।96।।
अब सुनि चउ क्षय त्रय उपशमा। अर सातौं ही जे उपशमा।।
चउ क्षय द्वै उपशम इक वेद। अथवा षट उपशम इक वेद।।97।।

एजौ अधिकी भवथिति धरै। अर्द्ध पुदगलो प्राव्रत करै।।
शीघ्र लहै शिव तौ नहि दोष। ए नव ही दातांर सु मोष।।98।।
नव मैं क्षायक सौ नहि और। क्षायक सबकौ है सिरमौर।।
सब साधन इक क्षायक सिद्धि। क्षायक धारै केवल ऋद्धि।।99।।
सप्त प्रकृति के सुनहु जु नाम। तिनके क्षयकरि क्षायक राम।।
प्रथम चौकरी तीन मिथ्यात। ए सात हु प्रकृती विख्यात।।100।।
सप्त प्रकृति सत्ता रोहिनी। महा पापिनी मति मोहनी।।
रौकैं सम्यक कौं एही सु। नासै इनकौं सम्यक ही सु।।101।।
सम्यक दरशन सम्यक ज्ञान। सम्यक चरन मिलें निज ध्यांन।।
छट्टम सत्तम ठाणैं साध। परम तत्त्व ध्यावै जु अबाध।।102।।
अष्टम सौ श्रेणी जब चढ़ैं। तब निज रस सुख अति गुण बढ़ैं।।
क्षपक दशम सौं बारम जाहिं। केवल परसि बसे शिव मांहि।।103।।
उपशम श्रेणी धर ग्यारमैं। जांहि न निश्चय करि बारमैं।।
ग्यारम सौं परि नीचे थान। परसि जु पावैं देव विमान।।104।।
भव अंतरि तेऊ तुब लहैं। तेरे होइ न भव वन गहै।
चउ विधि संघनिकौं तू ईश। चउ विधि दान प्रकाशक धीश।।105।।
सप्त काय योगा चउ मनां। चउ वच योग सु पंद्रह गिना।।
तेरै नांही एक हि योग। तू हि अयोगी शुद्ध सयोग।।106।।
द्वै मन के द्वै वच के तीन। काया के मिलि सप्त जु लीन।।
सप्त जु योग सयोगी मांहि। नांहि अयोगी मैं सक कांहि।।107।।
सप्त जु कोडि बहतरि लाष। तेरे मंदिर आगम साष।।
दसविधि भवनपती मैं कहै। सम्यकदृष्टिनि नै सरदहे।।108।।

(चौपई)

आंणत प्रांणत आरण अच्युत। इन चउ सुर्गनि मैं गृह अच्युत।।
सप्त शतांनिक है गुरदेवा। देव करैं तिनकी अति सेवा।।109।।
सप्त वार अर षोडश तिथि जे। तू हि प्रकासै यहै अतिथि जे।।
सप्त रतन अध चक्री कै है। ते अध चक्री तोहि भजैं हैं।।110।।

सप्त स्वर भेदा तू गावै। सप्त हाथ तनु वीर बतावै।।
सप्त समुदघातक तू कहई। सप्त अंग राजनि के गहई।।111।।
चक्री कै सप्त जु जड़ रतना। सप्त जु चेतन रतन सु यतना।।
सप्त सप्त मिलि चउदस हौंही। तोही भजैं बिनु सर्व जु यौंही।।112।।
तू हि प्रकासै दै फुनि तू ही। सर्वस्व दाता तू हि समूही।।
सप्तकार मंत्रातम देवा। दै अपनी भव भव मुझ सेवा।।113।।
तीजैं नर्क सु सागर सप्ता। आयु जु भोगैं धरि अति विप्ता।।
तीजै चौथे सुर्ग हु सप्ता। सागर आयु कहै अति त्रिप्ता।।114।।
सप्त कर्म कौ बंध सदा ह्वै। आयु कर्म कौ बंध कदा है।।
समय समय बांधै सप्तनि कौ। समयप्रबद्ध प्रमाण जड़नि कौं।।115।।
आयु त्रिभाग रहै जब आयू। कर्म जु बांधै इह श्रुति गायू।।
अैसे भेद न तो बिनु लहिये। सप्त धातु रहितो प्रभु कहिये।।116।।
सप्त लाख है पृथ्वी काया। जाति जु तैं ही नाथ बताया।।
सप्त जला अर सप्त ज तेऊ। सप्त लाख फुनि पौन जु लेऊ।।117।।
सप्त लाष हैं नित्य निगोदी। सपत लाष फुनि इतर निगोदी।।
दश प्रत्येक मिले बावन्ना। लक्षा थावर वेद जु खिन्ना।।118।।
बतीसा लख जंगम जाती। सब मिली चउरासी जु विख्याती।।
सबकौ पालक तू इक होऊ। सकल पाप को तू हि जु षोऊ।।119।।
सप्त भंग की चरचा धारै। ते भवि तेरौ रूप निहारै।।
सप्त विसन करि दुरिकत सप्ता। भये तू हि भाषै जु अलिप्ता।।120।।
द्यूत थकी जु युधिष्टर राजा। राज भृष्ट हुये दुष भाजा।।
पछैं तोहि जपि मुक्ति जु पाई। इहै कथा गुरनै जु सुनाई।।121।।
मांस भक्ष तैं वक नृपती जो। भयो भ्रष्ट पाई कुगति जो।।
अमल थकी यदुकुमरा विघटे। गनिका तै जु चारुदत उलटे।।122।।
ब्रह्मदत्त इक राजा पापी। करि आषेट लही अति तापी।।
चोरी करि शिवभूति जु विनसे। परदारा तैं रावन किलसे।।123।।
विसनी तोहि न भजही देवा। विसनी पाँवहि कुगति अछेवा।।
सप्त धातु जे सुवरण आदी। कौन कांमि तो बिनु सब बादी।।124।।

सप्त दशाधिक संयम भेदा। तू हि प्रकासै नाथ अभेदा।।
सप्त दशाधिक सागर आयु। पंचम नर्क विषै जु सुनायू।।125।।
सप्त विंसति देव नक्षत्रा। तेरे सेवक तू हि पवित्रा।।
सप्त जु विंसति सागर आयु। पंचम ग्रीव विषै सु वतायू।।126।।
साढे सैंतीसा जु हजारा। सर्व प्रमाद भेद भव धारा।।
ते आगै पप्पा कैं मांहि। भांषै यामैं संसय नांही।।127।।
सप्त जु चत्वारिंसत भेदा। घाति कर्म की प्रकृति उछेदा।।
सतावन आश्रव तै न्यारा। तू हि निराश्रव केवल प्यारा।।128।।
सत सठि बंध प्रकति तू भाषै। पंचम गुणठाणैं श्रुति साखै।।
त्रेपन कौ जु अबंध तहां है। तो विनु ए चरचा जु कहां है।।129।।
सत्तहत्तरि चउथै गुणठाणै। बांधै प्राणी तू हि वषांणै।।
तीयालीस अबंध धरै जो। तो बिनु कौ निरधार करै जो।।130।।
सत्यासी तेरौ ही नांमा। सत्य प्रधांनो तू हि विरामा।।
सत्याणव सहसा चउरासी। लक्षा तेरे मंदिर भासी।।131।।
तेवीसा अधिके गनिये जी। सुर्ग लोक मैं ए भनिये जी।।
पाताली जु कहै पहलै ही। वहतरि लष सत कोडि जु ह्वै ही।।132।।
मध्यलोक मैं मंदिर भांवन। च्यारि सैकरा अर अट्ठावन।।
तीन लोक के मंदिर जोरौ। जिन जपियां दुष रहइ न मोरौ।।133।।
अट्ठ कोडि अर छप्पन लाषा। सत्याणव सहसा गुर भाषा।।
च्यारि सैकरा अर इक्यासी। ए जु अकर्तृम देवल भासी।।134।।
इक इक देवल मैं अष्टोतर। तेरे बिंब जु हैं भव दुख हर।।
सर्व अकर्तृम प्रतिमा केती। कहइ सुगुर सिष कौ विधि सेती।।135।।
नवसै पचवीसा कोड़ी है। त्रेपन लाष बहु फुनि जोड़ी हैं।।
सहस सताईसा नवसैका। अढ़ताला सब पाप प्रलै का।।136।।
बहुरि ज्योतिसी विंतर मांही। अगणित चैत्याला सक नांही।।
सवही वंदनीक जिन सौधा। नादि अकर्तृम लख इन बोधा।।137।।
द्वीप अढाई मैं कर्तृम भी। और ठौर कर्तृम न कदे भी।।
कर्तृम और अकर्तृम देवल। तेरे पूजित तू प्रभु केवल।।138।।

चौथी पाँची छट्टी ग्रीवा। तेरे मंदिर अति सुष देवा।।
सौ उपरि सप्त जु जे भाषे। पहले जोड़ मांहि सब राषे।।139।।
सव अर वीस प्रकृति सब बंधा। बंध त्रिभंगी मांहि प्रबंधा।।
पहलै ठांणै तीन न होई। सौ सतरा भाषै बुध सोई।।140।।
तीर्थंकर आहारक दोई। इक ह्वै मिलि ए तीन जु होइ।।
इन बिनु मिथ्या ठांणै शेसा। प्रकृती तू हि कहै जु अशेसा।।141।।
वीसा सौ मैं तीन घटी जब। सौ सतरा भाषै श्रीगुर तब।।
आगै चढ़ि ऊपर के ठाणा। अनुक्रम क्षेपहि प्रकृति सुजाणा।।142।।
सब क्षपि प्रकृति लहैं शिवधामा। तब हौंहि केवलमय रामा।।
सोलस पणवीसा नभ जाने। दस चउ छह इक बंध विभाने।।143।।
दुग तीसी अर चदुर जु पंचा। फुनि सोलस इक क्षपि परपंचा।
या विधि गुणठाणै चढ़ि क्षेपै। वीसां सौ प्रकृति सहु लेपै।।144।।
तब निरबंध निराश्रव होई। इह भाषक है तू अति कोई।।
सागर सत्तरि कोड़ाकोड़ी। प्रकृति जु मोह की तैं सहु तोड़ी।।145।।
वज्रदंत चक्री के पूता। एक सहस्र प्रमिता अति पूता।।
पिता सहित विरकत ह्वै जगतैं। पहुंचे तुव पुरि तेरे मग तें।।146।।
सजलातम तू अजड़ स्वरूपा। सलिल स्वरूपि निर्मल भूपा।
भव दुख हनन समय तो लहि जी। तू सर्वस्व सदा सुख धरि जी।।147।।
सखा मित्रकौ नाम जु होई। सखा सर्वकौ सर्वगि होइ।
यामैं एक नांहि तू भवहर। सगौ तो बिनां और न सुखकर।।148।।
तेरी वानी सरसुति कहिये। और न सरस्वति दूजि लहियै।।
इहै सुरसुती जे उर धारै। तो सम आतम तत्त्व विचारै।।149।।
पकरि सचौटी तोकौं भजही। शनैः शनैः भवदुख वन तजही।।
इह पपीलिका मारग देवा। शनैः शनैः धारै तुब सेवा।।150।।
एक विहंगम मारग होई। सपदि सवै तजि जो नर कोई।।
तोहि जु ध्यावै देव विरागा। सपदि मोक्ष पावै बड़भागा।।151।।
सपदि शीघ्र कौ नाम जु कहिये। तुरत सवै तजि तोहि सु गहिये।।
सजै साज सब तुव पावै का। ठटे ठाट तुव पुर जावे का।।152।।

सटके कर्म सवै ले साजा। जब तू गरज्यौं त्रिभुवन राजा।।
सठ मोसौ नहि दूजौ औरे। तोहि तजि कीयो निज चौरे।।153।।
सन्यों विषैसौं मैं सठ कुधिया। तुही उधारै देकरि सुधिया।।
सड्यो पड्यो इह देह जु पापा। सो मैं कुबुधी जान्यौं आपा।।154।।
सत्यस्वरूप न जान्यो तू ही। सच्छहु सुनिकरि हति इन दूही।।
सदा वसै तू सब कै पासा। मूढ़ न जांनि हतैं जम पासा।।155।।
सदा तिहारौ ध्यांन जु करिये। अैसी मति दै कवहु न टरिये।।
तोहि भजी कबहुं नहि मरिये। तोमैं होय र भवदुख हरिये।।156।।
परम समाधि स्वरसरस धरिये। तेरे अनुचर ह्वै अनुसरिये।।
सधन तुही ओर न कोई है। निधन न तेरौ प्रभु होई है।।157।।
सवै निर्धना तू हि जु सधना। निधन सकल ह्वै तू हि न निधना।।
निधन नांव नाश जु कौ कहिये। तू अविनासी द्रव्य जु सहिये।।158।।
सर्व मांहि तू सर्व स्वभावा। तुवु दासैं नहि दंडै रावा।।
सपथ कहावै धीज प्रसिद्धी। अगनि वारि ह्वै वारिज ऋद्धी।।159।।
सती सुसीता सत्य स्वभावा। परम धर्मिका शील प्रभावा।।
तुव परसाद जु वाकौं देवा। भयो अगनि कुंड जु सरसेवा।।160।।
वारिज वारि सु पूरण सरवर। अगनि कुंड कौ ह्वै गयु जलपुर।।
रामचंद्र नैं सपथ जु दीनी। सीता कौं शुद्ध जु तैं कीनी।।161।।
हुती एक नीली जिनधर्मा। सम्यक शीलव्रती बिनु भर्मा।।
श्रेष्टि तनी पुत्री शुभरूपा। धर्म स्वरूपा शील अनूपा।।162।।
कपट करे जिनधर्मी होई। बौध वाणिये परणी सोई।।
परणि जु नीली ह्वै गय बौधा। नीली जिनधर्मा व्रत सौधा।।163।।
क्कापि काल बौध न मत धारै। पति सेवैं तत जैन विचारै।।
द्वादश व्रत धरैया शुद्धा। भगवत दासा ज्ञान प्रबुद्धा।।164।।
ताके मारिवे हि सासू नैं। घरे मांहि बुद्ध जु दासू नैं।।
मेल्हायो अहि नीली छानैं। नीली सौं बोली विधि ठानें।।165।।
हे नीली या घरा जु मांहैं। रतन माल है संसय नाहैं।।
पहरि जु आजि उछाह दिनां है। पुत्रवधू मेरी सुमनां है।।166।।

इह सासू की आज्ञा सुनिकै। उठी जिनेश्वर नाम जु भनि कैं।।
घरे मांहि ह्वै तो जो सर्पा। ह्वै गयु रतनमाल अति दर्पा।।167।।
तेरे दासन कौ कछु पीड़ा। होय न कबही कष्ट जु नीड़ा।।
सफल क्रिया सम भक्ति समेता। अफल क्रिया जे तोहि न लेता।।168।।
वै असार जु तू इक सारा। सकल सभा कौ तू शृंगारा।।
तू जु समाधितंत्र जगदीसा। होय समाधि सु तो करि ईशा।।169।।
रीसि तजें विनु नाहि समाधी। ज्ञान बिनां न मिटै जु उपाधी।।
सदा समृद्धि प्रवृद्धि जु तू ही। साधु समाधि सु देहु अदूही।। 170।।
सरल स्वभाव सरल तू देवा। वक्र न जानहि तैरौ भेवा।।
सहितो सकल सुषनि करि तूही। दहितो सर्व विभाव समूही।171।।
सहत कहावत माषीलाला। तू हि जु वरजै देव कृपाला।।
मद्य मांस मधु माषण मैथुन। तो बिनु को निंदै तू निजगुन।।172।।
ऊमर आदि कुफल सब निंदे। संधांण र अच्छांण उछिंदै।।
सलिल जु अणछाण्यो सो रुधिरा। तू हि जु भाषैं सुनइ न बधिरा।।173।।
सशल्यो व्रत घातक मूढ़ा। निश्शल्यो व्रततति आरूढ़ा।।
सपरस रूप न रस नहि गंधा। शब्द न सहनन तेरै बंधा।।174।।
स्वजातीय सब जीव जु द्रव्या। विजातीय जड़ पंचहि द्रव्या।।
सबकौ भासक तू हि स्वभासा। सदा सर्वदा शुद्ध प्रकाशा ।।175।।
सनिधन अनिधन सर्व जु भेदा। तू हि प्रकासै देव अभेदा।।
समता सषी सुबुधि रांनी पैं। तेरौ जस गावै स्यानी पै।।176।।
समाधान के रूप अरूपा। समाधांन मेरौ करि भूपा।।
सहज स्वभाव सहज गुण स्वामी। सहज पराक्रम तू ही अनांमी।।177।।

(चौपई)

सहजानंद सहज गति तू ही। सहज विभासक समचित सही।।
सहसा मोहि तारि जिनचंद। याकौ अर्थ जु तुरत मुनिंद।।178।।
सहनशील कहिये जु सहिश्नु। तू हि जु जिनवर व्यापक विश्नु।।
जपै जिश्नु तोकौं इकमना। तू हि जु शिवतति कहियत जिना।।179।।

त्रिश्नाहरण तु ही जु प्रशांत। सम परिणांमी तू हि सुकांत।।
कृश्न रूप नहि कृश्न स्वभाव। षट लेश्या रहितो सितभाव।।180।।
सर कहिये जु सरोवर नांम। तू हि जु मानस सरवर रांम।।
मुनि हंसनि कौ है जु निवास। समर सजल पूरित सुख वास।।181।।
सर कहिये फुनि बांण प्रसिद्ध। तैरै धनुष न बांण न सिद्ध।।
ज्ञांन चाप अर व्रत जु सरा। तू धारै धनुरद्धर परा।।182।।
सरपाधर कीये तैं कर्म। चौड़ चपाट करे सब भर्म।।
तेरी कही सलाह जु सुनैं। परम तत्त्व परमारथ मुनैं।।183।।
तो सम सरदार जु नहिं और। तेरौ सहर जु सब कौ मौर।।
सब सहरनि के वासी मरैं। तेरे सहरी कबहुं न टरै।।184।।
सदा सवाई तेरी बात। तोसौ द्योढि करै कु न तात।।
दूणों दूणों दिन दिन तूज। सदा सहाई तू जगपूज।।85।।
तौ बिनु कौन सहाय जु करै। सकल आपदा कौन जु हरै।।
सर्व सहाई जग के झूठा। तू हि सहाई अमृत बूठा।।186।।
ससक सुसा कौ नाम जु कहैं। ससक मार तोहि जु नहिं गहैं।।
हरन ससा बकरा बरबला। इनके घातक नरका मिला।।187।।
स्वसा वहन कौ नांव प्रसिद्ध। वह समान परस्त्री बुद्ध।।
बड़ी जु माता छोटी सुता। समवय बहनी एहु सु मता।।188।।
इह तेरे दासनि की दसा। शील महाव्रत अतिचित वसा।।
असाधारणो इह जु सुशील। या सम और न कोइ सुपील।।189।।
सरदजीत अति उजुल तू जु। तो सम सरद न निर्मल पूज।।
समा सारदी चंद्र जु क्रांति। इहै सारदा तेरी शांति।।190।।

(मंदाक्रांता)

सानिध्यो तू निकट जु महा, है जु साक्षात देवा।
सामीप्यो तू मुनिजननि कै, है जु साक्षी अभेवा।।।
साधू पूजैं अतिशय धरा, सातिसै तू अछेवा।
साध्यो तू ही जगपति गुरु साधू पूज्यो सु बेवा।।191।।

स्वाधीनात्मा अतिगुण युतो, साध्यरूपो तु ही जो।
साधू तारै, जिनपति प्रभू स्वात्मरूपो सही जो।।
साधु तोकौं अहनिसि रटै, साम्पतं तैं कही जो।
स्वामी तू ही, अनुचर सबै साधु वात्सल्य ही जो।।192।।
साध्यो स्वात्मा कहइ जु तुही साधना सर्व गावै।
साचौ तू ही, निज तत गहैं, स्वस्थिभाग्भाव भावै।।
साक्षीभूतो, सब विधि कहैं, साधु स्वांतः लषावै।
स्थाणुः नामा, स्थिति दृढ़ धरै, स्नातको तू कहावै।।193।।
स्थानी सार्वो निज सुखमयो, सार्व भौमेश्वरो तू।
साखा गोत्रा प्रवरन मिलै स्थान शीलेश्वरो तू।।
साझी तैरै अवरन परौ सर्व भूतेश्वरो तू।
सांई मोंकों करि निजरसो नाथ योगेश्वरो तू।।194।।
स्याणौं तू ही सब विधि लषै, साधना भाव रूपो।
साजा बाजा, कबहुं न धरै है असाध्यो अनूपो।।
साटा सूटी, किमपि न करै, सालिसो तू सुभूपो।
सार्वः सर्वे सकलपति अति साहिबो है निकूपो।।195।।
सागा पत्रा कुसम जु सवै, कंदमूला सबै ही।
निंदै तू ही कुफल हु सबै, जेहि साधारणै ही।।
स्याणै सोई तुव हि जु जपै भ्रांति सारी तजै ही।
वैई मूढ़ा, तुव नहि रटै, पंडिता ते भजै ही।।196।।
तोकौं ध्यायें कर नहि चढ़ै, सान लक्ष्मी प्रभू जी।
मोतैं स्वामी, करि निज कृपा, सानूकूलो विभू जी।।
हो हो देवा यति गुर तु ही, साच भासै स्वभू जी।
सर्वे साजा, तजि ऋषि लखैं, तो हि तू है अभूजी।।197।।

(नाराच)

नही जु स्वापतेय कोई तू जु है दिगंबरा।
कहैं जु स्वापतेय द्रव्य तू तजै निरंबरा।।

तुझै भजे अटूट द्रव्य हाथ आवई जिना।
तु ही जु अंधकार नाशकार है सही दिना।।198।।
तू ही जु स्वापतेय और आपदा जु जानिये।
तु ही धनाढ्य और रंक बात ए प्रवानिये।।
तुझै विसारि साधवा न स्वापतेय आदरै।
तनामना लगाय एक तोहि कौं जु आचरै।।199।।
परै जु वात सांठ मोर तू ज वै कृपा करै।
तु ही जु सार है अपार सारता अती धरै।।
सवै असार लोक है नहीं जु कोई आसिरा।
जु राव और रंक मांहि नांहि कोई आंतिरा।।200।।
फिर्‌यो जु हूं अनादि कौ भयो जु सांड सारिषौ।
चर्‌यो विषै कुचार कौं भयो जु नांहि पारिषौ।।
करे जु साट सूट मैं जु देह एह पोखियो।
रहै जु नांहि जाइगौ भलें जु एह सोखियो।।201।।
इहै जु सार सूरनाथ झूठ है सवै बुरी।
करे जु याहि पावई न रावरी महापुरी।।
लगी जु सात प्रकृति जु सात एह रोहणी।
इनूहि तैं छुड़ाय देव तू जु है महा धणी।।202।।
तजे जु स्वाद सर्व ही सवै जु इन्द्रियोद्‌भवा।
भजे जु एक तोहि ही सु हौंहि साधु स्वोद्‌भवा।।
विनान साधनं तुझै कदापि नांहि पावहीं।
यती जु सिद्धि साधना तुझीजु मांहि जांबही।।203।।
भजैं जु तोहि सात्त्विका तजें जु तांमसा जिके।
लहैंहिं साम्यता प्रभाव तोहि कौं मुनी तिके।।
जिके जु सिद्धि साधना, तिके सु देहु मोहि जी।
तु ही जु साहसीक नाथ है नमोस्तु तोहि जी।।204।।
न तो बिना जु सांहसौ लहैं न क्रापि साधवा।
तुझैं रटैं सुनारदा रटैं तुझैं उ माधवा।।

भजै जु सर्पनायकौ जपै जु देवनायको।
करे जु चित्त साफतोहि गावई सु लायको।।205।।
न रावरे जु दास कौ कदापि सांप काटई।
न रावरे जु दास कौं भूपाल क्रापि डाटई।।
न रावरे जु दास कै कदापि चोर पैसई।
न रावरे जु दास कै उरैं उपाधि वैसई।।206।।
न सावुना सिना जु लोह मोममादिका सबै।
न सीसकान आयु धान नीलि लाष ए फवै।।
कदापि रावरे जनाई सेवनिज्जना करै।
जहां हि वन्हि वापरै वनिज ते न आदरै।।207।।
न आठमी जु चौदसी कदापि हाट मांडही।
करे उपास चौ विहार लोक रीति छांडही।।
धरे अणुव्रता जु ए हरीति पालहीं गृही।
तजे गृहा मुनीश होइ एक तोहि कौ लही।।208।।
तुही जु साम दाम दंड भेद च्यारि भाषई।
सु लोक कौ धनी तथापि एक नांहि राषई।।
प्रभू जु सार धार तू अधार सर्व लोक कौ।
सु सार कौ समुच्चयो, विभू जु सर्व थोक कौ।।209।।
नहीं जु कोइसा लहै तुही असाल देषिये।
नहीं जु नाटसाल कोई राव तू हि पेषिये।।
तू ही जु साह और चोर पार कौ धना हरै।
तु ही स्व द्रव्य व्यौहरै तुझै न आपदा परै।।210।।
तु ही जु सारथी प्रभू चलावई स्व यंत्र कौ।
तु ही सु सार्थवाह है प्रभावई सु तंत्र कौ।।
सही जु स्वारथी तु ही प्रकाशई सु अर्थ कौ।
तु ही जु पारमार्थिको विकाशई परर्थ कौं।।211।।
तु ही जु साह तारई तु ही ज चोर टारई।
सु चोर हू उधारियो जु अंजनौ सु राजई।।

तु ही जु साधु पालको तु ही जु चोर हालको।
जु चोरटा विभाव जे मुसैं न तोर माल को।।212।।
सु साधवा जु ज्ञान आदि पासि ते विराजही।
जु तस्करा विमोह आदि तोहि देषि भाजही।।
तु ही जु साबितो सदा न हाथ कोई कौ परै।।
तुझै जु सास औ उसास साधवा न वीसरै।।213।।

(दोहा)

सार समुच्चय तू करै, साऊ तू दुष टाल।
सांई तो बिनु और को, तू इक सब जग पाल।।214।।
द्वादशांग वानी जिको, तिको सारदा देवि।
और न जग मैं सारदा, इह जिनवानी सेवि।।215।।
सारंगो कहिये धनुष, धनुरद्धर हरि देव।
नव ही हरि देवा प्रभू, तेरी धारहि सेव।।216।।
सांय प्रात भजै तुझै, भजै दुपहरी मांहि।
अर्द्धरात्रि हू मुनिवरा, भजै जु संसय नांहि।।217।।
सदा जु तोही कै रटैं, अहनिसि तेरौ ध्यान।
तन मन धन सब वीसरैं, तव पावैं निज ज्ञान।।218।।
तू सारंग जु पाणि कौ, तारक है भव देय।
तू हि जु लांगल पाँणि कौ, तारक तुरत अछेय।।219।।
सारंगो मृग हू कहै, मृग हू तुव भजि देव।
जन्मांतर मैं बालि ह्वै, पायौ पद जु अटेव।।220।।
सारा सूरी हम तनी, सकल मेटि जिनचंद।
निज स्वरूप कौ बोध दै, जो भवहर शिवकंद।।221।।
सा पुरिसो इक तू सही, कापुरिसा सहु लोक।
पुरिसोत्तम तू दै हमै, जो हमरौ निज थोक।।222।।
साहू तोहि चितारही, त्यागि सकल जंजार।
साधु समाधि न तो बिनां, हाथि लगै जग सार।।223।।

साधर्मी सौं नेह करि, तेरौ पथ सेवंत।
जिनवानी धारन करै, ते नर तोहि लहंत।।224।।
साधर्मी तोकौं भजैं, साधु समाधि लभंत।
सारथीक सब नांम हैं, तेरे तू जगकंत।।225।।
तू साहित्य प्रकाश है, काव्य प्रकाशक तू ही।
छंदालंकार जु सवै, तू भासै सु समूही।।226।।
युक्तागम शब्दागमा, परमागम सिद्धांत।
तो विन कौन विकासई, तू हि विकासक शांत।।227।।
साफल्यं ह्वै जन्म जब, सर्व त्यागि इक तोहि।
रटै बुद्धि हू कैं परैं, भयो महा निरमोहि।।228।।
तू साकार स्वरूप है, पुरुषाकार अनूप।
निराकार निरलेप तू, नित्यानंद निकूप।।229।।
साकृति और निराकृति, साश्चर्यो श्रुति सार।
सामी मोहि उधारि तू, दै भवसागर पार।।230।।
स्वामी तो सौ और ना, सांई सेवकौ तू जु।
स्वामिन्मोहि सुधारि तू, दै मुझ अपनी पूज।।231।।
साची वात रुचै तुझै, झूठी रुचै जु नांहि।
भव थिति हमरी वेगि हरि, लै करि अपुनैं मांहि।।232।।
सानंदो सद्रूप तू, स्वानंदी चिद्रूप।
स्वात्मा राम विराम तू, सातिशयो जगभूप।।233।।
सालोको आलोक धर, सामीप्यो सबकै जु।
सारूपो सब रूप तू,परैं बुद्धि हू कै जु।।234।।
सायो ज्यों सब मिलित तू, सब सौं न्यारौ देव।
सारिष्टो ऋद्धि जु धरे, तू जु अनंत विभेव।।235।।
तेरै नांहि अरिष्ट को, साधा सूधी नाहि।
तू साम्राज्य धुरंधरो, जगपति सब कै मांहि।।236।।
सांधो तेरे ना मिलै, मिलै न सांधा सूधि।।
तू अछिद्र सम्राट है, तेरै अतुलित न्यौंधि।।237।।

(छप्पय)

सिद्धारथ सिद्धो जु तू प्रभू शुद्ध सबुद्धो।
सिद्ध शासनो तू हि सिद्ध सिद्धांत प्रबुद्धो।।
स्थिरीभूत भावो जु स्वस्थ निःकंप सदा ही।
महासिद्धिदो देव दोष भावो न कदा ही।।
सिद्धि समृद्धि सदा भर्यो, तू सिद्धांत विदेश्वरो।
तु ही सिद्धसाध्यो गुंसाई, स्थिरो महायोगेश्वरो।।238।।
स्थिर गुण चर पर्याय वस्तु सहु उभय स्वरूपा।
तू भाषै सित देव नाथ है तू हि अनूपा।।
तू ही सिद्ध संकल्प सिद्धकल्पो जु गुंसाई।
सिद्धात्म सिद्धीश सिद्ध रूपो जु असांई।।
तु ही सिद्धि दातार हौ, ऋद्धि सिद्धि भागी गुरु।
है जु प्रसिद्धो तू महा, सिद्धि मूल स्वांमी धुरु।।239।।
तू सिद्धांत जु मूल नाथ सिद्धांत जु कारी।
है सिद्धांतहि गम्य तू अगम्यो अविकारी।।
सदा सिद्धि धारी जु ईश है सिद्धि स्वरूपो।
सिद्धशिला कौ नाथ पाँवनो तू हि अरूपो।।
पाँडुशिला पाँवन करी, कोटिशिला पानव करन।
सिद्धशिला कौ वास दै, दूरि करे जामन मरन।।240।।
सिकता बालू रेत ताहि पेले नहि तेला।
सिकता सम जग भूति तास मैं सुरक न मेला।
जग की भूति जु त्यागि तोहि भजि मुक्त जु होई।
सित तैं सित अति तू हि परम शुक्ल जु मय होई।।
सिक्तो धर्म जु वृक्ष तैं, तू जु सितेतर बीत है।
सिता जु मिश्री मिष्ट नां, तु ही मिष्ट जगजीत है।।241।।
सिक्ता अर सोनौ जु तुल्य दृष्टि जु करि देषै।
शत्रु मित्र सम देषि तोहि मुनिवर प्रभु पेषै।।

स्रष्टि सकल तोमैं जु तू जु है स्रष्टि जु मांहि।
स्रष्टि तनौ स्रष्टा जु नाथ तू स्रष्टि जु नांहि।।
स्रष्टि सुदृष्टा स्रष्टिपति स्रष्टी शो निज स्रष्टि धर।
स्रष्टि अनंत स्वभाव गुण, तू है गुणमय स्रष्टि कर।।242।।
तेरी सृष्टि अदोष इह जु सृष्टि ही सदोषा।
वह जु सृष्टि बिन मूर्ति इह जु मूरति जड पोषा।।
स्वपर सृष्टि तौमे जु भासई केवलगम्या।
तजे सृष्टि जडजात तो हि मुनि ध्यावहि रम्या।।
तू ही सृष्टि सृट् विश्वमय साकारा सृष्टि न करै।
गुण पर्याय स्वभाव, प्रभु निराकारता तू धरै।।243।।
सिषि मोर कौ नांम भव्य है सिषि समाना।
तू जु मेघ तुल्यो जु वर्षई ज्ञान अमाना।।
तेरी धुनि सुनि भव्य हर्षिता हौंहि अपारा।
नषसिष अपनौ रूप निरषही आनंद भारा।।
तेरी वांनि सुधा समों, मृत्यु रोग क्षयकार जो।
तेरे दास विलास में, परम महारस धार जो।।244।।

(सोरठा)

सिषी शिषंडि मयूर, केकि कलापी मेघप्रिय।
सुनि करि अंबुद तूर, करै हरष अति ही तिको।।245।।
मोर जु सहसानो जु, है सर्पारि सदा सही।
तद्वत तुव दासो जु, तुव प्रिय विषधर मदन हर।।246।।

(छप्पय)

गयो सिटाय जु मोह धाक सुनि तेरी देवा।
दासनि सौं लरतैं जु सिटपटात जु अति भेवा।।
सिफली वात न दास धारही क्रापि न चित्त मैं।
तेरी शुद्ध प्रतीति कारही परम स्वहित मैं।।

तोहि सिषायो किन हि नां, विनु ही सिषाये सब लषै।
तू हि सिषावै सबनि कौं, सरव सीषियो गुर पषैं।।247।।
जेहि सिंहावै मूढ़ सेय विषया परपंचा।
तेहि सिधारै नर्क भोगही दुरक अरंचा।।
जे षैलै जु सिकार कारही प्राणि विनासा।
ते पाँवैं दुष भार नरक कौ पाप विकासा।।
देषि जगत की झूठ माया, लोक सिंहावै नाथ जी।
हौंहु सिहायो झूठ सौं, अव दै प्रभु निज साथ जी।।248।।

(दोहा)

इहै सिहारी सारिषी, महा कुबुधि लागी जु।
सदा सिहारै ज्ञान घृत, कुट मंत्रैं पागी जु।।249।।
हरे हमारी कुबुद्धि हरी, दै सुबुद्धि परकास।
मति छिटकावै योगिया, राषि आपुनैं पास।।250।।
सिटकाये तो लषि सबै, रागादिक परपंच।
सिमटि गये जु विभाव सहु, जे होते अति वंच।।251।।
तोहि जपि अति साधवा, मुक्ति सिधारै नाथ।
तू निर्वाण प्रदायको, है जिनवर बड़ हाथ।।252।।
सिरा फली तोरै जिके, ते नहिं तेरे दास।
हरित काय करुणा करै, ते पाँवै तुव वास।।253।।
सबकै सिर परि तू रहै, सिरै जु बैठो देव।
सिरै जु वै सक पाँवही, जे धारैं तुव सेव।।254।।
हमरै सिरि वेगारि है, मोह तनी अतिभार।
सो वेगारि छुड़ाय तू, दै अपुनौ पुर सार।।255।।

(कुंडलिया)

तैं स्वीकारे मुनि गणा, लोक रीति विमुषा जु।
तू स्वीकार कियो मुनिनि, जो सबसौ सुमुषा जु।।

जो सबसौ सुमुषा जु सीर पाँणिनि कौ तारक।
इहै नाम बलिदेव तू जु वलिभद्र उधारक।।
सारंगी विनु मैं जु तोहि तैं स्वीकृत तारै।
सांच्यो करुणा वृक्ष मुनिगणा तैं स्वीकारैं।।256।।

(सारंगी वासुदेव)

मारै सीसाठी महा, मोहो तुव लषि सिद्ध।
सीसाटी कौ नाम है, सीतकार परसिद्ध।।
सीतकार परसिद्ध काम क्रोध जु कै परई।
जब मुनि तोहि चितारि परम विरकत ह्वै रहई।।
सीता सती उधार तू हि जिनवर अतिघाटी।
तोहि जपंता देव, मोह मारै सीसाटी।।257।।
सीधौ वीधौ निंद्य है, मांस समांन जु दोष।
घृत सीघड़ कौ भक्षनां, अणाचार कौ पोष।।
अणाचार कौ मौष तेल जल चरम जु पतिता।
हींग महा ही अभक्ष हाट मिठाई विकिता।।
तेरे दास भषैं न तोरमत दिठ ज्यां कीधौं।
भषैं कदापि न धीर निंद्य है वीधौ सीधौ।।258।।
सीता सम जु पतिव्रता, पावै तुव पुर पंथ।
तू जिनराज सुराज है, अतिधन अतिनिग्रन्थ।।
अतिधन अतिनिर्ग्रन्थ तोई भजि सतिय जु सीता।
अच्युत सुर्ग प्रतिंद्र भई सुख रूप सजीता।।
पैहै शिवपुर वास तो ही परसाद अजीतो।
अवर हू पावै तो ही पतिव्रता तुल्य जु सीता।।259।।
सीरी तैं हि जु तारिया, नौमैं अष्ट सु जान।
नवमें कौ तैं साप्रती, दयो सुर्ग सुष थान।।
दयो सुर्ग सुख थान ताहु कौं अब तारैगौ।
अष्ट चक्रि शिवकार च्यारि कौ अवधारैगौ।।

सीता राम उधार नांहि को तेरै सीरी।
तू सुग्रीव सुधार तारिया तैं हि जु सीरी।।260।।
सीरी रहितो तू सही, तेरै नांहि सरीक।
तू एकाकी राजई, तो बिनु सर्व अलीक।।
तो बिनु सर्व अलीक सीर फुनि नाम जु हल कौ।
तू हलधर भवतार तोहि मैं वास नखल कौं।।
तू भगवंत महंत, है जु साधुनि कौ भीरी।
जग जीवन जु शिवकार, तू सही रहितो सीरी।।261।।

(सोरठा)

तू भगवंत महंत गवगवाक्ष तारक तू ही।
दै भवहर निज सेब, समयसार कार जु तुही।।262।।
सीम धरम की तू हि, नींव सींव थुति की तुही।।
तू प्रभु गुणही समूहि, ऋषभ वृषभ निर्वाण तू।।263।।
तू सीमंधर देव, प्रभू युगंधर तू सही।
दै सीमंकर सेव, अपनी मोहि जु दास करि।।264।।
सीझैं तेरे होई, सीझे तो मैं आंवहीं।
स्वयंभूष्णु तू कोइ, सीर न तैरै आन कौ।।265।।
सीप मांहि मुक्ता जु, फल ह्वै स्वाति नक्षत्र मैं।
परै बूंद व्यक्ता जु, अंबुधि मैं अंबुद तनी।।266।।
भवसागर कै मांहि, सीप रूप नर देह जो।
स्वाति समसक नांहि, काललब्धि परीवांन है।।267।।
तू वारिद सम धीर, तेरी वानी बूंद है।
जीव मुक्त ह्वै वीर, तेरी अमृत बूंदतैं।।268।।
सीचैं जल सौं वृक्ष, तब वृक्ष जु फल कौ फलैं।
भक्ति रसैं परतक्ष, सींच्यौ शमतरु शिव फलै।।269।।
सींजै कण तहकीक, अगनि वारि पिठरादि तैं।
सीझै जीव सुठीक, तुव रुचि ज्ञानाचरण तैं।।270।।

सीष गहै जो कोय, तेरी जीव गुसांइयां।
परम महा शिव होय, अणु तैं गिर तू ही करै।।271।।
स्फार स्फीत जु तू हि, सीमा सकल स्वभाव की।
गुण सागर जु समूहि, शीकर शक्ति जु अमित धर।।272।।
भव सागर तैं नाथ, शीघ्र उधारै भविनि कौ।
जगत पोत गुण साथ, शुद्ध स्वभाव प्रभाव तू।।273।।
सीमा सुष की तू हि, सुषपति सीमाधर तु ही।
तो तैं सुष जु अदूहि, सीत न तेरौ आवई।।274।।
सीदति मोहि विमोह, सीदति अर्थ जु दुष करैं।
तू जिनवर निरमोह, तू हि छुड़ावै मोह तैं।।275।।
सब कौ सीरी तू हि, तेरै सीरी एक नां।
गुण देवो जु समूहि, तारै सीरी अमित तैं।।276।।
सीरी मुशली पद्म, हली हलायुध मुशल धर।
हरि भ्राता बिनु छद्म, पद्म परम रस राज मैं।।277।।
सीस नाय बिन मैं जु, तोहि सुरासुर नरपति।
तुव भजि साधु दमैं जु, रागादिक सेना प्रबल।।278।।
सीह नृसीह जु देव, एक तू हि गज कर्महर।
दै नरसिंह स्व सेव, अमित पराक्रम वीर तू।।279।।
अष्ट कर्म गज यूथ, हनिवै तैं नरसिंह तू।
पुरष सिंह अति यूथ, दाता तू ही गजनि के।।280।।
सीष्यो काहू पै न, बिनु गुर तोकौं सब फुरै।
मतलब काहू सै न, अर राजा सब लोक कौ।।281।।
सींग बिना पशु ते जु, जे पुरुषा तोहि न रटैं।
खर वनतैं हि भलै जु, आंवै कांमि सु भार कै।।282।।
सीठ समान गने जु, जग माया त्यागैं जिके।
आठौ कर्म हने जु, सूधे आवै तो विषै।।283।।
सीलौ अन्न जु षांहि, ते नहि पावैं सुबुधि कौ।
उपजै सीले मांहि, त्रस जीवा जिनवर कहै।।284।।

सीरौ हू सीलौं न, खावौ रांधे धान सम।
योज्ञ वस्त्र नीलौ न, नीलि नांहि हिंसा अती।।285।।
सीसौ वनिज करैं जु, जे मूरिष हिंसा धुरा।
नारक योनि धरै जु, बिनु करुणा तोहि न लहैं।।286।।
सीगै मिथ्या कै जु, तो बिनु जग करनी सबै।
तो करि पाप दवै जु, तू जगसीस विराजई।।287।।
नाम नारि कौ नाथ, कहैं बुधा सीमंतिनी।
सीमंतिनि कौ साथ, तजै जीव तब शिव लहैं।।288।।
सीहाशन चमरा जु, छत्र विभूति तजे नृपा।
तोहि भजि शिवराज, पावैं शास्वत थान जो।।289।।
सुश्रुति भासै तू हि, तू सुश्रूत सुनै सबै।
तू प्रभू सुगुण समूहि, निर्गुणता तोमैं नहीं।।290।।

(मालिनी)

सुगत सुगति दाता सुश्रुतो सुश्रुती तू।
सुभग सुमुष देवा सुष्ट है सद्गति तू।।
सुमित सुहित कारी तू सुरूपो सुगुप्तो।
सुखद सुलभ स्वामी दुल्लभो तू अलुप्तो।।291।।
सुहृद सुख स्वरूपो तू सुभाग्यो सुघोषा।
सुनहि सकल की तू सुस्थितो है सुष मोषा।।
सुविधि विधि बतावै, तू सुधी सुष्ट वाचा।
सुरग मुकति दाता, हैं सुषी तू हि साचा।।292।।
परमगुर सु यज्वा शुद्ध यज्ञांग कारी।
सकल करम होता विश्रुतो तू हि भारी।।
सु न्हवण विधि कर्ता ताहि तैं तू हि सुत्त्वा।
तुझइ जपइ शक्ता देव है तू सु सत्त्वा।।293।।

(दोहा)

सुत्रांमा तोहि जु रटैं, शत प्रमिता अति भूति।
तू सुत्रांमपती प्रभु, हरै पाप परसूति।।294।।
सुत्रामा सौधर्म जो, ताके एते नाम।
हरि सुरपति मघवा सही, नायक सुर सुषधाम।।295।।
पाकशासनो वासवा, इंद्र पुरन्दर शक्र।
शक्रंदन शतमष सही, वज्री जिश्नु अवक्र।।296।।
दिवोपती त्रिदिवोपती, सचिपती पुरहूत।
सहश्राक्ष आषंडलो, सुनासीर अतिभूत।।297।।
है जु शतक्रतु नाकपति, दुश्च्यवनो सुरराट।
जंभाराति सुरेश है, वृद्धिश्रवा अति ठाट।।298।।
सक्रपति नाकेश जो, त्रिदिवेशो जु दिवेश।
मरुत्सषा फुनि वृत्रहा, सेवै नित्य जिनेश।।299।।
देवराज अर गोत्रभिद, है जु विडौजा नांम।
जिनमारग कौ दास जो, जपैं निरंतर रांम।।300।।
सुरगुर बहुरि सुरर्षभो, सुरपालक सुरराय।
नाम अनेक धरै जिको, सेबै श्री जिनराय।।301।।
सुत्रामा पूजित तुही, सचीपूजितो तू हि।
दोऊ कौ तारक तुही, जगपति गुणहं समूहि।।302।।
सुर असुरनि करि पूजि तू, सुस्थिर सुस्थिति कार।
सुप्रभ सुवरण वरण तू, है सु धौत छविधार।।303।।
सुतनु सुषस्थाश्नु जु तु ही, सुमन स्थावर देव।
तो बिनु सुगत न और कौ, सुषसाद्भूत अभेव।।304।।
सुधी सु सेवहि तोहि कौ, तू जु सुदर्शन ईश।
चक्र सुदर्शन धारका, तोहि जपै जगदीश।।305।।
सेठ सुदर्शन तुव भजि, उतर्‌यो भवदधि पार।
तु जु सुदर्शन तार है, महा सुदर्शन धार।।306।।

सुजन सुधन तू सुनयधर, सुगी सुगीत सु चाल।
सुषी सुमेधा धीश तू, परम सुजान दयाल।।307।।
सुत दारा रहितो तु ही, परम सुगात पवित्र।
तू हि संस्कारीश है, सुमतीशो जगमित्र।।308।।
है सुसौम्यता धार तू, महा सुकृती देव।
सुकृत मूल सुमार्ग तू, अकृतहर अतिभेव।।309।।
सुकृत हू लषि नां सकै, अकृत किम पावै जु।
तोकौ तू ज्ञानातमा, मुनि गणधर गावैं जु।।310।।
सुप्रश्नो सुप्रीत तू, स्तुत्यो थुतियोज्ञो जु।
स्तुति करै तेरी सवै, तू है सरवज्ञो जु।।311।।
स्तुत्यीश्वर थुति पार तू, तू सुसंवृतो धीर।
सुभग तिके तोहि जु भजैं, सुभुत तु ही जिनवीर।।312।।
सुपथ सुगुप्तातम तु ही, प्रगट सुष्ट ज्ञातार।
सुनय तत्त्ववित्तू सही, सुलसा तारनहार।।313।।
तैं सुलोचना कौ पती, कीयो मुक्त सु सार।
तैं सुलोचना सुर करे, नर करि करिय जु पार।।314।।
राव अकंपन की धिया, जो सुलोचना नाम।
जयकुमार की जो प्रिया, सती शीलव्रत धाम।।315।।
पति पतनी दोऊ महा, तेरे दास दयाल।
ठौर ठौर इनकी कथा, ए बड़भाग विशाल।।316।।
तेरौ सुमिरन नाथ जी, करैं तिके भवजीत।
गंहै सुमिरनां रावरी, तजही सकल अनीत।।317।।

(सवैया इकतीसा)

सुव्रत सुशील शुद्ध तत्त्ववेत्ता तू हि बुद्ध,
सुनय प्रधान नाथ सुपथ प्रकाश है।
सुषपिंड सुषरासि सुषधाम सर्व पासि,
सुषरूप सुखमूल सुष कौ विकाश है।।

सुगति कौ दायक तू सुगति कौ नायक है,
तो बिना सुगति नांहि तू ही अतिभास है।
सुरासुर पूजैं तोहि सुरग मुकति देय,
तू ही सुरपति ताति ईश अविनाश है।।318।।

(वसंततिलका)

सुर्गापवर्ग सुषदायक तू हि देवा।
सुर्णाभ अन्य जड़ धातु वितीत भेवा।।
तू ही सुषज्ञ सुषपालक सुरक धर्मा।
सर्वज्ञ देव सुगमो बुध कौं सु मर्मा।।319।।
तेरी प्रभू सुधि मुनीश्वर वर्ग कौं हैं।
तो वाहिरौ सगुन और न सर्ग कौं हैं।।
तेरे जु दास जग सौं सुष नांन भाषैं।
त्यागे सवै जगविकार विवेक राषैं।।320।।
ते ही सुकार्थ करही नर देह देवा।
जे त्यागि लोक परपंच धरैं तु सेवा।।
तेरे जु वैंन सुनता सहु भ्रांति नासै।
तेरी सुचाल मुनतां निज तत्त्व भासै।।321।।
तेरी सु स्वच्छ प्रभुता वचनादतीता।
तोसौ सुजान जग मैं नहि और लीता।।
मेरौ सुधार नहि तोहि विना जु होई।
तेरौ स्वभाव सुरझार उधार सोई।।322।।
तू ही सु टंकउतकीरण शुद्ध रूपा।
तू ही सु ठाकुर जिना जगदीश भूपा।।
औरै कु ठाकुर सवै नर देव सर्वे।
झूठी विभूति लषि मूढ़ वृथा जु गर्वे।।323।।
तू ही सुढार शुभ रूप कुढार औरे।
तू ही सु पार भव कै जग कौहि मौरे।।

तोकौ सवै सुधि प्रभू सबके घटौं की।
योगीश वीर अतिहद् महा भडो की।।324।।
सुत्तच्छ भासक तु ही जिनसूत्र भासी।
स्वल्पो न तू अति गुणी महभूति रासी।।
तू ही सुदारुण महा दुखहार देवा।
तू ही सुधारण हमैं प्रभु दै स्व सेवा।।325।।
तू ही सुतारक भवोदधि पोत स्वामी।
तू ही तफारक सही सब सौं अनांसी।।
तू ही सुखात्मक सुषीकरणो सुशक्तो।
तू ही सुलभ्य निज बोध थकी सुव्यक्तो।।326।।

(उपेंद्रवज्रा)

यथा सुपर्णो अहि जात हंती। तथा तु दासा करमैं हनंती।
सुन्यो तिहारौ जस सूत्र मांहैं। तू ही उधारैं कछ सक्क नांहै।।327।।
कहैं सुपर्णो गरुड़ो जु पक्षी। पंषीनि कौं राव महा सुपक्षी।।
हतैं स्वभावैं अहि जात कौं जो। हतैं तथा भव्य विभाव कौं जो।।328।।
किये कुमर्णा जु अनंत बारा। अबै सुमर्णा प्रभु दै जु सारा।।
सुधी चितारै इक तोहि देवा। सुधी धनो तू हि अनंत भेवा।।329।।
तुही सुहावै जु बुधैं निशंका। तु ही सुकावै जु विभावपंका।।
तु ही सुभावै सुसुभाव स्वामी। तु ही सु लावै शिवपंथ नामी।।330।।

(सवैया इकतीसा)

तू ही है सुगुणधार सुन्यौ ठौर ठौर जसु,
निक्रमण धारक अनंत परकाश है।
सुरेण मौलिस्रगमालाभ्यर्चित चरन तेरे,
तू ही सुख दायक सुदर्शन विभास है।।
सुत नांहि काहूकौ जु तेरे सुत लोक सब,
सुतासुत नांहि कोऊ आपुन अकाश है।

केवल ही ज्ञांन मांहि भासै परतक्ष तु जु,
औरनिकौं सुधि नांहि महा सुविलास है।।331।।
सूर कोटि जित ज्योति सूरिजपती जु तू ही,
सूक्षम अपार देव थूल हू अपार तू।
सूक्षम स्वभावनि कौ दरसी जु तो बिनां न,
सूनृत सुपूतवाक स्वामी निरधार तू।।
सूनृत कहावै सत्य सत्य कौ उजागर तू,
थूल तैं सथूल आप महा निसतार तू।
सूरि नाम आचारिज सूरिगण ध्यांवैं तोहि,
सूरिनिकौ नायक महा सु सूरि सार तू।।332।।
सूर्याधिप देव तू ही सूरीश्वर सूरितार,
सूरिज प्रभा अनंत तेरे नष मांहि हैं।
भव्य कमलांनि कौं प्रफुलित करै जु तू हि,
तिमर कौ नाशक अनंत द्युति पाँहि हैं।।
सूकै तोतैं मोहसर तू है महाक्रांतिधर,
भागै तोहि लषें पाप सेना सक नांहि है।
सूकै नांहि काहू काल तेरौ गुनरूप वन,
सदा ही सघन महातापकौ नसाहि है।।333।।
गुनरूप वन कौ वनाधिप है तू हि नाथ,
सींचै समरसभाव वारि तैं सदा तु ही।
सूचै तू सु नवतत्त्व सूचै ज्ञान शुद्ध सत्त्व,
सूचै निज दरसन चरन वित्त तू जु ही।।
सूचै परद्रव्य तू हि भिन्न भिन्न लक्षण जो,
सत्ता कौ स्वरूप तू हि सूचै द्रव्य रूप ही।
दोय भेद सत्ता के जु प्रथम महा हिं सत्व,
दूजी है अवांतर सु सत्ता प्रभु तैं कही।।334।।
तेरी ही सु सूचनिका सूचैं मुनिराय सव,
तेरे ही सुपंथ के विहारक सु साधवा।

सूचै गुनथान तू हि चौदह प्रकार देव,
सूचै तू हि मारगण चौदह अवाधवा।।
सूचै नव प्रतिहरि नव ही सु नारद जे,
सूचै नव बलिदेव नव ही सु माधवा।
सूचै तू हि द्वादश जु चक्री षटखंडधार,
सूचै नाथ एकादश रुद्र मैं उमाधवा।।335।।
सूचै तू हि चौदा मनु कुलकर लोकनि कै,
सूचै देव तीर्थंकर शुद्ध चउवीस जे।
तीर्थंकर माता अर ताता तू वषांनैं नाथ,
चउवीस चउवीस पूजि विश्वावीस जे।।
चउवीस कांम वेद सूचै तू ही शुद्ध रूप,
शील के उजागर विमुक्त हौंहि ईस जे।
एकसौ गुणैतरिकौ सूचक न तो विनां जु,
तोहीकौं चितारैं मुनिनायक सुधीश जे।।336।।
सूचै तीन लोक लोकालोक सुविभेद सहु,
सूझै तोकौं तीन काल सदा काल कौ तरू।
सूचै मुनि श्रावक दुहूनि की सु रीतू ही,
आचार विधीनि कौं प्रकाशक सही धुरू।।
सूचै ब्रह्म ज्ञान की सुधारण सवै जु नाथ,
सूना कौ निवारक तू आप रूप है पुरू।
सूना नाम हिंसाकौ जु कभी नांहि सूना तेरै,
दयामूल आगमकौ भासक महा गुरू।।337।।
तेरौ जिनसूत्र सु तौ दया कौ स्वरूप नाथ,
सूना कौ न लेश कभी तेरे श्रुति मांहि जी।
सूत्र में अनेक भेद सवै भेद दया रूप,
महासूत बंधरीति संसै कहु नांहि जी।।

---

* रामठा कहिए हींग।

सूधौ शिवपंथ जहां चलैं मुनिधीर वीर,
तेरे सुत लागे निजरूप लहैं पाँहि जी।
सूगांवन देह सौं सनेह हमरौ छुड़ाय,
सूधे करि आपु मैं जु लेहु सक कांहि जी।।338।।

(सोरठा)

सूर शसी जु अनंत, कोटि एकठे हौंहि जो।
तौऊ ते न लभंत, तेरे नष कौ अंश हू।।339।।
सूलि वताबो राह, शिवपुर कौ जगनाथ जी।
करौ सही निरवाह, सूल हमारौं नांहि को।।340।।
सूझैं तोकौं सर्व, बूझै तू सहु रीति जो।
सूचै तू नहि गर्व, तू गर्वापहरो हरी।।341।।
सूजो फाटे चीर, सींय मिलावै ज्यौं सही।
त्यौं नय द्वय कौं धीर, तू हि मिलावै सूत्र मैं।।342।।
सूंघ्यो जिह सुक पूर, सो नहि सूंघे रामठा[1]।
पायो जिह जिन सूर, सो नहि जग मैं राचई।।343।।
तेरै सूधि सवै जु, सुथरी वात जु तू कहै।
तोकरि पाप दवै जु, बिगरी तू हि सुधारिहै।।344।।
सूधि परै तोसौं जु, जब मोकौं सब सुधि परै।
सुधरी नहि मोसौं जु, बिगर्‌यो नादि जु काल कौं।।345।।
सूधी चितवनि नाथ, करि पकरै जब हाथ तू।
तब पावै शिवसाथ, इहै जीव बहुरि न भ्रमैं।।346।।
सूतौ जीव अयांन, नादि काल कौं भ्रांति मैं।
तू प्रभु दै करि ज्ञांन, सूतैं कौं जागृत करै।।347।।
सूतिगरूप जु देह, तातैं मोहि छुड़ाय तू।
हौंहु सही जु विदेह, अैसौ करि जग नहिं रुलूं।।348।।
सूतौं हौं जु अनादि, सोवत सोवत जुग गयो।
अब मेरी करि दादि, जाग्रत ह्वै तोकौं भजौं।।349।।

सूतिग तिनकै नित्य, जिनकै घरि अरचा नहीं।
इहै वारता सत्य, तो विनु पाँवनता नहीं।।350।।
सूती कहिये सोहु, भई प्रसूति जु जास कै।
तीन पक्ष मैं जोहु, शुद्ध होइ सूतिग टरें।।351।।
पंच दिवस मैं शुद्ध, होइ योषिता रजसुला।
इह भाषैं प्रतिबुद्ध, पंच दिवस तक सूतिका।।352।।
परपुरुषा सौं रत्त, सो नारी अति पापिनी।
महा जु दोषाशक्त, सूतिग तैं कबहुं न टरै।।353।।
पतिवरता प्रतिबुद्ध, जा घरि सो घर शुद्ध है।
कुलटा कौ जु अशुद्ध, घर सूतिगमय जानिये।।354।।
मांसासी जु अशुद्ध, सूतिग रूप निरंतरद्य।
मदपानी मधु लुब्ध, सूतिगता तिनकै सदा।।355।।
सूतिग द्वादस दीन, मृत्यु होइ जा कुल विषै।
इह धारौ परतीत, जिनवानी परवान तैं।।356।।
करि परगट निज ध्यान, धरि सल्लेषणा विधि मुवा।
व्रतधर परम सुग्यान, तिनकौ सूतिग नाहि कहु।।357।।

(त्रिभंगी)

प्रभु तू हि यथेष्टो, ऋषि जु स्थेष्टो, नित्य जु प्रेष्टो, थिर देवा।
सव सेना कौ पति, यति जु महा छति, एकाकी अति, चर देवा।।
कबहूं नहि स्वेदा, अतुल अषेदा, परम अभेदा, अति सेना।
मुनि धारहि सेवा, हौंहि अछेवा, वह जु अभेवा, जिन सेना।।358।।
नहि स्वेत जु कृष्णो, जिनवर विश्नो, रटइ जु जिश्नो, जसु नामा।
भवि करहि सुसेवा, तन मन देवा, शिव पुरि लेवा, सो रामा।।
तनु महल न सेजा, अमित तु तेजा, करइ न जेजा, श्रुत तारै।
इन सेवित सोई, अवर न होई, जग गुर जोइ, भय टारै।।359।।

(चौपई)

सेनाधर सेनावर तू हि। सेनाधिप अतिसेन समूहि।।
चउषट सप्त जु सेना धरा। तोही कौं सेवैं नर सुरा।।360।।
सेत नांव है पाज तनौं जु। तू भव पाज सु काज घनौं जु।।
तोकरि पाँवै भवदधि पार। महा सेत तू शांत अपार।।361।।
करैं नांहि सैंनां धरै नांहि मैंना। जपे तोहि देवा लहैं साधु चैना।।
जु सैनी असैनी सवै जीव भेदा। कहै तू अधीशा प्रभू है अभेदा।।362।।
न सैंनी असैंनी द्वयी भाव तोमैं। सुभव्यो अभव्यो नहीं तू हि दो मैं।।
तु ऐकेद्रिया सु चौरिंद्रि लौं ते। सवै ही असैनी विना चित्त हौं ते।।363।।
तू पंचेंद्रि मांहैं उभै भेद भाषै। गहै नांहि भेदा तु ही तत्त्व चाषै।।
जु मिथ्यात ठांणै सुभव्या अभव्या। सवै और ठांणा गहै एक भव्या।।364।।
हतै मोह सैंना अभव्या न क्वापी। लहैं नांहि तोकौं कदे ही सु पापी।
तुझै भव्य पाँवै जु संसार नीड़ा। तुझै ध्याय पावैं न संसार पीड़ा।।365।।
तु सैथिल्यवीता द्रिढ़ात्मा जिनिंदा। किये कर्म सैथिल्य तैं ही मुनिंदा।।
सु सैली निजात्मीक तेरै जु हाथा। नहीं कांम क्रोधादि मैं तू सुनाथा।।366।।
कहैं सैन सोबौ कभी तू न सोवै। कहैं सैन सेना तु सेना न जोवै।।
सदा एकलौं नंत भावाधिरूढ़ो। सवै भाव जामैं तिको तू अगूढ़ो।।367।।
समस्या हु कौं सैन भाषैं जु लोका। तिहारी समस्या गहैं साधु थोका।।
कहैं साधु लोका प्रत्यक्षो जु तू ही। तु सैवो च सैषो प्रभू है समूही।।368।।

(मोतीदाम)

तु ही जिन सोम जु शांत प्रशांत। जपै इक तोहि जु सोम सुकांत।।
तु सोभित सोम जु मूरति देव। तु सोभ जु नीक सुनीक अछेव।।369।।
तु हंस जु सोहउ मंत्र विभास। नहीं अजपा सम और प्रकास।।
इहै जु अजप्पउ योगि जु तंत्र। सुनैं तुव दास जु एहु सु मंत्र।।370।।
सुने इह शब्द जु तोहि लषै जु। तिके भव पासि हरैं विलसैं जु।।
मनां सम आंन न मालउ होइ। सु आतम सौ नहि देव सु कोइ।।371।।
सुमंत्रनि का अजपा सिरताज। इहै सब भेदक है जिनराज।।

रुलै भवमांहि न सो भवि जीव। जिको तु हि गावइ देव सदीव।।372।।
न तो सम सोनउ होइ जु क्कापि। तु सोलह वान सु हेम उदापि।।
जिको तजि सोनउ तोहि भजै जु। सु पूरण दास तताहि छजै जु।।373।।
न सोग न सोक न सोच न सोष। कदे हु जु धारइ दास न दोष।।
सवै मिटि जांहि जु सोच र सोग। वइ ह्वै मुनि राव छांडि जु भोग।।374।।
न सोजउ आदि रहै तन रोग। इके तु हि ध्यायइ देव सजोग।।
न सोर असार जु तेर हि कोइ। सबै मिटि सोर प्रशांति जु होइ।।375।।

(सवैया इकतीसा)

सोलह सुरग मांहि दस सुरिंद होइ,
च्यारि मांहि च्यारि फुनि आठ मांहि च्यारि है।
च्यारि मांहि च्यारि फुनि या प्रकार वारह जो,
बारह प्रतिंद फुनि कहै तू विचारि है।
वीस इंद्र वीस प्रतिइंद भौनवासिनि के,
दोय चंद सूर ज्योतिसीनिके सम्हारि है।
सोलह प्रमाण इंद्र सोलह जु प्रति इंद्र,
विंतरीक देवनिके तू ही निरधारि है।।376।।
चौ प्रकार देवनिके इंद्र प्रतिइंद सहु,
ठ्याणव प्रमान जिन ग्रन्थनि मैं गाइये।
एक है नरिंद अर एक तिरि इंद मिलि,
शत प्रमिता जु एई महा भाग गाइये।
सब करि पूजित तू तेरे अति दास ए जु,
तू हि अहमिंद्रनि कौ ईश्वर बताइये।
सोलह सु कारण कौ कारण तु ही जु एक,
सोलसवरण मंत्र मूरति सु ध्याइये।।377।।
सोलह सतीनि के जु सत कौ प्रकाशक तू,
सती तौ अनंत भई पतिव्रत पालिका।
पै जु मुख्य रूप एई लोक परसिद्ध महा,
तेरौ मत पाइ सब दोषनि को टालिका

केई बाल ब्रह्मचर्य धारिका अखंड रूप,
केई पतिव्रता जिनमारग की बालिका।
सो धन निजातम कौ तेरैई प्रशाद करि,
अबलापणौं जु मेटि भईं गुणमालिका।।378।।
सोधा सव भावनि कौ बोधा है अनंत तू ही,
कर्मनिकौ रोधा विनु क्रोधा जिनदेव तू।
सोत नांव छिद्र कौ जु तेरै नांहि सोत कोऊ,
श्रोतानि कौ तारक है दै हमैं स्वसेव तू।।
सोतयुत प्रोहण ज्यौं बूड़ै भवसागर मैं,
जीव नांहि लहैं पार ज्यौं न ह्वै अभेव तू।
मिथ्या सोत पाय कर्मवारि आय वोवै नाव,
षेवट न होइ कभी जीवकौ अछेव तू।।379।।

(दोहा)

सौरा शैवा सौगता, तो विनु शिव न लभंत।
सौ इंद्रनि करि पूजि तू, शिवदाता शिवकंत।।380।।
सौख्यमई सौख्य जु निधी, सौख्य अपार महंत।
धरै सौम्यता सहज की, तू सो है भगवंत।।481।।
सौम्यातम सौख्यातमा, है सौख्यातमरूप।
तेरी सी सौन्दर्यता, अवर धरै नहीं भूप।।382।।
सौजन्यातम संत तू, सौंज धरे जु अनंत।
जन की सौंजज है तू ही, अति सोहार्द सु तंत।।383।।
तेरी सी सौहार्द्रता, और न धारे कोई।
तेरी सी सौजन्यता, तो ही मांहे होई।।384।।

(छप्पय)

सौख्याधिप सुखवास तू ही है तु जु सुशीला।
तैरा धर्म विशाल सौम्य कर तू ही कृपाला।।

तो सो सुजन न काई परम सौजन्य अधीसा।
सौदामिनी संभोग भाव त्यागक तू ईसा।।
सौदामिनी विजलि जु कहि तासम लोक विभूति है।
सबै सौंज चिटकाय प्रभु, तू बैठो शिवभूति है।।385।।
तू जु सुमित्रा तार तू हि सौमित्र अधारा।
सौमित्रो बलवंत, जो हु रामानुज भारा।
लछिमन जाकौं नाम जासु की मात सुमित्रा।
तो करि पावैं पार तू जु ह्वै जगत सुमित्रा।
है सौहृत्य सु सौध तू ही, सौधी भाषा जंप को।
तू सौरभ्य अनंत अति ही, सौष्ठ्याधीश अकंपको।।386।।
सौरभ नाम सुगंध तो समो और न कोई।
है न सुगंध दुगंध तू हि निरगंध जु होई।।
सौध महल कौ नाम तू जु धारै नहि सौधा।
सबकौ सौध जु तू हि तोहि पावैं नहि बौधा।।
सब तोमैं तू सवनि मैं हैं, सिद्ध लोक मैं राजई।
तेरौ सौध जु तू हि दैवा, स्वस्थो नित्य विभासई।।387।।
अति सौभाग्यमयो जु तो समो कौन सभागा।
है सौजन्य उधार पार सौहारद जागा।।
सौख्य निरंतर मोहि देह जगपति जिनदेवा।
सौदामिनि सम देह धारिवौं हरि जु अछेवा।।
सौम्य सुशीतल करि हमैं हो, सौगत तोहि न पाँवही।
साधु लषे इक तोहि निश्चयो, तोही मांहि सु जावहीं।।388।।
सौराष्टर शुभ देश ख्यात कीयो तैं स्वामी।
कियो ख्यात गिरनारि लोकनायक तू नामी।।
तैं जगशिखर विख्यात कियो लोकेश्वर नाथा।
दै हमकौ निज सेव तारि भव तैं जु अनाथा।।
सौमित्री से भक्त हलि, तात भक्त रघुनाथ से।
जयकुमार से स्वामिभक्त, लहैं तोहि कुर नाथ से।।389।।

(सवैया तेईसा)

संवर रूप अनूप अनूपम, संयम धारक तू अतिभारी।
संवर निर्जर मोष तु ही इक, आश्रव बंध न तू अविकारी।।
जीव अजीव सवै प्रभु भासइ, तू हि जु और न कोइ अपारी।
सुंदर रूप सु सुंदरता अति, सुंदर देव जु संत उधारी।।390।।

संत तु ही अर दंत तु ही इक, कंत तु ही जग कौ जितिराया।
संयम आगर नागर तू प्रभु, सागर तू हि उजागर भाया।।
संयम धारक संयमि संत जु, तोहि रटैं तजि लौकिक माया।
संग तजे सहु संचय त्यागि जु, तो बिनु और न तत्त्व सुहाया।।391।।

(शार्दूलविक्रीडित)

स्वांत:कर्ण महैं जु तोहि निरषैं ते धन्य धन्या प्रभो।
शंका मेटि रहै निशंक सु रटैं साधू तुझैं ही विभो।।
संगा द्वै विधि सर्व त्यागि सुधियो, जे बाहिराभ्यंतरा।
चौदाभ्यंतर बाहिरा दस गिणा, एई महा विंतरा।।392।।
छव्वौका सहु संग वाहरि महैं संख्या असंख्या गिने।
पापानंत परिग्रहा श्रुति कहै त्यागौ विभावा घने।।
ध्यावो संघ उधार देव प्रभुजी मन कौ लगावै तत्त मैं।
भौ भव्या प्रभु सौनमित्र द्वितियो धारौ तिसै चित्त मैं।।393।।

(कुंडलिया)

चउविधि संघा जासु कौं, भजैं सुचित्त लगाय।
सो संचय निज गुननि कौं, श्रीजिन त्रिभुवनराय।।
श्रीजिन त्रिभुवनराय, संधि वंधि न कछु जाकै।
संधि विभक्ति समास, कारका तद्धित ताकै।।
लिंग न एक वि जोइ, भाषई लिंग जु त्रय विधि।
ध्यावैं सकल विहाय, जासु कौ संघा चउ विधि।।394।।

पर द्रव्यनि के संचया, तेरै किमपि जु नांहि।
तू संचय निज भाव कौ, सब संचय तो मांहि।।
सब संचै तो मांहीं तू जु संयत अविकारी।
संवर दाता देव तू जु निर अंबर भारी।।
नांहि भजैं तै संढ सेवही संघ मुनिनि के।
तेरै मूल जु नांहि संचया पर द्रव्यनि के।।395।।
क्रियमाणा अर संचिता, प्रारब्धा बिन संत।
शंसय छांडि तुझै भजें, आनंदाक विक संत।।
आनंदा विकसंत तत्त्व पइए तुव ध्यायें।
संघ भार सब तोहि सिद्धि पइए तुव गाये।।
तू संवित्ति स्वरूप तारको है तुरमाणा।
तुव नामै विनसंत, संचिता अर क्रियमाणा।।396।।

(सवैया तेईसा)

संभलि तोहि सम्हारि जिके मुनि, संयम धारि भये जग त्यागी।
संग लगे तुम्हरै तजि संग, सवै जग वासिनि कौ सु विरागी।।
त्यागि सबंध सरीर हु तैं अर, ह्वै निरमोह तुझै अनुरागी।
ते निज संत लहैं तुव धांम, तजे भृम जार महा बड़ भागी।।397।।
सं कहिये सम भाव सु सम्यक, जे सम भाव धरे इक तो ही।
लागि रहे तजि लोक संबंध, धरै तुव ध्यान सु जु जे निरमोही।।
ते निज काज करैं लखि आतम, सिद्धि वरंगन के वर होही।
सम्यक अंग जु अष्ट प्रकार सु, धारि जु निश्चल हौहि अमोही।।398।।

(चौपई)

संसम्यक्त प्रधारक तू ही। अष्ट अंग कौ भास विभू ही।।
निश्शंकित निकांक्षत अंगा। निरविचिकित्स अमूढ़ प्रसंगा।।399।।
उपवृंहण थिरकरण जु मुनिये। वात्सल्यो जु प्रभावन भनिये।।
ए वसु अंग जु सम्यक के हैं। तो बिनु किनहि न ख्यात किये हैं।।400।।

इनके ग्राहक तोहि जु पावैं। इन विनु तेरे पुरि नहि जावैं।।
धारक इनके अमित जु हूवे। ते सब केवलगम्य प्रभू वे।401।।
विनऊं अष्ट जु जे सुप्रसिद्धा। अंजन अनंतमति प्रतीबुद्धा।।
उद्यायन अर रेवति रानी। सेठ जिनिंद्रभक्त गुण खानी।402।।
वारिषेण औ विश्नु कुमारा। वज्रकुमार प्रभावन धारा।।
इनहि आदि जे अंग उधारा। ते सब ते करि पावंहि पारा।403।।
संग तिहारै जे नट लगिया। छांडि सोवनौं जे नर जगिया।।
निज संगो लहि ते जिन रंगा। पाँवहि बंध बिजुत्ति अभंगा।404।।
संज्ञा संख्या लक्षण प्रोजन। इन करि गुण गुणि भेद सुरोचन।।
वास्तव भेद न गुण गुणि मांहै। वस्तु एक ही भिन्न जु नांहैं।।।405।।
द्रव्य गुणा पर्याय स्वभावा। वस्तु एक ही भिन्न न भावा।।
सर्व द्रव्य गुण पर्यय रूपा। तू हि प्रकासै देव अरूपा।।।406।।
संकट हरन संपदा रूपा। तू संपत्ति स्वरूप अनूपा।।
सर्व विभूति संचयो तैरै। अद्भुत नग्नो रोर न नैरै।407।।
तू संदेह निवारक स्वामी। संदिग्धा तेरै न विरामी।।
संज्ञी और असंज्ञी जीवा। तो विनु कौंन जु पाल सदीवा।408।।
संज्ञी मैं सम्यक भी उपजै। बिनु संज्ञी सम्यक नहि निपजै।।
संज्ञा च्यारि न तेरै क्वापि। तू संज्ञा रहितो जु उदापी।409।।
संसारार्णव तारक देवा। तू ज्ञानार्णव अमित अछेवा।।
संसारी न लहैं तुव मर्मा। तू संसार वितीव सुधर्मा।।।410।।
संसारी तैं सिद्ध करै तू। माया जाल समूह हरै तू।।
संभावन जु असंभावन तू। संभवनाथ जु अति पावन तू।।411।
संभव जग कौ मेटि अछेवा। हरे जु भव संतति दुष देवा।।
तेरै नहि संतति संताना। संत उधारक तू हि अमानां।।412।।
ए संसार सरीर जु भोगा। महा आपदा मूल सरोगा।।
इनकौ निंदक तजक जु तू ही। बैठो सिरि संसार प्रभू ही।।।413।।
संसृत भाव जवै ही छूटै। तुव परभाव काल कौं कूटैं।।
सरभरि तेरी कोइ न करई, तू संसार जु कारण हरई।।414।।

(सोरठा)

संप्रदाय तेरी हि, हरै जु भव संतान सहु।
सो संपत्ति ढेरी ही, और विपत्ति विरूप सहु।।415।।
तेरी भाव विभूति, सोहि संपदा और ना।
हरि सहु कष्ट प्रसूति, दै संतति निज रूप जो।।416।।
नांही मोक्ष दुवार, तो संप्रदायनि विना।
दै हमकौं ततसार, करि स्व संप्रदाई जिना।।417।।
संपा विद्युत नाम, अर सौदामिनी बीजली।
तदवत् इह धन धाम, झूठी जग संपति सवै।।418।।
संपादक निज ज्ञान, तनौं एक तू और नां।
संत धरै तुव ध्यान, संत महंत अनंत तू।।419।।
संप्रदान अधिकर्ण, अपादान निज कर्ण तू।
कर्त्ता कर्म अमर्ण, षटकारक धारक तू ही।।420।।
संध्याभ्र जु सम भूति, भोगीन की भंगुर महा।
अभ्रपटल सम सूति, क्षण मात्रैं जाती रहै।।421।।
संध्या तीनौ नाथ, जे सामायिक विधि करैं।
धरि समता मुनि नाथ, तोहि लहैं तेरे हुए।।422।।
संवेगादिक धारि, जे तोकौं ध्यावैं व्रती।
निर्वेदादि विथारि, ते हौंहि अजरामरा।।423।।
पडिकौंणा सामाय, कादि करे तुव गुण रटैं।
ते हौंही शिव राय, संगति साधुनि की थकी।।424।।
सतसंगति परवांन, शिव संगम पावैं सदा।
ह्वै दासा भगवान, बहुरि न भ्रांति कभी धरैं।।425।।
प्रात मध्य सांझै जु, मध्य रात्रि हू भवि जपै।
ते न एन वांधै जु, निहपापा ह्वै भव तिरैं।।426।।
षट चउ द्वै घटिका जु, करैं तिके ही धन्य हैं।
त्रिविध जु धरि समता जु, सामायक श्रेय जु अती।।427।।

समता सब सौं कारि, ममता सब सौं परहरैं।
संध्या त्रय जु सम्हारि, तोहि जपैं धन्या तिके।।428।।
सः कहिये सो जीव, धन्य धन्य है जगत मैं।
तोहि रटै जु सदीव, तेरौ होय र भव तजै।।429।।
सः शूली सु विख्यात, शूली नाम जु रुद्र कौ।
तोहि भजैं जगतात, एकादस शूली सवै।।।।430।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

(सवैया इकतीसा)

समरस पूरि तजो सागर गुनानिकौ जु,
सिद्धि ऋद्धि वृद्धि कौ सुसागर अनंत है।
सिद्ध है स्व सीमा धर सीमंधर नाम जाकौ,
सुनासीर सेवैं जाहि देव भगवंत है।
सूत्र कौ विभासक जो सूना कौ निवारक है,
सेतु भव सिंधु की जु सैली कौ महंत है।
सोमता सुसौम्यता सु संतता प्रदायक जो,
शून्यता न दीषै कोइ सः प्रभू प्रसंत है।।431।।

(कुंडलिया)

तेरी नाथ सु संपदा, महा सुसंपति जोहु।
संकट हरनी संतता, लक्ष्मी कहिये सोहु।
लक्ष्मी कहिये सोहु स्वानुभूति हु पवित्रा।
सौदामिनि सम नांहि निश्चला स्वच्छ सुमित्रा।।
साकारा निरकार तो समा शुद्ध घणेरी।
भाषैं 'दौलति' ताहि संपदा नाथ सु तेरी।।432।।

इति सकार संपूर्णम्।



आगै हकार का व्याख्यान करै छै—

(श्लोक)

हरं हरगणैर्ध्येयं, हरिं हरिशतैर्नुतं।
हारकुंडलकेयूरं, अंगदादिविदूरगं।।1।।
हितं हिरण्यगर्भं च, हीनदीनादिपालकं।
हुताष्टकर्मकाष्ठं च, शुद्धं हुतभुजोपमं।।2।।
पुरहूतपतिं देवं, हेमरूपं महाप्रभं।
क्षेत्रान्हैमवतादींश्च, भासकं परमेश्वरं।।3।।
कर्महोमकरं वीरं, देवं ध्यानाग्निदीपकं।
हौत्रिकं हंसरूपं च, हंसवर्गेनिषेवितं।।4।।
हः मंत्राक्षररूपं च, सर्वाक्षरस्वरूपकं।
वंदे लोकत्रयाधीशं, जिनं शिवकरं परं।।5।।

(दोहा)

तेरी नित्य स्व हर्षता, हर्ष विषाद न कोइ।
सत्तम सत्त्व जु सांतता, धरन धीर तू कोई।।6।।
किये हजारा पार तै, किये हजारा देव।
तो सौ तू ही देव है, दे हरि हमकौ सेव।।7।।

(छप्पय)

है कहिए श्रुति माहि हे जु संबोधन अर्था।
हरिनायक हरनाथ तू जु प्रभु शुद्ध चिदर्था।।
हरि वल्लभ हतराग तू हि हर जिनवर देवा।
हरिहर जाकी सेव करै मुनिवर अतिभेवा।।
हलधर पति जतिराय स्वामि, है हृदयस्थ निजस्थ तू।
हरिहरादि ध्यावै जु जाकौ, हतविभ्रम अति स्वस्थ तू।।8।।

हतकैतव तू देव तू जु हतकैतव रावा।
तू ही है हत दोष, तू हि त्रिभुवन गुर रावा।।
हत द्रोहो हत मांन हत जु मिथ्यात मलादि।
हत जु राग हत जन्म मृत्यु हत तू शकलादि।।
हत विभ्रांति विभीति तू, हत संकट तुव नाम है।
राग द्वेष सब हत जु प्रभु, हत अपराध जु आप है।।9।।
हृषीकेश जगतेश तु हृषीकनिकौ जेता।
मन मच्छर कौ जीत ह्रस्व दीर्घ न गनेता।।
हत कर्मा हत भर्म तू जु हत छल हत लोभा।
हत द्रारिद्र जु दुरक तु जु हत कलुष र क्षोभा।।
प्रभु हताशा हत अरी, तू हरिविक्रम हरि पति।
हरी दृष्ट तुष्ट पुष्ट जु सदा, हृदै तिष्टि हमरै धुरी।।10।।
हत दुर्नय दुर्नीति नाथ है तू हि अविग्री।
हवि सुरूप सहु कर्म तू हि होता जु समग्री।।
हृषेकेंद्र जिनचंद्र नांहि तेरै जु हृषीका।
इंद्रिनि कौ इह नाम तू जु जितइंद्रि अनीका।।
हमकौं पार उतारि, धरि शिवपुर मैं वेगिही।
चउगति भ्रमण निवारि धुरि, ज्यौं त्यौं निजपुरि भेजिही।।11।।
हरित पीत सित रक्त स्याम नहिं तू घनस्यामा।
हरित काय नहि भक्ष होइ तेरे मत रांमां।।
हरित काय सहु त्यागि, तोहि भजि दय पालैं जे।
दयापालि जगनाथ तोहि भजि अघ टालैं जे।।
ते माया कौं जीति कैं, आय वसैं तुव पुरि जिना।
तू दयाल हरितादि कौ, त्रस थावर पालक गिना।।12।।
हद बेहद तू देव हद्द बाँधै सहु तू ही।
रहै हद्द कै अंति अतुल गुण कौ जु समूही।।
हसइ न कबहूं नाथ रूसई क्रापि न देवा।
जपहि जु तोहि मंहत, देहु हमकौ निज सेवा।।
हद बेहद भाषै तुही, हद्द धरम की बंधिया।
शृष्टि अनादि अनंत इह, नायक तू हि अबंधिया।।13।।

हठ योगी हठयोग धरण हठ करि अघ दंडे।
तैं जु हठात प्रकार काम क्रोधादिक षंडे।।
हणि हमरे अघ देव कर्म हन तू हि सही है।
हच्छ पकरि वडहच्छ हमहि तारक जु तू ही है।।
हति पातिग संतति गुरौ, दै अपनी अर्चा महा।
करि निज दास अनासई, अवर वस्तु जाचैं कहा।।14।।
हड षोडे कौ नाम जा महैं चोर जु पावा।
जड़ ही तलवर भव्य कारहीं वासौं दावा।।
हड़ सम आयु जु कर्म चोर हम पर धन हारा।
पकरे तलवरि मोह तू छुड़ाय जु सुरझारा।।
निज धन हमरौ द्याय प्रभु, ज्यों कबहु न परधन हरै।
अपनौं द्रव्य जु शास्वतो ले, तेरै पुरि वास जु करै।।15।।
हक नाहक मोकौं जु दियो दुख इनि करमनि नैं।
लियो लूटि सहु माल कियो निरधन भरमनि नैं।।
बसै जु मेरैं पासि एक भाव सु करि मोसौं।
अंतर भेद जु राषि भेद पास्यां जिन तोसौं।।
मेरौ माल अनंत हर्यो, ताकी तौं वात हि रही।
इनकौ तुच्छ जु माल प्रभु, ता का रनि बांध्यौ सही।।16।।
अब तौ बंध विदारि सरण हम तेरौ लियो।
हटकि कर्म सब भर्म मोहि इनि वहु दुख दीयो।।
दयापाल तू देव है जु सरणागत पाला।
नीति मूल जगराव करि जु मुझ न्याव विशाला।।
हटक्यों तू हटकै जु नंहि, तोहि जु हटकै कौन सो।
इनैं हिटकि मोकौं जिना, पहुँचाये निज भौन सो।।17।।
हस्त न पाद न सीस अंग उपअंग न तेरै।
पुरषाकार स्वरूप देह पाँचौ नहि नेरै।।
तू हि लोक परमांण ज्ञान प्रमाण जु तू ही।
सर्व प्रमाण जिनेश अप्रमांणो हि समूही।।
साकारो नाकार, निराकार साकार तू।
तो सौ तू हि जु शुद्ध है, निरधारा आधार तू।।18।।

हस्ति न घोटक भृत्य नांहि स्यंदन की तेरै।
सब दाता तू ही जु तो विनां ऋद्धि न नेरै।।
हस्त वदन जिननाथ है जु वड हाथ मुनिंदा।
हर एको नहि कोऊ होइ तेरै जु जिनिंदा।।
हर तेरै शिवकरन की, जीवनि कौं शिवपद करै।
हटक्यों कबहूं ना रहै, अटक न काहू की धरै।।19।।
हट्ट वजार न कोइ होइ तेरे शिवपुर मैं।
हड्डु न मांस न चाम रोम नहि तेरै धुर मैं।।
हठ नहि तू जु हठात मोह कौं मारि विडारै।
नग्न जु तू हि भग्न काम क्रोधादि पछारै।।
हसिवौ षिजिवौ न हुवै, नांहि जु कोऊ कांम नां।
हल्ल किये अरिमल्ल तैं, धाम रूप तू धांम ना।।20।।
करि स्व हजूरी मोहि और नहि जाऊं कित ही।
दै स्व समीप जिनिंद बहुरि नहिं आऊ इत ही।।
भयो अजीरण मोहि कर्म पोतै अति भारी।
दै हरीतिकी तुल्य तू जु जिणवाणी आधारी।।
हय हस्ती हसम जु सवै, नश्वर माँगू नां विभू।
कर्म विरेचक करि गुरो, हरि जु अजीरण मुझ प्रभु।।21।।
हारद तू जु दयाल और नहि हारद कोऊ।
तेरी हाक सुनें जु मोह मिरतक सम होऊ।।
हांनि न वृद्धि न तोहि क्रापि व्यापै जिनदेवा।
हास्यादिक षट् भेद एक तो मैं नहि लेवा।।
हाटन पाटन वाट पुर, महाठाट कौ तू धनी।
अतुल वज्र काया जु तेरी, मोह रूप गिरवर हनी।।22।।
हाँतौ पार्यो नाथ जड़नि मेरौ तुम सेती।
मेरौ हाल न कोइ विपति भुगती बहु केती।।
हाथ पकरि जिनदेव षैचि लै अपने पुर मैं।
हार समान जु होइ तू जु वसिहरि मम उर मैं।।
ईश्वर तू जु विराट कौ है, निरग्रन्थी योगी तु ही।
हाव न भाव विलास भ्रम, परम विलास जु तू सही।।23।।

हाहाकार जु होइ मोह कै घरि हरि स्वामी।
जब कोऊ जु सम्हारि जीव धारै तुव नामी।।
हाहाकरि भव पार मोहि देवाधिप देवा।
हासी करही लोक नाथ मेरी बिनु छेवा।।
हाटक सुवरण नाम है, हारक द्युति जित ज्योति तू।
हाजरि तू हिरदा गुरे, घट घट व्यापक द्योति तू।।24।।
हाकिम तू हि कृपाल रैति हम सब जन तेरे।
हलको नांही तू जु पूज भारी प्रभु मेरे।।
हम से तोहि जु ध्याय पार उतरे नर केई।
हारक तू मनुहार सिंधु उतरै तुव सेई।।
भवसागर सम सिंधु नहि, खेवट तोसौ नांहि को।
हारद हमरों एक तू ही, नांही अविद्या मांहि को।।25।।
हार न मुकुट न कटक नांहि को अंगद तेरे।
हासिल लेय न क्रापि नांहि प्रेरै नां घेरै।।
हृदयारूढ़ जु देव होहु हमरै तू निति ही।
हरि भव अरि जिन धीर वसि जु मेरैं तू चिति ही।।
हायक तू भव भाव कौ, शिव प्रापक तू ही सही।
नायक जिनमत कौ जु सो, सायक बोध धरें तुही।।26।।
हाथिन के हलके जु तू जु दायक जिनचंदा।
हय गय पायक सर्व तू जु स्यंदन वितरिंदा।।
तेरै सर्व जु सिद्धि सर्व कौ दायक तू ही।
त्यागि सकल परभाव तू जु बैठो स्व समूही।।
भुकति मुकति दातार तू, तो सम अन्य न कोइ है।
सकल तजक निरग्रन्थ पति, जिन योगीश्वर सोइ है।।27।।
तू जु हिरण्य सुनाभि नाभि कौ पुत्र जु तू ही।
तू जु हिरण्य सुगर्भ अर्भ को तू न समूही।।
अर्भक कहिये वाल तू जु वालक नहि काकौ।
अमर अयोनी शंभु कौन नर सुत तू ताकौ।।
सुत तेरे सुर असुर नर, भूचर खेचर मुनि गणा।
थलचर वनचर नभचरा, तू जु तात सबकौ जिणा।।28।।

शुद्ध हिरण्य जु वर्ण तू जु हि सब जीवनि कौ।
प्रभू हिरण्य प्रदाय है जु सरवस्व मुनिनि कौ।।
नांव हिरण्य जु द्रव्य द्रव्य षट भासक तू ही।
तू पर द्रव्य प्रथक्त, व्यक्त निज द्रव्य समूही।।
हित मित वायक तू गुरु, सदा असंदिग्धातमा।
हिम मूरति हिमगिर समो, हिमता हरण जु स्वातमा।।29।।
हिरणाक्षी नहि पासि ब्रह्मचर्याधिप तू ही।
हिरणजीत नयनो जु, तू हि निज चक्षु समूही।।
हिरणनि कौ रछिपाल तू जु दयपाल विशाला।
हिरण हु कीये देव तैं हि जगगुर जगपाला।।
हिचकरि आवैं न पुर मैं, हिचकी नहिं जंभाइयां।
तू जु हिलायो ना हिलै, मिलै स्वतंत्र गुसाइयां।।30।।

(दोहा)

काल लब्धि आवै जवै, तव तेरौ जु मिलाप।
होइ सहज ही घट विषै, तू स्वतंत्र जिन आप।।31।।
हि कहिये निश्चै थकी, जे तोकौं सु रटंत।
ते निश्चय बोध जु लहैं, तू निश्चै भगवंत।।32।।

(छप्पय)

तोसौ नांहि हिजाव तू जु ज्ञायक घट घट कौ।
सब जानैं जु हिसाव तू जु साहिब थट थट कौ।।
हिवड़ै तिष्टि जु देव तारि लै अंतरजामी।
हिमकर कोटिक नाथ सूर कोटिक नष धामी।।
हिमकर अनुपम वदन तू, महा अविद्या निसि हरै।
हिम ऋतु प्रमुख जु ऋतु सवै, तो विनु को निर्नय करै।।33।।
हिमगिर ख्यात जु कार तू जु हिमवत अति शुक्ला।
हिंसारहित दयाल परमसुख सागर अक्ला।।
हिरदै जिनकै नाथ तू जु वसिया जिनदेवा।
तिनकौ पार उतारि तैं हि कीये सु अछेवा।।

हित जीवनि कौ एक तू, और ना हित कछु दूसरौ।
हमहि तारि जगतार जिन, तो विनु सहु जग धूसरौ।।34।।
ह्रींकारमय रूप तु जु मंत्राक्षर स्वामी।
तू श्री क्लीं सु जिनेश पूजि तू प्रणव सुधामी।।
सर्वाक्षर मय नाथ, देव बीजाक्षर तू ही।
मात्रा मात्रा मांहि, एक तू ही जु समूही।।
ह्रीं दायक ह्रीं पूजि तू, श्रीं ह्रीं धृति कीरति विभू।
बुद्धि कमला सब तुझै, सेवैं जिन साहिब प्रभू।।35।।
हीरा माणिक लाल अवर पुखराग जु पन्नां।
मूंगा मोती बहुरि फुनि जु लीलम गनि लिन्नां।।
रतन लसनियां होइ नव जु ए रतन सु प्रगटा।
तीन रतन बिनु सर्व रतन दीखैं अति विघटा।।
सम्यगदर्शन ज्ञान अर, चरन, सु रत्नत्रय सही।
पदम राग पुखराज सब, संध्या राग जु सम लही।।36।।
हींसैं अति सु तुरंग बार बारन बहु गज्जहि।
सेवहि अति सुनरिदं द्वारि वादित्र सु बज्जहि।।
सज्जहि अति भट शूर जासु कौं सेवैं सब जन।
जैसे चक्री नाथ तोहि सौं लावैं निज मन।।
तुव कारणि सहु जगत तजि, भजंही चक्री दास ह्वै।
तब पावैं तुव पंथ वौ, राग दोष द्वै नास है।।37।।
हींग जु होइ अभक्ष हाट कौ सीधौ निंद्यं।
चरम चालनी छाज चर्म घृत वारि निकंदं।।
चंदोवा ह्वै योज्ञ गृही कौं भोजन पाँने।
पूजा और सु दान तू हि भाषै गृहि ज्ञाने।।
हीन पुरिष तुव नग्र पंथ, लहैं कदापि न सांइयां।
हीला एक न पाइए, अैसा तू जु गुसाइयां।।38।।
हीये शून्य सु हौं जु मोह कै वसि परियो जी।
हीलै लाय विमोही मोह नैं वंद्य कियो जी।।
इह जु हरिद्रा रंग सारिषि नश्वर माया।
तामैं राचि सु नाथ मैं जु धारी बहु काया।।

वंद्य छुड़ाय जिनिंद अब, करि जु पार गुर जोगिया।
बहुत कहा भाषै बिभो, काटि हमारे रोगिया।।39।।
हीनति किमपि न होइ तो नषै विनति जु करतैं।
चित उज्जल अति होइ रावरी भक्ति जु धरतैं।।
हुत कर्माहुत भर्म तू जु होता करमनि कौ।
हुकम तिहारौ नाथ सीस धारै पति फनि कौ।।
हुकमी तेरे सकल हैं, तू आज्ञादायक गुरू।
आज्ञा विचय जु धर्म धर, लहहिं तेरौ शिव पुरू।।40।।
हु कहिये प्राकृत्त मांहि है स्फुट जु नांमा।
तू हि स्फुट जगदीस प्रगट अविचल सुख धामा।।
जे तोकौं हु विसारि झूठ माया मैं राचे।
ते नहि पावैं पार तो विना नाथ न साचे।।
तू सब भाषा सर्व गुण, मांहि एक निरधार है।
करि जु हमैं हु सुठार प्रभु, निरधारां आधार है।।41।।
हुनर न एको कोइ जासु करि तोकौं पइए।
सबै हुनर छिटकाय एक तुव शरण जु गइए।।
या सम हुनर न और एक इह हुनर जु साचौ।
भजिये तोकौं नाथ जांनि जग सकल जु काचौ।।
सबहु नरनि कौ सीस इह, जग के हुनर जु झूठ बहु।
काल वंचणी इह विद्या, रटिये तोकौं त्यागि सहु।।42।।
करि जु हु साक्यो जीव तोहि तजि मिथ्या सेये।
भ्रम्यों जु चउ गति मांहि अमित युग जग मैं खेये।।
हुज्जति एक न कोइ पार करिवे मैं तेरै।
सेयो नहि दरबार इह जु अति भूल सु मेरै।।
अब हुलसाय जु जीव कौं, मेटि हु साक्यौं जीव की।
काटि फंद मेरे जिनिंदा, देहु रहासि सदीव की।।43।।
जब हुलसै मम चित्त तू प्रभू निवसै मो मैं।
मिटै अहूठ सुभाव पाय तत आऊं तो मैं।।
हूल न तेरै कोइ हूल तेरी करमनि कौं।
हूंक सबै मिटि जाइ जीव षोवै भरमनि कौं।।

हू सठ नादि जु काल तैं, तोहि भूलि विषयनि रच्यो।
अब दै सरण त्रिलोकपति, तो भजियां बिनु बहु नच्यो।।44।।
हूल कहावै भीति भीति है नाम जु भै को।
डर सकल जु मिटि जाय दास कौ पीड़न है को।।
हूक पेट की पीड़ पीरहर तेरौ नामा।
हूनरवंद तिके जु तोहि पूजैं निज धामा।।
तो बिनु हूनर सर्व मिथ्या, तो ढिग हूनर ना चलै।
तोहूँ तैं हूनर करैं, भव भव मूढा दुष मिलैं।।45।।
हेमरूप बड़ भूप तू जु है मादिक त्यागी।
हेमगर्भ बिनु गर्भ तू जु जिनवर बड़भागी।।
तू हेमाभ अनाभ तू जु अभ आभ निजाम।
हेयाहेय लषै जु हेय त्यागक निजलाभा।।
तू नायक सुविचक्षणो, हेयाहेय कहै सवै।
त्यागि हेय सबही जु हो, आतम रामो तू फवै।।46।।
हेय कहावै त्याग योज्ञ जे वस्तु पराई।
परद्रव्य जु नहि लीज एक आतम लव लाई।।
आतम बिनु सब हेय एक आदेय स्वरूपा।
हेयादेय सवै जु भेद भाषै तू भूपा।।
तेरै हेय जु एक नां, उपादेय तू वस्तु है।
तोही कौं मुनिवर रटैं, त्यागि सवै जु अवस्तु है।।47।।
हेकड़ मल्ल अवीह हेतु शिव कौ इक तू ही।
हेत अहेत न भाव तू जु निज भाव समूही।।
हेत करैं तोसौं जु पार उतरैं ते प्राणी।
तो सौ हेत करे जु पार उतरे हलपाँणी।।
तैं सारंग जु पाँणि अर, हलि चक्री बहु धारिया।
तदभव भव के आतिरै, जीव अनंत जु तारिया।।48।।
हेला नांव जु क्रीड़ नाहि को क्रीड़ा तेरै।
हेला मात्रे नाथ तू जु परकति सहु घेरै।।
कर्म किये चकचूर हेलया तैं हि मुनिंदा।
हेज न कीयो नैंक मोह सौं तै हि जिनिंदा।।

तेरे हेठलि सकल जग, तू ऊंचौ सबतै प्रभू।
हेट हेट जितवार तू, हेड़ा निंदक तू विभू।।49।।
हेड़ा कहिये मांस मांस सहु होइ अभक्षं।
बे ते चऊ पंचिंदि जीव जंगम नहि भक्षं।।
थावर होइ सु भक्ष मांस रक्तादि न जामैं।
अन्न वीण जल छांण भेद भाषै तू तामैं।।
अन्नोदक लघु अशन करि, त्यागि अभक्ष जु सब जिके।
तोहि भजैं मन शुद्ध हो, पार हौंहि भव तैं तिके।।50।।
हेला सीघ्र जु नांम नाम फुनि लीला कौ इह।
हेला फुनि जग मांहि सोर ह्वै ताहू कौ कह।।
सीघ्र उतारि जु देव सोर हरि मेरौ सब।
क्रीड़ा सकल मिटाय देहु निज क्रीड़ा अब तू।।
हेला मारि पुकारि कैं, करौ वीनती इह प्रभू।
मोह लूटियो मुझ धनां, सो निज धन द्यावो विभू।।51।।
हेरक तू जु जगिंद नांहि को हेरक तेरै।
हेर्‌यो जिन नैं तोहि ते जु निवसौ घटि मेरै।।
करि दासानु सु दास मोहि तू जिनवर चंदा।
हेर्‌यो मैं सब लोक नांहि पायो शिवकंदा।।
हेम सु कामिनि रंग लगि, कनक कनक सम ना गन्यौं।
नारि मारिका तुल्य प्रभु, मैंन त्यागि भवदुख हन्यों।।52।।
हे देवाधिप देव हेम कामिनि के छंडा।
कांमिनि दांमिनि रूप तू हि भाषैं सु अखंडा।।
हे भवसागर तार पार करि मोकौं स्वामी।
हे सब जीव दयाल पालि मोकौं अभिरामी।।
हेला मात्रे शुद्ध करि, हेला मेरी सब हरे।
करमनि कौ अति ही कस्यौं, पीड़ा रहितो प्रभु करे।।53।।
है फवात इह देव तू जु राजा सब जग कौ।
तेरे राजस मांहि मोह लूटै मम कब कौ।।
तू ना दिवावै माल कौंन ए राजस वातै।
पकरि मरोरि जु बांधि मोह तसकर करि घातै।।

मोह हरे भव भैं हरे, ज्ञान वित्त द्यावो शिवा।
हेला करि कूंकूं कहा, निजपुरि राषि सु तू दिवा।।54।।
हैफ वात इक एह तोहि तजि जन जग राचे।
तू आनंद जु कंद तैं जु भाषै तत साचे।।
तू जिन सार सु सार सार नहिं जग मैं काई।
तू निरवाण प्रदाय तू जु त्रिभुवन कौ राई।।
भरत हैमवत हरि विदेह, रम्यक हैरण्यवत जे।
ऐरावत तू ही कहै, परगट क्षेत्र सु सप्त जे।।55।।
है है कार जु होइ करम सब भरमनि केरे।
जब इह जीव सम्हारि चरण धारै उर तेरे।।
है तू ही जु उधार और नहिं कोई उधारा।
है तू ही जु सुधार और सब जगत असारा।।
ह्वै विमोक्ष तो तैं सही, ह्वै विनास सहु कर्म कौ।
ह्वै विशुद्ध तोतैं सुभी, तू भासक सहु धर्म कौ।।56।।
होता पापनि कौ जु होय हर्म्य जु नहिं तेरै।
हर्म्य कहावै सौध सौध तजि सिद्धि जु प्रेरै।।
हर्म्य तिहारौ सिद्धलोक फुनि लोकालोका।
सबकौं हर्म्य सु तू हि पूजि तोमैं सहु थोका।।
होय ज्ञान निज तो ढिगै, होड तिहारी को करै।
सुर नर मुनिवर खेचरा, तोहि सीस पैं सहु धरै।।57।।
होत सवै सुष देव सेव धारै जब तेरी।
होम करम कौ होय भूति पावै जु घणेरी।।
अगनिहोत्र की रीति तू हि भाखै जिनदेवा।
होम कुंड त्रय भेद भाषई तू जु अछेवा।।
तू होत्री होता गुसांई, हवि जु करम होमैं तुही।
होहु होहु हमरौं धुनी, करि जु दास मोकौं सही।।58।।
होनहार सो होइ जोहु तुव ज्ञानै सूझ्यो।
तामैं होय न फेर जो सु जिनशासन वूझ्यो।।
हो हो जिनवर देव पार करि त्रिभुवन नाथा।
होवै मुझ निस्तार तू जु पकरै जब हाथा।।

होठ न हालै कर फिरै, वयण उचारो नां हुवै।
सोहं हंसो सांझ्यां, अजपा जपि तोहि जु छुवै।।59।।
हौ तू ही जिननाथ है जु तू ही जिननाथा।
तू जु होयगौ नित्य शुद्ध तू अति बड़ हाथा।।
तू त्रैकाल्य प्रधांन तू जु त्रैलोक्य अधीशा।
तो बिनु और न ध्येय पूजि तू है सु जगीसा।।
हौफ न तेरै एक को, हौल मानि अरि भजि गये।
हौंस न दासा कछु करै, चरन कमल के अलि भये।।60।।
हौ सठ अतिहि अयान ज्ञान नहि मोमैं काई।
हौत्रिक भरमनि कौ जु तूहि सब कौ सुखदाई।।
हौ हमरौ भवतार तु जु शिवदायक दाता।
तू जग कौ रछिपाल है जु ईश्वर बड़ ज्ञाता।।
हौं तो तोहि विसारि कै, राच्यो विषयनि सठधिया।
तू कारै दुष पाजी, और सुधारै को जिया।।61।।
हौम कुंड त्रय भेद शुद्ध रतनत्रय देवा।
तिनमैं होमैं अष्ट कर्म चउ गति दुख देवा।।
होता तेरे दास मंत्र तेरौ जिन नामा।
या विनु और न होम भाषई तू अभिरांमा।।
दक्षणानल गार्हपति, आहवनीय जु अग्नि त्रय।
इनमैं प्रासुक द्रव्य होमैं, अणुव्रत धर सम्यक्तमय।।62।।
हंस नाव है भानु भानु ससि तेरे दासा।
हंसपती तू देव हंस ज्यौ तिमर विनासा।।
हंस नाम मुनिराज तू हि हंसनि कौ सरवर।
हंस पषेरू जाति ता समो तू जु भेदकर।।
परम हंस तू ही जिना, सकल हंस रछिपाल है।
हिंसा पाप निवार तू ही, जीवनि कौ दुख टाल है।।63।।
हं मंत्राक्षर तू जु पूज तू हंस अनादी।
हंस कहावैं जीव जीवगण पार करा दी।।
ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः जु परम मंत्र जु तू ईशा।
हिंसा ध्वांत उछेद देव दयवान अधीशा।।

हंस भाव शिवरूप तू, तू जु हंसवत विमल है।
क्षीर नीर ज्यौं जीव जड़, भेद करन अति अमल है।।64।।
हंस समान सुचाल हंस सम भिन्न करै जो।
हंस अनंत उद्योत अमित रश्मी जु धरै जो।।
अज्ञानातम अंधकार नाशन रविरूपा।
परम हंस कर धीर साधु तारक जिन भूपा।।
साधुनि कौ सरवस्व तू, साधु सु ध्यावै तोहि जी।
परम हंस जग ज्योति प्रभु, लै उवारि प्रभु मोहि जी।।65।।
हंत कहावै षेद षेद नहिं तेरै क्वापि।
तू निस्वेद अछेद भेदहर बोध सथापी।।
दुखहर तू जु जिनिंद दोषहर तू ही मुनिंदा।
तू जु कालहर देव कंटहर तू हि हरिंदा।।
सर्व कुविद्या हरणहर, ब्रह्म सुविद्या दायको।
तू दारिद्र हरौ हरी, ब्रह्मरूप जिननायको।।66।।
ह्रः मंत्रातम देव तू जु है अक्षर स्वामी।
क्षर नहिं तू जु कदापि पूज अविनश्वर धामी।।
तू ही अक्षरातीत देव तू जीत अजीता।
हमकौं तारि दयाल करि जु शिव संपति मीता।।
हरे हमारी आपदा, हरि जु कष्ट सब जगत के।
हरि हर जिनवर ब्रहम तू, कर्म निवारि जु भगत के।।67।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

(सवैया इकतीसा)

हरि कै तुही जु हरि हारल की लाकरी है,
हिरदै वसै जु नाथ हित मित वायका।
हीरा मनि मानिक जे हीन सहु कंकर ए,
हुलसै न इनै पाय तेरे निय पायका।।
हू तौ सठ भूलौ तोहि हे प्रभू सुधारि मोहि,
है जिनाधिनाथ देव सर्व सिद्धि दायका।

होता सब कर्मनि कौ तू जु हौ सुनायक है,
हंसरूप शुद्ध देव ह: स्वरूप लायका।।68।।

(कुंडलिया)

तेरी नाथ सुहर्षता, धरै न हर्ष विषाद।
अमित गुणातम ही जिको, सो लक्ष्मी अविवाद।।
सो लक्ष्मी अविवाद ऋद्धि सिद्धि जु समृद्धी।
नहीं हीनता केइ स्वानुभूति अति वृद्धि।।
है निज ज्ञान विभूति संपदा संपति ढेरी।
भाषै दौलति ताहि हर्षता नाथ सु तेरी।।69।।

इति हकार सम्पूर्णम्।

क्ष

आगै क्षकार का व्याख्यान करै है। इह क्षकार अक्षर संयोगी है। कषसंयोगे क्ष, याकौ अर्थ कहा, ककार अर सवर्गी षकार के योग तै क्षकार होइ है।

(श्लोक)

क्षमामयं क्षमाधारं क्षांतिमूलं विभाश्वरं।
क्षिप्तरागादिसंतानं, क्षीणमोहं जगद्गुरुं।।1।।
क्षुद्रैरलभ्यमीशानं, क्षं मंत्राक्षरभासकं।
क्षेत्रान्वितं त्रिलोकेशं, क्षैमधर्मप्रकाशकं।।2।।
क्षोणीधरं महाधीरं, क्षौरकर्मविवर्जितं।
क्षंताधिपं महाशांतं, क्ष:स्वरूपमतीश्वरं।।3।।

(दोहा)

क्षत्कहिये क्षय कौ सही, तेरौ क्षय नहिं होइ।
तू अक्षय जगदीश है, चेतन चिन्मय सोइ।।4।।
बहुरि जु क्षत्कहिये क्षमा, तू जु क्षमामय देव।
तू क्षय कौ क्षयकार है, काल हरन है सेव।।5।।

क्षमाधरन क्षम देव तू, क्षम कहिये समरत्थ।
तो सौ समरथ दूसरौ, और न है बड़ हत्थ।।6।।
क्षयी रोग नासक सही, तेरी औषध वानी।
अद्‌भुत तू जु क्षपाकरो, क्षर हर अमृत वानि।।7।।

(सवैया इकतीसा)

क्षमा नांम पृथ्वी कौ हु प्रथवी समान तेरी,
क्षमा हैं सु क्रोध जीतिवे कौं क्षम सांइयां।
क्षमा धर्म भासक तू क्षमा कौ निधान देव,
क्षमा मैं प्रधान जो क्षमाकर गुसांइयां।।
क्षमापालक क्षमामई क्षपक जु क्षपणक,
क्षणिक प्रवाह कौ उथापक असांइयां।
क्षमावंत क्षमी तू जु क्षमानाथ क्षमारूप,
क्षमा कौ पहार एक क्षमा में वषांनियां।।8।।
क्षमाधन क्षमामूल क्षपक सु श्रेणिपार,
अष्टमी क्षमा कौ राव योगीश्वर नामिया।
क्षत पीरा कौ जु नांम तू ही क्षत हारी रांम,
क्षत्री तु ही एक है धीर वीर सांमिया।।
क्षति कहै हांनि कौं जु तेरे हांनि होत नांहि,
क्षति नांव पृथ्वी कौ हु तो बिनां अकांमियां।
क्षतिधर क्षतहर क्षत्रवटि पूरौ तू हि,
क्षत षटकायनि की टारै तू अमांमियां।।9।।
क्षय नांहि तेरौ कभी क्षरिवै तैं दूर सदा,
अक्षर तु ही जु सर्व अक्षरा विभासई।
अक्षर हू पावैं नांहि अक्षरादतीत तू ही,
क्षपित कलंक कूर महा सुषरासई।।
क्षपकधारी साधु के प्रभाव कहै तू ही देव,
क्षपक सु श्रेणी कौ प्रदायक विलासई।
जाके दास हूयें विनु क्षपक न श्रेणि लहैं,
क्षति कौ निवारक क्षतीश्वर महासई।।10।।

क्षण क्षण तेरौ ध्यान क्षपणक धारै उर,
क्षणक प्रवादि नांहि पार्वे कभी तोही जी।
क्षपा नांव निशि कौ जु माया ही सु निशिरूप,
ताकौ तू हरनहारि क्षपाहर सोहि जी।।
क्षपाकर क्षपानाथ शशि के जु नांव एई,
क्षपाकर अनंत तेरे नष मांहि होहि जी।
क्षपानाथ रावरौ जु चेरौ है त्रिलोकनाथ,
चंद के धनी जिनिंद अमृत दै मोहि जी।।11।।
शकति अनंत तुव करण सकल क्षम,
क्षमा तेरी सी न कहूँ और ठौर देखिये।
ज्ञान छतैं मौंन तेरै बल छतैं क्षमा अति,
क्षम:क्षमी दूसरो न तो समान पेखिये।।
क्षांति मैं परायण तू क्षतिजित क्षांतिभाक,
जलजित शांतता जु तोही मांहि लेषिये।
वन्हिजित तेजता अनिलजित वेगता,
गगनजित निर्मलता तो महैं विशेषिये।।12।।

(सवैया तेईसा)

क्षांत प्रशांत सु दांत तु ही जिन, कांत अपार सुक्षायक दाता।
क्षांति प्रकाशक क्षायक सम्यक, धारक धीर सु तू हि विख्याता।
क्षांम नहीं प्रभु क्षामं कहै कृश, तू अति पुष्ट प्रवीन प्रमाता।
क्षार शमुद्र सु आदि असंषि, महोदधि तू हि विभासक त्राता।।13।।
क्षालनहार जु दोषनि कौ तुव, तोहि प्रक्षालनहार न कोई।
क्षांति सपूरन क्षायक दायक, क्षायक सौ परभाव न होई।।
तोरि कृपा बिनु क्षायक नांहि जु, सात प्रकृत्य क्षपा नहिं सोई।
सर्व क्षपावहि कर्म जु क्षायक, मूल विनासइ नर्म जु दोई।।14।।

अथ क्षायक माहात्म्य वर्णन—

तीरथकार तनें पदमूल तथा, श्रुति केवलि केवलि पासे।
ह्वै उत्पन्न सु क्षायक ज्ञान, निरंतर शुद्ध स्वरूप विकासे।।
मानव बाहिर होइ न क्षायक, और गती न लहैं परकासे।
निश्चय बात इहै तुव सूत्र जु, भासइ नाथ स्वरूप विलासे।।15।।
मानव पाय सु क्षायक बोध, लहै जु विमोक्ष सुतद्भव ज्ञानी।
मुख्य इहै अर गौन कहै तुव, जौ भव लेय त दोष न मानी।।
तीनक च्यारि क और धरे नहि, शीघ्र विमुक्त जु होई अमानी।
क्षायक सौ सुषदायक अन्य न, तो बिनु कौंन जु देय सु दानी।।16।।

(चौपई)

तू क्षायक कौ मूल जु होई। नित्य वसै तोमैं प्रभु सोई।।
जो पावै सो तोकरि पावैं। तो बिनु क्षायक हाथ न आवै।।17।।
पहली सम्यक उपशम उपजै। पाछैं तो करि क्षायक निपजै।।
क्षायक कबहु न छांड़ि सु जाई। सादि शाश्वतो शुद्ध सहाई।।18।।
सम्यक के बहु भेद जु भाषे। तिन मैं क्षायक महित जु राषै।।
इह क्षायक उपजावै सिद्धी। केवल ऋद्धि जु परम समृद्धी।।19।।
मुक्ति प्रदाता इह बड़ क्षायक। जौ भव देयत च्यारि तकायक।।
पूरव बंध हुवो मिथ्या तैं। नर तिर कौ जु निकाचित तातैं।।20।।
हौइ तदा नर जुगल धरा कौ। भोगारूढ सुभोग धरा कौ।।
अवलोकन सुखरूपक वाही। भोग धरा कौ और न काही।।21।।
जा भव मैं उपजो निज क्षायक। प्रथम भवो मनियो सुखदायक।।
दूजौ गनियो भोग धरा को। तीजौ ठीक सु सुर्ग धरा को।।22।।
ह्वां तै शुभ नर कर्मभूमि कौ। अंत्य शरीरी आर्य भूमि कौ।।
चौथौ भव हूवो इह साचौ। आगै देह न धारै पाँचौ।।23।।
च्यारि भवों की विधि इह भाषी। तीन भवा किस विध इह साषी।।
सुनहु जु भव्या चित्त लगाये। क्षायक तैं केवल पद पाये।।24।।
पहलौ भव जो क्षायक दाता। नर देही बड़ भाग विख्याता।।
दूजौ भव है सुर्गलोक कौ। सर्व सुर्ग अहमिंद थोक कौ।।25।।

तीजौ भव फुनि मानव देही। आगैं भव नाही शिवदेही।।
या विधि तीनक च्यारक भाषे। आगैं भव नाही जिन साषे।।26।।
गौन वात इह भव धरने की। मुक्ष सु तद्भव शिव करने की।।
एक तीन अर च्यारि भवा ए। द्वै भव नांही जिन आज्ञा ए।।27।।
क्षायक नर्क न पावै क्वापी। जौर कदापि पूर्वलौ पापी।।
पर्यो निकाचित नर्क जु बंधा। जब हौ मिथ्या मांहि जु अंधा।।28।।
पाछैं उपज्यौ क्षायक देवा। सिद्धि प्रदाता शुद्ध अछेवा।।
पै जु निकाचित छूटै नांहि। इन जिन आज्ञा सूत्र जु मांही।।29।।
तो वह ज्ञानी पहलै नर्का। जाय जु आगै नांहि वितर्का।।
दूजे सौं ले सप्तम ताई। जाय न कबहू नाथ दुहाई।।30।।
निकरि जु पहले सौं नर देही। पाय जु निश्चै होइ विदेही।।
या नय करि तीनहि भव गनिये। आगै भव नांहि जु इह मुनिये।।31।।

(सवैया तेईसा)

क्षायक सम्यक दिष्टी जु सुर्ग हि, जाय हुवै उतकृष्ट जु देवा।
भोगि तहां सुष मानव होइ, लहै शिवधाम अतुल्य अछेवा।।
नारक होइत आदि धरा कउ, नीकसि मानुष देह सु लेवा।
मानव तैं शिवलोक लहै वह, या विधि तीन सु जन्म गनेवा।।32।।
दान कियो जु सुपात्रनि कौ पनि, दृष्टि हुती जु मिथ्यात हि माहैं।
ता करि भोगधरा कउ बंध, सुबंधि भिजाइत संसय नांहै।।
पाछइ पाइ सु क्षायक ज्ञान, लषैं निज रूप सु आपुन पाहै।।
पै जु निकाचित बंध टरै नहि, या विधि च्यारि हु जन्म धराहैं।।33।।
तेरउ तत्त्व सु पाय जु क्षायक, आनंद रूप रहै अति मग्ना।।
सात प्रकृत्य क्षपें इह भासइ, सर्व क्षपावहि कर्म जु लग्ना।।
च्यारि कषाय अनंत निबंध जु, तीन मिथ्यात जु हौंहि सुभग्ना।
क्षायक आय छुड़ाय परिग्रह, शीघ्र करै जन कौ मुनि नग्ना।।34।।
क्षायक की महिमा तुव आगम, गावइ देव अनंत अगाधा।।
क्षोयक मोष विमूल जु नाथ, जिसै अति धारहि शुद्ध जु साधा।।
क्षार शमुद्र समान इहै भव, ता महि क्षायक रत्न अराधा।।
लेइहु रत्न गमै शिव दीप सु तेरि जिहाजहि बैठि अबाधा।।35।।

क्षिष्ट किये तहि दुष्ट जु अष्ट जु, कर्म कलंक महा अति भर्मा।।
क्षिप्त किये तहि भाव विभाव सु, तू न विक्षिप्त जु नाथ सुधर्मा।।
क्षिष्ट परे तुव दासनि के ढिग, नो हुविद्रव्य विभाव विकर्मा।।
हिंसक तोहि लहैं नहि क्कापि जु, कर्म विहंडक पावहिं मर्मा।।36।।

(छप्पय)

क्षिषु हिंसायां नाथ तू न हिंसा मत राषै।
सर्वजीव रछिपाल जीव हिंसा नहिं भाषै।।
तेरौ सूत्र अहिंसको हु पापनि कौं हिंसैं।
क्षीण दोष तू क्षीण मोह सहु राग विधुंसै।।
क्षीण कलंक प्रक्षीण बंधा क्षीर समुद्र प्रसिद्धकर।
क्षीर वरण सौ रुधिर तनु, साकारें अति रूप धर।।37।।
तोहि न्हवांवै इंद्र मेरु परि त्रिभुवन नाथा।
क्षीरोदधि के नीर तैं जु मिलि सुर्ग जु नाथा।।
क्षीरश्रांविणी ऋद्धि धार मुनि तोहि जु ध्यावैं।
तू जु ऋद्धि दातार तोहि भजि सिद्धि जु पावैं।।
क्षीरादिक रस त्याग व्रत, तू हि प्रकासै तपधरो।
क्षीरोपम अति विमल तू, क्षीयमांण नहि श्रीवरो।।38।।
क्षीण नंहि तू देव पुष्ट तुष्ट जु अति शिष्टा।
क्षीयमांण भावा जु तू न धारै जग इष्टा।।
क्षीरोदक आदी जु वस्त्र तजि तेरे दासा।
ह्वै निरगंथ महंत तोहि ध्यावै जु सु पासा।।
क्षीर नांव है दूध कौ, शूद्र पात्र कौ भक्ष नां।
एक महूरत उपरि जौ, कचौ रहिउ तुव पक्ष नां।।39।।
काचै क्षीर जु मांहि जीव त्रस उपजै वहवा।
अंतर एक महूरत ता पछैं भक्ष न कहवा।।
गोमहिषी कौ क्षीर बहुरि कबहूक अजा कौ।
इन बिनु लेन न और भेड़ उष्टर जु षरा कौ।।

ए सब चार विचार भेद, तो बिनु कौन जु द्रिढ़ करै।
सर्व विधि कौ एक तू, वक्ता ज्ञाता शिव धरै।।40।।

(दोहा)

क्षीर नीर ज्यौं जीव जड़, मिले अनादि थकी जु।
हंस रूप तू भेद कर, परम हंस सुमती जु।।41।।

(कुंडलिया)

तोमैं नांहि जु क्षुद्रता, क्षुद्र न पावैं तोहि।
क्षुद्र कर्म क्षन्न जु किये, दै जिनवर शिव मोहि।।
दै जिनवर शिव मोहि नांहि क्षुरिकादिक शस्त्रा।
तेरै तू जु अभूष योगरूपो जु अवस्त्रा।।
विनु क्षुरिकादि विक्षन्न किये वसु कर्म नरो मै।
तू जिनवर बड़भाग क्षुद्रता नांहि जु तो मैं।।42।।
क्षुल्लक ऐलि विभेद ह्वै, ग्यारम पडिमा मांहि।
तू जु प्रकासै जगपती, अणुव्रती पति सक नांहि।।
अणुव्रति पति सक नांहि उत्तमा श्रावक एइ।
ऐलिजु अति उतकिष्ट क्षुल्लका उतरत लेई।।
इनसे श्रावक और नांहि जग मैं जु मुतल्लक।
ग्यारह भेदनि मांहि उत्तमा ऐलि वि क्षुल्लक।।43।।
क्षुल्लक खंडित वस्त्र ले, अर कोपीन सु होई।
पीछी कमंडल मात्र ही, अधिकौ गहइ न सोइ।।
अधिकौ गहइ न सोइ केश क्षौर जु ही कारै।
लोच करै नहि कोइ इह जु जिन आज्ञा धारै।।
भोजन पाणिन पात्र भाजने भोजन क्षुल्लक।
वनवासी जु विभास तू जु है पंडित क्षुल्लक।।44।।
पुनि जु कमंडलु ही गहै, अर कोपीन जु मात्र।
पीछी जीवदया निमित्त, वनवासी जु सु पात्र।।
वनवासी जु सु पात्र केश लुंचित ही कारै।
पाणि पात्र ले अन्न पान जिन श्रद्धा धारै।।

त्रयी वर्ण में ऐलि नांहि होइ प्रभु भूलि जु।
भाषै तू जगदेव गहै कमंडल ही ऐलि जु।।45।।
चार्‌यो वर्णा क्षुल्लका, हौंहि जिनमत पाय।
क्षुल्लक लौं सब वर्ण कौ, आज्ञा दे जिनराय।।
आज्ञा दे जिनराय, सोधि आहारी दोऊ।
प्रासुक उडंड अहार धर्म मूरति ए हौऊ।।
हैं जु ग्यारमी मांहि ऐलि क्षुल्लक द्वय वर्णा।
ऐलि जु तीन सुवर्ण क्षुल्लका च्यारयों वर्णा।।46।।
सब तजि तोही कौं रटै, ए श्रावक व्रत्ती जु।
इनके गुर मुनिवर गणा, नग्ना महा व्रती जु।
नग्ना महाव्रती जु नांहि अणु मात्र जु संगा।
लगे संग तेरे जु ह्वै सुधी साधु अभंगा।
तू साधुनि कौ तार साधु ह्वै सिद्ध जु तो भजि।
तू जिन जगत उधार रटै तोही कौं सब तजि।।47।।

(सवैया इकतीसा)

एकादस पैडी शुद्ध भाषी देश ब्रत्तिनि की,
तिनमैं दशम ग्यारमी जु उतकिष्ट हैं।
सत्तम जु अट्ठम औ नवम सु मध्य एई,
भाषैं जिनराज जे हि तीन लोक इष्ट हैं।।
प्रथम सौं छट्ठम लौं जघनि गने जु सर्व,
सम्यक के धारक पुनीत व्रत शिष्ट हैं।
क्षुल्लक लौं व्रत कोऊ जाति धरो दोष नांहि,
ऐलिकौ सुव्रत शूद्र लोक कौं अनिष्ट है।।48।।

अथ ग्यारा पडिमा का नाम—

दंसण विसुद्ध कारी है जु पहलौ हि भेद,
बारह वरत धार दूसरौ व्रती कह्यो।

तीजौ दिढ़ सामायक चौथो पोसाधर महा,
पाँचमौं सचित्त त्याग श्रावक श्रुति गह्यो।।
षष्टम जु श्रावक सो रात्रि कौ न भक्ष पान,
दिन कौं जु ब्रह्मचर्य धारक सुधी लह्यो।
सप्तमौ सदा सुशील नारीकौ न संग जाकै,
आठमौं तजै अरंभ पापनि मैं ना रह्यो।।49।।
नवमौं तजैं जु संग धातु सौं न करै रंग,
पोतिया जु धोवती पछेवरी हि धारही।
तज्यो घर वार जानैं तजें पुत्र पौत्रादिक,
श्रावक बुलावै जाके भोजन सु कारही।
दसमौ न लौकिकी जु वारता कभी कहै जु,
बिना जिनसूत्र और बैन न उचारही।
ग्यारम मैं दोय विधि भाषी पहली जु तेई,
सवौ मांहि ऐलि सौं न श्रावक विचार ही।।50।।

अथ बारह व्रत श्रावक नै त्यांह को विचार—

परदारा त्याग पाँचमौं प्रमाण संग,
एईं पंच अनुव्रत भाषै वीतराग है।।
छठौ देसदिसा परमान करिवौ जु सत्य,
सातमौं अनर्थ पाँच त्यागिवौ हि भाग है।।
आठमौं जु भोग उपभोग परमान करै,
गुणव्रत तीन एई धर्म के विभाग है।।
नौमो तीन संध्या साधिवौ जु विधि सामायक,
समता करे जु सव जीवनि सौ क्षांतिधी।।51।।
दशमौं जु पेजुपोसहा करै जु आठमी तथा सु,
चौदसी सुदोयदोय सदा ही महांत धी।
ग्यारमौ जु व्रत्त सदा अतिथिविभाग पालै,
भरवैं क्वापि भोजन न कांतधी।।

.....
.....।
वार में जु व्रत्त सदा नेम धर्म रूप रहै,
वाडि मै करै जु वाडी शिक्ष चउ शांतधी।।52।।
सम्पक सहित एई व्रत्त तूहि भषै देव,
अतिकाल अनशन व्रत ही उचारही।
श्रावक सु साधुनि की रीति तो विना जु कौन,
भाषै जगदीशराय सर्व तू विथारही।।
सेवै सर्व तोहि तू ही व्रतनि को दायक है,
तेरे दास भूत सर्व तूहि ततसार ही।
भूतेश्वर लोकेश्वर व्रतीश्वर जैनेश्वर,
तो विना यतीश्वर न दीषै को अपार ही।।53।।
दशमी पडिमलौ जु श्रावक सु व्रत धार,
वसती मैं रहै अर रहै वन मैं जु भी।
ग्यारम पडिम के कदापि नहि वसती मैं,
वन ही मैं रहैं अति धीर वीर हैं अभी।।
बुलाये न भोजन करै जु काहू कालमांहि,
ले उडंड ही अहार साधु ज्यो रहैं उभीं।
तेरौ इ जु ध्यान करै ऐलिकहा क्षुल्लक ए,
मौटौ तू प्रभू सदैव क्षुल्लक है ना कभी।।54।।

(पद्धरि)

क्षुल्लक छोटे कौ नाव होइ। तू क्षुल्लक नहि मुतलक्क सोई।।
मोटौ जगजीवन तूहि एक। छोटे सहु तो विनु तू विवेक।।55।।
क्षू मंत्राक्षर तू ही दयाल। मंत्रा सहु भासइ तू कृपाल।।
तू सं सीं सूं सौं सः विभास। है मंत्र स्वरूपो यंत्रभास।।56।।
क्षे डो विषनाम जु प्रगट होई। तू विषहर अमृत रूप कोई।।
क्षेप्यो न क्षिपै तु क्षेमरूप। क्षुभ्यो नवि लुब्धोजगतभूप।।57।।

तू नाथ सु क्षेत्री क्षेत्ररूप। तू क्षेत्र जु पालो है अरूप।
तू दूव सुक्षेत्रज्ञो जाहि स्वामि। तू क्षेप विवर्जित अखिल नामि।।58अ।।
कहिए जु स्वक्षेत्रा निज प्रदेश। तू है जु प्रदेशी ज्ञान भेस।
तेरे जु प्रदेश असंख्य नाथा तू है जु सुक्षेत्री पर्म साथ।।58ब।।
तेरे सहु क्षेत्र जु पाल दास। तु पालकपालो अति उदास।।
तो विनु कोई जु नहिं क्षेत्र नाथ। तू क्षेत्रपती क्षेमी अनाथ।।59।।
तू क्षेमंकर क्षेमं धरो जु। तू क्षेत्री क्षेत्र विभासुरो जु।।
तू भासक स्वपर जु क्षेत्र देव। तू है जु सु क्षेत्रमयी अछेव।।60।।
क्षेत्र जु हे आकाश द्रव्य। क्षेत्री कहिये जीवादि दृव्य।।
क्षेत्री फुनि देह तनौ हु नाम। क्षेत्री देही जग जीव धाम।।61।।
ए सर्व भेद तूही प्रकास। तू क्षेत्र सु क्षेत्री चिद विलास।।
क्षेत्र जु निज पर देसा असंखि। तू क्षेत्री पर देसी अकंखि।।62।।
तू क्षेत्र सपत जिन विंव आदि। भाषै जगदेव जु तू अनादि।।
तू क्षेत्र जु वास्तु सु आदि दैइ। भाषै तजिवौ मुनि व्रत लेई।।63।।
चौदाभ्यंतर दश वाहिरा जु। तू एक न राखै जगत राज।।
तू क्षेत्राधिय क्षेत्राधिको जु। तू क्षेमधरम प्रति को जु।।64।।
तू क्षेम कृत प्रभू क्षेम मूल। तू है जु क्षेम शासन सथूल।।
तू देव क्षेम युद्धीरवीर, कार प्रगट्टक अचीर।।65।।
क्षेम जु क्षेत्र जु भासी तुही जु। सर्वाक्षर मात्रा में सही जु।।
तु क्षोणीधर भूधर दयाल। क्षोणी जु कहावइ भू विशाल।।66।।
क्षोद न तैरै नहिं क्षोभ कोई। क्षोदन पीडन कौ नाम होई।।
क्षोहणिद लसेत्या भेद सर्व। तू सर्व प्रकाश कहै अगर्व।।67।।
क्षोभ जु कहिये उदवेग नाम। तू क्षोभ रहित जगदीश राम।।
तैरै अति क्षोहणी कटक देव। तू एकल भड दै हमहि सेव।।68।।
क्षोभ जु कहिये फुनि हर्ष नाम। तू हर्षकिरण अति हर्ष धाम।।
तैरै न हर्ष विषाद कोई। तू अविवादी आदीश होई।।69।।
तू क्षोभ रहित अर क्षोभकार। तेरी अद्भुत गति है अपार।।
क्षोणी दायक क्षोणी जु सीस। क्षोणी णर सेवहि तोहि ईश।।70।।

अष्टम क्षोणी दै लौकनाथ। क्षौणी क्षोहणि जित लंब हाथ।।
तू सर्व ही क्षोणी मांही पूर। वैसक सिद्धालय विलय दूर।।71।।
क्षोद जु मधु जहै नाम ठीक। जो सहद कहावत अति अनीक।
तेरे दास न फरसें कदापि। तू अभष निषेधी है उदापि।।72
तू क्षौभ रहित नग नौ जिनेश। तू क्षौर विवर्जित लुंच केश।
तौ सौ न दिगम्बर और कोई। तू अंबर हू कौ अंबरोइ।।73।।
क्षौभ जु कहिय प्रभु वस्त्र नाम। तू वस्त्र न शस्त्र न धरइ राम।
क्षौभ जु अश्रुक परिधान सोइ। अंबर वसनादिक वस्त्र जोई।।74।।
एक रथ वाचक शब्द एह। तू सर्व जु त्यागी है विदेह।
क्षौर जु कहिये मुंडन जु केश। साधुनि कौ क्षौर न है अशेस।।75।।
योगीश्वर लोंच करैं जु केश। तू लोंचुपदेशी है जिनेश।
तू पंचविमुष्टी लोचकार। तू केशरहित यति भेस सार।।76।।
तू क्षंत उदंत उक्षांतिरूप। तू दिगपट नाथ जु है सु भूप।
क्षांतीश्वर सांति विभूषिते। क्षंताधिक क्षंताधिप अलेश।।77।।
क्षंतेश्वर मोक्षेश्वर जिनेश। ज्योतीश्वर राज्येश्वर नरेश।
तू क्षेमकुशल तैं सिद्ध क्षेत्र, ले पहुंचाये हरि जगतनेत्र।।78।।

(दोहा)

क्ष: कहिये सिद्धान्त मैं, क्षम कौ नाव प्रसिद्ध।
क्षम कहिये समरत्थ कौ, तू समरथ अति सिद्ध।।79।।
क्षमाधार नी शक्तिधर, सब वातनि क्षम तूहि।
क्ष: तेरौ ही रूप है, तू सब रूप समूहि।।80।।

अथ द्वादश मात्रा एक कवित्त में—

क्षमा कौ सागर तू क्षायक स्वरूप नाथ,
क्षिष्ट किये रागादिक तैंहि अति भेजी।
क्षीण मोहा क्षीण दोष है अक्षुण भिन्न तू ही,
क्षुद्रतोहि पावैं नाहि तूहि जगदेवजी।

क्षूं सुमंत्र भासक तू क्षेमंकर क्षेत्रराय,
क्षैम कौ जु आगर है क्षोभ विनु टेव जी।
क्षोणी देय अष्टमी सु क्षौभ नांहि तेरै कभी,
क्षंतातम क्ष:स्वरूप देह मैं स्वसेव जी।।81।।

(कुंडलिया छंद)

क्षायक सम्यक भासिनी, पारिणामिका शक्ति।
मिथ्यारूप क्षपा हरै, अक्षु णा प्रव्यक्ति।।
अक्षुण्णा प्रव्यक्ति क्षुण्ण कीये जिह कर्मा।
क्षीर समान विमल रावरी लच्छि सुधर्मा।।
वहै अंविका देवि पद्मिनी रमा अमायक।
पद्मावति पद्मा जु, भासिनी सम्यक क्षायक।।82।।
स्वामी तेरी क्षांतिजो, क्षमारूप अतिशांति।
सोई लक्ष्मी शुद्धता, ज्योति द्युति निजक्रांति।।
ज्योति द्युति निज क्रांति स्वानुभूति हू पवित्रा।
भवा भवानी सोइ, सर्व जीवनि की मित्रा।।
निज सत्ता सिद्धी अराधिका ऋद्धि अमामी।
भाषै 'दौलति' ताहि क्षांति जो तेरी स्वामि।।83।।

।। इति क्षकार संपूर्णम्।।

इति श्री भक्त्यक्षरमालिकाबावनीस्तवन अध्यात्मबारहखड़ी नामध्येये उपासनातंत्रे जिनसहस्रनाम एकाक्षरीनाममालाद्यनेकग्रंथानुसारेण भगवद्भजनानंदाधिकारे आनंदरामसुतदौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते अकारादि क्षकारांत दशाक्षरप्ररूपको नाम अष्टमः परिच्छेदः।

⌘⌘⌘